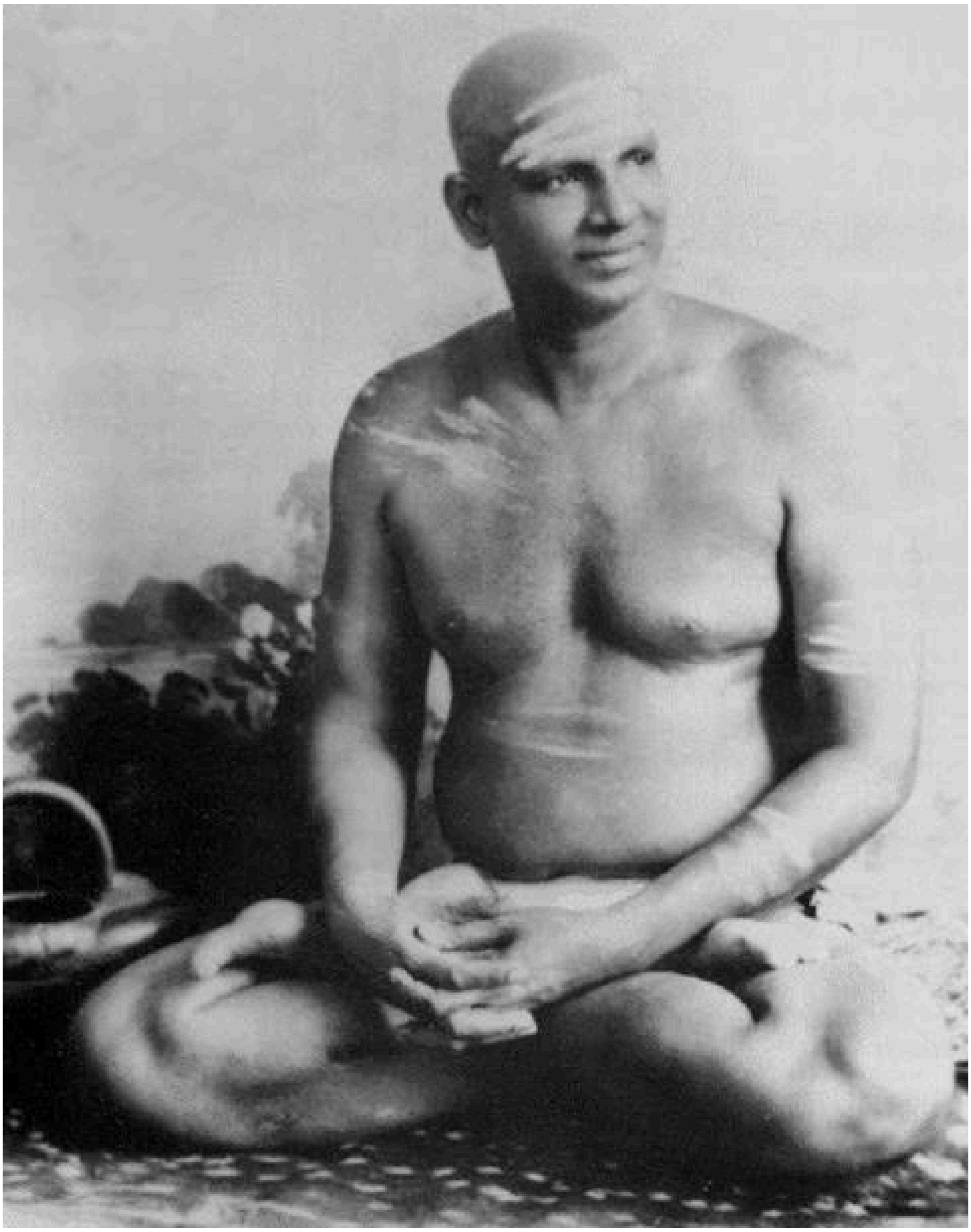
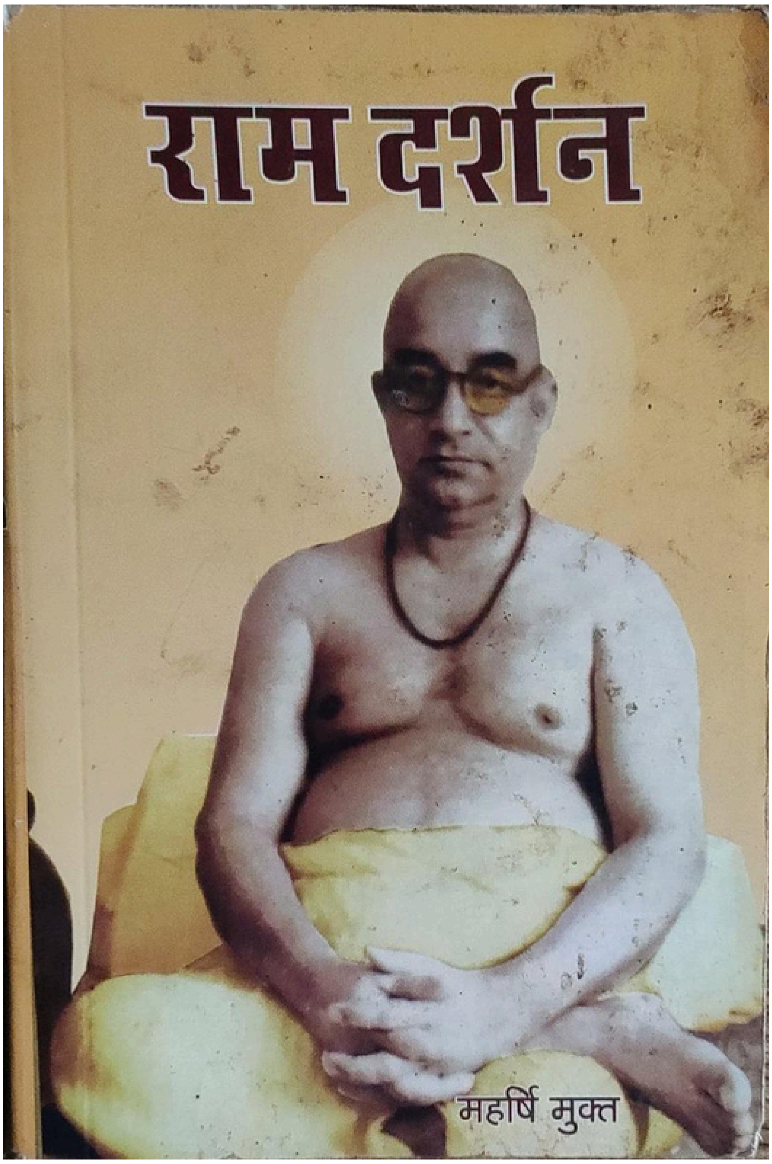



राम दर्शन
महर्षि मुक्त

राम दर्नश

(सम्पूर्श)

महर्ष् शमुक्त

राम दर्नश

ननरूपर्कताश	-महर्ष् शमुक्त
प्रकार्क	-महर्ष् शमुक्तानुभूनत साहहत्य प्रचारक सममनत केन्द्र, दुरु् श(छत्तीसर्ढ) (सर्ाधशिकार सुरक्षित प्रकाकिर्कीन) -महारी्र ऑफसेट रायपुर (छत्तीसर्ढ) फोन: 0771-255140
मुरक	-नेचर ग्राफफक्स र्ानांत चौक, पुरानी बस्ती, रायपुर मो. : 9302230478
डाटा एन्द्री	-25 जुलाई 2010 (रुरु पूर्र्मशा)
तृतीय सस्ांकरर्	-1000
प्रनत	
कायालशय एर्ांपुस्तक ममलने का पता	
मूल्य	-डॉ. एसएन. त्रिपाठी 50/152, बिांर्ापारा, पुरानी बस्ती रायपुर (छ.र् .) - 492001 मो. : 9926130014 दो सौ पचास रुपये मिा) -250/-(

तृतीयारूरूत्त पर सक्षांप्ति उद्बोन

र्प्रय अभेद आत्मन्, ् रामदर्नश की तृतीयारूरूत्त की प्रस्तुनत पर सममनत मुहदत है, इस आरूरूत्त में प्रस्तुत साहहत्य का कलेर्र पररर्तनश ही फकया र्या है। र्र्षयर्स्तु ज्यों का त्यों है, अर्पतु इस सांस्करर् में एक नये प्रसर्ां का समारे्र् जरूर फकया र्या है, र्ह है महारानी र्तरूपा द्र्ारा मार्ांा र्या सहज र्रदान -

सो सुख सो गति सो भगति सो तिज चरि सिेह ।
सो र्र्र्ेक सो रहति प्रभु हमहह कृपा करर देहू ।।

र्ैसे तो रामायर् पर र्द्र्ान महापुरुर्षों द्र्ारा 400 र्र्षों में अनेक टीकाएँ हुई हैं, परन्द्तु र्तमशान में इनके मर्र्षों पर जो अलौफकक भाष्य हुए हैं, उन दुलुभश भाष्यों को प्रकामर्त कर आप तक पहुँचाकर सममनत र्न्द्य हो रही है।

जजस तरह र्ीता के अर् श(भार्) को कृष्र् ही जानता है, उसी तरह से रामायर् के भार्ों को मसर्ाय राम के फकसी अन्द्य में ताकत नहीां जो इसे जान सके, तभी तो कहा र्या है फक- फकमम समुझै, यह जीर् जड। प्रस्तुत साहहत्य में भर्र्ान राम के भार्ों को ज्यों का त्यों बताया र्या है, र्त शइतनी है फक इन भार्ों को "मर्र्" होकर ग्रहर् करें न फक जीर् होकर और तभी उसका ग्रहर् भी साांभर् होर्ा।

श्री रूपेन्द्रनार् नतर्ारी (रामार्तार भाई) ने इस पुस्तक के सर्ांर्नि में जो अपना अमूल्य समय एर् ां पररश्रम दान फकया है, इसके मलए सममनत उनका आभारी है। श्री झग्र मसहां देर्ाांन जी को र्न्द्यर्ाद, जजनके सौजन्द्य से मनु र्तरूपा र्रदान प्रसर्ां प्रस्तुत पुस्तक में र्ाममल फकया र्या। प्रूफ रीडडर्ां में श्री महेन्द्र आडडल एर्ां श्री बसतां पुरी र्ोस्र्ामी का सहयोर् स्तुत्य है। सममनत इनके भी आभारी है। प.ां श्रीरामलाल जी र्ुकुल का अमूल्य सहयोर् र्ांय है। दाऊ र्ोकुल बछां ोर का प्रयास प्रर्ांनीय है।

देर्मता, सुरसा के मुख के समान बढ़ती महांर्ाई के कारर् प्रकार्न में कहठनाई आ रही है, फफर भी आपकी जजज्ञासा र्ान्द्त हेतु सममनत अपना धर्लहरी प्रयास सतत् बनाई हुई है। इस पररप्रेक्ष्य में मूल्य सबांर्ी या अन्द्य कोई त्रुहट र्द्र्ान पाठकों को अनुधचत लरे् तो उनसे करबद्र् क्षमा की कामना सहहत -

सत्यांद

व्यजक्त पररचय

दिहार कोऊ और है िदि है हदि रि ।

िमि लि रहहमि को ि ि**चे** ि ।

एक ऐसा व्यजक्त, जजसके मलए यह उजक्त िअरर्: चररतार् शहो रही है। जजनने अत्यतां सकाीचपूर्कश इस न्र्रर् को प्रकामर्त करने की हमें सहमनत प्रदान की है -

नाम	-श्री यादोराम र्ांबेर
आत्मज	-श्री सदर्राम र्ांबेर
माता	-श्रीमती मानबाई
जन्द्मनतधर्	-17 अप्रैल 1950
योग्यता	-बी.एस.सी.
जन्द्म स्र्ान	-बर्देई, पो.-मलमोरा, तह.-रु्रुर (छ.र्.) जजला-दुर् श
व्यर्साय	-आप एक सम्पन्द्न कृर्षक हैं, कृर्ष आपका पैतृक व्यर्साय है
अन्द्य रुधच	-आप सेर्ाभार्ी एर् ांबैद्यक में रुधच रखने के कारर् स्र्यां जडी-बूहटयों से दर्ा तैयार करके अनेक जहटल रोर्ों का उपचार करते हैं.

आप रुभार् से अत्यतां र्नम्र एर् ांसतां सेर्ी होने के कारर् रूहस् जीर्न को अर्ीकार नहींफकया। आप महर्ष शमुक्त के कृपा पिा हैं।

आपके जीर्न का प्रमुख उद्देश्य सत्पुरुर्षों की सेर्ा करना एर् ांउनके सत्सर्ां का लाभ लेना है। महर्ष श मुक्तानुभूनत साहहत्य प्रचारक सममनत के आप सरांिक सदस्य एर्ांसममनत के समर्पतश सदस्य हैं। अपनेइसी रुभार् से पे्रेररत होकर इन्द्हें प्रस्तुत ग्रर्ां 'रामदर्नश' की इस आर्रूत्त प्रकार्नार् श'पचपन हजार रुपये' की सहयोर् रामर् सममनत को प्रदान करके अनुर्रूहीत फकया है।

हम उनके इस अपूर् शयोर्दान के मलए उनके प्रनत आभार व्यक्त करते, उन्द्हें सार्ुर्ाद देते हैं।

आर्ा है, उनकी यह दानर्ीलता अन्द्य श्रेजष्ठजनों के मलए श्लाघनीय एर् ांअनुकरर्ीय मसद् होर्ी। अलां!

भिदीय

अध्यक्ष

महवष िमुक्ाािुभूति साहहत्य प्रचारक सममति

प्रस्तार्ना

रोस्ामी तुलसीदास का 'रामचररत मानस' एक अद्भुत आध्याजत्मक ग्रर्ां है। न केर्ल इसमलए फक ई र्ताजददयों से भारतर्ामसयों के बहुत बडे ेर्र् शमें सबसे अधिक पठनीय ग्रर्ां रहा है र्रन, इसमलए भी ई मर्क्षित-अमर्क्षित, र्ृद्ि- अर्ृद्ि, रूहस्-सन्द्यांयासी, सतां-सामान्द्य जैसे र्र्षमर्ीय समूहों में समरूपेर् समाहत हुआ है। उसमें रामकर्ा के सुपररधचत ऐनतहामसक त्रबम्बों के सहारे भारतीय आध्याजत्मक सस्ांकृनत, ाममकश लोक-जीर्न, नीनतपरक आचरर् को पुरुर्षार्मशय मानर् जीर्न में इस तरह र्ूांर्कर रखा र्या है फक सभी पररजस्र्नतयों में लोर् सहज ही उसमें अपने अजस्तत्र् का अप शढूँढ़ लेते हैं। घर-रूहस्र्ी की झांझटों में फँसे सामान्द्यजन फुरसत के समय उनके पठन-श्रर्र् से परम सतार्ोर्ष और आनांद का अनुभर् करते हैं। दूसूरी ओर धचतांनर्ील और दृजष्ट सम्पन्द्न र्ृद्ितजन उसी 'रामचररतमानस' की र्हराई में उतरकर उसमें समाये उन ऊँचेआध्याजत्मक मर्खरों की खोज करते हैं जजन्द्हें उसके प्रभूत र्दद-रामर् ने अपनेअतांर में नछपा रखा है। उनकी ऐसी खोज हमें बार-बार चमत्कृत करती है। महर्र्ष शमुक्त का 'रामदर्नश' इसी तरह का चमत्कार पैदा करने ेर्ाली 'रामचररतमानस' की व्याख्या है।

ऐसा नहीां है फक रामकर्ा का आध्याजत्मक ननरुपर् पहली बार हुआ है। 'रामचररतमानस' के बहुत पहले ही 'अध्यात्म रामायर्' के र्र्स्तारपूर्कश रामकर्ा का यह रुप ननखारा जा चुका है। फकांतु महर्र्ष शमुक्त की व्याख्या में दो बातें र्र्र्ेर्ष ध्यान देने योग्य हैं। पहली यह फक उन्द्होंने रामकर्ा के आध्याजत्मक र्ूढ़ार्य को तुलसीदास के र्ददों में से ही ढ़ूांढ ननकाला है, यद्यर्प अपने प्रकट अर् शमें भी र्े र्दद उतनेही ममस्शपर्ी और प्रभार्ोत्पादक हैं। दूसूरी ध्यान देनेयोग्य बात यह है फक प्रकट र्ददार्ों के नीचे जजस आध्याजत्मक मर्खर की खोज उन्द्होंने की है र्ह नया और ननराला है। 'आध्यात्म रामायर्' हमें 'भर्र्द्र्ीता' की आध्याजत्मकता की याद हदलाता है। कृष्र्ार्तार में साकार ब्रह्म रुप कृष्र् अपनेचररत और र्ददों में ब्रह्म की ननराकारता की झलक हदखाते हैं और इसमलए 'लीला पुरुर्षोत्तम' कहे जाते हैं। दूसूरी ओर 'रामचररतमानस' में धचत्रित रामार्तार में राम के चररत और र्ददों में नही ांर्रन् ्उनकी 'मयादशा' का 'नीनतमत्ता' के आर्रर् में से ननराकार ब्रह्म की झलक हदखाई दे जाती है। ननराकृत आकार् में जजस तरह मेघाकृनत पैदा होती, बदलती और र्र्लीन होती हदखाई देती है, उसी तरह ननराकार ब्रह्म में राम का सर्ुर् रूप र्ढ़ा हुआ हदखाई देता है। माता कौमर्ल्या के र्ात्सल्य भार् में, भर्र्ान मर्र् के ज्ञान भार् में, तपःपूत ऋर्र्ष-मुननयों के भजक्त-भार् में उन-उन भार्ों के अनुकूल ब्रह्म-स्र्रूप ननखरता है। चूँफक राम का प्रकट रूप एक आदर् शनीनत-पुरुर्ष का है, सामान्द्य मनुष्य भी उसमें अपने लोक-जीर्न के मूल्यों को चररतार् शहोता देखता है। दूसूरी ओर, कृष्र् चररत चूँफक लीलामय है, उसकी बोिर्म्यता के मलए भजक्त के तर्ड ेखुराक की जरुरत होती है। मानुर्षी कम-शर्ृनि और ज्ञानलोक के प्रनतमान उसकी समझ तक पहुँच पाने में असमर् शहैं। जजस पर प्रभु की कृपा दृजष्ट है उसे ही र्े ममलेंर्े। 'भर्र्द्र्ीता' में इसीमलए कमयशोर् और ज्ञानयोर् अतांतः भजक्त योर् के अनुर्षर्ी ही मसद् िहोते हैं।

'रामचररत मानस' के राम का मानुर्षी चररत आध्याजत्मकता का बिो करानेकी दृजष्ट से अपेिया अधिक जहटल है। नीनत पुरुर्ष राम के प्रकट मानुर्षी चररत को उसकी आध्याजत्मक र्हराई में 'सत्यांमर्ां सुदांरम्' ् और 'सत्य ांज्ञानमनतांम्' ् का आकार लेता हुआ देखा जा सकता है इसीमलए कमयशोर्, ज्ञान योर् और भजक्त योर् समानरुपेर् रामपद प्राजप्त के मार् शहो सकतेहैं- (मर्ंमय) नीनतमत्ता की प्रिानता से कमयशोर् (ज्ञानमय) सत्यव्रतर्ीलता की प्रिानता से ज्ञानयोर् और (सौंदयमशय) अनतांता की प्रिानता से भजक्त योर्। महर्र्ष शमुक्त के अनुसार, तुलसीदास ने 'रामचररत मानस' में इन तीनों का एक समजन्द्र्त रूप प्रस्तुत फकया है। इस तरह रामचररत मानस सरोर्र में आध्याजत्मक अर्र्ाहन हेतु चार घाट हैं- ज्ञान घाट, कमघशाट, भजक्तघाट और महर्र्ष श मुक्त के र्दों में स्र्यांतुलसीदास का र्ोघाट जो सीिा और सपाट होने ेसे सभी जीर्िाररयों के मलए अपर्ां और अपाहहजों के मलए भी सुर्म है।

अध्यात्म की दृजष्ट से ज्ञान का एक ही अर् शहै - आत्म दर्नश। ससाांर का ज्ञान र्र्षय-दर्नश है और इसके ग्राहक हैं इांहरयाां और मन। मन में इच्छा-र्ासना की ननरांतर उठने र्ाली तरांर्ें इांहरयों को र्र्षय-प्रर्तृत करती हैं और रार्ी-भोर्ी मनुष्य ससाांर-सार्र में डूबने-उतरानेलर्ता है। र्र्षयभोर्ार्र्ष्ट यह बिो आत्म दर्नश से उतना ही दूरू है जजतना अांिकार प्रकार् से। इसमलए र्स्तुतः यह ज्ञान की अर्स्र्ा न होकर अज्ञान की अर्स्र्ा है। सािारर्तः आत्मा के ननज-रूप पर अज्ञान का यह िुांि छाया रहता है और इसमलए प्रायः मनुष्य आत्म-प्रकार् से र्ांचित रह जाता है। दूसूरी ओर जब आत्म दर्नशपूर्कश व्यजक्त आत्मा को उसके ननज रूप में जान लेता है तब उसके मलए सांसार का स्र्रूप ही जदर्िार आत्मा का, श्रीराम का र्र्मलयर् बनकर प्रकामर्त होनेलर्ता है। आत्म-ज्ञान के त्रबना जर्त् ्प्रपचां के आिार तक नही ांपहुँचा जा सकता। इस तरह आत्म-ज्ञान के त्रबना जर्त का भासना ही अज्ञान है। मर्जी को यह ज्ञान है इसीमलए र्े श्रीराम के माया-मानुर्षी चररत से न तो व्यधर्त होतेहैं और न ही हर्र्षतश जबफक माता पार्तशी मोहर्र् सांर्यग्रस्त हो जाती हैं। आत्म- ज्ञान की जस्र्नत में जर्दाभास रुपी सारे र्र्कल्प जानत-र्र्,श सुर्ुर् ननर्ुर्श, र्नत- जस्र्नत, पररर्तनश-परार्तनश, देर्-काल आहद-आत्मा में ही समा जाते हैं। इस दृजष्ट से आत्मा-परमात्मा, व्यजष्ट-समजष्ट न भेद भी एकानांतक नहीां है। अजस्तत्र् रूपों के आिार में जस्र्त जो आत्मा है र्ही सत्ता मात्र का आिार स्र्रुप सर्ात्शमा परमात्मा है। र्ुद्धि सत्ता स्र्रूप आत्मा ही परमात्मा श्रीराम हैं, जबफक यह र्ह अजस्तत्र् रुपों में जो प्रकट हो रहा है र्ह 'म' ैं आत्मा हूँ।

कमघशाट में मानस-अर्र्ाहन जर्त्-भ्रम या सर्ांयार्स्र्ा से छुटकारा पाने का एक अचूक उपाय है। ज्ञान एक उपाय या सािन न होकर उपलजदि है जबफक कम शस्र्रुपतः एक सािन है, सुख-दुःख प्राजप्त का या रामपद प्राजप्त का भी। श्रीराम का मानुर्षी चररत प्रकटतः एक कम-र्िशि है, जहाँ स्र्ी-पुरुर्ष र्र्धि-ननर्र्षि, रार्-र्र्र् आहद सासांाररक र्र्पि पाये जाते हैं। फकन्द्तु जजस िर् यह बिो होता है फक ये सारे र्र्पि मायार्ी सरांचनाएां हैं, भ्रम ममट जाता है तर्ा कमों और सलांग्न भार्ों का अत्यतांाभार् पैदा होता है। तब न कताश-भार् रहता है न भोक्ता भार्, न अहांकार, न मोह, न पाप और न पुण्य। जजसे हम 'िम'श कहते ेहैं उसका आर्य ठीक यही है-न तो उसे करने में लज्जा होती है और न ही भय। इसीमलए िम शभर्र्दार्तार द्र्ारा ररर्ीय बनता है। इसके र्र्परीत जजस कम शको करने ेमें लज्जा या भय हो, र्ही अिम शहै। िम शकरने से हृदय र्ुद्धि होता है और र्ुद्धि अतांःकरर् में र्ैराग्य

जार्ता है और र्ैराग्यर्ान को ही भर्ग्न को जानने की जजज्ञासा होती है। ऐसे जजज्ञासु व्यजक्त ने परमानदां पाने की योग्यता हामसल कर ली है। परमानदां से आर्य है सुख-दु:ख रहहत आनदां, ब्रह्मानदां। श्रीराम के इस ननत्य

स्र्रूपको जीर्नमें ढुलसीदास के र्ददों में है- 'र्ान्द्तां र्ाश्र्तमप्रमेयमनघां ननर्ार्श

मन कामाहद दोर्ष रहहत हो जाता है। मन के कामाहद दोर्षर्् र्र्षय-मूलक कमों से प्राप्त सुख मनुष्य को अतांतः दु:ख की ओर ढकेलता है जबफक जन्म-जन्मातांरों में उसकी खोज ऐसे सुख के मलए होती है जजससे दु:ख की डोर न बिंी हो। उसकी यह खोज कम शऔर कमफशल से परे उनके आिार में जस्त आत्मा से समस्रुपता प्राप्त कर लेने पर ही पूरी होती है। तब ई कत्ताश-भोक्ता, कम-शफिया, सुख-दु:ख जैसे द्र्दांमूल भार्ों से पृर्क अजस्तत्र् मिा के मूलाार आत्मा के प्रनत 'ननभरशा' भार् से समर्पतश हो जाता है। यही कम शसदांभ शमें भर्द्र्द प्राजप्त के मलए आर्श्यक ननष्काम कम,श अनासक्त कम शका रहस्य है।

भजक्त घाट में मानस-अर्गाहन हेतु उक्त 'ननभरशा' भार् के अनतररक्त र्ेमल 'प्रेम भार्' की जरुरत होती है। ईश्र्र तक पहुँचने के मलए यह सीिा और सरल मार् शहै। यह एक सािन है और उपलजदि भी। सािना की दृजष्ट से भजक्त एक सािन है जबफक र्ही प्रेममय प्रपत्त की दृजष्ट से एक उपलजदि है। श्रीकृष्ण के इन र्ददों में भजक्त

के दोनों रूप र्र्णमान हैं- र्संखर्ा मा 'परररत्यार्' में सािना है, जबफक

'र्र्ानत' उपलजदि है। रामकर्ा के प्रसांर् में र्र्ानत की अर्स्र्ा प्रेमानदां से पररपूर् शहै। र्स्तुतः 'रम्' ्ि ािातु से ननष्पन्द्न 'राम' र्दद का रूढार्य ही यही है। श्रीराम आनदां रस से पररपूर् शसार्र हैं जजसमें प्रेमीजन सहज ही तैर सकते हैं। मर्जी और काकभुरुण्डी जी के श्रीराम के बाल स्र्रूप में रम्यमान होने का रहस्य अब समझ में आ सकता है- बाल रूप सहज भार्ेन आनांद स्र्रूप है, मनसा-र्ाचा-कमशर्ा से परे ई स्र्भार्मसद्ि है। परमानदां या आत्मानदां की भी यही सहज अर्स्र्ा है और इसके प्रनत पूर् शसमपर्श का नाम है भजक्त। ऐसी पूर्तशः सहज भजक्त के मलए फकसी अन्द्य सािन की आर्श्यकता नहीं है। यहाँकम-श अकम,श ज्ञान-अज्ञान, सािन-साध्य बेमानी है। यह तो सर्र्श व्याप्त आत्म-स्र्रुप र्ुद्ि सत्ता की ही आत्मीय उपलजदि है। आत्म स्र्रुपता ही आत्मानदां है। मेरा अपनी आत्मा से, जीर् का उसमें र्र्ाज रहे भर्ग्न आत्मा का ममलन केर्ल सहज, ननरार्लबां ही हो सकता है। यह आध्याजत्मक 'तल्लीनता' की जस्र्नत है जजसमें भर्द् भार् के अनतररक्त अन्द्य फकसी भार् के मलए जर्ह बच ही नहीं रह सकती।

प्रकट ही अब तक उजल्लर्खत मानस के सभी तीन घाट- ज्ञान, भजक्त, कम,श यत्नर्ान मानुर्षी सदांभ शर्ाले हैं, क्योंफक मानर् चेतना में ये पृर्क-पृर्क रुपेर्- व्याकृत हैं। फकांतु कर्-कर् में व्याप्त रहे भर्ग्न और भर्द् प्रसाद के मलए यह र्र्ेर्ष सदांभ शकोई सीमा रेखा नहीं हो सकती। जीर्ों सहहत सारी जड प्रकृनत के करतब भी तो अपनेआिार से, सर्ात्शमा से अमभन्द्नता के मलए ही तो हैं। इसीमलए र्ोस्र्ामी तुलसीदास का चौर्ा घाट-र्ोघाट, जजसमें ज्ञान, कम,श भजक्त का अपृर्क्कृत समजन्द्र्त भार् है-सबके मलए सुर्म एक खुला घाट है। इसमें अर्गाहन हेतु पर्ु-पक्षी, सिम-अिम, अधिकारी-अनधिकृत, जड-चेतन सभी उतर सकतेहैं। साख्यांय मतानुसार प्रकृनत का सारा खेल पुरुर्ष की मुजक्त के मलए है और इस मुजक्त में अपना लक्ष्य सिा कर स्र्यांप्रकृनत भी मुक्त हो जाती है। र्ेदातां इसीमलए इस प्रकृनत को परम पुरुर्ष की र्जक्त रूपी माया कहता है। माया मनुष्य को आईना हदखाती है। यह

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 8 आईना आत्म-दर्नश के मलए भी है और मोहमूल जर्त्–्दर्नश के मलए भी। इस माया-जन्द्य आईनेको मनुष्य अपने

'मन' के रूप में पहचानता है। जजसे हम बहुआयामी ससांार कहते ेहैं, ई र्स्तुतः द्र्-आयामी मन की सृजृष्ट है। मन के रार्ानुरायी सुख और द्रेर्षानुर्यी दु्ःख ये दो ही आयाम हैं जजनके सहारे ई बहु-आयामी ससांार की सृजृष्ट करता है। हमारा सारा ससांार रार्-द्रेर्षमय या मोहमूल है। मन के इस स्र्रूप को पहचान लेना ही 'ज्ञान' है और मन को इस तरह जाननेर्ाला 'म' ैं आत्मा हूँ। इस तरह आत्मर्त् ्हो जाने से मन की भ्रामक सृजृष्ट मन सहहत 'म' ैं में लीन हो जाती है। पाप-पुण्य, कम-शअकम,श ज्ञान-अज्ञान आहद सारे द्रैत र्पघल कर 'म' ैं रुपी अद्रैत में समा जाते हैं। आत्म-दर्नश इसी अद्रैत बिो का नाम है।

परांतु यह भी सच है फक र्ास्तर् में ऐसा आत्म-बिो सहजतः लभ्य नही ांहै। इसे सुलभ बनानेके मलए हमें पहले 'कम'श के रहस्य को समझना होर्ा। रामकर्ा प्रसर्ां में श्रीराम के कष्टमय र्नर्ासी जीर्न के मलए ननर्षाद राज माता कैकेयी को दोर्षी मानतेहैं। लक्ष्मर् उन्द्हें समझाते हैं फक जीर् के सुख-दु्ःख तो स्र्यांउसके अपनेकमों से उपजते हैं और कम-शजन्द्य सुख-दु्ःख को केर्ल आत्म-दर्नश के मार् शमें सबसे बडा रोडा है मन द्रारा बुना हुआ भ्रम जाल, जो हमें र्र्षय-जर्त में कमों की डोर से बिांा कर रखता है। आत्म-दर्नश के मलए मन के इस जाल को मर्धर्ल करना होर्ा, मन की चचांलता को रोक कर उसे जस्र्र करना होर्ा। इसके मलए उपाय है- अभ्यास और

र्ैराग्य। [illegible] देखने-सुनने–र्ुनने की फिया करते हैं। दूसूरी ओर जब भी हम अपने को कुछ-कताश, भोक्ता, ज्ञाता आहद मान लेते हैं, मन सामने आ खडा होता है। बजल्क मान लेना, मान्द्यता ही मन है जबफक अपने को कुछ भी न मान कर आत्मर्त् ्हो रहना ही अ-मन होना है। इसे इस तरह भी समझा जा सकता है-चूँफक मेरा मानना ही, मान्द्यता ही मन है, मन का स्र्ामी 'म' ैं आत्मा हूँ अर्ात्श ्मन मेरे र्् में हुआ। इसमलए र्ास्तर् में मनस जन्द्य कमों से 'म' ैं बिांा हुआ नहींहूँ, कम शकरते हुए भी 'म' ैं अकत्ताशहूँ। अब मेरी र्नत मनरधचत ससांार में न होकर आत्मा के अनतांाकार् में है। सांसार में इसी र्नतहीनता का नाम र्रार् या र्ैराग्य है, जजसके त्रबना ज्ञान सभांर् नहीां।

रष्टव्य है फक 'म' ैं के अ-कत्ताश भार् का एक ननर्षेिमूलक पि है और दूसूरा र्ृनिमूलक। ससांार से उपरनत, अपर र्ैराग्य, उसका ननर्षेिमूलक पि है और यह सर्ंशा सभांर् है फक मन के र्र्षय-र्कल्पों से भरी दुननयाँ ँमें पररजस्र्नत र्र्रेर्ष में अ-कत्ताश बना मनुष्य पररजस्र्नत बदल जानेपर पुनः कम शकी राह पकड ले। अतः जब तक हम उक्त अ-कत्ताश भार् को ज्ञान की भूमम पर आत्म-दर्नश के आिार पर जस्र्र नहींकर देते, उसकी जस्र्नत डार्ांाडोल रह सकती है। दूसूरी ओर अ-कताश भार् की उक्त तरह की जस्र्रता ही पर-र्ैराग्य है अर्ाशत् ्र्ैराग्य का आत्मदर्ी रूप, • जहाँसे लौटकर मनुष्य पुनः कम शमें, कत्ताश भार् में मलप्त नहीं होता। यह रार्-द्रेर्ष, सुख-दुखु से परे आत्मानांद की अर्स्र्ा है जजसमें जीर् और ब्रह्म का, रामभक्त और राम का भेद समाप्त हो जाता है। र्ुद् भजक्त ईश्र्र में प्रेममय प्रपत्त-पूर्कश अपने पृर्क अजस्तत्र् को भेदमूलक सारे प्रकल्पों को समाप्त कर देनेका ही भार् है। परमार् शतत्त्तः अभेद-मसद्धि है।

महर्र्ष शमुक्त के 'रामदर्नश' का यही सार है। र्ास्तर् में 'रामदर्नश' आत्म दर्नश है। रे्दाांत दर्नश का यही सार-कथ्य है। आध्याजत्मक दृजष्ट से कम शयोर्, ज्ञान योर् और भजक्त योर् मूलतः प्रभु ुसयाीर् में एकीकृत हो जाते हैं। उनमें अभेद-दर्नश ही राम दर्नश है क्योंफक 'राम' स्र्रुप में रे् अभेदर्त् ्ही प्रकट होते हैं। सत्,् धचत् ्और आनांद के पृर्क्कृत मानुर्षी भार् ब्रह्म स्र्रुप में एकीकृत 'सजच्चदानदां' बनकर प्रकट होतेहैं। 'रामचररत मानस' के राम का माया-मानुर्षी सर्ुचररत अब देर्-काल की पररधि से बाहर र्ाश्र्त, सर्व्यापी, सर्वग्शाही चैतन्द्य तत्र् बनकर अपनेननमलश, र्ुदि्ु, ननराकृत-ननर्ुर्श रूप में जस्र्र हो जाता है। ननराकृत ननर्ुर्श राम का यह प्राकट्य ही आत्म दर्नश है। ऐसा आत्म दर्नश ही सर्ुर् राम को समयानुकूल र्ढ़ता और पूजा प्रनतष्ठा के मलए प्रस्तुत करता है।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेये
पूर् शप्राध्यापक दर्नश एर् ांिम शर्भार्
र्श्र्भारती र्श्र्र्द्यालय र्ानांतननकेतन (प.र्.ां)
एर्म् ्
प.ां रर्र्कांर र्ुकुल र्श्र्र्द्यालय,
रायपुर (छ.र्.)

उद्र्ार

मेरे ही स्र्ात्मस्र्रूप
महामहहम -

आपकी महती आकाांा का समुधचत सम्मान करते हुए "महर्र्ष शमुक्तानुभूनत साहहत्य प्रचारक सममनत' द्र्ारा बहुजन हहताय, बहुजन सुखाय, राम दर्नश आपको समर्पतश फकया जा रहा है।

श्री रामचररतमानसान्द्तर्तश अधिकाांर्तः जजतनेभी तत्र्-परक आध्याजत्मक प्रसर्ां हैं, यर्ा-मर्ा र्ीता, लक्ष्मर् र्ीता, राम र्ीता, जनक स्तुनत, र्ाल्मीफक स्तुनत, रे्द स्तुनत, धचत्रकूट के चारों दरबार,

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 10 र्भीर्षर्र्रार्नत, ज्ञान-रै्राग्य ननरूपर्, दर्ना एर् ांराम नाम महहमा आहद के जक्लष्ट भार्ों का सहज एर्ां
सरल भाष्य, इस पुस्तक की र्ेर्षय र्स्तु है।

राम दर्नश में प्रनतपाहदत तत्र्- "प्रभु प्रनतपाद्य राम भर्ाना" - न सरु्र् ब्रह्म है और न ननरु्र्श ब्रह्म, अर्पतु सरु्र्-ननरु्र्श से परे, सरु्र्-ननरु्र्श का आिार, सरु्र्-ननरु्र्श का रष्टा, ज्ञाता, अनुभर् से परे है और इसे ही सत्ता, भूमा या अजस्तत्र् कहतेहैं।

जजस अनुभूनत में, जजस अनुभूनत करके, जजस अनुभूनत से परानुभूनत की अनुभूनत नही ांहोती, र्ही अनुभूनत अपना स्र्रूप (राम) है।

यह रहस्य कृपा साध्य है और सतां र्र् के मभखारी हुए त्रबना इस अनुभूनत की अनुभूनत होना सम्भर् नही ांहै।

समझेगो िही सुहर्ि पिसंद बि गया दोस्ि दिरिशों का ।
ये हदल हदमाग की चीज िहींजो करिा है सो खो बैठा ।।

श्रीरामचररतमानस की सभी चौपाइयाँ मिां हैं और प्रस्तुत पुस्तक रामदर्नश इन मिांों का भाष्य है। इस तरह का भाष्य र्ही कर सकता है, जजनके पास अनुभर् बल हो, आत्मबल हो, आत्म ननष्ठा हो, र्ुरुओांकी महान कृपा हो और र्ेद्र्ान भी हो, तब ही इस तरह का र्ेर्चन हो सकता है, यह भर्ान की देन है, खाली र्ेद्र्त्ता नही।ां

महर्षष शमुक्त द्र्ारा समय-समय पर हुए श्री रामचररत मानस के आिार पर आध्याजत्मक प्रर्चनों के इस सकांलन को मूत शरूप हदया है, स्र्. श्री झुम्मुकलाल जी दीन, दुर् शने।

सममनत श्री दीन जी का आभारी है, जजन्दहोंने महर्षष शमुक्त के साजन्दनध्य में रहकर उनकी अनुमनत से ही उनकी अनुभूनतयों को र्ददों में र्परोकर जन कल्यार्ार् शप्रकामर्त कर, उन्दहीां के चरर्ों में समर्पतश कर, इस उजक्त को चररतार् शफकया।

मेरा कुछ भी है िहीं,ं जो कुछ है सो िोर ।
िेरा िुझको सौंपि, क्या लागे है मोर ।।

उसी पूर् शप्रकामर्त पुस्तक का यह नर्-सांस्करर्, नर्ीन पररिान से र्ेजष्टत कर आपके कल्यार्ार् श प्रस्तुत फकया जा रहा है। पहले यह तीन खण्डों में र्ा, अब तीन भार्ों को एक में सजम्ममलत करके इसे रामदर्नश (सम्पूर्)श नाम से प्रस्तुत कर रहे हैं।

रामदर्नश (सम्पूर्)श श्री रामचररत मानस पे्रेममयों के मलए र्दान मसद् हुई है, इसीमलए इसकी बढ़ती हुई मार्ां को देखते हुए पुनः प्रकार्न का ननर्यश मलया र्या।

रामदर्नश का श्रद्ापूर्कश पठन, मनन, ननहदध्यासन से रामदर्नश में फकजचचत सदेंह नही,ां इसके ठीक र्परीत -

अगरचेकि्ब अपी जगह से टले ो टल जाये ।
बहर जुगिू की दुमु से जले ो जल जाये ।
हहमालय बाद की ठोकर से गो फिसल जाये ।
और आिाब भी फकबले-उरूज ढल जाये ।।

यद्यर्प ये सम्भर् नही ांफफर भी ऐसा हो जाये। मर्र मदांमनत, र्र्षयासक्त, दुराग्रही और कुतकी जैसे प्रपचची दररर जीर्ों के मलए इसका भार्, ग्रहर् करना असम्भर् है, इसमलए रामदर्नश (सम्पूर्)श "दनुज र्मोहन, जन सुखकारी" है।

यह र्श्र् में अपनी र्ानी का एक ही साहहत्य है। प्रमार्? हार् कांर्न को आरसी क्या। बकौल महर्र्ष श मुक्त -

मस्ाी मैं मस् होकर मस्ाी को मलख रहा हूँ।
मस्ाी मैं मस् पिढ़ा दररया जर आयेगा ।।

यूँ तो र्ुद्धार्ुद्धि पर र्र्ेर्ष ध्यान हदया र्या है और इसमें श्री नारद दुबेले और श्रीराम प्रसाद साहू का प्रयास प्रर्ांनीय है, फफर भी कही–ांकहीांपर यहद अर्ुद्धि रह र्यी हो तो सुधि-जन इसे सुिारकर पढ़ें और सममनत को मा करें। क्योंफक

अल्ाजि के पेचों में उलझि हींदिाा ।
गब्बस को मिलब है सदि से या गौहर से ।।
अलम् ्!

अध्यक्ष

(डॉ. सत्यिान्द्द त्रिपाठी)
महवष मुक्ाििभूति साहहत्य प्रचारक
सममति

आरती

आरती सद्गुरुदेर् नमामी। पार ब्रह्म-प्रभु ुअन्द्तयामशी।

अरु्र् अपार अलख अर्र्नारर्ी। अचल र्र्मल प्रभु सब उर र्ासी॥
ननर्ुर्श ननर्र्कशार सुखरासी। एक अरूप अलेख अनामी।।1।।
महहमा नेनत नेनत श्रुनत र्ारे्ं। ननत्य ननरांजन सब बतलारे्ं।॥

रे्र्ेष र्ारदा पार न पारे्ं। जय सजच्चदानदां अमभरामी।।2।।

र्चन फकरर् तम मोह र्र्नार्क। ज्ञान सूय शमाया के र्ासक॥
हदव्य दृजष्ट के परम प्रकार्क। ब्रह्माहदक सुर सेव्य नमामी॥३॥

जब तक कृपा न तुम प्रभु ुकरते। र्ंधि हररहर क्या भर् से तरते े॥
असर्ंचारर र्ुरु भजक्त जो करते। ममलतेराम उन्द्हें सुखिामी ॥4॥

र्ुरुर्र चरर् कमल की छाया । करती दूरू ताप ि य माया ||
जब तक पूर् शन होरे्दाया । ममलत नही ां मर् अन्द्तयामशी ॥5॥

भजक्त ज्ञान रै्राग्य ननयम के । रूप सकल इांहरय सयांम के ।
भूर्षर् मर् दम पचां सुयम के । श्रोत्रिय ब्रह्मननष्ठ मम स्र्ामी ॥6॥

जीर्न ि न मांजुल ननज जन के । अ ांकुर् मद मतर्ां जन मन के ॥
र्ुधुच पर् परमारर् पधर्कन के। इक रस आनांद रूप नमामी |17||

ॐ पूर्मशदः पूर्मशमदां पूर्ात्शपूर्मुशदच्यते।
पूर्स्शय पूर्मशादाय पूर्मेशर्ार्मर्ष्यते॥

ॐ र्ाजन्द्तः र्ाजन्द्तः र्ाजन्द्तः

॥ बोलो सद्गुरुदेर् भर्ान की जय ॥

महर्र्ष शमुकुत

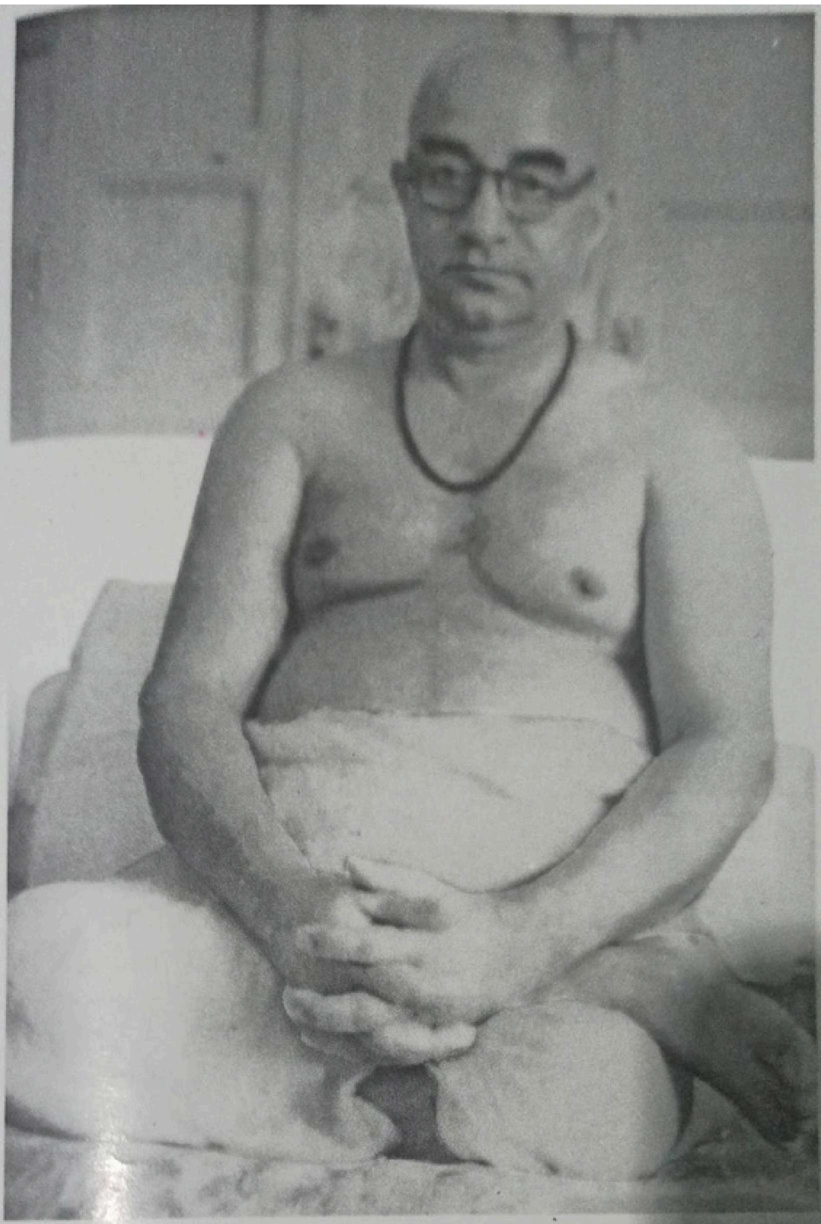
महर्र्ष शमुक्त जैसे रे् ेरै्से ही रे्। यहद कोई यह दार्ा करे फक ऐसे रे् ेऔर रै्से रे्, े तो उनका दार्ा र्लत ही होर्ा। अपने पररचय में रे् ेस्यां कहा करते रे् - " हैं तो हम अजन्द्मा" लेफकन हमें आप लोर्ों के खानतर आना पडा।"

उन्द्होंने ेयह भी कहा र्ा भर्ान को तो जान सकतेहो क्योंफक ई तुम्हारा आत्मा है, परन्द्तु मुक्त को समझना बहुुत ही कहठन (असम्भर्) है।' आत्मा का लिर् होता है परन्द्तुइनका तो कोई लिर् ही नहीं र्ा। ऐसे अलिर् को यहद कोई जान जाय तो बन्द्ध्या का पिु मसहां का मर्कार कर सकता है।

अपनेपचास र्षों के अनर्रत प्रचार में जजस मसद्धातिों या िम शकी इन्द्होंने प्रनतष्ठा की उस िम शको महात्मा करपािी जी ने 'ज दां। रे्दान्द्त' (अनुभर्युक्त) कहा है और यह भी कहा उन्द्होनेफक - "अभी र्श्र् में जजांदा रे्दान्द्त (सत्य िम)श का प्रचार कोई कर रहे हैं तो महर्र्ष शमुक्त ही हैं।"

र्ास्र्ािे ने इनका पररचय इस प्रकार हदया है -

यस्यान्द्र् िाहद मध्यंहिह कर चरणंामि गिों ंि सिूम्,्
ाि जाािीिै िणाा:ि िहह भिति पुरूषो ि िपुंसो ि च स्र्ाि।
ाकिारं िैिकारं िहह जति मरणं िास्स्र् पुण्यं ि पापम्,्
त्त्र्ि िो ित्त्र्मैकं सहज समरसं ।



महर्षि मुक्त

विषय-सूची

प्रर्म खण्ड

1. मर्ऱ् ऱ्ीता

2. राम नाम महहमा

3. मनु र्तरुपा र्ंदान

।। श्री र्ेंऱ्ाय नमः ।।

।। श्री र्ुरुर्े ेनमः ।।

1. मन्त्रीता

नारायर्ोपननर्षत् ्

ॐ अर् पुरुर्षो ह रै् नारायर्ोऽकामयत प्रजाः सृजेयेनत। नारायर्ात्प्रार्ो जायते। मनः सरे्जन्द्रयार्् च। ख ां र्ायुज्योनतरापः पृथ्र्ी र्श्र्स्य िाररर्ी। नारायर्ाद् ब्रह्मा जायते। नारायर्ाद् रुरो जायते। नारायर्ाद् इन्द्रो जायते। नारायर्ात्प्रजापनतः प्रजायते।

नारायर्ाद्द्र्ादर्ाऽऽहदत्याः सरे् रुरा सरे् र्सर्ः सर्ार्शर् भूतानन सर्ार्शर्छन्द्दामांस नारायर्ादेर् समुत्पद्यन्द्ते नारायर्ात्प्रर्तर्न्द्शते। नारायरे् प्रलीयन्द्ते।

अर् ननत्यो नारायर्ः। ब्रह्मा नारायर्ः। मर्श्र्च नारायर्ः। र्श्र्च नारायर्ः। कालश्च नारायर्ः। हदर्श्र्च नारायर्ः र्हदश्च नारायर्ः। ऊध्र्चश नारायर्ः। अिश्च नारायर्ः। अन्द्तबहशहश्च नारायर्ः।

नारायर् एर्ेदांसर्् ांयद्भूत ांयच्च भव्यम् ्ननष्कलङ्को ननरचजनो, ननर्र्कशल्पो ननराख्यातः र्ुद्िो देर् एको नारायर्ो न द्र्र्तीयोऽजस्त कजश्चत्।् य एर् ांर्ेद स र्ष्र्ुरेर् भर्नत स र्ष्र्ुरेर् भर्नत।।

ॐ शास्न्द्ाः शास्न्द्ाः शास्न्द्ाः

रामाय राम भराय, रामचन्द्राय र्सेि। रघुनार्ाय नार्ाय, सीतायाः पतये नमः यन्द्मायार्श्र्र्त श र्श्र्मर्खलां ब्रह्माहददेर्ासुरा। यत्सत्र्ादमृर्षैर् भानत सकलांरज्जौ यर्ाहेभमशः।। यत्पादप्लर्मेकमेर् हह भर्ाम्भोजस्ततीर्षार्शताां । न्द्रेंऽहां तमर्ेर्ष कारर्परां रामाख्यमीर् ांहररम्।्।

अनन्द्त नाम रूपों में अमभव्यक्त अहमत्र्ेन प्रस्फुररत, महामहहम, स्र्ात्मस्र्रूप सकल चराचर र्ूनद्द एर् ांसमुपजस्त आत्म जजज्ञासु र्ृ। 'उत्तष्ठत् ्जाग्रत प्राप्य र्जन्द्नबोित्।्'
अनाहदकाल से अर्द्या की घोर ननरा में सोनेर्ाले भव्य जीर्ो। उठो। स्र्- स्र्रूप भर्ान आत्मा में जार्ो और फकसी श्र्ेष्ठ महापुरुर्ष की र्र् में जाकर अपना आत्म कल्यार् करो। मानर् जीर्न का यही चरम लक्ष्य है।

यहाँ ँपर आध्याजत्मक प्रर्चन श्री रामचररत मानस के आिार पर हो रहा है। रामचररत मानस (रामायर्) भारत र्ष शकी अनुपम र्भूनत है। यह ससाांर के कोने- कोनेमें फैला हुआ है। र्देर्ों में भी इसका प्रचार है। रामायर् में क्या नही ांहै, इसम ज्ञान, र्ैराग्य, भजक्त, राजनीनत, िमनशीनत आहद सभी कुछ भरा पडा है। रामायर् की भार्षा, अत्यन्द्त सरल, सरस, रोचक और भार्पूर् शहै। इसके भार् सभी के समझ में आने ेलायक है। इसका महत्र् केर्ल इस देर् में ही नहीां, सर्श इसकी प्रनतभा की छटा नछटकी पड रही है। हहन्द्ी जर्त् ्में ऐसा ग्रन्द् न

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 19 बना है और न भर्ष्य में इस तरह की आर्ा है। इसमें चारों र्ेद, छः हों र्ास्,ि उपननर्षद्, श्रुनत, स्मृनृत आहद सभी
का समन्द्र्य है।

व्यर्हार जर्त् ्में र्पता के प्रनत पिु का, पिु के प्रनत र्पता का, भाई के प्रनत भाई का, स्ीि के प्रनत पुरुर्ष का, पुरुर्ष के प्रनत स्ीि का, र्ुरु के प्रनत मर्ष्य का, मर्ष्य के प्रनत र्ुरु का, राजा के प्रनत प्रजा का, प्रजा के प्रनत राजा का, स्र्ामी के प्रनत सेर्क का, सेर्क के प्रनत स्र्ामी का, क्या कत्तव्शय है? रामायर् में यह सब ममलेर्ा। प्रत्येक की मयादशा का यहाँ उल्लेख है। यह एक अलौफकक ग्रन्द्र् है।

बिोर्ान होकर व्यर्हाररक जर्त् ्में, व्यर्हार कैसे करना है, यह रामायर् मसखाती है।

जजस देर्में ईश्र्र और िम शके प्रनत स्र्ान नही ांहै, उस देर् में भी राजनैनतक दृजष्टकोर् से लोर् इसे अपनातेहैं।

स्र्ान्द्ििः सुखाय िुलसी रघिुाथ गाथा ।
भाषातिबन्द्धमतिमञ्जुलमािोति ।।

अर्ात्श ्मनैं (तुलसीदास ने) अपनेअन्द्तःकरर् के सुख के मलए इसकी रचना की। तब यहाँपर र्कां होती है फक क्या र्ोसाई जी महाराज बडे ेस्र्ार्ी र्े? े

नही!ां इसका दूसूरा अर्् श-

"र्ुष्ठ अन्द्तःकरर्", याने स्र्ान्द्तःकरर् अर्ात्श ्जजनके सुन्द्दर पर्र्ि अन्द्तःकरर् हैं, उनके मलए इस ग्रन्द्र् की रचना की र्यी, जजससे "मनतमचजुलमातनोनत" उनकी कोमल बुद्धि प्रसाररत हो। हृदय मोम बने।

"स्र्ान्द्तः सुखाय" जजनके र्ुष्क हृदय हैं, उन्द्हें हरा-भरा करने ेके मलए, श्रुनतयों, स्मृनृतयों, र्ेदों तर्ा र्ास्िों सभी का ननचोड इस ग्रन्द्र् में भरा र्या।

र्ेदों की रचना ब्रह्मा ने नहीं की, यह तो ब्रह्मा के मुख से ननकले, इसी प्रकार रामायर् की रचना, तुलसीदास ने नही ांफकया, इसकी रचना तो मर्जी के द्र्ारा पहहले से ही की ई र्ी और उन्द्होंनेइसे अपनेमन में रखा र्ा, जजसको सुन्द्दर समय पाकर उन्द्होंने माता पार्तशी को सुनायी। इसमलए इस ग्रन्द्र् का नाम "रामचररतमानस"" पडा, जो तुलसीदास जी के मुख से ननकला है।

रचच महेस तिज मिास राखा। पाइ सुसमउ मसिा सि भाषा ।।
िािे रामचररिमािस बर। घरेउ िाम हहयेंहेरर हरवष हर ।।

भैय्या। रामचररतमान से िम,श अर्,श काम और मोि चारों फल की प्राजप्त होती है।

िभिीशङ्करौ िन्दे श्रद्धाविश्िासिरूवपणौ।
याभयांत्रबिा ि पश्यस्न्द्ि मसद्धाः स्िान्द्िःस्थमीश्िरिम् ्।।

माता पार्तशी श्रद्िा रूप और भर्ान कांर र्श्रास रूप हैं, क्योंफक सारे चराचर का अजस्तत्र, र्श्रात्मा भर्ान राम (ईश्रर) 'म'ें आत्मा रूप में, रर्-रर् में व्यापक है। फफर भी उसे त्रबना श्रद्िा और र्श्रास के देख नहीां सकते। मानसकार कहते हैं -

न्द्दे बोधमयं तित्यं गुरं शंकंररूवपणम् ्।
यमाचश्रिो हह िक्रोऽवप चन्द्राः सिि िन्द्द्यिे ।।

अर्ात्् ननत्य बिोरूप रुरु अहां र्न्दे, कांर रूप रुरु की म ैंर्न्दना करता हूँ, क्योंफक ननत्य ज्ञान-स्रूप रुरु की उपमा भर्ान कांर से दी र्यी।

जैसे, द्र्तीया का चन्द्रमा यद्यर्प हँमसया के समान टेढा होता है। परन्द्तु, फफर भी भर्ान् र्कांर के मस्तक में रहनेके कारर् उनके आधश्रत होनेसे ससाांर उसकी र्न्दना करता है, इसी प्रकार यह रचना, यद्यर्प टेढी-मेढी है, फफर भी ननत्य बिोरूप भर्ान कांर के आधश्रत होनेके कारर् जर्त र्न्दनीय है।

धाममकि ित्त्ि के िपि से अमभभूवषि रम्य मिोहर है ।
राम की भस्क्ि अहै इसमें, भरपूर भरा जल सुन्द्दर है ।।
मौस्क्िक हैं ममलि उपदेश, अलभय महा सुख तिझरि है ।
प्ेरेमी मराल गणों के मलए, यह मिास मिा सरोिर है ।।
िुलसीकृि राम कथा जग में, िर िारिर िारि को पुल सी ।
पुलसी भि सागर पारि को, पढ़के मि गाठूँ गई खुल सी ।
खुलसी गई पापि की गठरी, घुल सी गई ििजा अर हुलसी ।
हुलसी ििजा, हुलसी िसुधा, हुलसी-हुलसी, जि के हुलसी ।।

एक बार हनुमान जी ने पहाड पर अपने नाखून से पत्र र्ढ़-र्ढ़ कर सातो काण्ड रामायर् मलखा और र्े उस पहाड को भर्ान राम के पास ले जाकर र्नीत भार् से बोले- "भर्न! म ैंसरकारी चररि मलख कर लाया हूँ, आप इसे देखकर इसमें अपना हस्तिार कर दीजजये।"

भर्ान राम ने उसे ध्यान से देखा तर्ा पढकर बडे प्रसन्द्न हुए और बोले फक हनुमान जी तुमने बहुत पररश्रम फकया है। भैया, तुम्हारा यह पररश्रम प्रर्ांनीय है। परन्द्तु, देखो अभी-अभी श्री र्ाल्मीफक जी भी एक रामायर् मलखकर ले आये र्े। मनैं उसमें अपनेहस्तिार कर हदए है। अब तुम इसे मेरी आज्ञा से उनके पास ले

जाओ और उनसे अपनेहस्तिार करने ◌ेके मलए कहना, यहद रे् अपना हस्तिाकर कर देते हैं तो उसे मेरा हस्तिार समझना।

भर्ग्ान राम की आज्ञानुसार हनुमान जी उस पहाड को उठाकर श्री र्ाल्मीफक जी के पास ले र्ये, र्ाल्मीफक जी उस समय फकसी समुर के फकनारे रहते रे्। श्री हनुमान जी ने उन्द्हें रामाज्ञा सुनाकर उसमें हस्तिार करने ◌ेको कहा। र्ाल्मीफक जी ने उसे इिर-उिर से देखा और उपेिा की भार्ना से यह कहकर इसमें सब बातें स्पष्ट नहीां मलखी र्यी हैं, इसमें र्ोसा पदाश (लुका-नछपी की बातें) है। उसे समुर में फेंक हदये। इस पर हनुमान जी बडे ◌ेदु:खी और िोधित हुए। रे् िोि में भरकर बोले- देखो, म ◌ैंइतने ◌ेपररश्रम और श्रद्िा से सरकारी चररि मलखकर भर्ग्ान के पास ले र्या। उन्द्होंने आपके पास भेजा, परन्द्तु आपने मेरे पररश्रम की उपेिा करते हुए तुच्छ समझकर अमभमानपूर्कश उसे समुर में फेंक हदया। आपको अपनी कर्ता का इतना अमभमान है। अब म ◌ैंआपको श्राप देता हूँ फक यद्यर्प ब्रह्मननष्ठ का पुनजन्द्शम नही होता, परन्द्तु फफर भी आपको जन्द्म लेना पडेर्ा और आपने जजस रामायर् को उपेिापूर्कश समुर में फेंका है, उसी को अपनेही हार्ों से मलखना पडेर्ा। र्ाल्मीफक जी भी कम नही ◌ांरे्,◌े उन्द्होंने भी हनुमान जी को श्राप देनेके मलए कमण्डल से जल उठाया। हनुमानजी तुरन्द्त समझ र्ये और रे् उनके चरर्ों में धर्र कर नम्र भार् से कहनेलर्े - "भर्र्न्!◌् ऐसा मत कीजजए। इसमें आपके द्र्ारा सारे र्श्र् का कल्यार् होना है। कमलयुर् के जीर्ों के उद्िार के मलए आप ननममत्त होंर्े। अत:, िमा कीजजए और ससांार के जन कल्यार् के मलए मेरा अमभर्ाप स्र्ीकार कीजजए। इस रामायर् को मलखते समय जहाँ ◌ँकहीांपर आप भूलेंर्े, म ◌ैंसमय-समय पर आकर आपकी सहायता करूँर्ा।" इस पर र्ाल्मीफक जी र्ान्द्त हो र्ये। भैय्या ! यह र्ोपनीय रहस्य है। बडे–बडे ◌ेमहात्माओां के द्र्ारा तर्ा हमने स्र्यां कुछ काल एकान्द्तर्ास करके इसका अध्ययन फकया है, यह कही ◌ांनहीां मलखा है। इस तरह र्ाल्मीफक जी ही तुलसीदास हुए और इस रामायर् को मलखे।

कमल कुहटल जीि तिस्िार हहि. िाल्मीफक िुलसी भये ।।

र्ाल्मीफक जी ने जो कहा र्ा फक इसमें बातें साफ-साफ नहीां मलखी र्यीं हैं, लुका-नछपी की र्यीं है, र्ह यह है फक इन्द्र के पुि जयन्द्त के सबांि में जब सीताजी के मलए "सीता चरन चोंच हनत भार्ा" मलखा है। इसको र्ाल्मीफक जी ने अपनी रामायर् में मलखा है फक जयन्द्त ने सीताजी के स्तन में चोंच मारा। अब तुलसीदास जी भी चोंच मारना, मलख तो र्ही रहे हैं, परन्द्तुकहाँपर मारा यह नही ◌ांबता रहे हैं। तुलसीदास जी मलखतेहैं फक -

"सीिा चरि चोंच हति भागा" अर्ात्श ◌्जयन्द्त ने सीता जी को अपनेचरर् से अर्ात्श ◌्पजों से और चोंच से आहत फकया, मारा। चरर् और चोंच दोनों से मारा, पर कहाँ ◌ँपर? यह नही ◌ांबताया। अपनेर्ददों में नहीां कहा, पर भार् स्तन पर मारनेका ही रखा, क्योंफक जजस समय चोंच और चरर् मारा, उस समय भर्र्ान राम, माता सीता जी के जघों पर मसर रखकर लेटे हुए रे्। इस पररजस्र्नत में जयन्द्त यहद सीताजी के चरर् में चोंच मारता तो र्ह भर्र्ान राम को कैसे पता चलता? क्योंफक पैर से खून बहता, तो र्ह नीचेकी ही ओर जाता, जजससे भर्र्ान राम लेटे-लेटे नहीां जान सकते। स्तन में ही चोंच मारनेपर खून बहने ◌ेपर रे् तुरन्द्त लेटे-लेटे ही जान र्ये-

"चला रचधर रघ्रािायक जािा ।"

चोंच स्तन में ही मारा र्या तभी तो भर्र्ान त्रबना बताये लेटे-लेटे ही जान र्ये। इस तरह तुलसीदास जी ने चोंच के स्र्ान को अपनेमुँह से व्यक्त नहीांफकया, क्योंफक सीता जी के प्रनत उनकी माता की दृजष्ट र्ी। अतः, ऐसा कहना मयादशार्हीन र्ा।

इसी को र्ोसा पट्टी कहकर, र्ाल्मीफक जी ने िो फकया र्ा और उनके द्र्ारा मलखी र्यी रामायर् को समुर में फेंक हदया र्ा। इसी तरह कही–ांकहीां कुछ और प्रसर्ां है। भैय्या, यह अभूतपूर् शरचना है, इसमें ऐसे-ऐसे े माममकश स्र्ल हैं फक त्रबना महान् ्पुरुषों की कृपा के लर्ते ेनही,ां चाहे फकतना ही र्ेद्र्ान क्यों न हो। रामायर् की रचना करते समय, हनुमान जी ने सहायता कहाँ ँपहुँचायी है, इस प्रसर्ां पर र्ोडा प्रकार् डाला जा रहा है। बालकाण्ड में सीता स्र्यर्ांर के समय एक प्रसर्ां आता है फक -

संकर चापु जहाजु, सागर रघुबर बाहुबल ।
बू सो सकल समाजु चढ़ा जो प्रथमहहं ंमोह बस ।।

सोरठा के तीन चरर् की रचना जब तुलसीदास जी ने कर ली, तब र्े सोचनेलर्े फक मनैं ेर्कां
र जी के
निुर्ष को, जहाज कहा और भर्र्ान राम की भुजाओांके बल को सार्र की उपमा दी, जहाँ ँफक जहाज तैर रहा है, अब जजतने राजे-महाराजे, सन्द्त- महात्मा, ऋर्ष-मुनन उस स्र्यर्ांर में उपजस्र्त हैं, र्े सब-

"बूडे़ सकल समाज ॥"

मलख डालने पर डूब र्ये। तब र्े सोचने लर्े फक यह मनैं क्या मलख हदया। डूबे तो अमभमानी राजे-महाराजेही, जजनको भर्र्ान राम की भुजाओांके बल का अज्ञान र्ा और जो िनुर्ष को नही ांतोड सकनेपर लजज्जत होकर, अपनी-अपनी जर्ह पर जा बैठे र्े। उनका िनुर्ष तोडने के मलए उठना, मानों चाप रूपी जहाज पर चढ़ना है और उसे नही ांतोड सकना ही डूब जाना है। तो डूबे तो यही लोर्, न फक र्हाँउपजस्र्त सन्द्त-महात्मा, ऋर्ष-मुनन आहद लोर्। परन्द्तु, मनैं "बूडेउे सकल समाज" मलखकर सबका डूब जाना मलख डाला और मलखा हुआ काटा नहीांजा सकता, उस पर हरताल नहीां फेरा जा सकता। अब, आर्े क्या कहा जाये? इस उलझन को कैसे सुलझाऊँ। बस, इसी धचन्द्ता में र्े ेबडी देर तक सोचते बैठे रहे, जब र्ेइस कहठनाई को नही ांहल कर सके, तब अन्द्त में यह सोचकर फक पहहले स्नान कर आर्ें, फफर र्ाांत धचत्त से और ठण्डे ेहदमार् से इसे सोचेंर्े, र्े ेअपना कमण्डल उठाये और र्ांर्ा स्नान को चल हदये। र्हाँ से लौटकर आनेपर ननजश्चन्द्त हो, जब र्े फफर मलखने बैठे, तब उस सोरठा को पूरा मलखा पाया। उसका चौर्ा चरर् पूरा हो चुका र्ा। मलखा र्ा-

"चढ़े जो प्रथमहहं ंमोह बस ।।"

इसका मतलब र्ा, सब नहीं डूबे, रे् ही डूबे, जजन्र्हें भर्र्ान राम की भुजा के बल का अज्ञान र्ा और जो अपनी ताकत आजमानिेनुर्ष तोडने उठे र्े। अर्ात्श,् उस जहाज पर बैठे र्े। तुलसीदास जी समझ र्ें फक यह सहायता अर्ाशत् ्चौर्ेचरर् की पूनत,श हनुमान जी द्वारा की र्यी है।

यह एक सरोर्र है। मानसकार कहते हैं फक तालाब में घाट होते हैं, इस मानसरोर्र में चार घाट हैं। कोई भी कर्ार्ाचक चार ही घाट में कर्ा करते हैं- 1. भर्र्ान कर्ांर और पार्तशी, 2. महात्मा कार्भुसुण्डी और र्रुड, 3. महर्र्ष शयाज्ञल्क्र्य और भारद्वाज और 4. र्ोसाई तुलसीदास और भक्तर्। ये चारों के सर्ांद ही चार घाट हैं-

सुहठ सुन्दर संदिि बर, त्रबरचे बुद्चध त्रबचारर ।
तेइ एहह पािि सुभग सर, घाट मिोहर चारर ॥

यही इस पर्रि और सुन्दर सरोर्र के चार मनोहर घाट हैं। चार घाट के चार नाम हैं- 1. राजघाट (ज्ञान घाट), 2. प्रजा घाट (कम शघाट), 3. सर्िघाट (भजक्त घाट), 4. र्ौ घाट (जहाँ ँपर सभी र्र्षयों पर समन्र्र्य हो, ज्ञान, र्ैराग्य, भजक्त, सबका ममश्रर्)।

इन घाटों में जहाँकही ांभी ज्ञान का प्रसर्ां आया है, र्ह माता पार्तशी और भर्र्ान कर्ांर के प्रसर्ां में आया है। जहाँ ँकहीं र्धि-ननर्षिे का प्रसर्ां है, र्हाँमहर्र्ष शयाज्ञल्क्र्य और भारद्वाज का सर्ांद है। जहाँकहींभजक्त का र्र्र्ेचन हुआ है, र्ह महात्मा कार्भुसुण्डी और र्रुड के सर्ांद में है और रामायर् में जजस प्रसर्ां में, ज्ञान भी हो, भजक्त भी हो, र्ैराग्य भी हो, सभी का समन्र्र्य हो तो समझ लेना फक यह र्ोस्र्ामी तुलसीदास जी का र्ौ घाट है

और घाटों में तो सीहढयाँ बनी रहती हैं, मर्र र्ौ घाट में कोई सीढ़ी नहीं होती, यह ढालू और सलामीदार होती है, जजसमें फक र्हाँ लूले, लँर्डे, े अन्र्धे, अपाहहज, पर्ु-पक्षी आहद सभी जाकर पानी पी सकें। इसमलए, इस घाट का नाम र्ौ घाट पडा। जैसे, रामायार् का अयोध्याकाण्ड, लक्ष्मर् र्ीता है (लक्ष्मर्-ननर्षाद सर्ांद)।

बोले लखि मधुर मृदु ुबािी। ग्याि त्रबराग भगति रस सािी ।। से लेकर
सखा समुझझ अस पररहरर मोहू। मसय रघुबीर चरि रि होहू ।। तक।

ऐसे प्रसर्ां जहाँ पर आर्ें तो समझ लेना फक यह र्ोसाई जी का घाट है, इसमें सात सीहढ़याँ हैं -

सप्ि प्रबंध सुभग सोपािा, ग्याि ियि तिरखि मि मािा ।।

सातों काण्ड सात सीहढ़याँ ँहैं। ज्ञान की सात भूममका ही सात सीहढ़याँ ँहैं। 1. र्ुभेच्छा, 2. र्र्चारर्ा, 3. तनुमानसा, 4. सत्र्ापत्ती, 5. असंसांजक्त, 6. पदार्ाभशार्नी, 7. तुयर्शा।

1. शुभेच्छा (बालकाण्ड) -

रुभेुच्छा से भरा पडा है। महर्ष शभारद्राज की इच्छा हुई फक म ैंभर्ान राम की कर्ा सुनूँ। माता सती की इच्छा हुई, फक म ैंरामचररि सुनूँ। महाराज दर्रर् की इच्छा हुई फक म ैंपुि प्राजप्त के मलए यज्ञ करर्ाऊँ। राजा जनक की इच्छा हुई फक सीता स्र्यर्ंर करूँ।

2. विचारणा (अयोध्याकाण्ड) -

श्रि समीप भये मसि केसा, मिहुँ जरठपि यह उपदेसा ।

इसमलए, श्रीराम को युर्राज पद दे देने का र्ैचार हुआ। देर्ताओं का र्ैचार हुआ फक अर् राम राज्य में फँस र्ये, तो हम सबों का बडा अहहत होर्ा। अतः, सरस्र्ती को भेजकर मांर्रा की बुद्धि पलटनेका र्ैचार हुआ। मर्ंरा का र्ैचार कैकेई को मांर्ि देनेका हुआ। सीता जी और लक्ष्मर् का र्ैचार हुआ फक हम भी सरकारी सेर्ा में राम के सार् र्न जायें। महात्मा भरत का र्ैचार हुआ फक "देखें त्रबनुरघुनार् पद, जजय कै जरनन न जाइ" अयोध्यार्ासी तर्ा रुरु र्मष्ठ और जनक का र्ैचार धचिकूट जाने का हुआ। मतलब यह फक अयोध्याकाण्ड 'र्ैचारर्ा' भूममका से भरा पडा है।

3. िमािसा (अरण्यकाण्ड)

लक्ष्मर् के सात प्रश्न-"कहहु ग्यान त्रबरार् अरु माया" माया, ज्ञान, र्ैराग्य, भजक्त क्या है और जीर्, ईश्र्र का भेद क्या है? इस भूममका में इन सबों का ननश्चय हुआ।

4. असंसस्क्ि (सुन्दरकाण्ड) -

सब कुछ त्यार्कर र्ैभीषर् भर्ान की र्रर् में आता है -

िजिी जिक बंधु सुि दारा। ि धुििभ सुहृद पररिारा ।।
सब कै ममिा िाग बटोरी। मम पद मिहह बाधूँ बरर डोरी ।।
समदरसी इच्छा कछु िाहीं। हरष सोक भय िहहं ंमि माहीं।।
अस सज्जि मम उर बस कैसे। लोभी हृदय बसइ धिु जैसे ।।
िुम्ह साररखे संि विप्रय मोरे । धरउँ देह िहह आि तिहोरे ।।

देखो, अर्तार लेनेका जो कारर् है, उसका पता इस चौपाई से चलता है। अजन्मा भर्ान का जन्म क्यों होता है। सर् शत्यार् का फल यही हुआ फक र्ैभीषर् की सन्त् श्रेर्ी में र्ना हो र्यी और सार् ही िैलोक्य का स्र्ामी हो र्या। यह भर्त् ्रर्ार्नत का फल है।

6. पदाथािभािी (लंकाकाण्ड) -

जर्दाकार रूरूत्त का लोप होकर ब्रह्माकार रूरूत्त का होना।

दोहा-

त्रबस्रूिप रघुबंस मति करहु बचि त्रबस्ाि्सु ।
लोक कल्पिा बेद कर। अंग अंग प्रति जासु ।।12 (क) ।।

ऐसा मन्दोदरी ने रार् से कहा है।

7. ुयिगिा -

उत्तरकाण्ड सबसे भरा हुआ है। पूर् शज्ञान और भजक्त का उदय इसमें ज्ञान दीपक, सन्द्त लिर्, महात्मा कार्भुसुण्डी जी की कर्ा है।

सप्ि प्रबंध सुभग सोपािा। ग्यािा ियि तिरखि मिमािा ।।

भैय्या! जजनके ज्ञान रूपी नेि हों, र्ही इसका जल पी सकता है। आँख र्ाला ही इस सरोर्र की सीहढयों से उतरकर उसमें स्नान कर सकता है, जलपान कर सकता है, अज्ञानी अिंधों के र्ि की बात नही ंहै। र्े यहाँ नही ंआ सकते। जो प्रसांर्ानुसार अर् शकरते हैं और समझते हैं, र्े ही इस सरोर्र के रिक हैं।

जजन्दहोंने सन्द्त समार्म फकया है, सन्द्तों के चरर्रज का अपने मस्तक पर अमभर्षेक फकया है, र्े ही इसके अधिकारी हैं।

जो र्श्र्ास और श्रद्िा से र्हीन हैं, सन्द्तों का कभी सर्ां नहीां फकया है, र्े इसके अनधिकारी हैं।

दोहा-

श्रोिा िकिा ग्यािनिधि, कथा राम कै गूढ़ ।
फकमम समुझौं म ैंजिी ज़, कमलमल ग्रमसि त्रबमूढ़ ।।30 ख।।

इसके श्रोता और र्क्ता दोनों को ज्ञान ननधि होना चाहहए तभी यह समझा जा सकता है और समझाया जा सकता है, जब तक सत्य स्र्ु 'म' ैं आत्मा चराचर का अजस्तत्र् सर् शका 'म' ैं को प्राप्त नही ंकर लेर्ा, तब तक श्रीराम चररत मानस को न कोई समझा सकेर्ा और न कोई समझ सकेर्ा। सन्द्तों की कृपा से ही यह समझा जा सकता है। इसमलए -

जो िहाइ चह एहहं ंसर भाई। सो सिसंग करउ मिलाई ।।

<u>कर्ा्राचक तीन प्रकार के होते हैं -</u>

1. र्न्र्षय सूची, रुधचर र्ददार्ली के ही र्न्र्ेचन करने र्ाले होते हैं, उनको अमुक र्दद रामायर् में कहाँ-कहाँ ँपर फकतनी बार आया है। बस, इसी की रोचक व्याख्या करने ेऔर अपनी ममथ्या पाजण्डत्य और र्ैद्र्त्ता के प्रदर्नश में ही आनन्द्द आता है। लोर् भी समझतेहैं फक पजण्डतजी फकतने महान र्ैद्र्ान हैं, सारी रामायर् इनके करतल र्त हैं। इस व्याख्या से न तो श्रोता के पल्ले कुछ पडना है और न र्क्ता के।

2. इनतहास, लीला भार् के ही र्कर्न करने ेर्ाले होतेहैं।

3. तत्र् का र्न्र्ेचन करने र्ाले होतेहैं।

रामायर् का अर् शहोता है-राम, अस्य, अयन अर्ातश रामायर्, अयन का अर् शहोता है-र्ैश्राम, ननर्ास। इस तरह राम का जो र्ैश्राम स्र्ल, ननर्ास स्र्ान है, उसको कहते हैं, रामायर्। राम जजसमें व्याप्य हैं, उसको कहते ेहैं अयन और जो व्यापक है, उसको कहतेहैं, राम। दोनों ममलकर हो र्या, रामायर्।

व्याप्य 'अयन' है, और व्यापक 'राम' हैं। यहद, अयन नहीं होर्ा तो राम व्यापेर्ा फकसमें और राम नहीं होर्ा तो अयन फकसका होर्ा? जैसे, इस मकान में कोई नही ांरहेर्ा तो मकान रहेर्ा क्या? नही ांऔर मकान नहीं रहेर्ा तो रहने र्ाला कहाँ रहेर्ा? इसी प्रकार तृर् से आहद ब्रह्मा पयन्द्शत अयन हैं और उसमें जो व्यापक है, र्ह राम है। दोनों ममलकर हो र्या रामायर्।

एक तृर् से लेकर ब्रह्मा तक क्या कोई ऐसी र्स्तु है, जजसमें 'है' अजस्तत्र् सामान्द्य चेतन न हो? 'है' सबमें है। त्रबना 'है' अजस्तत्र् के फकसी की भी मसद्धि नहीं। 'है' के त्रबना 'है' नही ांऔर 'है' के त्रबना 'नहीं' नही।ां 'हैं' के त्रबना न 'है' है और न 'नहीं' है। दोनों की मसद्धि 'है' करके ही है। 'है' से कोई देर्, काल, र्स्तु खाली नहींहै। यही अजस्तत्र् 'म'ैं आत्मा भर्र्ान राम की व्यापकता है। अजस्तत्र् पर जो आिाररत है, र्ह है अयन। राम का अर् श होता है-

"यस्स्मि रमन्द्र्े योचगिाः साः रामाः ।"

जजसमें, योर्ी महात्माजन रमते हैं, रमर् करते हैं, मस्त रहते हैं, खेलते- कूदते, े खाते−पीते, चलते-फफरते, देखते-सुनते, सोते-जार्ते और ननर्ास करते हैं, उसे कहते हैं 'राम'।

प्रश्न होता है- फकसमें योर्ी, महात्मा जन रमर् करते हैं? उत्तर है- "चराचरे सुभूतेषु ुरमन्द्ते, यजस्मन, सः रामः।"

जो सारे चराचर में रम रहे हैं, अजस्तत्र्, सत्तामाि है, सत्ता पद है, उसी में योर्ीजन रमते हैं। फकसमें? अरे, जो सारे चराचर में रम रहे हैं, उसमें। जो सारे चराचर में रम रहे हैं, इसका क्या भार् है?

सुन्द्रकाण्ड के मर्ांलाचरर् का एक श्लोक है -

ान्द्यिा स्पृहा रघुपिे हृदयेऽस्मदीये ।
सत्यं ंिदामम च भिािाझखलान्द्रात्मा ।।

आत्मा कहते हैं, अजस्तत्र् को। जो अजस्तत्र् 'म'ैं आत्मा 'राम' सारे चराचर में है, र्ही 'म'ैं हूँ। यही 'राम' र्दद का लक्ष्य है। 'रमुक िीडायां' िातु से राम र्दद बनता है। जजस चराचर में रमें हैं और जो सारे चराचर में रमे हैं, दोनों को ममलाकर हो र्या रामायर्।

देखो, इस हार (फूल की माला) में प्रत्येक फूल का आिार है, िार्ा। अर्र इस हार से िार्ा ननकाल मलया जाय, तो हार का अजस्तत्र् खतम हो जायेर्ा। हार नही ंरह सकेर्ा। इसी तरह जजसको तुम ससांार कहते हो, उसका आिार 'म'ैं आत्मा ही तो हूँ। जजस आिार पर ससांार रूप हदखाई दे रहा है। क्या र्ह 'म'ैं से मभन्द्न है? यहद 'म'ैं आत्मा आिार न रहूँ तो ससांार फकसके आिार पर हटकेर्ा? यह रहेर्ा कहाँ?ँ फफर, फकसको ससांार कहोर्े? इसमलए, तृर् से लेकर ब्रह्मा तक सर् शका आिार 'म'ैं आत्मा ही हूँ।

भैय्या! फफर समझो देखो, यह अटल मसद्िांत है फक जो जजसमें व्यापक होता है, र्ही उसका आिार होता है। जो जजसका आिार होता है, र्ही उसका कारर् होता है और जो जजसका कारर् होता है, र्ही उसका स्र्रूप होता है।

 र्र्षय समझो देखो, यह डण्डा है। इस डण्डे ेमें लकडी व्यापक है। इस डण्डे ेके रर्-रर् में लकडी पररपूर् श है। डण्डे ेमें ऐसी कोई जर्ह नहींहै, जहाँलकडी न हो, इस तरह डण्डे ेमें लकडी व्यापक हुई।

डण्डे ेका लकडी आिार है। यहद, इसमें से लकडी ननकाल लो तो डण्डा रहेर्ा? नहीं। डण्डे ेका अजस्तत्र् खतम। इसमलए डण्डे ेका आिार लकडी है। डण्डे ेका कारर्, लकडी है। यहद लकडी न होर्ी तो डण्डा फकसको कहोर्े? त्रबना लकडी के डण्डा नही ंरह सकता। अतः, लकडी डण्डे ेका कारर् है और डण्डा का लकडी ही असली स्र्रूप है। लकडी ही है, जो डण्डा है।

 इसी तरह 'है' अजस्तत्र् सामान्द्य चेतन (र्र्रेष चेतन 'म'ैं आत्मा भर्र्ान राम) सर् शमें व्यापक है, सर् शका आिार है, सर् शका कारर् है। सर् शका र्ही रूप ही है। उससे मभन्द्न एक तृर् की भी अलर् सत्ता नही।ां सर् शर्ही है। राम का अर् शहोता है-देखो 'राम' में दो अिर हैं, रा और म। 'रा' का अर् शहोता है-तत्,् अर्ात्श ्'र्ह' और 'म' का अर् शहोता है-त्र्,ां अर्ात्श ्तू। अब दोनों अिरों को ममला दो, ममलाप हुआ तत् ्त्र्म्।् अमस अर्ात्श ्'है' इस तरह राम का अर् शहुआ तत्र्ममस, अर्ात्श ्'र्ह तू है।' तुम स्र्यांराम हो। राम से मभन्द्न एक कर् भी नही।ां रामोपननर्षत् ् में है - "सत्राच्यस्तू राकारास्यात्।्"

राम कर्ा का स्रूप क्या है?

जेहह महूँ आहद मध्य अिंसाा। प्रभु ुप्रतिपाद्य राम भगिाा ।।

जजसके आहद में, मध्य में और अन्द्त में, भर्ान राम 'म' ै आत्मा का ही हदग्दर्नश हो, अनुभूनत हो यही राम कर्ा का स्रूप है।

एक ही चौपाई में सातों काण्ड रामायर् इस तरह है।

गई बहोर गरीब ि ोजू। सरल सबल साहहब रघुराजू ।।

1. गई बहोरर - बालकाण्ड है।

आर्ा जो चली र्यी र्ी, ई र्ापस आ र्यी। दर्रर् की पुि की आर्ा चली र्यी र्ी। परन्द्तु, पुि हुए और आर्ा लौट आयी। जनक की आर्ा चली र्यी र्ी फक ि नुर्ष को अब कोई नहींतोड सकता।

जिहु आस तिज-तिज गृह जाहू। मलखा ि त्रबचध बैदेहह त्रबबाहू ।।

यह र्यी हुई आर्ा र्ापस आ र्यी।

2. गरीब ितिाजू ू(अयोध्याकाण्ड) कहाँकेर्टऔर कहाँराम।

केर्ट कहता है फक -

"मोहह राम राउरर आिा, दसरथ सपथ सब साची कहौं।।"

"तुम्हारे बाप की कसम खाकर कहता हूँ"

उसका ऐसा कहना भर्ान राम अर्ा राजा राम दोनों के पोजीर्न के र्खलाफ र्ा और केर्ट के

अधिकार के बाहर र्ा, परन्द्तु राम की -

दोहा-

सुति किट के बिै, पे्रम लपेटे अटपटे ।

त्रबहसे करिा एिं, चचिइ जािकी लखि ि ।।100।।

ऐसी दृजष्ट र्ी।

3. सरल (अरण्यकाण्ड) -

र्बरी के आश्रम में भर्ग्न राम ने जो सरलता हदखाई, र्ैसी सरलता मसर्ा भर्ग्न राम के और कौन हदखा सकता है। र्बरी में भेद का अभार् र्ा और श्रीराम में व्यजक्तत्र् का अभार् र्ा। यहद, र्बरी अपने में और भर्ग्न राम में भेद मानती फक म ैंएक नीच जानत की भीलनी हूँ और ये भर्ग्न हैं, राजा राम हैं। तो, क्या ई अपना जूठा बेर उन्द्हें खर्ला सकती र्ी? नहींऔर राम इसी तरह अपना व्यजक्तत्र् रखते तो र्े जूठे बेर खा सकते र्े? े तब दोनों में कौन-सा भार् र्ा?

उत्तर है- "सहज सनेह" इसमें र्ुधि-ननर्षि नहींहोता।

4. सबल (फकस्ककन्द्धाकाण्ड

दोहा-

सिुसुग्री मारहहूँ, बामलहह एकहह बिा ।
ब्रह्म रर सरिागि, गएँ ि उबरहहं ंप्रा ।।6।।

र्ेश्र् र्ेजयी बाली को, जजससे युद्ि करने ेजो कोई भी सामने आता र्ा तो उसका आिा बल ई खींच लेता र्ा, ऐसे बाली को एक ही बार् में मारूँर्ा, दो बार् से नहीं, ऐसा कहना यह सबलता है।

5. साहहब (सुन्द्दरकाण्ड -

अर्, कोई सरकार है तो राम ही है, बाकी सब बेकार है। साहहबी यहद हदखाई है तो राम ने। समुर में अभी पुल बँाि नहीं, युद्ि हुआ नहीं, जय-पराजय का कुछ पता नही।ां समुर का जल मर्ांर्ाया और र्ेभीर्षर् को लकांा का राज्य दे हदया। नतलक सार हदया।

6. रघु ु(लंकांकाण्ड

रघु-जीर् "रमुक ििडायाां' िातु। र्र्षयों में जो रमे, उसे रघुकहते ेहैं। तो, यहाँ ँलकंाकाण्ड में जो-जो मरते े र्ेे, सब रामाकार होतेर्े।

7. राजू (उत्तरकाण्ड -

राजा राम की महहमा क्या र्ी और राम राज्य की कैसी महहमा र्ी, यह काण्ड इससे भरा पडा है।

इस रामचररत मानस में, र्र्ि प्रकार के जो छन्द्द हैं, र्े भाँनत-भाँनत की मछमलयाँहैं।

धुति, अिरेब, कत्रबि गु जिाी, मीं मिोहर ि बहुभिाीं ।

ुनिन, जो छन्द है ई रोहू मछली है। रोहू मछली खूब हिरे जल में रहती है, ये बहुत र्ोडी होती है। मानसरोर्र के अन्दर रोहू क्या है? दो-दो, तीन-तीन अिर के छन्द जजनके र्दद र्ोडे ेहैं। परन्द्तु भार्, बडे ेभाीर हैं, र्स्तृत हैं। जैसे -

दोहा-

चगरा अरथ जल बीचच सम कहहअि मभन्द्ि मभन्द्।

बंदउँ सीाा राम पद स्जन्द्हहह परम वप्रय झखन्द्॥8।।

ये ि्ुनन छन्द है, जो रोहू मछली के समान है। रामचररत मानस में ऐसे छन्द बहुत र्ोडे ेहैं। अर्रे्, जो छन्द हैं, ई चढ़र्ा मछली है, आर्े का भार् पीछे को प्रकामर्त करता है, जैसे- राम कर्ा कमल त्रबटप कुठारी, आहद। र्ुर्, जो छन्द है, ई र्हरी मछली है।

जैसे- "भर्-भर् र्भर् पराभर् कारररनन" आहद।

जानत, जो छन्द है, ई बर्री मछली है।

जैसे-

मु जाहह राचेउ मममलहह सो बर सहज सुन्दर सांँरो।

अच्छा तो भैय्या! आओ, पहले राजघाट में ही स्नान करें। यह ज्ञान घाट है, जहाँ ँमाता पार्तशी और भर्र्ान कांर स्नान करते हैं। इसको माता पार्तशी और भर्र्ान कांर का सर्ांद कहते हैं। सन्द्त समाज में इस प्रसर्ां को "कांर र्ीता" कहतेहैं। लोकोजक्त है फक- बाल का आहद, अयोध्या का मध्य, उत्तर का अन्द्त, समझैसोई सन्द्त। यह प्रसांर् बाल का आहद ही है -

माता जी भर्र्ान कां र से पूछती हैं फक हे भर्र्न्!्

प्रभु समरथ सिग्यि मसि । सकल कला गु धाम ।।
जोग ग्याि बैराग्य तिचध । प्रिि कलपिर िाम ।।
जौं मो पर प्रसन्द् सुखरासी । जातिअ सत्य मोहह तिज दासी ।।
ाँ प्रभु हरहु मोर अग्यािा । कहह रघुिाथ कथा विचध िाा ।।
जासु भिु सुरिर िर होई । सहह फक दररर जिति दुखुसोई ॥
समसभूषि अस हृदय विचारी । हरहु िाथ मम मति भ्रम भारी ।।
प्रभु जेमुति परमारथिादी । कहहहं ंराम कहुँ ब्रह्म अिादी ।।

सेस सारदा िेद पुरिाा । सकल करहहं ंरघुपति गुिगिाा ।।
ुम्हि पुति राम-राम हदि रिी । सादर जपहु अिंग आरिी ।
रामु सो अिध िृपृति सिु सोई। की अज अगिु अलखगति कोई ।।

आप समर्,श सर्ज्ञश और कल्यार्स्रूप हैं। योर्, ज्ञान और रै्राग्य के भण्डार हैं। आपका नाम र्र्ातों के मलए कल्पर्ृि है।

हे सुख स्रूप! यहद आप मुझ पर प्रसन्द्न हैं और मुझेअपने चरर् की सच्ची दासी समझतेहैं, तो हे नार्! भर्ान राम के प्रनत मेरा जो अज्ञान है, उसे दूरू कीजजये।
जजसका घर कल्पर्ृि के नीचे हो, र्ह दरररता का दु:ख भोर्ता है, यह भला कैसे सांभर् है? इसी प्रकार आपके चरर्ों के साजन्द्नध्य में रहकर अज्ञान जननत दु:ख मुझमें रहे यह कैसे सहन हो सकता है? परमार्र्ादी ऋर्ष-मुनन राम को अनाहद, अजन्द्मा, ब्रह्म बतातेहैं। र्ेर्ष र्ारदा, र्ेद और पुरार् जजनकी महहमा र्ाते हैं और फफर आप भी तो हदन-रात प्रेेमपूर्कश राम-राम जपा करते हैं। तो प्रभो! क्या र्े राम यही हैं, जो अयोध्या के राजा दर्रर् के पुि हैं अर्र्ा अजन्द्मा ननर्ुर्श अर्ोचर कोई और राम है?

दोहा-

जौं िृपिपृय ि ब्रह्म फकमम िारर विरहूँ मति भोरर ।
देझख चररि महहमा सिुि भ्रमति बुद्चध अति मोरर ।। 108।।

चररि तो देखती हूँ फक "िा**रर विरहूँ मति भोरर"** स्ीी कै र्योर् में पार्ल बनेपेड-पौि, पर्ु–पिी से पता पूछतेजर्ांलों में भटक रहे हैं।

हे खग मृग, हे मधुकर शे्रिी, िुम्ह देखी सीिा मृगिैिी ।

और महहमा सुनती हूँ फक

यद्भयाद्िाति िाोऽयं, सूयस्िपिति यद्भयाि् ्।
िषीन्द्रोदहत्यचग्राः मृतूयुश्चरति यद्भयाि् ्।।

जजसके भय से र्ायु बहती है, जजसके भय से सूय शतपता है, जजसके भय से इन्द्र र्र्षाशकरता है और जजसके भय से काल सारे चराचर को ग्रसता है।

विचध हरर हर समस रत्रब हदमसपाला । माया जिी करम कुमल काला ।।
अहहप महहप जहूँ लचग प्रभु िुाई । जोग मसद्चध तिगमागम गाई ॥
करर विचार स्जयं ंदेखहु िीके । राम रजाइ सीस सब ही के ।।

तो कौन राम है? भर्र्न्!् मेरी बुद्धि भ्रममत हो र्यी है।

जौं अिीह ब्यापक त्रबभु कोऊ । कहहु बुझाइ िाथ मोहह सोऊ ॥
अग्य जाति ररस उर जति घरहू। जेहह त्रबचध मोह ममटै सोइ करहू ।।

यहद, इच्छा रहहत व्यापक समर्् शब्रह्म कोई और है तो हे नार्! मुझेउसे समझाकर कहहये। मुझेअज्ञ जानकर मन में िोि न लाइये, जजस तरह मेरा मोह दूरू हो, र्ही कीजजये।

दोहा-
बन्दउँू पद घरर घरति मसर, बिय करउँू कर जोरर ।
बरिहु रघुबर त्रबसद जसु, श्रुति मसद्धान्द्ि तिचोरर 109।।

हे प्रभो! म ैंपृथ्र्ी पर मसर टेककर श्री चरर्ों की र्न्दना करती हूूँ और हार् जोडकर र्नती करती हूूँ। आप र्ेदों के मसद्धाति को ननचोडकर श्री रघुनार् जी का ननमलश यर् र्नश कीजजये।

जदवप जोवषिा िहहं ंअचधकारी। दासी मि क्रम िचि िुम्हारी ।।
गूढ़उ ित्त्ि साधु ुदुरािहहं ं। आरि अचधकारी जहूँ पािहहं ं।।

यद्यर्प, स्त्री होने ेके कारर् म ैंउसे सुनने की अधिकाररर्ी नहीं हूूँ, तर्ार्प म ैंमन, र्चन और कम शसे आपकी दासी हूूँ। सन्द्त लोर् जहाँआत शअधिकारी पातेहैं, र्हाँरू्ढ़ से रू्ढ़ तत्त्र् भी उनसे नही ंनछपाते। माताजी का यह मौमलक प्रश्न है। इसी प्रश्न का उत्तर सारी रामायर् है।

माताजी का कहना है फक यहद राम ब्रह्म है तो यह मनुष्यों का सा चररि कैसा? जजसमें योर्ी रमते हैं, जो व्यापक हैं, अखण्ड हैं, र्े कौन राम हैं और यै कौन हैं जो "नारर र्र्हँ मनत भोरर" आप इस तरह समझाइए फक जो र्ेदों का सार हो और श्रुनतयों का ननचोड हो। माता जी का प्रश्न फकतनी र्हराई का है। तो भैय्या! इस प्रश्न का उत्तर भी तो अत्यन्द्त र्हराई में ममलेर्ा। इसीमलए, भर्र्ान कर्ं र दो घडी ब्रह्मानन्द्द में डूब र्ये। समुर की तह में डूबने से ही मोती आहद बहुमूल्य रत्न ममलतेहैं।

देखो भार्ना चार हैं-

1. असत् ्भार्ना - ईश्र्र नहीं है।

2. र्र्परीत भार्ना - जीर्-जीर् है, ईश्र्र-ईश्र्र है। जीर् अनेक हैं, ईश्र्र एक है।

3. सम्भार्ना - र्ायद ईश्र्र है। सम्भर् तो है, पर ननश्चय नहींहै।

4. असम्भार्ना - जीर् कभी ईश्र्र नही ांहो सकता।

भर्ान आत्मा को ये भार् ढाँकने की कोमर्र् करते हैं। अरे! ये तो इन्द्हें स्पर् शतक नही ांकर सकते, ढाँकना तो दूरू रहा।

असत भार्ना र्ाले से यह प्रश्न है फक -

"ईश्र्र नहींांहै" ऐसा जो तुम कह रहे हो, तो ईश्र्र के नही ांहोने का अनुभर् फकसने ेफकया?

उसका उत्तर है, 'म'ैं ने फकया।

अब र्पिरीत भार्ना र्ाले से प्रश्न है फक तुम जो कहते हो फक जीर्-जीर् है, और ईश्र्र-ईश्र्र है। जीर् अनेक हैं और ईश्र्र एक है। इस तरह जीर् और ईश्र्र का इस रूप में अनुभर् फकसने फकया?

र्ह उत्तर देता है फक 'म'ैं ने फकया।

अब सम्भार्ना र्ाले से ही यही प्रश्न है, तब र्ह भी यही उत्तर देर्ा फक 'म'ैं ने ही अनुभर् फकया है, तभी अपना अनुभर् सामने रखा है, दूसूरा कौन अनुभर् करेर्ा।

अब चलो चौर्ेमहार्य से पूछें- भैय्या! तुम जो कहते ेहो फक जीर् कभी ईश्र्रहो नही ांसकता। तुम्हारा यह कहना, सुनकर कहना है या अनुभर् करके कहना है?

र्ह कहता है- अजी! यह हमारा अनुभर् है। सुनकर क्यों कहेंर्े।

तब उनसे पुनः प्रश्न है फक यह अनुभर् है फक जीर् कभी ईश्र्र हो ही नहीं सकता, फकसने फकया?

र्ह उत्तर देता है 'म'ैं ने ही फकया।

तब जब इन चारों भार्ों का अनुभर् करने र्ाला 'म'ैं आत्मा ही हुआ, इन चारों की मसद्धि 'म'ैं आत्मा करके ही हुई। यहद 'म'ैं न रहूँ तो अनुभर् कौन करेर्ा? अतः, ये स्र्तः मसद् निहीं है। अजस्तत्र्हीन हैं। तब, जो अजस्तत्र्हीन हैं, र्ह मुझ अजस्तत्र् को क्या जान सकेर्ा? ये 'म'ैं आत्मा को फकस तरह मसद् किर सकेंर्े? जजसकी मसमम मुझ आत्मा से है, र्ह मुझ आत्मा को क्या ढाँकेर्ा? डण्डा लकडी को फकस तरह मसद् किर सकेर्ा? क्योंफक, डण्डा है ही नही।ां र्ह अजस्तत्र्हीन है। त्रबना लकडी के उसकी मसद् निहीं।

1. असत् ्भार्ना का मूलोच्छेद करने ेर्ाला यजुर्ेद का महार्ाक्य है- 'अहां ब्रह्माजस्म' (म ैंब्रह्म हूँ)।
2. र्पिरीत भार्ना का मूलोच्छेद करने ेर्ाला सामर्ेद का महार्ाक्य है- 'तत्त्र्ममस' (र्ह तू ूहै)।

३.सम्भार्ना का मूलोच्छेद करनेर्ाला अर्थ्र्शद का महार्ाक्य है- 'अयमात्मा।' (आत्मा ही ब्रह्म है)

४.असम्भार्ना का मूलोच्छेद करने ेर्ाला ऋग्र्ेद का महार्ाक्य है - 'प्रज्ञानां ब्रह्मा' (तत्काल जो जानता है, ज्ञान ही जजसका स्र्रूप है)

जजस समय सीता हरर् हो चुका र्ा और उनके र्ियोर् में भर्र्ान राम, लक्ष्मर् सहहत उनकी खोज में नर-लीला कर रहे र्,े उसी समय भर्र्ान कशंर के सार् माता पार्तशी ने र्न में उनके इस चररि को देखा। उस समय राम की दर्ा र्ी -

हे खग मृग हे मधुकर श्रे्रेनी । िुम्ह देखी सीिा मृगनैनी ।।

खंजि सुक कपोि मृग मीिा । मधुप तिकर कोफकला प्रबीिा ॥

कुन्द कली दाड़म दाममनी । कमल सरद समस अहह भाममनी ।।

बरि पास मिोज धिु हंसा । गज के हरर तिज ससुि प्रसंसा ।।

श्रीिल किक कदमल हरषाहीं। िेकु ि संक सकुच मि माहीं।।

सुिु जािकी िोहह त्रबिु आजू । हरषे सकल पाइ जिु राजू ।।

फकमम सहह जाि अिख िोहह पाहीं। वप्रया बेचग प्रगटमस कस िाहीं।।

एहह त्रबचध खोजि त्रबलपि स्र्ामी। मिहुँ महा त्रबरही अति कामी ।।

भर्र्ान कशंर ने जब उन्हें इस दर्ा में देखा तो उनने उसका अर् शनहींलर्ाया। र् जानते र् फक यह सब चररि असत्य और लीला ममथ्या है। अतः, म ैंयहद इसका अर् शलर्ाऊँर्ा तो मुझ पर भी कुसमय आ जायेर्ा। मुझे तो यार की यारी से काम है, यार के फेलों से क्या काम? अतः र् े-

भरर लोचि छत्रब मसंधुं तिहारी ।

कुसमय जाि ि कीन्न्ह चचन्न्हारी ।।

उन्होंने कुछ हाल-चाल नहीं पूछा फक - "भर्र्ान यह क्या बात है, आपकी यह कैसी दर्ा है, माता सीता कहाँ ैंहैं? आहद।" र् जानते र् ेफक यहद मनैं ेधचन्न्हारी की अर् शलर्ाया फक मुझ पर भी कुसमयआ जायेर्ा। अतः, र् इस चक्कर में नही ंपडे ेऔर-

जय सस्च्चदािंद जग पािि ।

अस कहह चलेउ मिोज िसािि ।।

र्आर्े बढ़ र्ये। माता सती को चररि और लीला देख कर ही भ्रम हुआ। उसने अर् शलर्ाया उसे सत्य माना, जजससे र् ेचक्कर में पड र्ीं।

जो तीनों काल में न हो र्ह असत्य है और जो न होतेहुए उत्पन्द्न होकर नार् हो जाये र्ह है ममथ्या। अिंकार में रस्सी सप शके समान हदखी रस्सी में सप शअसत्य और ममथ्या दोनों है। असत्य, इसमलए है फक सप शतीनों काल में नहीं है। र्ह तो अिंकार के कारर् सप शहदख रहा है। ज्यों ही प्रकार् में देखा फक सपभशार् चला र्या। रस्सी ही रह र्यी। तब, इस रस्सी में अिंकारर्र् सप शहुआ और प्रकार् के आते ही उस सपभशार् का नार् हो र्या। अतः, ममथ्या है। र्ह रज्जू की लीला है। जो जजसमें भासै, र्ही उसका चररि है। सप शरज्जू में भासता है, अतः सप शरज्जू का चररि है। सप शन तो अिंकार में है और न प्रकार् में है, अतः असत्य है। इसी तरह 'म' ैं आत्मा भर्र्ान में जर्त् ् प्रपचां का अज्ञान के अन्द्धकार में भासना, यह मुझ आत्मा 'म' ैं का चररि है, जो असत्य है।

सप शनहीां होते हुए भी सप शभासना, जो फक भय कम्पन का कारर् है, र्ह भासता क्यों है? अरे! यही तो रज्जू की लीला है, जो ममथ्या है। मुझ आत्मा 'म' ैं में जर्त् ्प्रपचां नहीं होतेहुए भी, जो सारे द्र्द्र्ां्ों का कारर् होता है, क्यों भासता है? अरे, यही तो मुझ आत्मा 'म' ैं की लीला है। जो नहीांहै र्ह सप शहै, जर्त् ्प्रपचां है, यह असत्य है, यही चररि है और नही ांहोतेहुए भी जो भासता है, सप,श प्रपचां, यह ममथ्या है, यही तो मुझ आत्मा 'म' ैं की लीला है। अभार् को देखकर, सुनकर भ्रम होता है, भार् को नही।ां सप शअभार् रूप है और रज्जू भार् रूप है। र्ही देखा जाता है, जो कभी न हो, रज्जूमें सप शदेखा र्या जो कभी नही ांहै। जो हदखता है र्ह र्र्कल्प है, र्ही जर्त् ्है। र्र्कल्प कहते हैं- योर् दर्नश का सिू है-

"शब्द र्ज्ञािुपािी, िस्िु शून्द्यो विकल्पाः ।"

अर्ात्श,् जजससे केर्ल र्दद मिा का ही ज्ञान हो और र्स्तु का अभार् हो, उसे र्र्कल्प कहते ेहैं। जैसे- डण्डा र्दद सुन पडा, परन्द्तु ढूँढने चलेंर्े तो हार् में केर्ल लकडी ही लकडी लर्ेर्ी। डण्डा नाम की कोई चीज ममलने र्ाली नही ांहै। डण्डा अजस्तत्र्हीन अभार् रूप है, जो है ही नही।ां मतलब यह फक अजस्तत्र्हीन पदार् शजो फकसी भी काल में न ममले उसे ही र्र्कल्प कहते हैं। सप शर्र्कल्प है, र्ही जर्त् ्है। अनुभर् उसी का होता है, जो त्रिकालाबाध्य हो, अभार् न हो। जो भार् है, र्ह म ैं'है' है, आत्मा है और जो 'है' है अजस्तत्र्, र्ह राम है। जो राम है, र्ह त्रिकालाबाध्य है। यह ज्ञान के प्रकार् से जाना जाता है। भर्र्ान र्शांर् के मलए चररि असत्य और लीला ममथ्या र्ी, यह ज्ञान के प्रकार् में देखा र्या। अतः, र्े भ्रम, र्ोक और मोह से रहहत रहे। परन्द्तु, माता सती भ्रम में पड र्यी, जजससे उन्द्हें मोह हुआ, जो दुःख का कारर् हुआ। यह अज्ञान के अन्द्धकार में हदखा! मृर्जल, हदखता दोनों को है, जजसे सूय शकी सत्ता का ज्ञान है उसे और अज्ञान है उसे भी, परन्द्तु अज्ञानी उसे मृर् के समान सत्य जल मानता है और ज्ञानी उसे सूय शकी सत्ता जानता है, जल का अभार् जानता है। एक के मलए प्रत्यि जल है और दूसरे के मलए सूय शकी सत्ता है। जजसको सत्य भासता है, उसके मलए दुःख रूप है और जजसको सत्ता भासता है, उसके मलए र्ह सुख रूप है।

'म' ैं आत्मा की सत्ता करके, यह जर्त् ्प्रपचां भासता है। मृर्, जल मानकर दौडता है, जानकर नहीां। इसी प्रकार यह जर्त् ्प्रपचां, 'म' ैं आत्मा भर्र्ान राम की सत्ता है इसे मानकर नही,ां जानकर चलो।

भैय्या! चररि असत्य और लीला ममथ्या है। एक बार राम दरबार लर्ा हुआ र्ा। भर्ान राम और माता सीता मसहांासन पर बैठे हुए र्े ेफक भक्त मर्ोमर् हनुमान जी हार् जोडकर खडे ेहुए। उन्द्हें हार् जोडकर खडे ेहुए देख, भर्ान राम ने माता सीत से कहा- सीते, देखो सामने हार् जोडे ेहुए हनुमान जी खडे ेहुए हैं। र्े आत्म तत्र् की जजज्ञासा से खडे ेहैं। र्े इस तत्र् के जाननेके पूर् शअधिकारी हैं। अतः, तुम मेरे स्रूप परम तत्र् का उनके समि र्ेर्चन करो। रामाज्ञा को स्ीकार कर जर्त जननी सीता देर्ी श्री हनुमान जी से कहने लर्ीं- हे हनुमान जी!

रामंविद्चध परब्रह्म सस्च्चदिान्द्दमद्यिम् ्।
सिोपाचधवितिमुर्क्तािसत्तामािमगोचरम् ्।।
आिन्द्दं तिमलं शिांतिविकािरं तिरंजिम् ्।
सिव्यािवपिमात्मािं स्प्रकाशमकल्मषम् ्।।

श्रीराम को सजच्चदानदां र्ग्रह, सारी उपाधियों से रहहत, सत्तामाि, इजन्द्रयातीत, आनन्द्दमूनत,श र्ुदि, र्ान्द्त, र्कार रू्न्द्य, ननरांजन अर्ात्श ्ननलेप, सर्शयापी, स्यप्रांकार्, कल्मर्षहीन अर्ात्श ्दु:खों से रहहत, आत्म स्रूप, अद्र्ेतीय परब्रह ही समझो।

रामो ि **गच्छति** ि **तिकठति** िि**ुशोच -**
त्याकांक्षित्यजति िो ि **करोति फकस्च्चि् ्।**
आिन्द्दमूति ि**रचलाः पररणामहीिो,**
मायागुणाििुगिो हह ि**था विभाति ।।**
रामाः परमात्मा पुरषाः पुराणो,
तित्योहदिो तित्यसुखो तिरीहाः !
थािवप माया गुणसं गिो सौ
सुखी दुाःखी विभाव्यिै बुधाैः ।।

श्रीराम न तो कही ंजाते हैं, न कहीांठहरते हैं, न फकसी के मलए र्ोक करते हैं, न फकसी र्स्तु की आकांाि करते हैं, न फकसी का पररत्यार् करते हैं, न कोई कम शकरते हैं, र्ेतो अचल, आनन्द्दमूनत शएर् ंपररर्ामहीन हैं, अस्ल्उनमें पररर्तनश नही ंहोता, केर्ल माया के र्ुर्ों के सांबिां से, उनके अन्द्दर ये बातें होती हुई सी प्रतीत होती हैं। श्रीराम परमात्मा, पुरार् पुरुर्षोत्तम, ननत्य प्रकामर्त, ननत्य सुख से सम्पन्द्न एर् ंननरीह अर्ात्श ्चेष्टा से रहहत हैं, फकन्द्तु फफर भी माया के र्ुर्ों से सम्बद् होने के कारर्, उन्द्हें बुद्धिमान लोर् सुखी अर्ा दु:खी समझ लेते हैं।

तीनों रु्रों (सत्, ् रज, तम) से युक्त म ैंमूल प्रकृनत हूँ। मुझ माया में ऐसी कुछ र्जक्त नहीं है फक म ैंस्र्य ां कुछ कर सकूँ। भर्र्ान राम के सजन्द्नकट रहकर ही म ैंसब कुछ करती हूँ। राम अकत्ताशहैं, अभोक्ता हैं, व्यापक हैं, सर्र्ि हैं। म ैंप्रकृनत माया हूँ। जजस तरह चुम्बक के कारर् लोहा भी कत्तापशन को प्राप्त होता है, इसी प्रकार में भर्र्ान राम के आश्रय से कुछ कर सकने में समर् शहूँ।

मुझ माया का रामार्तार हुआ है। सारा चररि मनैं ेही फकया, राम ने नही।ां र्श्ामममि के मख की रि मनैं े की। जनकपुर से िनुर्ष मनैं ेतोडा। सीता का र्र्ाह मुझसे हुआ। चौदह र्र्ष शके मलए बनर्ास मुझे ेहुआ। र्न में र्यी। सुग्रीर् से ममिता मनैं की। र्बरी के बेर मनैं खाये, रार्र् से युद् मनैं फकया। राम राज्यामभर्षेक मेरा हुआ, राम का नही।ां इस प्रकार राम जन्द्म से लेकर अन्द्त तक, सारा चररि मेरा ही है। सारा चररि माया फकया राम ने नही।ां राम तो सर्व्शयापक है, आनांद ही इनका स्र्रूप है। आनदांमूनत शराम मुझ माया में व्यापक हैं। अतः, र्े मुझ माया में भासते हैं। यह सब मनैं ेही फकया राम ने नहीां। देहाममभमानी को ही यह सब चररि सत्य हदखता है, तत्र्र्त् ् आत्मनैजष्ठको को नही।ां राम अफिय हैं, र्े जरा भी कुछ नही ांकरते। र्े अचल हैं, एक रस हैं। जजतर सब चररि जन्द्म से लेकर अतां तक सम्पूर् शहुआ, कुछ नही।ां

दोहा-

मगि ध्यिा रस दंड जुग, पुति मि बाहेर कीन्द्ह ।

रघुपति चररि महेस िब, हरवषि बरिै लीन्द्ह ||111||

भर्र्ान र्कांर ने दो घडी आनन्द्द सार्र में डूबकी लर्ाई, तब क्या रत्न ममला र्ो बाहर आकर कहतेहैं फक हे पार्तशी! तुमने ेजो चररि देखा, र्ह क्या देखा? फकसमे देखा? फकसको देखा? फकसने ेदेखा?

जजसको त्रबना जाने, झूठ भी, अभार् रूप भी जो है ही नहीां, र्ह सत्य सा भासता है। त्रबना रस्सी के जाने, सप शजो अभार् रूप है, है ही नही।ां र्ह सत्य सा भासता है, प्रतीत होता है। रस्सी को जान लो, जो फक सप शका आिार है। (क्योंफक यहद रस्सी न होर्ी, तो सप शहदखेर्ा फकसमें?) तो सप शका अभार् हो र्या। जजसमे हदखता है, उसके आिार को जान लो, फफर देखने का अभार् हो र्या। डण्डा हदख रहा है, इसका आिार लकडी को जान लो, फफर डण्डे ेका अभार् हो र्या। लकडी ही हदख रही है। डण्डा तो र्कल्प र्ा, अजस्तत्र्हीन जो है ही नहीां।

जो हदखिा है, िह हदखिा है, म ैंहदखिा हूँ िब हदखिा है।

इस रहस्य को जिा मलया, फिर हदखिा कहाँ, जो हदखिा है।।

लकडी यहद न हदखे, तो डण्डा कैसे हदखे। भाई देखने र्ाला ही हदखता है, दूसरा नही।ां रष्टा ही दृश्य है। नही ांहोतेहुए जो भासता है, र्ह भर्र्ान का चररि है, जो र्ेद और र्मल है। मुझ आत्मा 'म'ैं में यह प्रपचां (राम चररि) नहीां होते हुए भी हदखा, क्यों? अरे, यही तो उसकी लीला है, यह सब अज्ञान के अन्द्िकार में अज्ञानी जनों को हदखता है। तत्र्र्त् ्को नही।ां

झूठेउ सत्य जाहह त्रबिु जिो। स्जमम भुजंग त्रबिुरजु पहहचिो ।।
जेहह जिोजग जाइ हेराई । जागे जथा सपि भ्रम जाई ।।

हे पार्तशी! तुमने ेझूठे को देखा, अभार् को देखा और उसके आिार के अज्ञान में जो हदखा उसे सत्य मान मलया, जजसके जान लेने पर ससांार प्रपचां का अभार् हो जाता है, र्ह आिार भर्र्ान आत्मा 'म ै' है। चराचर का अजस्तत्र् अपना आप, जो हर एक के भीतर 'म ै' हूँ, 'म ै' हूँ ऐसा रात-हदन बोल रहा है, उसके त्रबना जानेयह ससांार प्रपचां मन, बुद्धि, र्रीर आहद जो तीन काल में है ही नहीं, सत्य-सा जान पडता है।

भाई, यही श्रुनतयों, स्मृनतयों के मसद्ाितां का ननचोड है, जजसे भर्र्ान र्कांर ने ब्रह्मानदां, आत्मानांद, ननजानदां, ननत्यानदां, सार्र में दो घडी डूबकर, र्ोता लर्ाकर, बाहर ननकाला। कौडी, घोंघी, सीप और र्ांखयाँ आहद तो समुर के बाहर फकनारे में भी ममल जाती हैं, परन्द्तु यहद अमूल्यरत्न ननकालना है, तो भैया! इसके मलए तो समुर की तह में, र्हरे जल में मीलों जाना पडेर्ा, तब कही ांजाकर ममलेर्ा। इसी तरह माताजी का प्रश्न कोई फकस्सा-कहानी, राजा-रानी के चररि, इनतहास आहद जाननेको होता तो, भोले बाबा को दो घडी समाधिस्र् होने की आर्श्यकता नही ांपडती। मर्र, यहाँ तो माता जी ने कहा र्ा फक भर्र्न्! आप र्ेदों, र्ास्त्रों का सार तर्ा श्रुनतयों स्मृनतयों के मसद्ान्द्त का ननचोड कहहए। भर्र्ान र्कांर कहते हैं- जैसे- जार्नेपर स्र्प्न का भ्रम दूरू हो जाता है, उसी प्रकार स्र्स्रूप भर्र्ान आत्मा 'म ै' के जान लेनेपर ससांार प्रपचां का अभार् हो जाता है।

जजस समय मनुष्य स्र्प्न देखता रहता है, तब र्ह यह नहीं जानता फक म ैंस्र्प्न देख रहा हूँ, यह असत्य है, जार्ने पर मुझे ेकुछ नही ांममलेर्ा, उससे यहद जाग्रत अर्स्र्ा का मनुष्य कहे फक भाई! यह तू ूजो देख रहा है, र्ह असत्य है, स्र्प्न है, तो र्ह उस समय कदार्प नहीांमानेर्ा, क्योंफक र्ह उस अर्स्र्ा में, जाग्रत की नाई सब प्रत्यि ही सत्य देख रहा है, परन्द्तु र्ही मनुष्य जब जार् जाता है, तब अपनेआप ही कहता है फक आज मनैं ऐसा देखा र्ह स्र्प्न र्ा, आहद। उसे यह समझाना या बताना नही ांपडता फक यह असत्य है। झूठ को तुमने ेदेखा र्ा और सत्य माना र्ा। स्र्प्नकाल में र्ह उसके मलए सत्य ही र्ा, र्ह तो जार्नेपर असत्य हुआ, इसी तरह स्र्स्रूप भर्र्ान आत्मा में जार् जाओ, तो इस जर्त् ्प्रपांच का अपने आप अभार् हो जायर्ा।

जो सपिमसर काटै कोई। त्रबिु जागे ि दूरूर दुखु होई ।।

तुलसीदास जी ने र्र्नय में कहा है -

म ैंहरर, सािि करइ ि जिी।
जस आमय भेषज ि कीन्द्ह िस, दोष कहा हदरमिी ।।
सपिपृ कहूँ घटै त्रबप्र-बघ, त्रबकल फिरै अघ लागे ।
बास्जमेध सि कोहट करै, िहहं ंसुद्ध होइ त्रबिु जागे ।।

हे प्रभो ! मनैं ेसिान करना नही ंजाना, जैसा रोर् र्ा रैसी दर्ा नही ंकी। इसमें इलाज का क्या दोर्ष? जैसे सपनेमें फकसी राजा को ब्रह्म हत्या का दोर्ष लर् जाय और र्ह उस महापाप के कारर् व्याकुल, जहाँ–ँतहाँ भटकता फफरे, परन्द्तु जब तक र्ह जार्ेर्ा नही,ं तब तक सौ करोड अश्र्मेै यज्ञ करने ेपर भी र्ह र्ुदि्ु नहीं होर्ा, इसी प्रकार भर्ार्न 'आत्मा' स्र्रूप 'म'ैं में त्रबना जार्े अज्ञान जननत ससांार प्रपचां से छुटकारा नही ंममल सकता।

स्रग-महूँ सप िंत्रबपुल भय दायक, प्रगट होइ अत्रबचारे ।
बहु आयुध घरर, बल अिेक करर, हारहहं ंमरइ ि मारे ।।

जैसे अिंकार में रस्सी में सप शका भ्रम हो जाता है और र्ह (ममथ्या सप शका भ्रम न ममटनेतक) अनेक हधर्यारों के द्र्ारा बलपूर्कश मारते-मारते र्क जानेपर भी नही ंमरता। अरे यार! साँप होता तब तो मरता, जब है ही नही ंतब मरेर्ा क्या? इसी प्रकार-अज्ञान से भासने र्ाला यह ससांार, त्रबना इसके असली स्र्रूप के जानेनष्ट कैसे होर्ा ?

तिज भ्रम िे ेरत्रबकर-सम्भि, सागर अति भय उपजिौ।
अिगाहि बोहहि िौका चहढ़, कबहूँ पार ि पिौ ।।

अपनेही भ्रम से सूय शफकरर्ों से उत्पन्द्न हुआ मृर्तृष्र्ा का समुर बडा ही भयार्ना लर् रहा है और उस ममथ्या सार्र में डूबा हुआ मनुष्य क्या जहाज या नार् पर चढकर पार पा सकता है? नहीं, यही हाल इस अज्ञान से उत्पन्द्न ससांार सार्र का है।

तुलसीदास जी कहते ेहैं फक जब तक 'म'ैं पर जजतनी मान्द्यताएँ हैं, र्ेकल्प हैं, अमुक भार् हैं, इनका अत्यन्द्ताभार् न हो जाये, तब तक करोडों यत्न करके भले मर जाओ, परन्द्तु इस सांसार सार्र से पार नहीं पा सकते। अमुक भार्, र्ेकल्प भार् ही तो सांसार है। अमुक भार् र्या फक ससांार न रहा। जब ससांार का, अर्ात् र्ेकल्प का अभार् हो र्या तब र्ेकल्प ही कहाँ ँरहा? र्ेकल्प के अभार् में र्ेकल्पक का भी अभार् हो र्या। र्ेकल्पक सज्ञां न रहा, पर जजस पर ये दोनों कजल्पत र्े र्ह रहा, जजसमें दोनों अिारत र्े।

फकसी व्यजक्त की र्ादी हुई, र्ृहर्ी आयी, अभी र्ह व्यजक्त ही है, परन्द्तु जजस िर् पुि हुआ उस व्यजक्त का नाम र्पता हो र्या। पुि के होते ही र्पता नाम पड र्या, अब जजस हदन पुि मर र्या, पुि न रहा उसी िर्, उसी हदन से र्पता भी न रहा। पुि के अभार् में र्पता कहेर्ा कौन? अतः, र्पता भी जाता रहा, परन्द्तु र्ह व्यजक्त तो रहा, उसका अभार् नही ंहुआ। उसी पर र्पता-पुि दोनों कजल्पत र्े। केर्ल र्पता सज्ञां न रहा।

इसी तरह र्ेकल्पक 'म'ैं और र्ेकल्प हुआ ससांार। र्ेकल्प का ज्योंहह अभार् हुआ फक र्ेकल्पक का भी अभार् हो र्या, परन्द्तु 'म'ैं रहा, जजस पर दोनों अिारत र्े।

यही - **तुलसीदास जग आपु सहहि जब लचग तिरमूल ि जाई** का भार् है। कम शदेर् में जर्त्, ् उपासना देर् में चररि, ज्ञानदेर् में ब्रह्म और तत्र् देर् में 'म'ैं, कम शमें जो अकम शऔर अकम शमें जो कम शदेखता है, र्ही ज्ञानर्ान है। कम शहुआ जर्त्, ् अकम शहुआ 'म'ैं आत्मा। कम शदेर् में जर्त् ्हदखता है और 'म'ैं आत्मा आत्मदेर् में जर्त् ्का अत्यन्द्ताभार् है।

जेहह जािेजग जाइ हेराई। जागे जथा सपि भ्रम जाई ।।

अपनेआत्म स्र्रूप 'म'ैं आत्मा के बोि हो जानेपर, फफर ससांार प्रपचां का अत्यन्द्ताभार् हो जाता है। र्ैकल्प, मान्द्यता, अमुक भार्, माया, मन, ससांार सबका एक ही भार् है। ये एक ही के पयायशर्ाची र्दद हैं।

जो माना जाय, र्ह है-माया। जजसको माना जाय, र्ह है उसका आिार, स्र्ामी, पनत, रिक अर्ात्श ्माया-पनत।

डण्डा, यह माना र्या है। यह है माया। डण्डा फकसको माना र्या? लकडी को। तब लकडी है डण्डे ेका आिार, डण्डे ेका पनत, रिक, स्र्ामी। पनत का अर् शहोता है रिक। यहद डण्डा से लकडी ननकाल लोर्े तो डण्डा का अजस्तत्र् ही खतम हो जायर्ा। र्ह रहेर्ा फकसमें? डण्डा कहा फकसको जायर्ा? अतः लकडी डण्डे ेका आिार हुई, पनत हुई, स्र्ामी और रिक हुई। त्रबना लकडी के डण्डा एक िर् भी जजन्द्दा नही ंरह सकता। लकडी मायापनत हुई। अब डण्डे ेकी मान्द्यता से लकडी ढँक र्यी, डण्डे ेने लकडी को नछपा मलया, माया से मायापनत ढँक र्या। इस प्रकार 'म'ैं आत्मा पर जजतनी मान्द्यताएँ हैं, उन मान्द्यताओां से, माया से 'म'ैं आत्मा ढँक र्या। माया अपने आिार को अधिष्ठान को, ढाँक कर नछपा लेती है।

माया से मायापनत 'म'ैं आत्मा भर्र्ान नछप र्या।

'म'ैं हूँ, अब इस 'म'ैं आत्मा पर जजतनी मान्द्यताएँ हुई, जजतने र्ैकल्प हुए, जो-जो अमुक भार् आया, 'म'ैं को जो-जो माना र्या, उन-उनसे 'म'ैं आत्मा ढँक र्या। क्या-क्या मान्द्यताएँ हुई?

'म'ैं देह हूँ। 'म'ैं पर देह की मान्द्यता हुई। 'म'ैं को देह माना। देह मानने ेके बाद फफर माना फक 'म'ैं स्त्री हूँ, 'म'ैं पुरुर्ष हूँ। 'म'ैं बालक हूँ, युर्ा हूँ, र्ृद्ि हूँ। आता हूँ, जाता हूँ, खाता हूँ, पीता हूँ, जन्द्मता हूँ, मरता हूँ। ब्राह्मर् हूँ, िबत्रि हूँ, र्ैश्य हूँ, र्ुर हूँ, माता, र्पता, भाई, बहन, मामा, चाचा, पुि हूँ। र्ृहस्र् हूँ, ब्रह्मचारी हूँ, र्ानप्रस्र् हूँ, सन्द्यांासी हूँ आहद अनेक मान्द्यताएँ 'म'ैं पर होती र्ीं। इन मान्द्यताओां से 'म'ैं आत्मा ढँक र्या। ढक्कन ही माया है और जो ढँका है, र्ह मायापनत भर्र्ान है।

'म'ैं जीर् हूँ। 'म'ैं को जीर् मान मलया। इस जीर् मान्द्यता के बाद 'म'ैं सुखी हूँ, दुखी हूँ। पुण्यी हूँ, पापी हूँ, स्र्र्ी हूँ, नकी हूँ आहद अनेक अमुक भार् 'म'ैं पर लद र्ये जजससे 'म'ैं आत्मा नछप र्या। 'म'ैं पर माया का ढक्कन पड र्या।

म ेंब्रह्म' हूँ। 'म'ें को ब्रह्म मान मलया र्या। इस ब्रह्म की मान्यता के बाद 'म'ें रष्टा हूँ, 'म'ें सिाी हूँ, 'म'ें ननत्य हूँ, रुद्धि हूँ, बुद्धि हूँ, ननरांजन, ननराकार, ननलेप, ननरीह हूँ, ननमलश हूँ, ननर्र्कशार हूँ, अनन्द्त हूँ, अपार हूँ, पूर् श हूँ, अर्द्नारी् हूँ आहद अनेक मान्यताएँ आ र्यीं। इन मान्यताओां से 'म'ें आत्मा ढँक र्या। 'म'ें पर पदाश पड र्या। 'म'ें नछप र्या।

'म'ें आत्मा कहा जाता है: प्रश्न है 'म'ें को आत्मा क्यों माना? अरे भाई! 'म'ें और आत्मा, मभन्द्न-मभन्द्न नही ांहैं। आत्मा का नाम अजस्तत्र् है। 'है' है, यह सामान्द्य चेतन सारे चराचर में व्यापक है। यह भर्र्ान का अव्यक्त रूप है और 'म'ें यह र्र्ेर्ेष चेतन है, व्यक्त रूप है। जो अव्यक्त रूप 'है' है, उसका ही व्यक्त रूप 'म'ें है। 'है' ही है, जो अपनेको 'म'ें नाम से व्यक्त कर रहा है। इस तरह दोनों एक ही हैं, अलर्- अलर् नही।ां

आत्मा के मलए 'म'ें कहना ही पयाप्शत है, परन्द्तु अनाहद काल से 'म'ें को देह मानेबैठे हैं, देह से अलर् होना ही नही ांचाहते। अतः 'म'ें के सार् आत्मा लर्ाकर कहना पडता है। जजतनी मान्यताएँ हैं, यही माया देर् है, अमुक देर् है, परदेर् है, जीर् जर्त् ्है, प्रपचां देर् है, र्र्कल्प देर् है, यही अज्ञान जर्त् ्है। इन सब मान्यताओां को हटा दो। बस, अब जो र्ेर्ेष रह र्या 'म'ें आत्मा, यही आत्मा देर् है, स्र्देर् है, भर्र्ान देर् है, ज्ञान जर्त् ्है।

यहद लकडी न होर्ी, तो डण्डा मानोर्े फकसको ? रस्सी न होर्ी तो अँिेरे में सप शफकसको कहोर्े? तब लकडी को ही डण्डा माना र्या, रस्सी को ही सप शमाना र्या। इसी तरह 'म'ें आत्मा को ही, माया माना र्या। यहद 'म'ें आत्मा न होऊँ, तो माया का आिार कौन होर्ा? फकसको माना जायेर्ा? देह हूँ, जीर् हूँ, ब्रह्म हूँ आहद मान्यताएँ, फकस पर की जाएांर्ी?

जैसे रस्सी का ज्ञान हो जाने पर सप शका भ्रम दूर्र हो जाता है। अरे, यह तो रस्सी ही है, जजसको मनैं सप श मान मलया र्ा। इस भ्रम का कारर् र्ा अँिकार। अन्द्िकार दूर्र होते ही, रस्सी प्रत्यि हदखनेलर्ी, इसमलए सबसे पहहले अन्द्िकार को ही दूर्र करना पडेर्ा। इिर अँिेरे का नार् हुआ फक उिर रस्सी का ज्ञान हो र्या। दोनों सार् ही सार् हुआ। इसी प्रकार सप शरूप इस ससांार प्रपचां का कारर् अज्ञान, अँिकार है, ज्यों ही ज्ञान का प्रकार् हुआ फक अज्ञान का नार् हो र्या अर्ात्श ्'म'ें आत्मा का बोि हो र्या। स्र्रूप आत्मा के बोि में जर्त् ्प्रपचां नहीांहै।

झूठेउ सत्य जाहह त्रबिु जािें ॥

यही रघुनार् जी का र्र्मल यर् है फक तीन काल में कुछ हुआ ही नही।ां नाम रूप ससांार है, नाम सुना जाता है और रूप देखा जाता है। बस, यही ससांार है। हृदय में ससांार का प्रर्ेर् दो इजन्द्रयों के द्र्ारा होता है, देखकर और सुनकर -

राम देझख सुनि चररि िुम्हारे । ज़ मोहहहं ंबुध होहहं ंसुखारे ।।

बिु, अर्ात्श ्र्र्रेकी, ज्ञानी जन, सुखी होतेहैं, क्योंफक चररि को देखकर और सुनकर भी र्े जानते हैं फक न कुछ हुआ है, न हो रहा है और न कुछ होने र्ाला है, जैसे फक मर्रजी को हुआ। चररि को देखकर और सुनकर भी र्े -

जय सस्च्चदान्द जग पािन । अस कहह चलेउ मनोज निसािन ।।

कहकर आर्े बढ़ र्ये, उन्द्हें न तो हर्ष शहुआ, न र्र्षाद और न र्स्मय तर्ा मोह ही। रस्सी में सप शअसत्य है, क्योंफक यहद सत्य होता तो प्रकार् में भी हदखता, परन्द्तु प्रकार् में सप शनही ांहदखता। अतः, सप शसत्य नहीांहै, तब क्या असत्य है? अरे, असत्य होता तो देखने से भय, कम्पन नहीां होता। अतः, असत्य भी नहीांहै। चररि को सत्य कहो तो बनता नही,ां क्योंफक सत्य का कभी अभार् नही ांहोता, र्ह तीनों काल और तीनों अर्स्र्ा में ननत्य एक रस रहता है तभी तो सत्य है, परन्द्तु चररि तो ननत्य नहीांहै उसका अभार् हो जाता है, अतः सत्य नही ांहै। जब चररि सत्य नहीांहै, असत्य नही ांहै, सत्यासत्य नहीां है, क्योंफक प्रकाश-अन्धकार पदार्श एक सार् नहीां रह सकते, तब क्या है? इसका उत्तर है फक यह तकश का र्र्षय नहीां है।

सगुन राम के चररि निभिी, निफक नि सकहहं िुद्चध मन बििी ।।

भर्र्ान के चररि में तकश की र्ुांजाइर् नहीांहै। तकश में र्ुर्-दोर्ष आता है और भर्र्ान र्ुर्-दोर्ष से परे हैं।

इस तरह चररि क्या है? कुछ कहते ेनहीांबनता।

भाई! जब जजसका चररि है, र्ही मन र्ार्ी का र्र्षय नहीां है, अननर्चशनीय है, तब उसका चररि ही कैसे र्चनीय होर्ा, र्ह भी अननर्चशनीय है!

जजस आिार पर माना जाय र्ह आिार 'म'ैं आत्मा है, जो माना जाय, र्ह है माया। जब तक मान्द्यता है, रजोर्ुर् युक्त सृजृष्ट का पालन है। जब मान्द्यता समाप्त हो जाय अर्ात् श ्मान्द्यता का अभार् ही रजोर्ुर् युक्त सृजृष्ट का सहांार है। तीनों र्ुर्ों के समुच्चय का नाम माया है, तीनों र्ुर् अर्ाशत् ्ब्रह्मा, र्ष्र्ु ्और महेर्।

'म'ैं भर्र्ान आत्मदेर् में 'म'ैं आत्मा भर्र्ान के जन्द्म, कम शका अत्यतांाभार् है, यही 'म'ैं आत्मा भर्र्ान का हदव्य जन्द्म कम शहै, यह हुआ बोि। इस बोि के बोि को, जो बोि से जानता है, उसका पुनजन्द्श्म नही ांहोता, बोि को ही प्राप्त होता है।

राम सरूप निुम्हार, बचि अगोचर बुद्चध पर ।
अत्रबगि अकथ अपार, नेति, नेति नित, निगम कह ||26||

हे राम! तुम्हारा रूप, 'स्र्' रूप है, यहद 'पर' रूप होता तो कहने में आता। स्र् = स्र्यां 'म'ैं। न म ैंबद्ि हूँ, न तुम मुक्त हो, न म ैंज्ञानी हूँ, न तुम अज्ञानी हो, न म ैंब्रह्म हूँ, न तुम जीर् हो। न म ैंसेर्क हूँ, न तुम सेव्य हो, इन समस्त भार्ों के अभार् का जो भार् है र्ह राम का जानना है, यह बुद्धिर्म्य, इजन्द्रयर्म्य, र्ार्ीर्म्य नहीां है। नही,ां नहीां को देखता है और है, है को देखता है। सांर्य-र्र्पययश के अभार् का नाम ही अनुभर् है। यह है अर्ा नहीां,

 इसका नाम सांर्य (अननश्चय का नाम)। यह, नही ांहै, दूसूरा है अर्ात्श ्अन्द्य को अन्द्य समझना, इसका नाम
र्ंपययश है (र्ंपरीत ज्ञान)। अनुभर्म्य के अनुभर् में सर्ांय र्ंपययश का अभार् है। यही रघुनार्जी का र्ंमल यर् है और श्रुनतयों, स्मृनृतयों के मसद्ान्द्त का ननचोड है। ये चीजें तह में डूबने ेसे ममलती हैं, जजसे भर्ान कांर ने डुबकी लर्ाकर ननकाला।

चररि में जो अननर्चशनीयता है, ई चररि का है या जजसका चररि है, उसका है। उत्तर है-जजसका चररि है, उसका है। अर्ूांठी में जो पीलापन है, ई अर्ूांठी का है या सोनेका? उत्तर है-सोनेका है। (अांर्ूठी, सोनेका चररि है)

अमस रघुपति लीला उरगारी। दिुज विमोहति जि सुखकारी ।।

दनुज कहते हैं देहामभमानी को, जजसने देह को ही अपना स्र्रूप मान मलया है और जन कहते ेहैं, जजसको अपनेस्र्रूप का ज्ञान है।

भर्ान का चररि स्र्रूप ज्ञाननयों के मलए सुखदाई है और अज्ञाननयों के मलए, दुुःखदाई है।

जथा अिेक बेष घरर, िृतृ्य करइ िट कोइ ।
सोइ सोइ भाि हदखाइ, आपुि होइ ि सोइ ।।

यह ससांार नाट्य र्ाला है, यहााँई खुद ही तो नाटककार है, खुद ही तो सूिंधार है, खुद ही राजा है, खुद ही रानी है, खुद ही तो दास है, खुद ही दासी है, खुद ही चोर है, खुद ही सार् है, खुद ही सिू है, खुद ही चाण्डाल है, खुद ही पापी है, खुद ही पुण्यात्मा है, खुद ही नीं है, खुद ही स्र्ी है, नाटकर्ाला रूप ससांार भी खुद ही है। मर्र "आपुन होइ न सोइ । भैय्या! र्ंधचि महहमा है, कहााँ तक कहें -

कहीं ंहोय विरंचच सृसृ्कट रचचा अिेक भााँति,
कहीं ंहोय मुकुन्द्द सृसृ्कट पालि अपेला है।
कहीं ंहोय महेश भेष, सृसृ्कट खास िाश करै,
या प्रकार िािी रूप धरै, िािी बेला है ।
कहीं ंजै गोविन्द्द दि िृनृ्द्द होय अिन्द्द करै,
कहीं ंबि दैत्य दि झगर झमेला है ।
कहा ूाँलौ बखातिये, ि जातिये, सो िाकी गति,
है सही अकेला, पै अिेक खेल खेला है।

स्र्यांही खर्लाडी है, स्र्यांही खेल है और स्र्यांही दर्कश है। रष्टा, दृश्य, दर्नश सब स्र्यां ही है।

टि कृि त्रबकट कपट खगराया, िट सिेकहहं ंि ब्यापैमाया।

सो ि र इन्द्रजाल िहहं ंभूला, जापर हो सो िट अिुकूला ।।

यहाँ ँपर भर्र्ान की उपमा इन्द्रजाली से दी र्यी है, इन्द्रजाली का प्रत्येक खेल र्ैधचि और प्रत्यि होता है। इस खेल को देखकर र्ही र्ैस्मय में नहींपडता, जो उसका कृपा-पाि होता है। बाकी सबको यह इन्द्रजाली अपनेइन कपट भरे खेलों से र्ैमोहहत कर लेता है। उसके सभी खेल कपट पूर् शहोते हैं, अर्ात् श ्असत्य होता है, परन्द्तु त्रबना इन्द्रजाली की कृपा के उसका भेद (रहस्य) समझ में नहींआता और सत्य ही प्रतीत होता है।

एक बार इलाहाबाद में बकैं के पीछे पोलो ग्राउण्ड में इन्द्रजाली का खेल हुआ। इन्द्रजाली ने अपना खेल हदखानेके पूर्,श कलेक्टर से स्र्ीकृनत ले ली र्ी। बाद में अपना खेल हदखाया। इस खेल के मलए हटकट की व्यर्स्र्ा र्ी और बडे–बडे ेलोर् बहुत सांख्या में इस खेल को देखने आये र्े। उसका खेल इस प्रकार र्ा -

इन्द्रजाली जोर-जोर से डमरू बजानेलर्ा और उसकी स्र्ी ढोलक बजानेलर्ी। इन दोनों बाजों की आर्ाज से दर्कशों का मन उनकी ओर केजन्द्रत हो र्या। इतने में दर्कशों ने सुना फक आकार् मांडल में मारो-मारो, दौडो, राजा रामचन्द्र की जय, लकांापनत रार्् की जै आहद आर्ाज जोर-जोर से आने लर्ी। तब इन्द्रजाली ने अपनी स्र्ी से कहा, सुन रही हो, क्या आर्ाज आ रही है? स्र्ी कहने लर्ी-सुन तो रही हूँ। यह काहे की आर्ाज है? जो लर्ातार आ रही है और बडी मारकाट मची हुई है।

इन्द्रजाली कहनेलर्ा- अरी पर्ली ! तू क्या जानेर्ी। राम-रार्् का घोर युद्ध हो रहा है और मेरा भी बुलौर्ा आ र्या है। मुझेभी र्हाँ जाना जरूरी है। देखो अब म ैंचला। ऐसा कहकर उसनेकच्चे तार्े की एक त्रबल्कुल पतली डोर्ी अपनी झोली से ननकाला और उसके एक छोर को अपनेहार् में रखकर पूरी डोर्ी को आकार् मडांल की ओर फेंक हदया। डोर्ी सरश से आकार् की ओर चल दी और कच्चेिार्े का लबां खडा हो र्या। अब इस लबां रूप िार्े को पकडकर इन्द्रजाली आकार् मण्डल की ओर चढनेलर्ा। सभी दर्कश आश्चयचशफकत हो, कौतूहलपूर् शदृजष्ट से उस ओर देखतेरहे। लर्भर् डेढे फलांर् तक र्ह इन्द्रजाली िार्े के सहारे ऊपर चढ़ता हुआ हदखाई हदया, बाद में र्ह आँखों से ओझल हो र्या। मारकाट की आर्ाज पूर्र्शत् ्आ रही र्ी। इतने ेमें दर्कशों ने देखा फक इन्द्रजाली का एक हार् कटकर उसकी स्र्ी के पास धर्रा। स्र्ी छाती पीटकर, ढाडें ेमार-मारकर, धचल्ला-धचल्लाकर रोने लर्ी। र्ह रो-रोकर कहते जाती र्ी फक म ैंलुट र्यी, मेरा सहारा नछन र्या, म ैंबेमौत मारी र्यी। अब ससांार में मेरा आश्रय कौन है? इतने ेमें उसके पनत का दूसूरा हार् भी कटकर उसके समीप धर्रा, स्र्ी इसी तरह और जोर-जोर से रोने लर्ी। फफर इन्द्रजाली के दोनों पैर कटकर भूमम पर धर्रे और र्ोडी देर बाद उसका मसर कटकर उसकी स्र्ी की र्ोद में धर्रा। दर्कश यह सब दृश्य देखकर करुर्ा और आश्चय शमें डूब र्ये।

अब स्र्ी नै कहा फक जब सांसार में मेरा पनत ही नहींरहा, तब म ैंही जीकर क्या करूँर्ी। भाइयों! जल्दी धचता बनाने के मलए लकडी की व्यर्स्र्ा करो, मुझेअपनेपनत की लार् को र्ोद में लेकर सती होना है। तुरन्द्त, लकडी की व्यर्स्र्ा कर धचता बनायी र्यी और सबके देखते-देखते, र्ह स्र्ी अपनेपनत के कटे हुए अर्ों को र्ोद में लेकर धचता में बैठ र्यी और जलकर राख हो र्यी। कैसा हृदय र्ेदारक कारुर्र्क दृश्य र्ा। लोर्ों के आश्चय श

 का हठकाना न र्ा। एक दस ममनट के बाद ही लोर्ों ने देखा फक रे् दोनों स्र्ी-पुरुर्ष एक-दूसूरे का हार् पकडे ़ेहुुए एक ओर से चले आ रहे हैं और रे् सब दर्कशों के बीच उपजस्र्त हो र्ये। बस, फफर क्या र्ा, इस दृश्य ने लोर्ों को मिांमुग्ि् कर हदया। हजारों रुपयों की भेंट र् न्द्यौछार्र उस खेल पर फकये र्ये। फकसी ने अपने हार् की घडी ननकाल कर दे दी, फकसी ने सोनेका अपना चेन दे हदया, यहाँ तक फक महहलाओां ने भी अपनेर्ले का हार एर् ़ांअन्द्य आभूर्षर् उस इन्द्रजाली को भेंट में दे हदया। इस तरह सबों की जेब खाली हो र्यी।

सो ़िर इन्द्रजाल ़िहहं ़ंभूला। जापर होइ सो ़िट अिुकूला ।।

मान्द्यता इन्द्रजाल है, मान्द्यता का आिार 'म' ़ैं आत्मा इन्द्रजाली है।

इन्द्रजाली रूप मुझ आत्मा में, इन्द्रजाल रूप यह प्रपचां असत्य होतेहुुए, सत्य भासता है।

अव्यक्त रूप से जो सर् शका 'है' है और व्यक्त रूप से जो सर् शका 'म' ़ैं है, उस 'म' ़ैं आत्मा की जजस पर

असीम कृपा है, र्ह इस प्रपचां के रहस्य को जानकर, उससे प्रभार्र्त नही ़ांहो सकता।

इसी तरह भर्र्ान राम, इन्द्रजाली चररि हैं, इसे देखकर र्ही र्र्मोहहत नहीांहोते, जजन पर भर्र्ान राम इन्द्रजाली की कृपा है, यही उनका र्र्मल यर् है तर्ा श्रुनतयों, स्मृनतयों के मसद्िाांतों का ननचोड है फक तीनों काल में कुछ हुुआ ही नही।़ां

झूठेउ सत्य जाहह त्रबिु जािें ।।

भर्र्ान र्ांर ने ननजानन्द्द सार्र में डुबकी लर्ाई, तो यही रत्न लेकर र्े बाहर आये। जजसको जर्त् ़् कहते ़ेहो, यही रघुनार्जी का र्र्मल यर् है। रज्जू के अज्ञान में, जैसे सप शभासता है, उसी प्रकार भर्र्ान आत्मा के अज्ञान में, जर्त् ़्प्रपचां भासता है।

जजस तरह रज्जू की सत्ता से सप शकी सत्ता मभन्द्न नही ़ांहै, अर्ात्श ़्रज्जूही तो है, जो सप शके रूप में हदख रहा है, इसी तरह जर्त् ़्प्रपचां भी मुझ आत्मा 'म' ़ैं की सत्ता से मभन्द्न नहीांहै। यहद 'म' ़ैं आत्मा जर्त् ़्प्रपचां से मभन्द्न होता, तो म ़ैंप्रपचां का अनुभर् नही ़ांकर सकता और अमभन्द्न होता, तो भी म ़ैंप्रपचां का अनुभर् नहीांकर सकता, क्योंफक एक में अनुभर् कहाँ? अतः, र्र्षय प्रपचां का अनुभर् करने के मलए 'म' ़ैं प्रपचां होकर ही उसका अनुभर् करता हूँ।

देखो! मेला में लाखों मनुष्य उपजस्र्त हैं, उनमें से प्रत्येक से पूछो, भाई! तुम कहाँ आये हो? तो प्रत्येक यही जर्ाब देर्ा "मेला देखने। अब र्र्चार करो फक ये जजतनेभी मनुष्य मेला में हैं, र्े सब तो मेला देखने र्ाले हुुए, अब मेला कहाँहै? जजसे देखने ये सब आये हैं। अरे यार! मेला का देखने र्ाला, स्र्यांही मेला है। मेला उससे मभन्द्न

नही।ां म ैंमेला का अनुभर् स्र्यांमेला होकर करता हूँ। ऐसे ही जर्त् ्का अनुभर् मुझ आत्मा से न मभन्द्न है और न अमभन्द्न है। अरे! 'म'ैं ही तो हूँ, जो इस रूप में हदख रहा हूँ।

जजसको देखकर भ्रम होता है, र्ह देखने र्ाले में तो है नही,ां र्ह भ्रम तो हदखनेमें है। चररि में भ्रम है, राम में नही।ां जो तीन काल में न हो उसका नाम चररि है। तो भासता क्यों है? अरे। यही तो भर्र्ान राम की लीला है।

र्ंकल्प भार् अदांर है, र्ंकल्पाभार् न बाहर है, न भीतर। र्ंकल्पभार् माया है, र्ंकल्पाभार् 'म'ैं आत्मा है। देखा हुआ ससांार रज्जु में सप शके समान भासता है। सुना हुआ ससांार हूँठ में पर्ाच के समान भासता है। अजन्द्मा ससांार बन्द्ध्र्यापुि के समान और तृष्र्ा का उपादान ससांार मृर्जल के समान भासता है। भार् रूप (सत्य) ससांार की अनुत्पर्त्त है, अभार् रूप (असत्य) ससांार की अनुत्पर्त्त है और भार्ाभार् रूप में (सत्य-असत्य दोनों) ससांार की अनुत्पर्त्त है।

ससांार अपनी उत्पर्त्त के पूर् शक्या र्ा? सत्य र्ा? असत्य र्ा? या सत्यासत्य र्ा? यहद, कहो सत्य र्ा तो सत्य की उत्पर्त्त नहीं होती, क्योंफक जो पैदा होर्ा र्ह मरेर्ा, अतः र्ह सत्य नही।ां सत्य तो अर्नार्ी होता है, ननत्य होता है। यह ससांार ननत्य नही ांहै, अतः सत्य नही।ां यहद असत्य कहो तो असत्य बन्द्ध्र्या का पुि होता है। अभार् रूप, जो है ही नहींर्ह पैदा क्या होर्ा। इस तरह भी ससांार की उत्पर्त्त मसद्निही ांहोती। यहद कहो सत्यासत्य र्ा तो सिाक-बिाक पदार् शसार्-सार् नहीं रह सकते। इस तरह फकसी प्रकार से ससांार की उत्पर्त्त मसद्निहीं होती।

डण्डा, यह अपनेबननेके पहले क्या र्ा? सत् ्र्ा या असत् ्? सत् ्कहोर्े तो सत् ्भी कही ांबनता है? सत् ् तो त्रिकालाबाध्य होता है। असत् ्कहोर्े तो असत् ्तो बन्द्ध्र्या का पुि होता है, जो अभार् रूप है, है ही नहीं, परन्द्तु यह डण्डा तो स्पष्ट हदख रहा है। तब क्या सत्यासत्य है? नही,ां क्योंफक सिाक-बिाक पदार् शएक सार् नही ांरह सकतेतब सत्यासत्य भी नही।ां इस तरह डण्डा तीन काल में पैदा नहीं हुआ, न डण्डा है, पर सत्य-सा भासता है। इसकी उत्पर्त्त फकसी भी तरह मसद्निहीींहोती। डण्डा यह र्ंकल्प है। अब, जब फोटो मलया जायेर्ा, तब डण्डा र्ंकल्प का फोटो नहीं आ सकेर्ा, फोटो उतरेर्ा उसका जजस पर डण्डे ेका र्ंकल्प है। अब यह र्ंकल्प फकस पर है? उत्तर है- लकडी परा लकडी यह भी तो र्ंकल्प ही है। लकडी, यह र्ंकल्प फकस पर है? पृथ्र्ी पर। पृथ्र्ी, यह भी तो र्ंकल्प ही है। यह र्ंकल्प फकस पर है? (पृथ्र्ी का आिार जल है) जल पर है। जल, यह र्ंकल्प फकस पर है? जल का जो आिार अजग्न है, उस पर। अजग्न, यह र्ंकल्प फकस पर है? र्ायु पर। र्ायु, यह र्ंकल्प फकस पर है? इसका आिार जो आकार् है, उस परा आकार्, यह र्ंकल्प फकस पर है? अतां में ननर्यश हुआ फक यह र्ंकल्प आिारभूत 'म'ैं आत्मा पर हुआ है। तब यह मसद्िहुआ फक यह डण्डा नही ांहै। आिारभूत 'म'ैं आत्मा ही है, जजसका फोटो उतरा है। डण्डा, इस र्ंकल्प का फोटो नहीं हो सकता। हाँ,ँ इस र्ंकल्प के अभार् में जो रह र्या 'दृश्य' र्ह डण्डा र्ोडे ेही है। र्ह अर्हशीन पदार् शभास है, जो नारायर् है, 'म'ैं आत्मा है। प्रश्न है-धचि, जो उतरा र्ह अर् शका है या अर्हशीन भास का? उत्तर है-अर्हशीन भास का। अब इस भास का ज्यों ही तुमने नामकरर् फकया। (भास यह भी तो नामकरर् ही है) र्ंकल्प हो र्या। इस तरह जजसका फोटो उतरा है, उसको र्ार्ी व्यक्त नहीं कर सकती,

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 47 बुद्धि ननश्चय नही ांकर सकती। ई इजन्द्रयों से परे का र्र्षय हो र्या। अब इस नारायर् तत्त्र् पर

अनन्द्त र्ेकल्प

कर, उन अजस्तत्र्हीन र्ेकल्पों को सत्य मान मलया र्या। बस, यही ससांार का रूप है जो अजस्तत्र्हीन है, है ही नही।ां यहद, प्रपांच है तो प्रपचां के दर्नशकाल में भी उसके अजस्तत्र् का भान होना चाहहए। परन्द्तु, उसके दर्नशकाल में प्रपचां न तो स्र्देर् में हदखता है और न परदेर् में।

स्र्रूप के अज्ञान में स्र्रूप ही जर्त् ्है और स्र्रूप के ज्ञान में जर्त ही स्र्रूप है। जर्त् ्नही ांभासता, भास ही भासता है।

जजससे सुख और दु:ख दोनों का अनुभर् हो उसका ही नाम जर्त् ्है और जजससे अनुभर् का भी अनुभर् न हो, र्ही 'म'ैं भर्ग्न आत्मा हूँ। र्स्तु से भय नहीं है, अर् शसे भय है। छोटे मासूम बचे ेके सामने काला नार् डाल दो, तो र्ह उसे अर्हशीन जस्न्त में देखता है। र्ह उसे र्खलौना समझकर पकडने ेदौडता है और पकडना चाहता है। इसका मतलब हुआ फक र्ह उस पर अर् शनहीं लर्ा रहा है। यह काला नार् है, इसके काटनेसे प्रार्यों की मृतूयुहो जाती है। यह अर् शर्ह नहीं लर्ाता, इसीमलए र्ह उससे भय रहहत है। इसी तरह सर्दृशश्यमान उसे हदखाई तो पडता है, परन्द्तुअर्हशीन जस्न्त में। इस अर्स्ा में र्ह भय, घृर्ा, सुख, दु:ख, हर्ष,श र्ोक आहद द्र्न्द्र्ों से रहहत रहता है। उसे जो हदखता है, र्ह र्स्तु रूप है अर्ात्श ्'म'ैं आत्मा भार रूप, सत्ता मिा जो सुख-दु:ख से परे है। इसी तरह सर् श दृश्यमान जर्त अर्हशीन जस्न्त में भास ही भास सत्तामिा 'म'ैं आत्मा राम है, जो र्ेकल्प रहहत है, द्र्न्द्र्ों से परे है, पर ज्योंही अर् शलर्ाया, र्ेकल्प हुआ फक र्हींसे सुख-दु:ख, हर्ष-शर्ोक का कारर् जर्त् ्प्रपचां का ननमार्श हो र्या। इस तरह र्स्तु 'म'ैं आत्मा है और अर् शजर्त प्रपचां है। भर्ग्न आत्मा 'म'ैं को कुछ भी मान लेना यही अज्ञान अिंकार का स्र्रूप है। इस अज्ञान अिंकार के कारर् ही 'म'ैं आत्मा भर्ग्न, रज्जु में सपर्शत् ्ससांार प्रपचां तीन काल में नही ांहोते हुए भी सत्य-सा भासता है। जब ज्ञान का प्रकार् हुआ तो 'म'ैं आत्मा ही हूँ। अरे! रस्सी ही रस्सी है, सप शर्ा ही नहीं। न अिंरे में, न प्रकार् में। जजस तरह रज्जु देर् में न सप शकी उत्पत्त्त है, न र्ेनार्, यह उत्पत्त्त आ र्ेनार् तो सप शदेर् में है। उसी प्रकार 'म'ैं आत्मा भर्ग्न देर् में, जर्त् ्प्रपचां न पेट हुआ और न र्ेनार्। 'म'ैं आत्मा ही हूँ, मसर्ाय मुझ आत्मा के कुछ है ही नहीं, त बन्द्नि और मिो ससांार देर् का है। आत्म देर् में न बन्द्नि है, न मिो। जब ससांार नहीं, तब बन्द्नि और मिो कहाँ? माताजी को भ्रम चररि में हुआ, राम में नही।ां

भर्ांर्ान कांर ने कहा फक हे पार्तशी !

एक बाि िहहं ांमोहह सोहिाी, जदवप मोह बस कहेहु र्भिाी ।
र्म्हि जो कहा राम कोउ अिाा जेहह श्रुति गाि घरहहं ांमुति ध्याि ।।
कहहहं ांसुिहहं ांअस अधम िर, ग्रसे जो मोह वपसाच ।
पाषंडी, हरर-पद विमुख, जािहहं ांझूठ ि साच ।।

ससाांर में जो पाखण्डी, ममलन अन्द्त:करर् र्ाले अज्ञानी हैं, उन्द्हें ही यह होता है, जजनके मन में कुछ, र्चन में कुछ और व्यर्हार में कुछ इस तरह तीनो मभन्द्नता होती है, र्े ही इस तरह राम को न जानकर, चररि को सत्य मानते हैं।

एक राजा र्ा। र्ह र्द्र्ान, पडांडतऔर सन्द्त महात्माओां से हमेर्ा यही प्रश्न फकया करता र्ा फक महाराज! भर्र्ान पनतत पार्न है। अत:, र्े ससाांर के सब पार्पयों को तार देते हैं अर्ात् श ् भर्सार्र से पार लर्ा देते हैं। तब, जब सब पुण्यात्मा अपनेपुण्य के बल पर स्र्् शचले जाते हैं और पार्पयों का उद्िार पनतत पार्न भर्र्ान कर देते हैं तब नरक तो खाली पडा रहता होर्ा? भर्र्न्!् नरक में कौन जाता है, यह समझाइये। राजा की इस प्रबल युजक्त का जर्ाब कोई नहीांदे पातेर्े।

एक बार उस राजा के यहाँ ँएक र्ीतरार् महात्मा का आर्मन हुआ। राजा ने उन्द्हें सम्मानपूर्कश आदर केसार् र्द्ी पर त्रबठाया और हमेर्ा की तरह इनसे भी बडे े र्् शके सार् र्ही प्रश्न पूछा और कहने लर्ा फक भर्र्न्!् हमारे िन्द्य भार्, जो हमें आपके दर्नश हुए। हम बडे ेपापी हैं, नीच हैं, सत्कम शतो कभी जानते नहीांआहद।

उपरोक्त मर्ष्टाचार के बाद राजा ने इनसे र्ही प्रश्न पूछा, महात्मा ने राजा के इस प्रश्न और व्यार्हाररक मर्ष्टाचार को सुनते ेही उनकी ओर पीठ करहदया और अपना मुँह दूसूरी ओर कर कहने लर्े। हमसे बडी भूल हुई फक ऐसे नीच, पापी, अिमी राजा के यहाँ ँहम आ र्ये। हमें क्या पता र्ा फक यह ऐसा नीच है। भरी सभा में अपने प्रनत महात्मा का यह र्चन सुनते ेही राजा उद्र्ग्न हो उठा और कहने ेलर्ा- महाराज! आप सन्द्त महात्मा होकर भी ऐसे अपर्दद अपनेमुँह से ननकालते हैं। आपको भरी सभा में हमारा इस तरह अपमान करना र्ोभा नही ांदेता। राजा की ऐसी बातें सुनकर महात्मा कहने लर्े: अरे! तेरे नीच, अिमी, पापी होने ेकी बात तो हमने तुमसे ही सुनी और जानी। इसके पहले तो हम कुछ नहीां जानते र्े तो क्या तू पापी, अिमी और नीच नहीां है। अभी-अभी तो तू ही अपनेमुँह से यह सब कह रहा र्ा, उसी को हमने दुहुराया है। अब, जब तुम िुद्हि हो तब यह ननश्चय होता है फक तेरे मन में कुछ, र्चन में कुछ और कम शमें कुछ और ही रहता है। इस तरह र्ार्ी में दम्भ, मन में कपट और कम श में पाखण्ड का होना पाखडांडयों के लिर् हैं। तो भैय्या ! सुनो, पार्पयों को तो भर्र्ान तार देते हैं, पुण्यात्मा तो स्र्् शचले जाते हैं और तेरे जैसे पाखण्डी जजनके मन, र्चन और कम शएक से नहीां रहते र्े ही नरक जाते हैं। नरक तुम्हारे जैसे के मलए है, र्ह खाली नही ांपडा रहता। ऐसा कह र्े महात्मा उठकर अन्द्यन्द्ि चले र्ये।

अग्य, अकोविद, अंध अभागी । काई विषय मुकुर मि लागी ।
लंपट, कपटी, कुहटल, त्रबसेषी । सपिेहुँ संसिभा िहहं ंदेखी ।।
कहहहं ंिे िेद असंमि बािी। स्जन्द्ह के सूझ लाभ िहहं ंहािी ॥
मुकुर ममलि अर ियि त्रबहीिा। राम रूप देखहहं ंफकमम दीिा ।।
स्जन्द्ह के अगुि ि सगुि त्रबबेका। जल्पहहं ंकस्ल्पि बचि अिेका।
हररमाया बस जगि भ्रमाहीं । तिन्द्हहह कहि कछु अघहटि िाहीं॥
बािुल भूि त्रबबस, मििारे । िे िहहं ंबोलहहं ंबचि त्रबचारे ।

स्जन्द्ह कृ महामोह मद पिाा। तिन्द्ह कर कहा, कररअ िहीं ंकिाा।

सोरठा-

अस तिज हृदय त्रबचारर िजु संसय भजुराम पद ।
सिु चगरराज कुमारर भ्रम िम रत्रब कर बचि मम ।।

सगिुहहं ंअगिुहहं ंिहहं ंकुछ भेदा । गािहह मुति पुरा बुध बेदा ।।
अगिु अरूप अलख अज जोई । भगि पे्रम बस सगिु सो होई ॥
जो गिु रहहि सगिु सोई कैसे। जलु हहम उपल त्रबलग िहहं ंजैसे।
जासु िाम भ्रम तिममर पिंगा। िहह फकमम कहहअ त्रबमोह प्रसंगा ।।

सन्द्त महात्मा जन, सगुर् और ननगुर्श का भेद नही ंमानते। इस रामचररत मानस की यही र्रे्षता है फक इसमें सगुर्-ननगुर्श के भेद का कहीं पर उल्लेख नहींहै। सगुर् और ननगुर्श तो उसके उपासकों की िारर्ा का नाम है। सन्द्त तुलसी, भर्ान के उपासक रे्,े सगुर् और ननगुर्श के नही।ं सगुर् को सगुर् नही ंमानना, यही ननगुर्श भजक्त है। सगुर् और ननगुर्श ये दोनों भार् उपासक देर् में हैं, भर्ान देर् में नही।ं

स्रू्ल बुद्धि सगुर् मानती है और सूक्ष्म बुद्धि ननगुर्श मानती है। ये दोनों बुद्धि जजसकी नहीं है, र्ह भर्ान 'म'ैं आत्मा को जानती है (बुद्धि रहहत अर्स्र्ा) त्रबन बिो के न सगुर् रूप में ननष्ठा हो सकती है और न ननगुर्श रूप में ही। इन रूपों में तर् चररि और लीला में रत तो ज्ञान के बाद ही होता है। अज्ञानी क्या जानेर्ा फक क्या सगुर् है और क्या ननगुर्श है। देखकर जाना जाता है और सुनकर माना जाता है। अपनेस्र्रूप आत्मा को जहााँ ंदेख लेता है, तभी उसमें प्रीनत होती है।

देझख चररि, महहमा सुिि, भ्रमिि बुद्चध अति मोरर ।

माना जाता है मन से और जाना जाता है आत्मा से। देखो-र्र्ाह के प्रसर्ं में जनकपुर में चारों भाइयों के जब सब काय शसम्पन्द्न हो चुके, तब त्रबदाई के समय सबसे भेंट करते हुए, जनक जी सबसे अन्द्त में राम के पास आते हैं और रे् उनसे क्या कहतेहैं, रे् पहले व्यापक ब्रह्म, सनातन तत्र् ननगुर्श से उठाते हैं, र्र्देह मुक्त राजा जनक कहते हैं -

राम करौं केहह भााँति प्रसंसा । मुति महेस मि मािस हंसा ।।
करहहं ंजोग जोगी जेहह लागी । कोहु मोहु ममिा मदु ुत्यागी ।।
ब्यापकु ब्रह्म अलखु अत्रबिासी । चचदािंदु ुतिरगिु गुिरासी ॥
मि समेि जेहह जााि िािी। िरफक ि सकहहं ंसकल अिुमािी ।।
महहमा तिगमु िेति कहह कहई। जो तिहुाँ काल एक रस रहई ।।

ये व्यापक ननराकार का र्नश हुआ, जजसका भार् यह है -

सन्द्त का सम्बन्द् हृदय से होता है, बाहर से नही।ां जो हृदय र्ासना से रहहत होता है, उसे मान सरोर्र कहते ेहैं, ऐसे हृदय-रूप मान सरोर्र में भर्ान राम हांस का ननर्ास होता है।

मुति महेस मि मिास हंसा ।।

जो व्यापक होता है, र्ह अलख होता है और जो अलख होता है, र्ह अर्नारी् होता है। सन्द्त महात्मा जन जजसमें रमते हैं, इसमलए राम सारे चराचर में रम रहे हैं, इसमलए राम सबमें व्यापक हैं, फकस तरह? मभन्द्न होकर, अमभन्द्न होकर या मभन्द्ना- मभन्द्न होकर। यहद मभन्द्न होकर व्यापेर्ा तो मभन्द्न पदार् शफकसके आिार पर रहेर्ा? अमभन्द्न होकर कहोर्े तो अमभन्द्न होने ेसे र्ह एक ही हुआ तो एक में व्यापना कैसे होर्ा? तो व्यापक केर्ल कहने मिा को है, र्ह जब स्र्यांर्ही है, तब व्याप्य और व्यापक कहाँ ँहैं? अरे, लकडी जब स्र्यांही डण्डा है, तब र्ह व्यापेर्ी फकसमें? यह दृजष्टमर्य, र्ार्ीमर्य नहीां है, बजल्क अनुभर् मर्य है। यह व्यापकपना कैसे है, जैसे र्स्ि में िार्ा। र्स्ि की मान्द्यता में, िार्ा व्यापक है और जब र्स्ि है ही नहीां, केर्ल िार्ा ही िार्ा है तब र्ह व्यापेर्ा फकसमें?

भार् और अभार्, दोनों के अभार् के भार् में लखना कहाँरहा? न दृश्य है, न रष्टा है, तब लखना कहाँ? न र्र्षय रहे, न इनकी इजन्द्रयाँ तब लखना कहाँ है? इसमलए, हे राम! तुम अलख हो।

तुम अजन्द्मा होनेके नाते अर्नारी् हो। तुम भासतेहो, प्रतीयमान हो, इसमलए धचदानन्द्द हो और 'है' हो, अजस्तत्र् हो, इसमलए अलख हो। तीनों र्ुर्ों से परे हो इसमलए ननर्ुर्श हो और सर्र्ुशर्ों के भण्डार हो, आिार हो, इसमलए र्ुर्ामर् हो 'व्यापक ब्रह्म अलख अर्नारी् धचदानन्द्द ननर्ुर्श र्ुर्ारी्' का यही भार् है।

मि समि जेहह जिा ि बिी, िरफक ि सकहहं ांसकल अिुमिी ।।

तुम मन र्ार्ी के र्र्षय नहीांहो, न तो मन तुम्हें जान सकता और न र्ार्ी तुम्हे कह सकती है। तुम्हारे सबांि में फकसी प्रकार का तकश नहीांफकया जा सकता, र्ेद र्ास्ि पुरार्, ननर्म, आर्म सबों ने केर्ल अपना-अपना अनुमान ही बताया है। जो कहता है फक म ैंजानता हूँ, र्ह जानता नहीांऔर जो जानता है, र्ह कहता नही।ां

जो कहता है "म ैंभर्ान को देखा हूँ, जानता हूँ" र्ह उसे उससे मभन्द्न होकर जाना या अमभन्द्न होकर जाना अर्ा मभन्द्नामभन्द्न होकर जाना, फकस प्रकार जाना? जानने र्ाला तो जानकर र्ही हो जायेर्ा, र्ल जायेर्ा, तब कहेर्ा कौन? बतायेर्ा कौन? क्योंफक -

िजिा िुम्हहह, िुम्हइ होइ जाइ ।।

उसे जानने र्ाला तो र्ही हो र्या, बतानेर्ाला रहा नहीां।

जैसे पुिली लिौ की मसन्द्धु थाह गई लिै ।
गलि-गलि िह गल गई, कही ि पाई बिै ।

जो र्ल जायेर्ा, ई क्या बतायेर्ा? जब जो जानेर्ा ई बता नहीं सकता और जो कहता है, म ैंजानता हूँ, देखा हूँ, ई देखा नही।ां जजतनेकहने ेर्ाले र्ाग्री-रूप र्ेद, र्ास्ि, ननर्म, पुरार् आहद हैं, उन सबों ने "न इनत, न इनत" ही कहा।

महहमा तिगमु िेति कहह कहई। जो तिहुँ काल एकरस रहई ।।

तुम तीनों काल और तीनों अर्स्र्ा में हमेर्ा एक रस हो, जो 'म'ैं जाग्रत में, र्ही 'म'ैं स्र्प्न में और र्ही 'म'ैं सुर्षुजप्त में। जनक जी कह रहे हैं फक हे राम ! ऐसे जो आप हैं, सो मेरी आँखों के सामने प्रत्यि खडे ेहैं।

दोहा-

ययि विषय मो कहुँ भयउ, सो समस्ि सुख मूल ।
सबइ लाभु जग जिी कहुँ, भएुँ ईसुअिुकूल ।।

देखो, साकार सगुर् ब्रह्म में लाकर र्ीलीन कर हदया, ममला हदया। तो भैय्या! सन्द्त तुलसी की दृजष्ट में, सगुर् और ननगुर्श दो नही,ां एक ही है।

भर्गान यहद सचमुच सगुर् होतेतो ससांार भरके सभी उसके उपासक, उस सगुर् ही मानते, मर्र ऐसा नही ांहै। भर्गान तो उसे कहते हैं, जजसे सांसार भर के सभी पन्द्र्, मजहब, सम्प्रदाय, सोसायटी, र्र्श और आश्रम भर्गान कहें, जो ननर्र्शो हो, उसके र्र्रीर्ी कोई भी न हो, जजसे सब की मान्द्यता प्रदान हो, जो सार्भशौम हो और सर्मशान्द्य हो, जजससे मभन्द्न कुछ भी नहीं और जजसके त्रबना कुछ भी न हो, ई है भर्गान। भर्गान में कोई र्र्ाद नही ांहै, जब सर्शका भर्गान एक ही है, तब मेरा भर्गान, तेरा भर्गान, सगुर् भर्गान, ननगुर्श भर्गान आहद भेद कहाँ ँरहा? भर्गान मानेभर्गान जानकर, ो भर्गान की उपासना करते हैं, र्ही सच्चे उपासक हैं और भर्गान ऐसा है, भर्गान र्ैसा है, ऐसा मानकर जो उपासना करते हैं, र्े ेभर्गान के उपासक नहीं, माया (मान्द्यता) के ही उपासक हैं। प्रश्न-भर्गान मानेभर्गान जानना क्या है और भर्गान मानेभर्गान मानना क्या है?

अपनेस्र्रूप 'म'ैं आत्मा के माने'म'ैं आत्मा जानोर्े, तब तुमको यह अर्शलर्ेर्ा फक भर्गान माने भर्गान है और अपने स्र्रूप 'म'ैं आत्मा को कुछ भी मानोर्े, तब यही अमुक भार् मान्द्यता है, इसमें भर्गान मानेभर्गान मानना है, क्योंफक ज्यों ही कुछ माना फक 'म'ैं से अलर् हुआ। एक बार हमसे फकसी सज्जन ने पूछा स्र्ामीजी! म ैंसगुर् भर्गान को मानूँ या ननगुर्श? भैय्या! तुम न सगुर् भर्गान को भजो और न ननगुर्श भर्गान को भजो, इस झर्डे ेमें क्यों पडतेहो, तुम सिी भर्गान को भजो। देखो, राम सत्् स्र्रूप है, धचत््स्र्रूप है और आनन्द्दस्र्रूप है।

अयोध्या के महाराज दर्रर् के जब चार पुि हुए, तब उनने ेअपनेसूयर्शर्ां के कुल र्ुरु र्मष्ठ को बुलाकर उनकी र्ंधिर्त् ्पूजा की और तदोपरान्द्त, इन चारों भाइयों के नामकरर् करने ेके मलए उनसे र्ंनती की, र्ुरु र्मष्ठ जो ब्रह्मा के मानस पुिों में से हैं तर्ा त्रिकालदर्ी ब्रह्म ननष्ठ महात्मा हैं, उन्द्होंने ज्योनतर्ष और पचांर्ां देखकर चारों भाइयों का नामकरर् फकया।

भर्र्ान राम के नाम के सबांांि में 'राम' यह नाम उन्द्होंनेक्यों रखा, उस पर मानसकार कहते ेहैं फक -

जो आिंद मसन्द्धु सुखरासी । सीकर ि ेि ैलौक सुपासी ।।
सो सुख धाम राम अस िामा। अझखल लोक दायक विश्रामा ।।

जो आनन्द्द के समुर है और सीकर अर्ाात्श ्बालू के एक कर् से लेकर ब्रह्मा, र्ष्र्ु और महेर् तक के मलए जो सुपास हैं अर्ाात्ा ्र्श्राम स्र्ल हैं, र्हीं पहुँचने ेके बाद ही सबको फुसतश ममलती है, र्श्राम ममलता है, र्ानांत ममलती है, इसमलए इनका नाम 'राम' रखा।

अनाहद काल से जीर् मिा की यािा, आनन्द्द के मलए है, कोई भी प्रार्ी एक िर् के मलए भी दुुःख नहीां पाना चाहता। म ैंसदा सुखी रहूँ, यही सबकी चाह है, तब आनन्द्द तो जीर् मिा को र्दद, स्पर्,श रूप, रस और र्न्द्ि इन र्र्षयों में रात-हदन ममलता ही रहता है, तब जीर् की आनन्द्द यािा समाप्त हो जाना चाहहए, परन्द्तु यािा की समाजप्त क्यों नही ांहोती?

उत्तर है-उसका प्रयास आनन्द्द मसन्द्िु के मलए है, आनन्द्द सार्र के मलए है, न फक आनन्द्द की डबरी, आनन्द्द का तालाब, आनन्द्द का सरोर्र। र्र्षयानन्द्द जो है, र्ह आनन्द्द की डबरी है, तलैय्या है, सरोर्र है जो कीचडयुक्त है, िर्र्क है, अननत्य है, आर्मापायी है। जीर् की यािा तो आनन्द्द सार्र के मलए है, ननत्यानन्द्द, पूर्ानशन्द्द, परमानन्द्द, ननजानन्द्द, आत्मानन्द्द के मलए है। तब "आनन्द्द मसन्द्िु सुखरासी" तो भर्र्ान राम ही है, इसमलए जीर् की यािा भर्र्ान राम की प्राजप्त के मलए है, जब तक उसे उसकी प्राजप्त न हो जायेर्ी, तब तक उसकी यािा समाप्त नहीां हो सकती। चाहे इसके मलए उसको फकतनी ही बार जन्द्म लेना पडे।े तब तक यह यािा रहेर्ी, र्श्राम नही ांपा सकता, उसे र्ानांत नहीां ममल सकती।

िह सुख, सुख िहीं,ं स्जसमें दुुःख है, डर है, रोिा है।
ममलिाट से जो है खाली, उसी का िाम सोिा है ।।
करो िुम चूण िहीरे को, मगर काला िहीं ंहोिा ।
अरण पर िेक दो िुम धूल, अंचधयारा िहीं होिा ।।

स्िी सुख, पुि सुख, सम्पर्त्त सुख, यौर्न सुख, कीनत शसुख आहद जजतने भी सुख हैं उनमें दुुःख है, डर है और रोना है। स्िी, पुि, सम्पर्त्त, कीनत शइनको प्राप्त करनेके मलए प्रयास और कहठन पररश्रम करना पडता है।

इनकी रिा के मलए अनेक प्रकार के कष्टों का सामना करना पडता है। तब कही ांइनकी प्राजप्त हो पाती है और ये कुछ काल तक रह पातेहैं, इनमें यही दुःख है। र्स्री पुि न मर जायें, कीनत शऔर सम्पत्ति नष्ट न हो जाय, िन को चोर न चुरा ले, लुट न जाय, इनका भय ननत्य बना रहता है। इनमें यही डर है। इनके नार् हो जानेपर असहनीय दुःख के सार्, रोना पडता है, यही इनमें रोना है। इसमलए, ये सब सुख, सुख नहीं है, क्योंफक इनमें दुःख है, डर है, रोना है ये अननत्य सुख है। जजसको ननत्य सुख, परम सुख, परमानन्द, सहजानन्द, ननत्यानन्द कहते ेहैं, ई सारे चराचर का अजस्तत्र्, भर्ान आत्मा 'म'ै है। उसको चाहे राम कह लो, कृष्र् कह लो जो तुम्हारी मजी आरे्कहो। इस ननत्य सुख की प्राजप्त के त्रबना, र्श्राम नहींममल सकता। मानसकार कहतेहैं।

सररि जल, जल तिचध महुँ जाई, होइ अचल, स्जमम स्जि हरर पाई ।।

नदी बहते-बहते जब तक समुर में नही ांपहुँच जाती, तब तक उसे र्श्राम नहीं ममल सकता। ई अनेकों पहाड, जर्ांल, चट्टान आहद से टकराती हुई, िक्का खाती हुई, चलती रहती है, परन्द्तु ज्यों ही ई समुर में पहुँची फक उसे र्श्राम ममल र्या, उसका बहना बन्द हो र्या, उसका उछलना कूदना हमेर्ा के मलए बदां हो र्या, उसकी यिाा समाप्त हो र्यी, ई र्ातां हो र्यी। बस, इसी तरह जीर् की दर्ा है, जब तक ई 'हरर' (जो दुखु को हरे, ससको भर्हस्र कहते हैं) लेख्ु, तब तक ई अचल नही ांहो सकता। उसका चलना बन्द नहीं हो सकता, आर्ार्मन लर्ा ही रहेर्ा। ज्यों ही उसे 'आनन्द मसन्दु सुखरासी' भर्ान राम 'म'ै आत्मा की प्राजप्त हुई फक ई र्श्राम पा र्या, अचल हो र्या, आर्ार्मन के चि से छूट र्या। उसका भटकना बन्द हो र्या।

राम के लिर् हैं – जजसे पाकर, जीर्, आर्ार्मन से फुरसत पा जाता है।

अझखल लोक दायक विश्रामा ।।

जो सुख के िाम हैं "सुखिामा"

जो सारे चराचर के सुपास है -

सीकर ि ि**ैलौक सुपासी ।।**

जो सत् ्होते हुए धचत् ्है, धचत् ्होतेहुए, आनन्द स्रूप है। अर्ात्श ्सजच्चादनन्द स्रूप राम है।

राम सरूप ि**ुम्हार** ि**चि अगोचर बुद्चध पर ।**
अत्रबगि अकथ अपार ि**ेति–ति िति तिगम कह ।।**

राम का जो स्रूप है, ई मन र्ार्ी का र्र्षय नही ांहै, ई अर्नार्ी, असीम और अनन्द्त है। र्ेद र्ास्ि, श्रुनतयाँ, ँस्मृनतयाँ, पता लर्ाते-लर्ाते जब स्यां डूबने ेलर्ती हैं, तब न इनत, न इनत कहते हुए, हाँसे भार् जाती हैं।

अर्स्ााओं का प्रपचां काल के सार् पररर्तनश होतेरहता है। जर्त् ्प्रपचां, काल का सहचारी है। काल की र्नत कैसी अव्याहत है फक सर-सर-सर-सर-सर-सर चला जा रहा है। इसके सामने राकेट की भी कोई हस्ती नहीांहै। प्रनतपल र्तमशान, भूत होते जा रहा है और भर्वष्य, र्तमशान होतेजा रहा है। सर्कशाल मुझमें समाते चले जा रहे हैं। 'म'ै काल का भिर् करते चला जा रहा हूँ।

जो कालहु कर काल भयंकर, बरिरि उमा सारदा संकर।

प्रपचां और काल दोनों की आर्खरी मजांजल 'म'ै आत्मा हूँ। तीनों अर्स्ा और तीनों काल के पररर्तनश काल में सर् शके पररर्तनशपनेमें 'म'ै ननत्य एकरस रहा, अपररर्तनशर्ील रहा। जो 'म'ै भूत में, र्ही 'म'ै र्तमशान और भर्वष्य में और जो 'म'ै जारूतृ अर्स्ा में र्ही 'म'ै स्र्प्न और सुर्षुजप्त में, र्ही 'म'ै मूच्छाशमें। अस्पताल में जब फकसी का कोई बडा ऑपरेर्न करना होता है, तो डॉक्टर पहले उसे मूजच्छशत कर देता है, तब बेहोर्ी की हालत में उसके र्रीर के अर्ांी की चीरा-फाडी करता है। ऑपरेर्न समाप्त होनेपर जब र्ह आदमी होर् में आता है, तब कहता है फक भैय्या! मेरा बडा खतरनाक ऑपरेर्न हुआ, म ैतीन घांटे तक ऐसा बेहोर् रहा फक कुछ पता ही नही ां चला।

अब र्र्चार करना है फक यहद 'म'ै आत्मा सचमुच बेहोर् हो र्या होता, तो यह कौन बताता फक अरे यार! म ैतीन-तीन घांटे तक बेहोर् रहा। इस तीन घांटे की बेहोर्ी का कौन अनुभर् करता है? कुछ पता ही नहीांचला, इस 'नही ांपता' का पता, कैसे लर्ता? मतलब यह फक 'म'ै बेहोर् नहीांहुआ 'म'ै ज्यों का त्यों रहा।

सत्यं ांज्ञािमिन्द्ब्रह्म

जानना ही तो मुझ आत्मा का स्र्रूप है। प्रफिया समझो - देखो भैय्या! पहहले इन दो र्दों को ठीक-ठीक समझ लो 'म'ै और 'मेरा'।

'म'ै का अर् शमेरा नही ांहोता, और 'मेरा' का अर् श'म'ै नही ांहोता। यहद मेरा का अर् श'म'ै होता, तो मेरा मकान कहने से 'म'ै मकान हो जाता, मेरी साइफकल कहनेसे 'म'ै साइफकल हो जाता, परन्द्तु ऐसा नही ांहोता। 'म'ै कतृर्ाचक र्द है, यह (म)ै खुद के मलए कहा जाता है और मेरा सम्बन्द्ध सूचक र्द है, अर्ात्श ्जो चीज अपनी होती है, जजस चीज से अपना सम्बन्द्ध होता है, उसके मलए मेरा कहा जाता है। जैसे मेरा मकान, मेरी साइफकल, मेरी पुस्तक, मेरी र्ाडी, मेरा बैल आहद। इसका अर् श'म'ै मकान, 'म'ै साइफकल, 'म'ै पुस्तक, 'म'ै र्ाडी और 'म'ै बैल नही ांहो जाता। ये सब मेरे हैं, इसमलए इनके मलए 'म'ै मेरा कहा करता हूँ। 'म'ै इन्द्हें मेरा कहने र्ाला, इनसे सर्र्शा अलर् हूँ। इसी तरह 'म'ै मेरा मसर, मेरा हार्, मेरे पैर, मेरे कान, मेरी आँख और अन्द्त में मेरा र्रीर आहद कहा करता हूँ। इसका अर् शहुआ फक 'म'ै मसर नहीां, 'म'ै हार् नहीां, पैर, कान, आँख, नाक, मुँह और र्रीर नहीां, क्योंफक इन सबको 'म'ै मेरा कह रहा हूँ। अतः 'म'ै इन्द्हें मेरा कहनेर्ाला इनसे अलर् हूँ। जब र्रीर में नही ांतब, इस र्रीर को ही लोर् रामदत्त, मर्दत्त, र्र्दत्त, मोहनलाल, रामलाल कहते ेहैं। म ैरामदत्त, मर्दत्त, र्र्दत्त आहद नही ांहूँ,

क्योंफक यहद 'म'ै रामदत्त, मर्र्दत्त होता, तो मेरे पैदा होतेही लोर् पुकार उठते फक अरे भाई ! दौडो रामदत्त पैदा हो र्या, मर्र्दत्त पैदा हो र्या, परन्द्तु ऐसा फकसी ने नहीं कहा, र्रीर के पैदा होने के बाद व्यर्हाररक जर्त् ्में काम चलाने के मलए र्रीर का ही नामकरर् कर मलया जाता है। अतः, र्रीर का ही नाम रामदत्त, मर्र्दत्त आहद है। तब र्रीर ही रामदत्त, मर्र्दत्त है, 'म'ै र्रीर नहीं हूँ। अतः म ैरामदत्त, मर्र्दत्त नही ंहूँ। जब 'म'ै र्रीर नहीं हूँ तब र्रीर के जजतने ेर्र्कार हैं रे् सब र्र्कार भी मुझमें नहींहैं यर्ा र्रीर ही छोटा, बडा, बालक, युर्ा, र्ृदि् होता है।'म'ै उससे अलर् होने के कारर् न छोटा हूँ, न बडा हूँ, न बालक हूँ, न युर्ा हूँ, न र्ृदि् हूँ।

काला, र्ोरा, अन्द्धा, लूला, लांर्डा आहद र्रीर होता है, 'म'ै नही।ं स्त्री और पुरुर्ष र्रीर होता है, 'म'ै न स्त्री हूँ, न पुरुर्ष। ब्राह्मर्, क्षत्रिय, र्ैश्य, र्ूद्र आहद र्रीर है, 'म'ै नही।ं र्ृहस्र्, ब्रह्मचारी, र्ानप्रस्र्, सन्द्यांसी, र्रीर होता है, 'म'ै नही।ं पर्ता, पुि, मामा, काका, भाई, भतीजा आहद र्रीर को ही कहते ेहैं। इस र्रीर से अलर् होने ेके नाते, म ैये सब नही ंहूँ। ननरालम्बोपननर्षत् ्में है -

न चमणिो ि रक्तस्य ि मांसस्य ि चास्स्थाः ।
न जातिरात्मो जातिव्यिहार प्रकस्ल्पा ।।

जजसका भार् है फक न तो चमडे ेकी कोई जानत होती है, न रक्त की जानत होती है, न माँस की कोई जानत होती है, न हड्डी की जानत होती है और न आत्मा की ही कोई जानत होती है। यह तो केर्ल ससांार में व्यर्हार चलाने के मलए जानत की कल्पना कर ली र्यी है।

यह र्रीर ही जन्द्मता और मरता है 'म'ै इससे अलर् हूँ, अतः न 'म'ै जन्द्मता हूँ, न मरता हूँ।

अब देखो -

र्रीर बदलते रहता है, 'म'ै इनसे अलर् होने के कारर् इसके बदलने के सार्- सार् 'म'ै नहींबदलता। जैसे-र्ृदिार्स्र्ा में बचपन का कोई मेरा दोस्त या ममि जब मुझसे ममलता है, तब म ैउनका पररचय दूसरों को इस प्रकार देता हूँ। भाई! ये मेरे बचपन के दोस्त हैं। म ैइनके सार् प्रायमरी पढा हूँ, ये मेरे युर्ार्स्र्ा के दोस्त हैं, इनके सार् म ैकॉलेज पढा हूँ। अब र्ह प्रायमरी पढनेर्ाला बालक र्रीर नहीं रहा बदलकर युर्ा हुआ और कॉलेज पढ़ने र्ाला, र्ह युर्ा र्रीर भी नही ंरहा, बदलकर र्ृदि् हुआ। परन्द्तु, जो 'म'ै प्रायमरी पढनेर्ाला र्रीर में र्ा, र्ही म ैयुर्ार्स्र्ा में कॉलेज पढ़ने र्ाला र्रीर में भी रहा। अब र्ह बालक र्रीर नहीं रहा, बदलकर युर्ा हुआ, र्ह युर्ा र्रीर भी नहीं रहा, बदलकर र्ृदि् हो र्या। परन्द्तु, जो 'म'ै बालक र्रीर में र्ा, र्ही 'म'ै युर्ा र्रीर में रहा और जो 'म'ै बालक और युर्ा र्रीर में रहा र्ही 'म'ै अब इस र्ृदि् र्रीर में भी हूँ।

र्ह 'म'ै तीनों र्रीर में सदा एक रस, एक-सा रहा। र्रीर बदल र्ये, परन्द्तु 'म'ै नहींबदला, क्योंफक यहद र्रीर के बदलनेके सार्-सार् 'म'ै भी बदल र्या होता तो यह कौन बताता, यह ज्ञान फकसे रहता फक 'म'ै इनके सार् प्रायमरी पढा र्ा, इनके सार् कॉलेज पढ़ा र्ा आहद। इससे मसदि् हुआ फक र्रीर तो बदला, पर 'म'ै इन सब

र्रीरों में सदा एक रस, एक-सा रहा। इस तरह र्रीर के सम्पूर्र् शर्र्कारों से 'म'ै अलर्ग हूँ। मुझमें ये र्र्कार नहींहै। म,ै मेरा मकान कहता हूँ, इसका अर्र् श'म'ै मकान नही ांहूँ। मकान में रहता हूँ, इसमलए म ैंइसे मेरा कह मलया करता हूँ। इसी तरह इस र्रीर में 'म'ै रहता हूँ। अतः मेरा र्रीर कहता हूँ।

जैसे-मकान, ममट्टी, ईंटा, र्ारा आहद से बनाकर लकडी खम्भे, काँड, बल्ली आहद लर्ाकर ममट्टी, सीमेंट आहद से उसकी छबाई करके चूना, र्ेरु, नीला र्ोर्ा आहद से उसकी पुताई की जाती है, इसी तरह यह र्रीर हड्डी, पसली आहद खम्भे और काँड बल्ली से खडा फकया र्या, चमडे ेसे इसकी छबाई हुई है, नौ द्र्ार (दो कान, दो आँख, दो नाक, एक मुँह, मल और मूि त्यार् करनेकी दो इजन्द्रयाँ) इसके दरर्ाजेऔर र्खडफकयाँहैं। फकसी का र्रीर काला है, फकसी का र्ोरा, फकसी का साँर्ला। यह चूना, र्ेरू और नीला र्ोर्ा से पुताई करनेके समान है। इस तरह 'म'ै के रहने का यह र्रीर मकान है।

'म'ै मकान में रहता हूँ, अतः इसे 'म'ै मेरा कह मलया करता हूँ, परन्द्तु र्ास्तर् में यह मकान भी मेरा नहीां है, क्योंफक यह ममट्टी, ईंट, र्ारा आहद से बना है। अतः यह ईंट, र्ारा, ममट्टी आहद का मकान है, मेरा नही।ां इसी तरह, यह र्रीर आकार्, र्ायु, अजग्न, जल, पृथ्र्ी आहद पचां महाभूतों से बना हुआ होने के कारर् यह पचां महाभूतों का है, मेरा नही।ां

तछति जल पिाक गगि समीरा ।
पंच रचचि अति अधम सरीरा ।।

इसके अदांर 'म'ै हूँ जरूर, पर यह 'म'ै नहींहूँ। यह हुआ स्र्ूल र्रीर। परमात्मा और अपनेआप में भेद का जो भ्रम है, यह सब देहाध्यास के कारर् है। जब तक साढ़े तीन हार् की खुदी है, तब तक खुदा दूरू है और जब यह देहाध्यास र्या तब फफर खुदा ही खुदा है। खूब समझ लो, यह र्रीर उत्पर्त्त, र्र्नार् र्ाला है, घटने-बढ़ने ेर्ाला है, इसको सघांात कहते ेहैं, नार्र्ान कहते हैं।

देहात्मबुद्चधजं पापं पिद् गोबध कोहटमभाः ।
आत्माऽहं बुद्चधजं पुण्यं,ं ि भिूं ंि भविकयति ।।

(उपननर्षद)

यहद र्ास्र्ी पिर र्र्श्र्ास है, तो अपने आपको जो देह मानता है उसे एक करोड र्ौ की हत्या का पाप लर्ता है और जो अपनेआपको आत्मा 'म'ै हूँ ऐसा जानता है, इससे अधिक पुण्य भी नहीं होता। इसमलए जान लो फक यह स्र्ूल र्रीर न 'म'ै हूँ और न यह मेरा है। इस तरह, यह मसद्ध हुआ फक न 'म'ै र्रीर हूँ, न मेरा र्रीर है।

अब आर्े समझो -

म ैंबुद्धि के मलए कहता हूँ, मेरी बुद्धि इस बात को नही ांसमझ रही है। म ैंधचत्त के मलए कहता हूँ, मेरा धचत्त इस काम में नही ांलर् रहा है।

म ैंमन के मलए कहता हूँ, मेरा मन जरा दूसूरी ओर चला र्या र्ा, आपने क्या कहा म ैंसमझा नहीां, जरा फफर से कहहए। म,ैं प्रार् के मलए कहता हूँ फक मेरे प्रार् भूख से व्याकुल हो रहे हैं आहद। इस तरह म ैंकहता हूँ, मेरी बुद्धि, मेरा धचत्त, मेरा मन, मेरे प्रार् आहद। जजसका अर् शहुआ फक 'म'ैं बुद्धि, धचत्त, मन, प्रार् आहद नहीां हूँ, क्योंफक इन सबों को 'म'ैं मेरा कह रहा हूँ। अतः, 'म'ैं इन्द्हें मेरा कहने र्ाला इन सबों से सर्शा अलर् हूँ। इनसे भी मभन्द्न हूँ, म ैंइन सब को जानता हूँ, ये सब मेरे दृश्य हैं, 'म'ैं इनका रष्टा हूँ।

स्णि ियथांग्रिासुहेमकाराः क्षिषेु योगैस्द्विभज्ञ आप्नुयािि्।
क्षिषेु देहेषु िथाऽऽत्म योगैरध्यात्मविद् ब्रह्मगतिलर्भिे ।।

अर्ात्श ्हेमकार यानी सोनार, सोनेको र्लाकर खोट भार् को त्यार् कर स्र्् शका खरा भार् ग्रहर् कर लेता है। इसी प्रकार जहाँतक मेरा कहा जाता है अर्ा् जजस पदार् शके मलए मेरा र्दद का प्रयोर् फकया जाता है, र्ह सब खोट है और त्याज्य है। र्ेर्ेष जो 'म'ैं रह जाता है, र्ही स्र्् शके समान खरा अपना आप 'म'ैं नाम से प्रमसद्ि भर्ान आत्मा सर् शका सर् शहै, क्योंफक 'म'ैं में कोई िोखा नहीां, बाकी सब में िोखा है, इसमलए उपननर्षत् ्की भार्षा में श्रुनत 'म'ैं आत्मा को प्रत्ययसार कहती है। प्रत्ययसार का अर् शहोता है 'र्श्र्ास पिा'।

अब यह ननश्चय हुआ फक जो 'म'ैं इन सबों स्र्ूल र्रीर से लेकर सूक्ष्म मन, बुद्धि, धचत्त, प्रार् आहद सबसे मभन्द्न, सबका जानने र्ाला र्ह 'म'ैं कैसा हूँ? कौन हूँ? ऐसा 'म'ैं आत्मा, सत्,् धचत्त, आनन्द्द स्र्रूप हूँ।

सत्–् (सत्य) उसे कहतेहैं, जजसका तीनों काल और तीनों अर्स्र्ाओां में, कभी भी अभार् न हो। सदा एक रस ननत्य रहे। जार्ृत्, स्र्प्न, सुर्षुजप्त ये तीन अर्स्र्ाएँ और भूत, भर्ष्य और र्तमशान ये तीन काल हैं।

देखो-इन तीनों अर्स्र्ाओां और तीनों काल में 'म'ैं का कभी भी अभार् नही ांहोता। 'म'ैं सदा एक रस र्द्यमान रहता है।

समझो -म ैंसुबह पाँच बजेसोकर उठता हूँ, तब 'म'ैं रहता हूँ, तभी तो पाचां बजेको जानता हूँ, फफर छः बजे, इसे भी मनैं ेजाना, फफर सात बजे, आठ बजे, नौ, दस, ग्यारह, बारह, एक, दो बजते हुए रात के दस बज र्ये, इन सबको 'म'ैं जानते र्ा। इस तरह पाँच बजेसुबह से लेकर दस बजे रात्रि तक का सब समय जाग्रत अर्स्र्ा कहलाती है, इसके सारे प्रपचीां को मनैं ेजाना। अतः इन सारे प्रपचीां के जाननेर्ाले 'म'ैं का अभार् नहीां रहा। यर्ा- पाँच बजेसुबह से लेकर दस बजेरात्रि तक का काल (समय) कहाँ ँचला र्या, काल अर्ात् श ्समय र्े सब अब नहीां रहे, परन्द्तु 'म'ैं एक रस रहा। र्े सब समय (काल) कहाँर्ये।

अरे! "म"ैं ने उन्द्हें खा मलया "म"ैं ने उनका भिर् कर मलया।

जो कालहु कर काल भयंकर ।
र्िरि उमा सारदा संकर ।।

अतः, म ैंआत्मा कालों का भिर् करने ेर्ाला कालों का भी महाकाल मसद् हुआ।

दस बजेरात्रि में सोनेके बाद रात्रि में स्र्प्न हुआ, तब इन स्र्प्न के सब प्रपचाी को जाग्रत अर्स्र्ा के समान ही मनैं अनुभर् फकया। उन्द्हें देखा, जाना। तभी तो सोकर उठने पर अपना स्र्प्न का अनुभर् दूसूरों से व्यक्त करता हूँ। कहता हूँ फक आज मनैं ेऐसा स्र्प्न देखा, यहद उस स्र्प्न अर्स्र्ा में 'म'ैं नही ंरहता, मेरा अभार् होता तो अपना यह अनुभर् फक मनैं ेआज ऐसा स्र्प्न देखा, इसे कौन बताता? इससे मसद् हुआ फक स्र्प्न में भी 'म'ैं ननत्य र्द्यमान रहा, मेरा अभार् नहीं रहा।

तीसरी अर्स्र्ा सुर्षुजप्त (र्ाढी नीदां) है। र्ाढी नीदां से जब म ैंसोकर उठता हूँ तब कहता हूँ फक अहा! आज म ैंऐसी सुख की नीदां सोया फक कुछ पता ही नही ंरहा, बडा आनन्द्द आया। अब र्चार करना है फक इस र्ाढी नीदां में 'म'ैं सोया नहीं, सोना जार्ना मन का िम शहै, आत्मा का नही।ां यहद, 'म'ैं सो र्या होता, तो र्ाढी नीदां के आनन्द्द का अनुभर् कौन करता? "कुछ पता ही नहींरहा" इस पता का पता, कौन जानता ? म ैंइस र्ाढ़ी नीदां में भी ननत्य रहा, तभी "बडा आनन्द्द आया" और "कुछ पता ही नहींरहा" इन दोनों का अनुभर् फकया। अतः, मसद् हुआ फक सुर्षुजप्त अर्स्र्ा में भी मेरा अभार् नही ंरहा, 'म'ैं र्द्यमान रहा। इस तरह जाग्रत, स्र्प्न, सुर्षुजप्त तीनों अर्स्र्ाओां का 'म'ैं रष्टा, सािी और अनुभर् करने ेर्ाला हूँ।

काल तीन होते हैं, भूत, भर्ष्य और र्तमशान। अभी जो समय बीत रहा है, उसे र्तमशान काल कहतेहैं। इसके सारे प्रपांचों को 'म'ैं ननत्य देख रहा हूँ, जान रहा हूँ, यह तो प्रत्यि है। जो र्तमशान काल में 'म'ैं ननत्य हूँ। जो समय बीत चुका उसे भूतकाल कहते ेहैं, आज के पहहले 'म'ैं नही ंर्ा, ऐसा कहना, अपना अनुभर् बताना ही है। आज के पहहले 'म'ैं नही ंर्ा, इसको नही ंर्ा, ई बता रहा है या जो र्ा, ई बता रहा है? 'र्ा' र्ही बता रहा है। यहद 'म'ैं नहींरहता तो 'म ैंनही ंर्ा' इसका अनुभर् कौन करता? इसका अनुभर् करने ेर्ाला 'म'ैं र्हाँमौजूद र्ा, तभी यह अनुभर् बता रहा हूँ फक म ैंनही ंर्ा। अतः, यह मसद् हुआ फक मेरा यह कहना ही फक 'म ैंनहीं र्ा' यह मसद् करता है फक 'म'ैं र्ा। मेरा अभार् भूतकाल में भी नही ंरहा, र्हाँभी 'म'ैं र्ा।

एक बार हम रेल में सफर कर रहे र्े। हदल्ली के आसपास एक स्टेर्न पर जब र्ाडी रुकी, तब हमारी दृजष्ट यह कौन-सा स्टेर्न है, यह जाननेके मलए प्लेटफाम शपर लर्े बोड शपर र्यीं। बोड शदेखा तो मन प्रफुजल्लत हो र्या। उसमें मलखा र्ा, 'म ैंर्ा' अर्ात्श ्उस स्टेर्न का नाम र्ा 'म ैंर्ा'। इसका रहस्य समझो। यह स्र्ान (ग्राम या र्हर) यह बता रहा है फक जब यहाँ ँस्टेर्न नहींबना र्ा, तब भी "म ैंर्ा" मेरा अभार् नहीं रहा। अभी भी "म ैंर्ा" ही हूँ और आर्े चलकर यहद स्टेर्न नहींभी रहेर्ा तब भी "म ैंर्ा" ही रहूँर्ा। र्ाह! यह लौफकक रहस्यमय घटना है। यह कह रहा है फक मेरे ही समान जब यह र्रीर रूप स्टेर्न है (र्तमशान) तब "म ैंर्ा" हैं। यह र्रीर रूप स्टेर्न नहीं

 रहेर्ा। (भर्ष्य) तब भी "म ैंर्ा" रहूँर्ा और यह र्रीर रूप स्टेर्न नहीांबना र्ा (भूतकाल) तब भी "म ैंर्ा" ही रहा।

मेरा अभार् तीनो काल में कभी नही ांहुआ।

इसी तरह यह कहना फक भर्ष्य में 'म'ैं नहीांरहूँर्ा, यह भी अपना अनुभर् ही बताना है और अपना अनुभर् तभी बताया जा सकेर्ा, जब अनुभर् करने र्ाला हमैंौजूद रहेर्ा। अतः, मसद्ध हुआ फक 'म'ैं का अभार् तीनों काल में नही ांहुआ। इस तरह तीनों काल और तीनों अर्स्थाओां में 'म'ैं ननत्य एक रस र्द्यमान रहा, अतः 'म'ैं सत्य हूँ।

'म'ैं आत्मा चेतन हूँ। जो अपनेआपको जानेऔर दूसूरों को भी जाने, उसे चेतन कहते हैं। 'म'ैं आत्मा अपनेको जानता हूँ और अन्द्य को भी जानता हूँ।

'म'ैं हूँ, इसको तो सारा ससांार जानता है, कभी भी ऐसा कोई नही ांकहता फक दौडो रे, 'म'ैं तो नही ांहूँ। मुझमें 'म'ैं नहीांरहा। इससे पता चलता है फक 'म'ैं अपनेको जानता हूँ, अन्द्य को भी जानता हूँ, कान के सुनने,े न सुनने,े आँख के देखने, न देखने, मन के आने-ेजाने, सुखी-दुःखी होने,े चचांलता-जस्र्रता आहद को जानता हूँ। धचत्त को जानता हूँ, प्रार् को जानता हूँ, बुद्धि को जानता हूँ। र्रीर, मन, बुद्धि, इजन्द्रयाँऔर इनके र्र्षय को जानता हूँ, यह दूसूरों को जानना हुआ। तीनों काल और तीनों अर्स्थाओां के सारे प्रपांच को जाननेके कारर् 'म'ैं आत्मा चेतन हूँ।

'म'ैं आत्मा, आनन्द्द स्र्रूप हूँ। अपनेआप 'म'ैं आत्मा से फकसी को र्ैराग्य नहीांहोता। स्त्री, पुत्र, धन आहद से तर्ा अपनेर्रीर, प्रार् आहद से भी मनुष्य को र्ैराग्य हो जाता है अर्ात्श ्जब कभी र्रीर बीमार होकर अधिक समय तक जीर् शअर्स्था में असह्य दुःख भोर्ने लर्ता है, तब र्ह अत्यन्द्त ननरार् होकर कहता है फक मेरा यह र्रीर र्ीघ्र छूट जाय, मेरे प्रार् ननकल जायें आहद। तब म ैंसुखी हो जाऊँ। इस तरह र्रीर और प्रार् से भी मनुष्य को र्ैराग्य हो जाता है। परन्द्तु, अपने 'म'ैं से एक क्षर् भी कभी र्ैराग्य नहीां होता। र्ैराग्य तो दुःख से होता है, आनन्द्द से नही।ां इससे मसद्ध होता है फक 'म'ैं आत्मा आनन्द्द स्र्रूप हूँ। इस तरह 'म'ैं आत्मा सत् ्(सत्य) धचत् ् (चेतन) आनन्द्द रूप, सजच्चदानन्द्द हूँ। अब इसी को सूत्र रूप में समझो -

1. 'म'ैं हूँ इस अजस्तत्र् में कभी फकसी को र्कां नही ांहोती, अतः 'म'ैं आत्मा सत्य हूँ।
2. 'म'ैं हूँ इसका फकसी को भी अज्ञान नही ांहोता, अतः 'म'ैं चेतन हूँ।
3. 'म'ैं हूँ इससे फकसी को भी र्ैराग्य नहीां होता, अतः 'म'ैं आनन्द्द स्र्रूप हूँ।

'म'ैं आत्मा र्रीर के एक जर्ह हूँ या र्रीर के सब जर्ह हूँ।

भाई! म ैंआत्मा र्रीर में नख से लेकर मसर तक सब जर्ह एक रस, ठसाठस पररपूर् शहैं।

देखो-जब पैर में काँटा चुभता है, तब म ैंउसे जानता हूँ। पेट में, मसर में, आँख, कान, नाक आहद र्रीर के फकसी भी अर्ां में, जब कभी भी कुछ सुख-दु:ख होता है, स्पर् शहोता है तो 'म'ैं तुरन्द्त उसे उसी जर्ह से ही जानता हूँ। अतः मसद्ध है फक 'म'ैं र्रीर में सब जर्ह ठसाठस पररपूर् शहूँ।

'म'ैं आत्मा ननराकार हूँ या साकार हूँ? भैय्या! म ैंआत्मा न ननराकार हूँ, न साकार हूँ। अरे! म ैंआत्मा, इन दोनों को जानने र्ाला, इन दोनों से परे हूँ।

देखो, जब मेरे मसर में ददश होता है तो र्ह फकतना सूक्ष्म होता है, आँख उसे देख नही ांसकती, हार् छू नही ां सकता, र्ार्ी व्यक्त नही ांकर सकती। फकतना बडा ददश है? ददश का क्या रूप रांर् है? ऐसा पूछे जाने पर म ैंयही कहता हूँ फक भैय्या! इस ददश को र्ही जाने, जजसे ददश हुआ हो। तब एक तो ददश सूक्ष्म और उस सूक्ष्म ददश को देखकर, छूकर बताने र्ाला 'म'ैं आत्मा फकतना सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हूँ फक इसकी सूक्ष्मता के सामने, आकार् इतना सूक्ष्म होतेहुए भी सुमेरू पर्तश के समान स्र्ूल है। ऐसा 'म'ैं आत्मा साकार और ननराकार दोनों का जानने र्ाला इन दोनों से परे हूँ।

इस तरह 'म'ैं आत्मा सत्,् धचत्,् आनन्द्द रूप सजच्चदानन्द्द भर्र्ान आत्मा ही हूँ, इसका अर् शर्रीर को लेकर मत समझो। अनाहद काल से र्रीर को 'म'ैं मानकर बैठे हो, अतः र्रीर से अलर् होना ही नहीांचाहते।

अरे यार! इस मल-मूि के भाँड, हड्डी, चमडे ेको भर्र्ान नहीां कहा जा रहा है, यह नार्र्ान है, अननत्य है। इस र्रीर में जो ननत्य 'म'ैं नाम से बोल रहा है, भर्र्ान आत्मा 'म'ैं की व्याख्या हो रही है और हमेर्ा 'म'ैं का अर्,श इसी तरह र्रीर को छोडकर इसके भीतर का बोलनेर्ाला 'म'ैं को समझना चाहहए।

'म'ैं को िि मि मातिये, 'म'ैं है सिाधिार । '
म'ैं से मसद्धी सि िकी, 'मुक्ति' देखुविचार ॥
आप भुलािो आप में, बन्द्धयो आप में आप ।
जाको ढूँढि फिरि है, सो िू आपै आप ।।

सम्पूर् शदूध में मक्खन व्यापक रहता है, परन्द्तु र्ह प्रत्यि नही ांहदखता, जब तक र्ह मर्ानी से न मर्ा जाय। मर्ानी से मर्कर ही मक्खन प्राप्त फकया जाता है, ऐसे ही सारे चराचर में या सम्पूर् शर्रीर में, पैर के नख से लेकर मसर की चोटी तक 'म'ैं आत्मा घनभूत, ठसाठस, लबालब पूर् शरूप से व्याप्त हूँ, उसे र्ैचार रूपी मर्ानी से मर्कर आत्मा रूपी मक्खन को प्राप्त करना चाहहए। 'म'ैं और मेरा का र्ैचार पूर्कश पठन, धचन्द्तन, मनन ही र्ैचार रूपी मर्ानी से मर्ना है जजससे आत्मा रूपी मक्खन की प्राजप्त होती है।

जो सबको जानता है, उसको जान लेना ज्ञान है। जो सबको देखता है, उसका दर्नश, भर्र्त दर्नश है। जो सबको सुनता है, उसको सुनना भर्र्न्द्नाम श्रर्र् है।

हमीं थे ेभूले, हमींमें ढूँढ़े, हमीं गई, ि हमीं ममले ।
हमीं ि खोजा, हमीं ि पाया, कमी हुई ि हमींममले ।।
मोरे हीरा गिाँ गयिे, कचरा मा ।

कोई पूरब, कोई पस्श्चम ढ़िबैा, कोई पिी कोई पथरे मा ।।
जोगी, पैगम्बर, पीर, अिमलया, सभी भुलािो िखरे मा ।। 1।।
मथुरा ढूँढिे, िृन्दाििा ढूँढ़िे, ढूँढ़े कोठररया के अंिरि मा ।
कहि कबीर सुिो भाई साधो, पायिे ूम ैंअपिे अंिरि मा ।।2।।
मोरे हीरा गिाँ गयिे, कचरे मा ।।

गिमिुा अब हूँस ले हदल खोल, िृ ेपाया लाल अमोल ।
सि् ्चचि्, ् आिन्द ृ ि तिकला बजा खुशी के ढोल ।।
गिमिुा ।। जब सि ािक्य सुिे सद्गुर के, खुल गई जग की पोल ।
जी चाहे ि बोल फकसी से, जी चाहे मि बोल ।। ।। गिमिुा।।

एक बार राम दरबार लर्ा हुआ र्ा, तब दरबार में भर्ान राम ने हनुमान जी पूछा फक हनुमान! तुम कौन हो? इस प्रश्न के होतेही हनुमान जी सरकारी प्रर् समझ सतकश हो बडी सार्िानी से हार् जोडकर सभा के मध्य में खडे ेहुए और बड नम्रता से बोले - भर्न् ्!

देहदृकटया ि दासोऽहं, जीिदृकटया त्दंशकाः ।
सिािुि त्मेिाहं, इति मे तिस्श्चामतिाः ।।

देह दृजष्ट से म ैंआपका दास हूँ, जीर्दृजष्ट से म ैंआपका अर्ं हूँ और प्रभो! यहद सचाई से पूछो, र्ास्तर् में कहो तो जो आप हैं र्ही 'म' ैं हूँ। ऐसा मेरा दृढ़ ननश्चय है।

परमात्मा के दो लिर् हैं -

1. तटस्र् लिर्,
2. स्र्रूप लिर्

1. जो लिर् 'म' ैं के अजस्तत्र् का प्रनतपादन करे, उसे तटस्र् लिर् कहते ेहैं। ब्रह्म की जो व्याख्या है, उसका नाम तटस्र् लिर् है। इसको अर्ान्द्तर र्ाक्य कहते हैं।
2. जो लिर् 'म' ैं से चराचर के 'म' ैं को अमभन्द्न करके बतार्ेउसको स्र्रूप लिर् कहते ेहैं। इसको महार्ाक्य कहते हैं।

त्रबिु पद चलइ सुिइ त्रबिु किा। कर त्रबिु करम करइ त्रबचध ििा ।।
िआि रहहि सकल रस भोगी। त्रबिु बािी बकिा ब़ जोगी ।।
ि त्रबिु परस ियि त्रबिु देखा। ग्रहइ घिा त्रबिु बास असेषा ।।
अमस सब भातूँ अलौफकक करिी। महहमा जासु जाइ िहहं ंबरिी ।।

उपकरर् (इजन्द्रयों) के द्र्ारा जो काय शफकया जाय र्ह लौफकक और त्रबना उपकरर् के जो काय शफकया जाय र्ह अलौफकक करनी है।

अभी यहाँ ंबैठे-बैठे सैकडों मील दूरू फकसी देखे हुए स्र्ान में मन स्मरर् करते ही तुरन्द्त चला र्या। हदल्ली, कश्मीर आहद के स्मरर् करते ही र्हाँके दृश्य सब हदखने ेलर्े। तब यह मन फकस पैर से र्या? यही 'त्रबनु पद चलै' है।

आँख से यह हदख रहा है और यह नही ांहदख रहा है, तो 'हदख रहा है' और 'नही ांहदख रहा है' इन दोनों को फकस आँख से देखा? यही 'नयन त्रबनु देखा' है 'कान से सुनाई पड रहा है' और 'अब सुनाई नहीां पडता' तब कान के सुनने ेऔर न सुनने ेइन दोनों को फकसने सुना? यही 'सुनै ैत्रबनु काना' है।

मसर के ददश को फकससे छूकर, स्पर् शकरके कह रहा हूँ फक अहा! बडा ददश हो रहा है। यही 'तनु त्रबनुपरस' है आहद। ये सब त्रबना इजन्द्रयों के कम शहो रहे हैं। यही अलौफकक करनी है। यह अलौफकक करनी जजसके द्र्ारा हो रही है र्ह 'म'ैं आत्मा भर्र्ान है। भर्र्ान आत्मा 'म'ैं के ये तटस्र् लिर् हैं।

आहद अन्द्त कोउ जासु ि पािा । मति अिुमाति तिगम अस गािा ।
राम सस्च्चदािन्द्द हदिेसा । िहहं ंिहूँ मोहतिसा लिलेसा ।।

ये स्र्रूप लिर् हैं।

स्मृनृत, र्ेस्मृनृत, ज्ञान, अज्ञान, अमुक का ही होता है, 'म'ैं का नही।ां इसमलए' ही भर्र्ान आत्मा हूँ और

इसी को स्र्रूप लिर् कहते हैं।

'राम' र्ेद की व्याख्या -

'र', 'अ' और 'म' ममलकर हुआ राम। 'र' है धचत्, ् 'अ' है सत् ्और 'म'। आनन्द्द, इस तरह राम का अर् शहुआ 'सजच्चदानन्द्द'। जो सत्य होता है, र् त्रिकालाबाध्य होता है। जो त्रिकालाबाध्य होता है, र्ह व्यापक होता है। जो व्यापक होता है, र्ह ननराकार होता है। जो ननराकार होता है र्ह ननरांर् होता है, जो ननरां होता है र्ह अजन्द्मा होता है। जो अजन्द्मा होता है र्ह अमर होता है। जो अमर होत है, र्ह एक होता है। जो एक होता है, र्ह अर्र्नार्ी होता

है। जो अर्द्नारी् होताहै। ई पूर् शहोता है। जो पूर् शहोता है, ई धचत् ्होता है। जो धचत् ्होता है, ई आनन्द्स्रूप होता है। जो सत्, ् धचत्, ् आनन्द्द होता है, ई स्तः प्रमार् होता है परतः प्रमार् नही।ां जो स्तः प्रमार् होता है, ई स्यरे्ांद्य होता है, परसरे्ांद्य नही ांजो स्यरे्ांद्य होता है ई अहांर्म्य होता है, इदांर्म्य नही।ां इस तरह 'म'ैं आल सजच्चदानदां हूँ।

राम सस्च्चदिांद हदिसा ॥

जजसमें योर्ी महात्माजन रमते हैं, रमर् करते हैं, उन्मत्त रहतेहैं, ई है राम प्रश्न है-फकसमें योर्ी महात्मा जन रमते हैं? उत्तर है-जो ब्रह्मा से लेकर तृर् पयन्द्शन सर् शमें व्यापक है, जो सर् शका आिार है, आत्मा है उसमें। इसमलए 'म'ैं आत्मा है हुआ राम, ये स्रूप लिर् है।

मन की एकाग्रता में जो आनन्द्द आता है, ई है र्षयानन्द्द और मन की जरूरत का जो आनन्द्द है, ई है ननत्यानन्द्द। मन सिाना से एकाग्र होता है और यिाा के पररसमाजप्त में जस्र होता है। मन एक नदी है, सकांल्प र्कल्प फकनारे हैं, कल्पना िार है। सिान रूपी बाँिसे इसे बाँिदो तो ई एकाग्र हो र्या। आत्मा रूप सार्र पहुँचने ेपर ही यह मन रूपी नदी जस्र होती है।

तिज सुख त्रबिु मि होइ फक थीरा। परस फक होइ त्रबहीि समीरा ।।

मन का घर तो आनन्द्द सार्र है। ई त्रबना हाँर्ये जस्र नही ांहो सकता, ई उसे सुपास होर्ा।

'आराम' हे राम! आ।

व्यर्हाररक जर्त में ही देखो, मनुष्य जब सोनेलर्ता है, तब कुछ हल्ला, र्ोर होता है, तब ई कहता है। अरे! चुप रहो, हमें आराम करना है, अर्ात्श ्र्ाजन्द्त लेना है। 'आराम' हे राम, आ। तो भैय्या ! र्ाजन्द्त तो तभी ममलेर्ी फक जब हृदय में राम आ जायर्े।

धचत्त की चचांलता जाग्रत अर्स्ा है और धचत्त की लय अर्स्ा सुर्षुजप्त अर्स्ा है। सोनेकी तैयारी में हम त्रबस्तर पर पडे ेहैं, नीदां अभी आयी नही,ां आने ेको है और जाग्रत का अन्द्त हो रहा है अर्ात्श ्नीदां के पूर् शएक ऐसी अर्स्ा होती है फक उस समय न तो जार् ही रहे हैं और न नीदां में ही हैं। यह जाग्रत का अन्द्त और सुर्षुजप्त की आहद की अर्स्ा है। इस समय एक ऐसे र्लिर् आनन्द्द का अनुभर् होते रहता है फक ई 'र्ृत्त र्ून्द्य' अर्स्ा ही 'स्रूप जस्नत' है। इस समय यहद कोई पुकारता है तो ई इस अर्स्ा का मनुष्य कहता है अरे! अभी चले जाओ कल आना और जो कुछ कहना हो, कहना। अभी हम आराम कर रहे हैं। इतना सब ई कह तो डालता है, परन्द्तु र्ृत्त रहहत अर्स्ा में कहता है। यह अर्स्ा प्रत्येक में रोज आती है।

सहज प्रकास रूप भर्िािा, िहहं ांिहूँ पुति विज्ञाि त्रबहािा ।।

सहज प्रकार्-जो अिंकार और प्रकार् दोनों का प्रकार्क है, उसे सहज प्रकार् कहते हैं। रात्रि के घोर अिंकार को देखकर हम कहते हैं फक अरे, बडा अिंरा है, टाच शलाओ! इस रात्रि के घोर अ ां ि कार को फकस प्रकार् से देखा? रात्रि में तुम स्र्प्न देखते हो, स्र्प्न में सारा प्रपचां जाग्रत अर्स्र्ा के समान ही हदखाई देता है, तब स्र्प्न अर्स्र्ा में न तो हाँसूय शका प्रकार् है, न चन्द्रमा या त्रबजली का प्रकार् है और न कोई अन्द्य प्रकार का ही प्रकार् है, यह सब फकसके प्रकार् में देखा जा रहा है, इस स्र्प्न के सब व्यर्हारों को देखने के मलए, तुम्हारे पास कौन-सा प्रकार् है? यह सब मुझ आत्मा 'म' ैं का ही प्रकार् है, जजससे अिंकार और प्रकार् दोनों देखे जाते हैं। यह है सहज प्रकार्। यह बनार्टी प्रकार् नही ां है, अकृत्रिम प्रकार् है, परम प्रकार् है।

इस प्रकार् में न रात है, न हदन है। न सुबह है, न र्ाम है, इसमलए 'सहज प्रकार् रूप भर्र्ाना' 'म' ैं आत्मा है। जजससे तीनों काल और तीनों अर्स्र्ा ननत्य प्रकामर्त हैं। सूय,श चन्द्रमा, त्रबजली आहद का अन्द्य प्रकार्, रात के घोर अिंकार को नहीांहदखा सकते। ये प्रकार् अन्द्िकार के बिाक हैं, परन्द्तु सहज प्रकार् फकसी का बिाक नहीां है।

सहज प्रकार् का अर् शज्ञान है। र्ीता में भर्र्ान कृष्र् कहते हैं -

ि ि द् भासयिे सूयो, ि शशांको ि पािकः ।
यद्गत्िा ि ि िितिन्द्ति, ि द्धाम परमं मम् ।।

(र्ीता 15/6, अ-15, श्लो.-6)

जजस प्रकार् को न सूय शप्रकामर्त कर सकता, न चन्द्रमा प्रकामर्त कर सकता, अजग्न, न त्रबजली इत्याहद का प्रकार् प्रकामर्त कर सकता ह 'म' ैं आत्मा हूँ, परम प्रकार् स्र्रूप। इसका अर् शहै फक सूय शमानेिनि, आँख का देर्ता सूय शहै, तब मुझ आत्मा भर्र्ान को आँख नहीांदेख सकती, जो आँख को देखता है, ह 'म' ैं आत्म हूँ। मन का देर्ता चरांमा है। अतः, मन मुझ आत्मा को नहीांजान सकता। मन को 'म' ैं जानता हूँ। ये सब मुझे ेप्रकामर्त नही ांकर सकते 'म' ैं इन सबका प्रकार्क है। मानसकार के र्ददों में, यही परमप्रकार्, सहज प्रकार् है।

सहज प्रकास रूप भगिाना। िहहं ां ि हूँ पुति त्रबग्याि त्रबहािा ।।

सहज प्रकार् रूप-अर्ात्श ्सहज ज्ञान ही जजस भर्र्ान आत्मा 'म' ैं का स्र्रूप है। जहाँ ँपर र्ज्ञान रूपी सबेरा नहीांहै। फकसी भी देर्, काल, र्स्तु को जानने के मलए 'म' ैं आत्मा का ज्ञान, सहज है, स्र्ाभार्र्क है, अकृत्रिम है, क्योंफक इनको जानने के मलए 'म' ैं आत्मा को फकसी की भी अपेिा नही ांहै। मन को और मन र्े सम्पूर् श व्यर्हारों, धचत्त को और धचत्त के धचन्द्तन को, बुद्धि को और बुद्धि के ननश्चया और अननश्चय को 'म' ैं आत्मा त्रबना फकसी अन्द्य की सहायता के स्र्यांही जानता हूँ जाग्रत, स्र्प्न के सब प्रपचां को और सुर्षुजप्त के आनन्द्द का अनुभर् 'म' ैं स्र्यां करत हूँ। तीनों काल को जानता हूँ। 'म' ैं आत्मा फकतना ज्ञान स्र्रूप, ज्ञान पुचज, ज्ञान भण्डार हूँ फक मुझमें जाननापना में कभी कमी नहीांहोती। 'म' ैं अखण्ड ज्ञान स्र्रूप हूँ। जब तक सृजृष्ट रहेर्ी, तब तक

जानता रहूँर्ा और सृजृष्ट के अन्द्त के बाद भी जानने ेका अन्द्त नहीांहोर्ा। इसमलए 'म'ै आत्मा ज्ञान पुचज अखण्ड ज्ञान स्र्रूप, सहर प्रकार् हूँ। जजसका जानना सहज है। यहद स्र्यां सहज न हो तो जानना भी सहज हो, तब जो स्र्यांसहज है तो उसका जानना भी स्र्यां सहज है।

'म'ै हूँ यह कहना, सबके मलए सहज है, इसका जानना अनुभर् करना, कहना सबके मलये सर्दशा सहज है। फकसी को इसमें कोई भी कहठनाई नहीांहोती। 'म ैआत्मा सहज हूँ, तो सब सहज है। देखना, सुनना, ज्ञान, अनुभर् आहद सब मु: आत्मा का सहज है, यहाँपर सब सािनों की पररसमाजप्त हो जाती है। भर्र्ान के कहठन मानकर ही तो सािन फकये जाते हैं।

सहज ही सहज को अनुभर् करता है। सारे चराचर का ज्ञान, इस तरह ननत्य सहज है। जानना ही मुझ आत्मा की आँख है, जानना ही मुझ आत्मा का कान है, जानना ही मुझ आत्मा का घ्रार् है, जानना ही मुझ आत्मा की त्र्चा है, जब 'म'ै स्र्यांके मलए सहज हूँ, तब औरों के मलए भी सहज हूँ। जो मुझ आत्मा को कुछ करके जानना चाहता है, उसके मलए कहठन हूँ और जो त्रबना कुछ फकये जानना चाहता है, उसके मलए 'म'ै आत्मा ननत्य सहज हूँ।

परमिांद, परेस पुरिा ।।

आनन्द्द और ननरानन्द्द दोनों को जो जानता है, उसे परमानन्द्द कहते ेहैं। 'परेर्' का अर् शहै 'परा' अर्ात्श ् माया, 'ईर्' अर्ात्श ्स्र्ामी, पनत, अिार इस तरह परेर् का अर् शहै, माया का स्र्ामी, माया का अिार, रिक।

'पुराना' अर्ात्श ्जुन्द्ना, अनाहद, सनातन, त्रबना जन्द्म कुण्डली का, अजन्द्मा, अर्द्नारी।

ज्ञान और अज्ञान दोनों से 'म'ै परे हूँ ऐसा जो जानता है, र्ह 'म'ै आत्मा हूँ और ऐसा जो नही ांजानता, र्ह है 'जीर्'।

कोई कहता है भर्र्न्!् म ैतो अज्ञानी हूँ और आप तो ज्ञानी पुरुर्ष हैं। ऐसा कहने ेर्ाला, जो ज्ञान को भी जान रहा है और अज्ञान को भी जान रहा है और दोनों को जानकर, एक को ज्ञानी और अपनेको अज्ञानी कह रहा है, र्ह कहने र्ाला कौन है? ज्ञान को जानकर उसे मुझ पर आरोर्पत फकया और मुझे ेज्ञानी कहा और अज्ञान को जानकर उसे अपनेपर आरोर्पत करके अपनेको अज्ञानी कहा। तो आरोर्पत की जाने र्ाली चीज अलर् और जजस पर आरोर्पत फकया जा रहा है र्ह इनसे अलर्। जैसे-टोपीर्ाला कहा जाता है, तब टोपी अलर् और जजस पर टोपी आरोर्पत है, र्ह अलर्। इसी तरह ज्ञान और अज्ञान ये अलर् और जजन पर इनको आरोर्पत फकया, र्ह इनसे अलर्, तो र्ह जो इन दोनों से अलर् है र्ही कह रहा है तब र्ह कौन है? र्ही स्र्यांहै, 'म'ै आत्मा, राम। तब, जब र्ह स्र्यां ज्ञान स्र्रूप है, तब अज्ञानी कहाँ रहा।

जो ज्ञान, अज्ञान का नार् करता है, र्ह है र्र्ेर्ष ज्ञान और जो ज्ञान, अज्ञान को जानता है, र्ह है सामान्द्य ज्ञान। सामान्द्य ज्ञान व्यापक है, यह सब में व्याप्त है। बाँस में सामान्द्य अजग्न व्यापक है, दो बाँस को

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 66 रर्डों, तो उसमें की र्ही सामान्द्य अजग्न र्त्रेर्ष रूप ग्रहर् करके बॉस को जलाकर फफर सामान्द्य का सामान्द्य हो
जाती है।

इसी तरह र्ुरु-मर्ष्य के र्र्चार रूपी रर्ड से र्त्रेर्ष ज्ञान की प्राजप्त होती है। सामान्द्य ज्ञान, सहज ज्ञान है, यही सहज स्र्रूप है, यही आत्मा है, यही राम है।

हरष, विषाद, ग्यिा, अग्यिा, जिीधरम, अहममति अमभमािा ।।

हर्ष,श र्त्र्षाद, ज्ञान, अज्ञान आहद मान्द्यता जर्त् ्में है, ये सब जीर् देर् में ही हैं, आत्म जर्त् ्में नहीां। सम्पूर् शर्र्कार जीर् िम शमें ही है, जीर् की मान्द्यता में ही सम्पूर् शर्र्कार है, आत्म जर्त् ्में नही।ां आत्मा जान लेनेपर सम्पूर् शर्र्कारों का अभार् हो जाता है।

प्रश्न- इसका क्या प्रमार् है?

उत्तर- अपने आपको आत्मा जानकर देख लो। यही इसका प्रमार् है।

प्रश्न- अपने आपको आत्मा जानना क्या है?

उत्तर- अपने आप को कुछ भी नही ांमानना, यही, अपनेआपको आत्मा जानना है।

"राम ब्रह्म व्यापक जग जािा, परमािन्द्द परेश पुरािा" का यही भार् है।

दोहा-

पुरष, प्रमसद्ध, प्रकास तिचध, प्रगट, परािर िाथ ।
रघुकुल मति, मम, स्िामम सोइ, कहह मसिं ांिायउ माथ ।।

(बा.कां.-116)

जो पुरुर्ष है, यह र्दद मलर्ां र्ाचक नहीां है, 'पु' मानेपुरी (र्रीर) इसके भीतर जो र्र्श्राम करता है (आत्मा)

उसे पुरुर्ष कहते हैं। र्ही सजच्चदानन्द्द घनभूत आत्मा है।

प्रकृतिविकृतिमभन्द्िः शुद्धबोधस्िभािः
सदसहददमशेर्षं भासयस्न्द्िविशेर्षेः ।
विलसति परमात्मा जाग्रदाहदष्िकिस्था-
स्िहमहममति साक्षात् ्साक्षक्षरूपेण बुद्धेः ।।

(137-र्त्रेक चूडामर्र्)

प्रकृनत मानेकारर् और र्ृकनत मानेकाय।श न तो भर्ा्न फकसी से पैदा हुआ और न भर्ा्न से कोई पैदा हुआ। प्रकृनत, र्ृकनत अर्ा्त्श ्कारर्-काय शसे रहहत, रुद्द् बिो ही जजसका रुभार् है।

जजस परमात्मा से जर्त् ्की उत्पत्त्त मानतेहो, र्ह परमात्मा, जन्द्मा है या अजन्द्मा ?

जन्द्मा मानने ेपर उसे र्नार्ी मानना पडेर्ा, क्योंफक जो जन्द्म लेर्ा र्ह मरेर्ा और यहद र्ह जन्द्मा है तो र्ह फकससे जन्द्मा ? फफर, जजससे र्ह जन्द्मा, उसको फकसने जन्द्म हदया, फफर उसका जन्द्मदाता कौन? और अजन्द्मा माननेपर, जब र्ह स्र्यांपैदा नहीांहुआ तब उसे दूसूरे को जन्द्म देनेकी क्या तमीज, जो दूसूरे को जन्द्म देर्ा। न्द्याय से र्ेदान्द्त का प्रश्न है-तुम्हारा ईश्र्र, जजसने ेतुम्हारे मसद्ान्द्त के अनुसार, जर्त् ्की रचना की, र्ह साकार है या ननराकार? यहद साकार है तो र्ह ननत्य नही ांहो सकता और यहद ननराकार है तो व्यापक होनेके नाते, अफिय और अकत्ताश है। इस तरह दोनों से जर्त् ्की रचना, ईश्र्र के द्र्ारा मसद् नही ांहोती।

भर्ा्न, रुद्दु बिो स्र्रूप है, यही रुभार् है। अरुद्दु बिो मान्द्यता ही है रुद्द् बिो 'म' ैं का 'म' ैं ही जानना है। तीनों काल और तीनों अर्स्र्ाओां का जानना (भोर्ना) यही इसका र्र्लास करना है, इस पुरी (र्रीर) के अन्द्दर उसे हम कैसे जानें? इसका उत्तर है-अरे, जो सोऽहां, सोऽहां, सोऽहां करके ननत्य कहते जा रहा है, र्ह 'म' ैं हूँ, 'म' ैं हूँ, ऐसा अहननर्श बोल रहा है, ऐसा जानना ही, उसे जानना है, र्ह काय,श कारर् से मभन्द्न है, सर् शसे परे, सर् शका दृष्टा है, सर् शउसे नही ांजान सकते, जो सर् शको जानता है, र्ह आत्मा 'म' ैं राम है। जजसके त्रबना जजसका अजस्तत्र् एक िर् के मलए भी न रह सके, र्ह उसकी आत्मा है। जो जजसका कारर् होता है, र्ह उसका आिार होता है, र्ह उसमें व्यापक होता है, र्ह उसका सर् शहोता है, ऐसा भर्ा्न सबमें 'म' ैं हूँ, 'म' ैं हूँ, इस तरह ननत्य व्यक्त हो रहा है। प्रमसद् है।

रुद्दु बिो क्या है और अरुद्दु बिो क्या है? अपनेआप 'म' ैं आत्मा को कुछ भी मत माने, 'म' ैं का 'म' ैं ही जाने, इसको रुद्द् बिो कहतेहैं और अपने 'म' ैं आत्मा को कुछ भी माने इसको अरुद्दु बिो कहते ेहैं।

जार्ृत्, स्र्प्न, सुर्षुजप्त, मूच्छाश, समाधि इन सबका अनुभर् 'म' ैं आत्मा सतत् ्करते रहता हूँ। अर्, इनको न जानूँ तो इनका अनुभर् कौन बताएर्ा? इसमलए जानना ही जजसका रुभार् है। यही रुद्दुबिो है।

अनाहदकाल से 'म' ैं आत्मा जानते आ रहा हूँ, परन्द्तु आज तक मुझ आत्मा के जाननापनेमें कमी नहीां हुई। ऐसा कभी नहीां होता फक भाई! अब हम बहुत जान र्ये, हमारा जाननापना खतम हो र्या, जब र्ोडा जाननापना और इकट्ठा हो जानेदो, तब फफर जानेंर्े। रात-हदन मुझ आत्मा का जानना ही रुभार् है, इसमलए 'म' ैं आत्म ज्ञान स्र्रूप, ज्ञान पुचज, ज्ञान का भण्डार ज्ञानघन अर्ा्तश ठोस। 'म' ैं आत्मा ठोस ज्ञान स्र्रूप हूँ।

फकसी भी देर्-काल, र्स्तु को जानने के मलए मुझे ेसमयऔर सीमा की अपेिा नही ांफक 'म' ैं फकतनी जल्दी जानता हूँ। कोई भी र्स्तु ज्यों ही सामने आयी फक उसे तत्काल जानता हूँ, 'प्रज्ञानम् ्ब्रह्म', अर्ा्तश ्जो तत्काल ही जाने। इसमलए, 'म' ैं ज्ञान स्र्रूप हूँ। फकतना ज्ञान है, इसकी कोई र्ाह नहीां, अर्ाह है। इसमलए 'म' ैं आत्मा-ज्ञान

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 68 ननधि हूँ। ज्ञान का समुर हूँ। बुद्धि रूपी बतनश में जजतना भर लो इस ज्ञान समुर में कमी कभी नही ांहोना है। ई तो

ज्यों का त्यों है। जजतना का उतना है, जैसा का तैसा है, जरूरत तो अपनी बुद्धि रूपी पिा को बडे ेबनानेका है। फफर, तो जजतना चाहो, उतना भर लो, इस ज्ञान के भण्डार में कमी कभी होने ेकी नहीं है।

मुझ आत्मा का जाननापना, ननत्य तीनों काल और तीनों अर्स्ा में, अनाहदकाल से एक रस है, यह कभी खजण्डत नही ांहोता। इसमलए 'म'ै आत्मा अखण्ड ज्ञान स्र्रूप हूँ।

'म'ै क्या नहींजानता, फकसको नही ांजानता, इजन्द्रयों से र्ुप्त होने ेके कारर् 'म'ै र्ुद्ध और स्र्यां के द्र्ारा नहीं जाननेके कारर् 'म'ै परमर्ुद्धज्ञानस्र्रूप हूँ। र्ार्ी कर्न करती है, इसको भी 'म'ै जानता हूँ और चुप हो जाती है, इसको भी 'म'ै जानता हूँ, परन्द्तु चुप होना और बोलना ये मुझेनही ांजान सकते, इन दोनों की मसद्धि 'म'ै ही करता हूँ। अब कौन है, जजसके सामने'म'ै व्यक्त होऊँ? या व्यक्त करूँ? यह स्र्यां करके नहीं जानता है? यही आलस्र्ुरीर् पद है, इस अनुभूनत में जो ननर्र्कशल्पता और ननस्तदिता आ र्यी, इन दोनों को 'म'ै जान रहा हूँ। ये दोनों भी 'म'ै नहींहूँ, इन दोनों की मसद्धि भी मुझ करके ही है, ई 'म'ै आत्म ज्ञान स्र्रूप, इन दोनों से परे हूँ।

'म'ै मभन्द्न होकर जानता हूँ या अमभन्द्न होकर जानता हूँ या मभन्द्नामभन्द्न होकर जानता हूँ या र्ही होकर जानता हूँ?

उत्तर है-र्ही होकर जानता हूँ।

यहद, इस तरह जानता हूँ तो फफर ये है ही नहीं, तब जानता फकसको हूँ? फकसी को नहीं।

बस, इस अनुभूनत की जो अनुभूनत हो रही है, र्ही 'म'ै आत्मा ज्ञान स्र्रूप की स्र्रूपजस्र्नत है। अब यहाँ कुछ नहीं बचा। 'म'ै आत्मा ज्ञान स्र्रूप, चैतन्द्य घनभूत, लबालब पररपूर्ण हूँ। जो मनर्म्य, बुद्धिर्म्य, धचत्तर्म्य, र्ार्ीर्म्य नही ांहूँ। अहांर्म्य और अनुभर्र्म्य हूँ।

जो बेसहारा, इस गुल चमि का, उस बेसहारे को हम भी जिो।
जो िूरेहस्ाी है बेफफकारा, उस बेफफकारे को हम भी जिों ।
रिह–रह की बेशुमार कमलयाँ, कभी मसकुिीं, कभी उर्घीं ।
जो इश्क ये हदल है, ममश्ले-मर्जिूं, िलाश करिा है कूचे-कूचे।
ममटिी है ममलिे ही खुाहहहशों, माशूकेूरे - लैला को हम भी जिों।
जो ििजा है जहिा सारा, जो देखिा है हमेशा सबको ।
पहचिा स्जसको भले-बुरे की, पहचिा िाले को हम भी जिों ।।
रहिा है सबमें हो करके सब कुछ, िइस्बदिा और िइस्न्द्हिा है ।।
मशरू.फ़ रहिे हैं मस्स्जसमें, उस मस्सूरि को हम भी जिों ।।

अिमोल 'मुक्ाि' का ये खजािा, गर लूटिा है, मजे से लूटो ।
हकीकी मस्ाि की जो हकीकि, ऐसी हकीकि को हम भी जािें ।।

पुरष, प्रमसद्ध प्रकास तिचध -

जो पुरुर्ष है, 'म'ै आत्मा ई प्रमसद् है। तीनों काल और तीनों अर्स्ाओां में ई ननत्य प्रमसद् है। उसका कभी अभार् नही ांहोता यही प्रमसद् है। ई अव्यक्त और व्यक्त रूप में, ननत्य प्रमसद् है। अजस्तत्र् सामान्यचेतन 'है' है, इस रूप में जो ननत्य है। ससांर में ऐसा कोई है, जो 'है' इस अजस्तत्र् से खाली हो। ब्रह्मा है, र्ष्र्ुा है, र्कांर है, जीर् है, ब्रह्म है, ज्ञान है, अज्ञान है, भार् है, अभार् है, है है, नही ांहै, पाप है, पुण्य है, स्र्ग शहै, नरक है आहद जो तृर् से लेकर ब्रह्मा तक 'है' रूप से प्रमसद् है, यही अजस्तत्र्, सामान्य चेतन 'है' है, इस रूप में जो ननत्य है।

जो र्ाणी से न कहा जाय, अव्यक्त चेतन 'है' का ही व्यक्त रूप 'म'ै है। 'है' जो 'म'ै नाम से ननत्य व्यक्त हो रहा है। प्रमसद् हो रहा है। इस तरह ई व्यक्त और अव्यक्त रूप में ननत्य प्रमसद् हो रहा है। 'है' सामान्य चेतन और 'म'ै र्र्ेर्ष चेतन इन दोनों को आत्म भार् से प्राप्त करना चाहहए।

र्र्षय समझो डण्डा 'है'।

प्रश्न होता है फक डण्डे का यह जो 'है' है, (पहला 'है' कत्ताश, दूसूरा 'है' फिया है) यह, डण्डे का 'है' है या लकडी का 'है' है?

उत्तर है- लकडी का 'है' है। यह जो प्रतीत हो रहा है, भान हो रहा है, ई लकडी ही तो है, डण्डा नही।ां क्योंफक, यहद डण्डे से लकडी ननकाल लोर् तो डण्डा नहीांरह सकता, फफर भान या प्रतीनत फकसकी होर्ी। अतः, मसद् हुआ फक यह जो डण्डे में 'है' पना है, ई डण्डे का नही,ां लकडी का है। आर् चलो-अब लकडी 'है' इस लकडी में जो 'है' है, ई लकडी का है या पृथ्र्ी का है? उत्तर है-पृथ्र्ी का। क्योंफक यहद लकडी में से पृथ्र्ी ननकाल लोर्, तो लकडी रहेर्ी कहाँ ? इससे, मसद् हुआ फक यह जो लकडी का 'है' है, ई लकडी का नहीां बजल्क पृथ्र्ी का 'है' है। इस तरह, पृथ्र्ी का जो 'है' है, ई जल का 'है' है। जल का जो 'है' है, ई अजग्न का 'है' है। अजग्न का जो 'है' है, ई र्ायु का 'है' है। र्ायु का जो 'है' है ई आकार् का 'है' है और आकार् का जो 'है' है ई मुझ आत्मा, चैतन्यघनभूत का 'है' है। इस तरह ई अव्यक्त रूप से ननत्य व्यक्त हो रहा है। प्रमसद् है। इसी तरह व्यक्त रूप 'म'ै ननत्य प्रमसद् है, जजससे भी पूछो भाई! तुम कौन हो? उत्तर ममलेर्ा 'म'ै हूँ। सारा र्श्र् अपनेआपको 'म'ै भार् से व्यक्त करता है। इस तरह 'म'ै (र्र्ेर्ष चेतन) इस भार् में, सर् शमें, ननत्य व्यक्त हो रहा है। अब यहद डण्डे से पूछोर् फक तुम कौन हो तो ई भी यही कहता है, फक 'म'ै हूँ, परन्दतु ई एक र्ुर् तमोर्ुर् का ही है, उसमें रजोर्ुर् अर्ात्श इजन्दरयाँऔर सतोर्ुर् अर्ात्श बुद्धि का अभार् है, अतः ई बोल नही ांसकता, व्यक्त नहीां कर सकता, परन्दतु अव्यक्त रूप 'है' है। इस अजस्तत्र् सामान्य चेतन से ननत्य प्रमसद् है।

चारों प्रमार्ों से अपना अजस्तत्र् मसद्द है।

1. प्रत्यि प्रमार्, 2. अनुमान प्रमार्, 3. ननर्म प्रमार् और 4. स्ानुभूनत प्रमार् ये ही चार प्रमार् हैं।

मानने ेसे रहे और न माननेसे भी रहे, ई प्रत्यि प्रमार् है।

आज नदी में बाढ़ आ र्यी। यद्यर्प, यहाँ ँपानी नही ांधर्रा, तब यह ननश्चय है फक ऊपर कही ांपानी धर्रा होर्ा। यह अनुमान प्रमार् है।

र्ेद, र्ास्, रामायर्, र्ीता, भार्त सभी यही बतातेहैं फक भर्ान आत्मा 'म'ै के मसर्ाय अन्द्य कुछ भी नही ांहै, यही ननर्म प्रमार् है।

"म"ै हूँ इसको स्र्यांमें ही जानता हूँ यही स्ानुभूनत प्रमार् है।

सारार्ां में समझो, 'म'ै हूँ यह प्रमार् सबके मलए प्रत्यि है, यही 'म'ै के मलए दृढ़ प्रत्यि प्रमार् है।

यहद, 'म'ै नही ांहोता, तो कहता कौन फक 'म'ै हूँ, यही दृढ़ अनुमान प्रमार् है।

यहद 'म'ै नहीांहोता तो भीतर से बोलता कौन फक 'म'ै हूँ, यह दृढ़ ननर्म प्रमार् है। इन तीनों प्रमार्ों को

'म'ै जानता हूँ, यही दृढ़ स्ानुभूनत प्रमार् है।

जैसे, प्रकार् को प्रकार् से ही देखा जाता है। अांधकार, प्रकार् को क्या हदखा सकेर्ा, ऐसे ही 'म'ै को 'म'ै के ही द्र्ारा देखा जाता है, जाना जाता है। र्ेद, र्ास्, पुरार्, श्रुनत, स्मृनत ये सब अनात्म है। ये सब मुझ आत्मा को क्या हदखा सकेंर्े? तब र्ांका होती है फक जब ये मुझ आत्मा को नहीां हदखा सकते, तब इनकी अन्द्यर्ा मसद्धि है, ये सभी व्यर् शहै?
भाई! मुझ सजच्चदानन्द्द के भार् की व्याख्या नही ांहो सकती, जो तत्र्, अपनेआप से ही जाना जाता है, उसकी व्याख्या अर्र र्ास्ों में हो तो फफर हम तुम्हें क्या जनाएँर्े? जजसको तुम जानते हो, उसी को हम जनाते हैं। तो स्ामी जी! म ैफकसको जानता हूँ।

भैय्या! जो सबको जानता है, उसी को जानते हो। सन्द्त, महात्मा जन उसी को जनाते हैं। प्रश्न- जब म ै पहहले से ही जानता हूँ, तब आप क्या जनाते हैं? भाई! हम यही जनाते हैं फक तुम पहहले से ही जानते हो। अरे, 'म'ै हूँ, इसको जानते हो या नही?ां जी हाँ जानता हूँ। तो और क्या जानोर्े? कोई सीर्ां, पूँछ र्ाला जानना है? नही।ां इसी को हम जनाते हैं। अपने आप 'म'ै आत्मा को, तुम कुछ न कुछ मान कर जानते हो, उसी को सन्द्त, महात्मा जन जान कर जनाते हैं।

प्रश्न- तुम मानकर कैसे जानते हो? देखो! तुम कहते ेहो- 'म' ैं देह हूँ, 'म' ैं स्त्री हूँ, 'म' ैं पुरुर्ष हूँ, 'म' ैं बालक हूँ, युर्ा हूँ, र्ृदि् हूँ, ब्राह्मर् हूँ, र्ृहस्र् हूँ, माता- र्पता, भाई-बहहन हूँ आहद। तुमने ेअपनेआप 'म' ैं को, देह माना, स्त्री-पुरुर्ष माना, बालक, युर्ा, र्ृदि् माना, र्,श आश्रम र्ाला माना, माता-र्पता, भाई-बहहन माना।

इस तरह तुम कुछ न कुछ मानकर जानते हो। 'म' ैं को जानते हो, अपने'म' ैं का ज्ञान है और देह जो मान रहे हो, इस देह का भी ज्ञान है। अब र्ाचार करो फक यह जो तुमने ेदेह माना, र्ह फकसको माना? उत्तर है 'म' ैं आत्मा अजस्तत्र् को, 'है' को। तब देह, देह है या अजस्तत्र्, 'म' ैं आत्मा?

उत्तर- अजस्तत्र् है, ' म' ैं आत्मा है।

तब देह रहा? नही। ां

तब क्या रहा?

उत्तर है- 'म' ैं ही रहा।

इस तरह सब मान्यताओांका अभार् है। 'म' ैं ही 'म' ैं हूँ। बस, हम यही जनाने आये हैं। जजसको देह कहते हो, प्रपचां कहते हो, र्ह 'म' ैं ही है। यह देह है, इसको अध्यास कहते हैं और देह मानकर, 'म' ैं देह हूँ कहना अमभमान है। मान्यता अध्यास है और र्ह 'म' ैं हूँ कहना अमभमान है। 'है' और 'म' ैं अव्यक्त और व्यक्त दोनों भार् से 'म' ैं आत्मा, ननत्य प्रमसद् है।

पुरष प्रमसद्ध प्रकाश तितघ

जो पुरुर्ष है, र्ह प्रमसद् है, फफर र्ह प्रकार् ननधि है।

प्रकार् ननधि का अर् शहोता है, प्रकार् पुचज, जो न कभी उदय हो और न कभी अस्त हो। प्रकार् का अर् श होता है ज्ञान और अांिकार का अर् शहोता है अज्ञान। जजससे प्रकार् और अांिकार दोनों देखे जाते हैं, र्ह है प्रकार्ननधि। र्ह प्रकार् न कभी उदय होता है और न अस्त। यह सर् शका ज्ञाता है।

प्रकार् ननधि - प्रकार् माने ज्ञान, ननधि मानेसमुर अर्ात् श ्ज्ञान का समुर।

ग्यिा अखण्ड एक सिीाबर, माया िस्य जिी सचराचर ।।

र्ह ज्ञान अखण्ड है, कभी खजण्डत होने ेर्ाला नही ांहै। खण्ड ज्ञान क्या है? फकसी उपकरर् (इजन्द्रय) के द्र्ारा जो जाना जाय, र्ह खण्ड ज्ञान है और त्रबना उपकरर् के जो जाना जाय र्ह अखण्ड ज्ञान है। भर्ान आत्मा 'म' ैं अखण्ड ज्ञान स्र्रूप है। देखो! (ताली बजाकर) यह ध्र्नन हुई। इसे फकसने सुना? कर् शइजन्द्रय ने और

 कर् शइजन्द्रय के सुनने ेको फकसने सुना? 'म'ैं आत्मा ने। तो, जो सुननेऔर नह सुनने दोनों को सुनता है, देखने और
नही ंदेखने, दोनों को देखता है (त्रबना उपकरर् के) ई 'म'ैं आत्मा अखण्ड ज्ञान स्रूप हूँ। जो सुर्षुजप्त के आनांद का अनुभर् त्रबन उपकरर् के करता है, ई 'म'ैं आत्मा ज्ञानस्रूप अखण्ड हूँ। इजन्द्रयों का ज्ञान खण्ड ज्ञान है और "म"ैं आत्मा का ज्ञान अखण्ड ज्ञान स्रूप है। ई अखण्ड ज्ञा अनेक नहीं एक है। तीनों अर्स्ा और तीनों काल का ज्ञान जो है, ई ननत्य एक रह अखण्ड है। इस अखण्ड ज्ञान में देर्काल का अत्यन्द्ताभार् है। इसमलए **'ग्यिा अखण् ्एक सीाबर'** है। यही प्रकार् का समुर है, जो आहद अन्द्त से रहहत है।

पदार् शदो प्रकार के होतेहैं 1. दृष्ट पदार्,श 2. अदृष्ट पदार्|श जो देखने में आर्े, उसे दृष्ट पदार् शऔर जो देखने-सुननेमें न आये, उसे अदृष्ट पदार् शकहते ेहैं।

जर्त्, ्प्रपचां, ससांार, र्श्र्, अश्र्त्र् ये सब एक ही र्दद के पयायशर्ाची र्दद हैं। ये सब अदृष्ट हैं। आकार्, र्ायु (ये सब) अजग्न, जल, पृथ्र्ी ये पाँचों प्रपचां हैं। ये सब ममलकर एक जर्ह रहें, तब उसे प्रपचां कहते ेहैं।

ससांार-ससांरर्म् ्ससांारः। पता चलाने चलो, पकडने ेचलो तो जो सरकता चला जाय, अपनी जर्ह पर न ममले, इसको ढूँढने ेचलते हैं, तो यह आर्े-आर्े सरकता चला जाता है, ममलता नही,ां इसमलए इसका नाम ससांार है। जर्त्–र्च्छजन्द्तयः सः जर्त्–्जजसको ननश्चय करने चलो, तो ई आर्े-आर्े सरकता चला जाता है, उसे

जर्त् ्कहते हैं।

र्श्र्-र्, मानेर्त्त, श्र् मानेप्रातः। रात के अाँिरे में तो रहे और प्रातः प्रकार् में जो र्त्त हो जाय अर्ात्श ्न रहे। अज्ञानके अाँिरे में तो रहे, पर ज्ञान के प्रकार् में न रहे, उसे कहते ेहैं र्श्र्।

अश्र्त्र्- 'अ' मानेनही,ां 'श्र्' मानेप्रातः, 'र्' मानेजस्र। जो रात के अाँिरे में तो रहे और प्रातःकाल के प्रकार् में जो जस्र न रहे, उसे अश्र्त्र् कहते हैं। मान्द्यता अश्र्त्र् है, र्ृ है, इसमें जो सत्यता प्रतीत होती है, ई अज्ञान के अाँिरे में ही होती है। अनन्द्त मान्द्यताओां का जो समूह है, उसे ससांार कहते ेहैं। अनन्द्त- मान्द्यताओां का जो आिार है ई अजस्तत्र् ही है। यह ससांार सब प्रकार से पूर् शहै।

प्रश्न होता है-क्यों ?

उत्तरहै-अरे,इसकाबापभीतोपूर् श है,जजससेइसकीउत्पर्त्तहुई।पूर् श र्पतासेपूर् श पुि की उत्पर्त्तहोतीहै।बापकेदोआँख,दोकान,दोहार्,दोपैरहैं,तोबेटाएकआँख,एककान,एक हार्औरएकपैर र्ाला,ऐसाअपूर् श नहीं होता।बापकेसबदो-दो,तबबेटेकेभीसबदो-दो।बाप-बेटेदोनोंपूर्शहैं।इसीतरह'म'ैंआत्माअजस्तत्र्,अनाहदहै,अर्नार्ीहै,अननर्चशनीयहै,तबससांार भीर्ैसाहीहै।अबप्रश्नहोताहैफकससांारकेउपरोक्तर्र्ेषर्ससांारकेहैंयाभर्ानआत्माके? उत्तरहै,भर्ानआत्माकेहैं।यहीभर्ान(बाप)कार्ुर्,ससांार(बेटे)मेंहै।अतः,जजसेभर्ान

कहते हो,जोरामहै,'म'ॆंआत्मा,र्हीदृष्टपदार्श है,र्ेर्ष सबप्रपचां ,अदृष्टहैं।उन्द्हेंदेखने, अनुभ र्
करने चलोतोरे् नहीं ममलते। मान्यताप्रपचां देर्है,इसकाआिारभर्ानदेर्है।प्रपांचदेर्में
प्रपचांहैऔरभर्ानदेर्मेंसबभर्ानहीहै।

भर्ान देर् में खडे ेहोकर देखो, ब्रह्मा से लेकर तृर् तक, कर्-कर्, जरी, र्शभर्ान है। उससे एक
नतल भर भी जर्ह खाली नही ांहै।

सर् शमें से अमुक भार् हटा दो, र्ंकल्प त्यार् दो, फफर तो र्ही-र्ही है। र्ह दू ूनही ांहै। इसका आनन्द्द तो
तभी आयेर्ा, जब तुम अमली जामा पहहनोर्े। इसक त्रबना, र्ह आनन्द्द दूरू है। मानसकार र्ंनय में कहते हैं-

हे हरर ! किि बििि सुख मािहु ।
ज्यों गज-दसि िथा मम करिी, सब प्रकार िुम जािहु ।
जो कछु कहहय-कररय, भि सागर िररय बच्छपद जैसे ।
रहति आि विचध, कहहय आि हररपद सुख पाइय कैसे ।।
देखि चार मयूर बयि सुभ बोमल सुधा इि सिाी ।
सविष उरग आहार, तिठुर अस यह करिी िह बिाी ।।
अझखल-जीिि-त्सल, तिरमत्सर चरि-कमल-अिुरागी ।
िे ि वप्रय रघुबीर धीरमति, अतिसय तिज पर त्यागी ।।

हे हरर म ैंफकस प्रकार सुख मानूँ। मेरी करनी हार्ी के हदखार्टी दाँतों के समा है। भार् यह है फक जैसे हार्ी
के दाँत हदखाने के और तर्ा खानेके और होते हैं, उसे प्रकार म ैंभी कहता (हदखाता) कुछ और हूँ और करता कुछ
और ही हूँ। म ैंदूसूरों जो कुछ कहता हूँ, र्ैसा ही यहद स्र्यां करने ेभी लर्ूँ तो भर्सार्र से बछडे ेके खुर ननर्ान में
भरे हुए जल को सरलतापूर्कश लाघां जाने की भाँनत अनायास ही ता जाऊँ, परन्द्तु करूँ क्या, मेरा आचरर् तो कुछ
और है और कहता कुछ और हूँ, फफ भला तुम्हारे चरर्ों का यह परमपद का आनन्द्द कैसे ममले ?

मोर देखने में तो सुन्द्दर लर्ता है और अमृत् से सने हुए मीठी बोली बोलता है परन्द्तुउसका भोजन
जहरीला साँप है। र्ह साँप खाता है। कैसा ननष्ठुर है? करनी र्ह (जहरीले सप शखाना) और कर्नी (अमृत् से सने हुए
मीठी बोली बोलना मानसकार कहते हैं, हे नार्! तुमको तो र्े सन्द्त प्यारे हैं, जो िीर, भीर और रार्् द्रेर्ष से
रहहत हैं। जजनने, अपने-पराए का भेद त्रबल्कुल त्यार् हदया है। अर्ात्श ्सब एक तुमको ही देखतेहैं।

जद्यवप मम् ्अिगिु अपार, संसार-जोग्य रघुराया ।
िुलमसदास तिज गिु त्रबचारर, करितििधाि कर दाया ।।

(र्ंनय पत्रिका पद-118

इस र्ट रृि के बीज को देखो। र्ह फकतना सूक्ष्म है। इसमें यह इतना बडा रृि समाया हुआ है। र्ह बीज, स्र्यांरृि रूप होकर इसके पत्ते, डामलयाँजड, पीडां, फूल-फल सबमें समाया हुआ है। इसी प्रकार भर्र्ान आत्मा स्र्यांजर्त् ्प्रपचां का बीज है। यह प्रपचां उसी से पैदा हुआ है। इस प्रपांच की उत्पत्तत्त उन्द्हीां के द्र्ारा हुई तर्ा र्ह स्र्यांबीज की भाँनत इसमें समाया हुआ है। अरे, अधिक क्या कहें, बीज ही तो है, जो स्र्यांरृि है। इस तरह ज्ञान और अज्ञान दोनों को प्रकामर्त करने र्ाला 'म'ैं आत्मा प्रकार्नननधि है।

'प्रगट परिरिाथ'

र्ह पुरुर्ष, प्रमसद् प्रकार्नननधि होतेहुए प्रर्ट है। सब अपने को 'म'ैं नाम से ननत्य व्यक्त कर रहे हैं। इसीमलए र्ह ननत्य है (इस व्यक्त रूप में) और सारा चराचर, मान्द्यता रहहत प्रतीयमान भास, भर्र्ान के भार् में 'है' है, अजस्तत्र् रूप में ननत्य प्रकट है, प्रत्यि है।

प्रश्न- आकार् र्र्कल्प है या र्स्तु ुहै?

र्र्कल्प कहो तब आकार् नहीां, क्योंफक र्र्कल्प अजस्तत्र्हीन होता है और आकार् यहद र्स्तु है तो भी आकार् नहीां, तब फफर यह क्या है? तब यह जो है, सोई है। जैसा है, र्ैसा ही है। जहाँहै, र्हीांहै। बस, इस रूप में र्ह ननत्य प्रर्ट है।

त्रबस्र्रूप रघुबंस मति करहु बचि त्रबस्र्ासु ।
लोक कल्पिा बेद कर, अंग अंग प्रति जासु ॥

र्रीर का र्र्कल्प हुआ। अब जजस पर र्रीर का र्र्कल्प हुआ, र्ह इस र्रीर र्र्कल्प से ढँक र्या। अब इस र्र्कल्प को हटा दो, तब क्या रह र्या? इस पर कुछ भी र्र्कल्प मत करो, अब यह जो प्रतीयमान (भास) र्र्ेर्ष रह र्या है, जो मन, र्ार्ी का र्र्षय न रहा, जो अनुभर्र्म्य है, र्ही 'म'ैं आत्मा हूँ, जजस पर सारा र्र्श्र् आिाररत है।

प्रश्न-र्र्कल्प हटाने ेका सािन क्या है?

उत्तर- र्र्कल्पक के बोि में, र्र्कल्प का अभार् है।

प्रश्न-र्र्कल्पक का बोि, कैसा होता है?

उत्तर-र्र्कल्प, र्र्कल्प है या र्र्कल्प र्स्तु है? यहद र्र्कल्प, र्र्कल्प है। र्र्कल्प, र्र्कल्प नही,ां र्स्तु ही है 'म'ैं आत्मा है और यहद र्र्कल्प र्स्तु है, तर्ा र्र्कल्प, र्र्कल्प नहीां र्स्तु है, 'म'ैं ही हूँ। यही र्र्कल्प हटाने ेका सािन है ॐ यही र्र्कल्पक का बोि है। इसमलए -

त्रबस् रूप रघुबंस मति, करहु बचि त्रबस्र्ासु ॥

इस रूप में ननत्य प्रर्ट है।

'र्रीर है'। यहाँअब, प्रश्न उठता है फक र्रीर, र्रीर है या 'है' र्रीर है?

उत्तर- 'है' र्रीर है, 'है' (अजस्तत्र्) र्रीर है।

प्रश्न- मन, मन है या 'है' मन है? 'है' र्न्ऱ्षय है।

उत्तर - 'है' (अजस्तत्र्) मन है।

र्न्ऱ्षय, र्न्ऱ्षय है या 'है' र्न्ऱ्षय?

ई्श्र्, ई्श्र् है या 'है' ई्श्र् है? 'है' ई्श्र् है। बस-

त्रबस्[रूप रघुबंस मति, करहु बचि त्रबस्[सु ॥

इस रूप में ननत्य प्रर्ट है। जब देह नहींरहा तब देहामभमान नही ांरहा। ज देहामभान नहीं रहा, तब जीने मरनेका डर नही ांरहा। इस जस्र्नत में देर्, काल स्तु का अत्यन्द्ताभार् हो र्या। मसऱ् चैतन्द्यघन भूत, 'म ै आत्मा के कुछ भी रे् ेनही ांरहा, यही ननभयश पद है, आत्म पद है-परम पद है।

ससांार के प्रत्येक पदार् शमें पाँच अांर् होतेहैं। अजस्त, भानत, प्रय, नाम और रूप। इसमें प्रर्म तीन अांर्- अजस्त, भानत और प्रय भर्ान राम, 'म ै आत्मा हैं।

र्न्ऱ्षय समझो - ई्कल्प हटा देनेके बाद जो रह र्या, उसे ऱ्ऱ् व्यक्त नही ांक सकती, उस पर सोचना, ई्चारना, बन्द्द हो र्या, परन्द्तुउसकी प्रतीनत तो हो र है, भान तो हो रहा है फक कुछ है, यही अजस्तत्र् है, 'है' है। इसी को सत्, ई्हते (चैतन्य) है सत् ्है। यह अजस्तत्र् जो भास रहा है, र्ही भानत है अऱ्ात् और जो अजस्त, भानत है अऱ्ातश सत् ्धचत् ्है, र्ही प्रय है, आन स्र्रूप है। इस तरह सारा चराचर सत्, ् धचत्, ् आनन्द्द (सजच्चदानन्द्द) के रूप में ननत्य प्रर्ट है।

त्रबस्[रूप रघुबंस मति, करहु बचि त्रबस्[सु ।।

अजस्त, भानत, प्रय ये तीन अांर्, भर्ान राम हैं, अब इस पर, नाम और रूप का ई्कल्प कर मलया र्या, इस तरह दो अांर्, इसमें और जुड र्ये। जजसमें 'म ै आत्मा भर्ान नछप र्या, यही दो अर्ां माया के हैं, यह जो मान्द्यता है, ई्कल्प है, यही माया है, सीता है। अतः, सारा चराचर सीय राममय हुआ। श्री मानसकार कहतेहैं-

सीय राम मय सब जग जािी। करउँ प्रिाम जोरर जुग पािी ।।

का यही भार् है। इस रूप में र्ह ननत्य प्रर्ट है- 'रु्प्त प्रर्ट र्ह है नही,ां सरासरी मैदान' ।

रु्प्त प्रर्ट र्ह है नहीां, सरासरी मैदान ।
ब्रह्मदत्त द्र्र्ज देख लो, त्रबन आँखी त्रबन कान ।

भाई ! आँख, कान का यहाँक्या काम, यह इजन्द्रयर्म्य नहीांहै, अहांर्म्य है।

तियरे है दीखैहीं,ां तघक है ऐसे स्जन्द्द ।
ुलिसी या संसार को, भयो मोतिया त्रबन्द्द ।।
है सो िजर ि आेिही, िहींसो प्रगट हदखाय ।
यह किौुक िब ही लखै,ै जब सद्गुर ममल जाय ।।
बेखुदी का दररया उम़ रहा, कब क्या हो जाये खुदा जिो।
जब डूब गया आलम सारा, कब क्या हो जाये खुदा जिो।।
झर रही है मस्ि बादलों से, मििुतिर मदमिाी बूंदे ।
हदल िप रहा था चिे ममला, कब क्या हो जाये खुदा जिो॥
बाखुदी का जंगल खाक हुआ, जामलम थे ेजिििार भाग गये ।
ममल गई हुकूमि आजादी, कब क्या हो जाये खुदा जिो ।।
मैकदा ि जाकर जाम पीया, मसजदा ि फकया बुिखिाो ेका ।।
फिर भी ये बेहोशी आ टपकी, कब क्या हो जाये खुदा जिो।।
खुद के घर में आबाद हुआ, दुतिया ूँका पदिााश हुआ ।
हो गये अलविदा आँूख-किा, कब क्या हो जाये खुदा जिो।।
'म'ैं किौ हूँ, जुरि है फकसकी, महफिल में जो कर सके बयाँू ॥
ये जुम िहै सरेआम 'मुक्ाि' कब क्या हो जाये खुदा जिो॥

जो पुरुर्ष है, र्ह पुरुर्ष होते हुए प्रमसद्ि है, प्रकार्नननधि है, प्रर्ट है और परार्रन

है।

श ्जो श्रेष्ठ न हो, उसको 'परार्रनार्' पस मा माया, अर्र माने ससाांर (र्र मानेश्रेष्ठ, अ, माने नई अऱ्ात्

कहते ेहैं - ससाांर। अपनेआप 'म'ैं आत्मा अजस्तत्र् स पहले देह माना यह है माया, इसके बाद देह मानकर फफर

स्त्री, पुरुर्ष। बालक, युट रृद्ि। माता-र्पता, भाई-बहहन आहद माना यह मान्यता हुई, यह है ससाांरा

माया और ससाांर का जो नार् है, र्िाार है 'म'ैं आत्मा, र्ह है परार्रनार्।

'म'ें आत्मा, आिार को खसका लो, तो न माया रह सकती है और न ससाांर हूां रह सकता है। ये दोनों फकसके आिार पर रहेंरे्? हटकेंरे् फकस पर? इसमलए म ेंआत्मा माया और ससाांर (परा और अर्) दोनों का आिार (नार्) परार्र नार हुआ।

तिज भ्रम िहहं ंसमुझहहं ंअग्यािी। प्रभु ुपर मोह धरहहं ंज़ प्रािी ।।

भैया! जीर् का स्र्भार् होता है फक र्ह अपनी परछाई दूसूरों पर देखता है फकसी महात्मा के पास, चार व्यजक्त र्ये, तब उनमें से एक व्यजक्त ने महात्मा के देखकर, अपने साधर्यों से कहा- अरे, यह तो चोर है, हमने इसे चोरी करते देखा। और यह यहाँ ँमहात्मापने का ढोंर् लर्ाये बैठा है।

दूसूरे ने कहा अरे! यह तो र्राबी है, हमने इसे र्राब पीतेदेखा है।

तीसरे ने कहा- अरे, यह तो व्यमभचारी है, हमनेइसे र्ेश्या के कोठे पर देख
चौर्ेने कहा- अरे, यह तो जुर्ाडी है, हमनेइसे जुर्ा खेलते देखा है।
महात्मा, प्रत्येक की बात सुनकर कहतेर्ये, हाँ ँभैय्या! तुम ठीक कहतेहै इसके बाद र्े चारों हँसे चल हदये, तब हँपाँचर्ा व्यजक्त जो पहले से महात्मा पास बैठा र्ा, महात्मा से कहने ेलर्ा, भर्र्न्!् आपनेसब को, "हाँ ँभैय्या ठी कहते ेहो" । ऐसा क्यों कहा?

महात्मा ने कहा भाई! जो जैसा होता है, अन्द्य को र्ह र्ैसा ही देखता औ समझता है।

जीर् का स्र्भार् है फक अपनी परछाई र्ह दूसूरों पर देखता है, र्ह दोर्ष र्र्ांमे रहता है, इसमलए उसे र्ह दोर्ष दूसूरों में दीख पडता है।

जो जैसा है, र्ैसा ही परमात्मा को देखता है। ब्रह्मर्ादी की दृजष्ट में सारा ससाांर आत्मा है, राम है और जीर्नैजष्ठक की दृजष्ट में सारा ससाांर जीर् ही जीर् हदखता है, देहामभमानी की दृजष्ट में सारा र्र्श्र् देहामभमानी की ही दृजष्ट में देखा जाता है। इस को तरह जो जैसा है, उसे सब र्ैसे ही हदखते हैं।

जथा गगि घि पटल तिहारी। झाुँपेउ भािु कहहहं ंकुत्रबचारी ।।
चतिि जो लोचि अंगुमल लाएुँ। प्रगट जुगल समस िहह के भाएुँ ।।

सूय शऔर आँख के बीच बादल के आ जानेपर सूय शहदखाई नही ांदेता, जजसे ही अज्ञानी समझता है फक बादल ने सूय शको ढाँक मलया। कहो, इतने बडे ेसूय शको क्या बादल ढाँक सकता है? नहीां। पर अज्ञानी ऐसा कहता है फक बादल ने सूय शको ढाँक मलया, र्ह यह नहीांजानता फक सूय शऔर आँख के बीच बादल के आ जाने से सूय शनहीां हदख रहा है। इसी तरह जो मनुष्य आँख में उांर्ली लर्ाकर देखता है उसको चन्द्रमा दो हदखाई देता है, यद्यर्प चन्द्रमा दो नहीां, एक ही है।

उमा राम विषइक अस मोहा। िभ िम घूम घूरर स्जमम सोहा ।।

(उ माने तप, मा मानेमत करो, अर्ातश उमा मानेअब तपस्या मत करो। उस को हदन से उमा नाम पड र्या) इस तरह राम में जो दोर्ष हदखाई देता है ई अपना दोर्ष है है। राम तो जैसा है, र्ैसा ही है। राम के र्ि्षय में अज्ञानर्् कुछ भी कहना र्ैसा ही है जैसे आकार्् में अिांकार, िँुआँ और िूमल है कहना। आकार्् तो ननत्य, ननमलश और ननलेप है, ये उन्द्हें स्पर्् शतक नहीांकर सकते।

विषय करि सुर जिी समिेा। सकल एक िे एक सचिेा ।।

र्ि्षय पाँच हैं- र्दद, स्पर््,श रूप, रस और र्ांि किरन माने इजन्द्रय।

र्दद र्ि्षय का कर्् शइजन्द्रय है, रूप र्ि्षय का चिुइजन्द्रय है, रस का जजह्वा, र्िां का घ्रार्् और स्पर्् शका त्र्चा इजन्द्रय है। इजन्द्रयों के जो देर्ता हैं, उन्द्हें कहते हैं के सुरजीर्।

भैय्या! जीर्् जर्त्् ्बडा र्ि्ाल है। ब्रह्मा, र्ि्ष्ु और र्ांर को छोडकर जजतनेदेर्ता हैं, ये सब जीर्् ही हैं। ब्रह्मा, र्ि्ष्ुऔर महेर््, ईश्र्र कोहट के देर्ता हैं।

कर्् शइजन्द्रय का देर्ता हदर्ा, नेि इजन्द्रय का देर्ता सूय,श घार्् इजन्द्रय का देर्ता अजश्र्नीकुमार, मन का देर्ता चन्द्रमा, बुद्धि का देर्ता ब्रह्मा, अहांकार का देर्ता र्ांर, धचत्त का देर्ता नारायर््, पैर का उपेन्द्र अर्ात्् श ् र्ामन भर्र्ान, भुजा का इन्द्र इत्याहद से सब देर्ता एक से एक सचेत और बडे ेचतुर हैं।

देखो-नेि का देर्ता सूय शहै। र्रीर के सब अांर्ों में ठांड का असर होर्ा, परन्द्न आँख को ठण्ड नहीां लर्ती। फकतनी ही बफीली जर्ह में चले जाओ अर्र् पूस की कडाके की ठण्ड क्यों न हो पर आँख को ठांड नही ांलर्ेर्ी, क्योंफक आँख का देर्ता सूय शजो है। सूय शमें ठांडक का क्या काम? र्ार्ी का देर्ता अजग्न है। मुँह में पान भरकर बोलो, क्या बोल सकतेहो? नहीांं क्योंफक पानी और अजग्न की दुश्मनी है इसमलए जीभ हमेर्ा र्ीली रहती है, कभी सूखती ही नहीां। पैर का उपेन्द्र है। पैर में र्ामन भर्र्ान ननर्ास करते हैं इसमलए जब कभी भी फकसी की पूजा होती है तो पैर की पूजा होती है। मसर की पूजा कोई नहीां करता, क्योंफक पूजा र्ामन भर्र्ान की होती है। ये सब इजन्द्रयाँ एक दूसूरे के सेर्क हैं। इन सबों में बडी एकता है। अपनी- अपनी ड्यूटी सब पूरा करते हैं।

सब कर परम प्रकासक जोई। राम अिाहद अधिपति सोई ॥

कान के सुनने और नही ांसुनने,े आँख के देखने और नहीां देखने, मन के मन और अमनन, धचत्त के धचन्द्तन और अधचन्द्तन, बुद्धि के ननश्चय और अननश्चय इन्् ्सबको 'म'ैं आत्मा ही जानता हूँ। इनका परम प्रकार्क हूँ, परम ज्ञाता हूँ, इसमलए 'सबकर परम प्रकार्क' 'म'ैं आत्मा ही हुआ। त्रबना बोिर्ान र्ुद्रान के एक त्रबना सन्द्त कृपा के ये बातें समझ में नहीांआती।

जगि प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यिा गिु धामू ।।

प्रकाश्य अर्ात्श ्ज्ञेय। प्रकार्क अर्ात्श ्ज्ञाता। जर्त् ्मेरा दृश्य है और 'म'ै आम इसका दृष्टा हूँ। 'म'ै आत्मा मायिीर् हूँ। माया का ईर् अर्ात्श ्माया का आिार है कारर् हूँ और ज्ञान तर्ा रु्रों का भण्डार हूँ। 'म'ै आत्मा क्या नहींजानता?

जासु सत्यिा से ज़ माया, भास सत्य इि मोह सहाया ।।

जजसकी सत्यता करके माया जड होतेहुए भी सत्य-सा भासती है। माया अर्ातश मान्यता। माया, फकसकी सहायता से सत्य-सा भासती है? "मोह सहाया" अर्ातश अज्ञान की सहायता से सत्य-सा भासती है कैसे?

देखो - अिेंरे में जो सप शहदखा, कौन सप शहदखा? रस्सी! तब सप शमें जो सत्यत है ई सप शकी है या रज्जू की है?

उत्तर-रज्जू अर्ात्श ्रस्सी की है, क्योंफक रज्जू ही तो है। सप शन तो अिेंरे में है, न उजाले में। सप शतो है ही नही,ां असत्य है। सप शही माया है, जो है ही नही।ां

उसी प्रकार माया में जो सत्यता है, ई सत्यता माया की है या राम की? राम की है। सत्य इर् मानेसत्य के समान। भर्ान आत्मा में जो माया हदखती है ई सत्य नही,ां सत्य इर् अर्ात्श ्सत्य के समान है। रस्सी सप शके रूप में क्यों हदखी? हदखने ेका क्या कारर् है? अिांकार। इसी तरह भर्ान आत्मा के अज्ञान में माया हदखती है? "मोह सहाया"। भर्ान आत्मा 'म'ै का जजसको अज्ञान है, उसको ही भर्ान माया के रूप में हदखाई देता है। तब भर्ान ही माया है। केर्ल ज्ञान और अज्ञान का ही सर्ाल है। ज्ञान यही है फक सप शको रस्सी से मभन्द्न मत मानो, सप शको रस्सी ही जानो। ऐसे ही माया को भर्ान से मभन्द्न मत मानो, माया को भर्ान ही जानो। जो माया को भर्ान से मभन्द्न मानतेहैं, उसे माया चक्कर में डालती है, पेरती है, मरोडती है। यही माया में दोर्ष है और जो माया को भर्ान ही जानते हैं, उसे माया भर्ान का दर्नश कराती है। यही माया का रु्र् है।

व्यर्हाररक जर्त् ्में देखो अर्र फकसी साहब से ममलना हो तो सहत्रबन को खुर् कर लो, उनसे ममल लो, उनसे ममलने पर यहद ई खुर् हो र्यीं तो साहब के ममलनेसे खुर् होने में क्या देर सब काम बन जाते हैं, तब जर्जन्द्नयन्द्ता अर्खल ब्रह्माण्ड के नायक चराचर के स्र्ामी, जो साहब हैं, उसकी जो सहत्रबन माया है, उसको खुर् कर लो, फफर दर्नश में क्या देर है ई खुद दर्नश करा देर्ी।

प्रश्न- इस सहत्रबन को कैसे खुर् फकया जाय?

उत्तर-अरे, उसको साहब से मभन्द्न मत मानो, उसको साहब ही जानो, यही उसके खुर् करनेका तरीका है।

रृनूद्दार्न में जाकर देखो, हाँपर जहाँ जाओर्े, हीांसबके सबको जय रिो- जय रिो ही पुकारते पाओर्े,
उनका कहना है फक रिाा के र्् में भर्ा्न हैं, इसमलए रिाा को जहाँ हमने खुर् कर मलया फक भर्ा्न श्रीकृष्र्
खुर् हुए ही हैं। उनके खुर् होने में फफर क्या देर है।

बाबा के दरबार में, बाई कहैं सो होय ।।

भैया! यहाँ ँतक तो ब्रह्म का ननरूपर् हुआ, अब इिर जर्त् ्का ननरूपर् है।

दोहा-

रजि सीप महुँ भास स्जमम जथा भािुकर बारर ।
जदवप मृषा तिहुँ काल, सोई भ्रम ि सकइ कोउ टारर ।।117।।

जैसे सीप में चादंी का भ्रम, सूय शकी फकरर्ों में मृर्तृष्र्ा के जल का भ्रम, ठूँट म र्पर्ाच का भ्रम और रस्सी में सप शका भ्रम होता है, परन्द्तु ये सब भ्रम, ममथ्या और असत्य है।

उसी प्रकार -

एहह त्रबचध, जग हरर आचश्रि रहई। जदवप असत्य दि दुखु अहई ।।

'म'ैं आत्मा के आिार पर जर्त प्रपचां, ममथ्या, असत्य और दुःख रूप है। ममथ्या और असत्य में अन्द्तर है, उत्पन्द्न होकर जो नार् हो जाये र्ह है ममथ्या और जो तीनों काल में न हो, बन्द्ध्या पुत्र्,् र्ह असत्य है।

र्रीर देर् में र्रीर ममथ्या है और आत्मदेर् में, भर्ा्न देर् में, र्रीर नाम की कोई चीज ही नहीांहै, अतः
र्रीर असत्य है। ससांार या माया, इसी प्रकार 'म'ैं आत्म देर् में है ही नही,ां जैसे मृर्जल में जल नहीांहै, सीप में चादंी नहीांहै, ठूँठ में र्पचार् नहीांहै और रस्सी में सप शनहीांहै परन्द्तु -

जदवप असत्य दि दुखु अहई ।।

र्ह नहीां होतेहुए भी दुःख का कारर् बना है। दुःख दे रहा है इस दुःख का कारर् भ्रम है। नही ांहोतेहुए भी उसे सत्य मान लेना ही दुःख का कारर् है।

जौं सपिेंमसर काटै कोई। त्रबिु जागे ि दूरर दुखु होई ।।

जैसे स्र्प्न में अपना मसर कटा हुआ हदखा, भला जजसका मसर कट जायेर्ा, र्ह अपनेकटे हुए मसर को
देख सकता है? नही,ां पर हदखा और इस दुःख से र्ह बहुत व्याकुल है, तो इस दुःख से छुटकारा तो जार्नेपर ही
ममल सकेर्ा, त्रबना जार्े दुःख का अन्द्त, फकसी प्रकार भी नही ांहो सकता। इसी प्रकार 'म'ैं स्र्रूप भर्ा्न

आत्मा में त्रबना जारे् इस भ्रम का ननर्ारर् नही ांहो सकता और जब तक यह भ्रम हटेर्ा नहीां तब तक इस महान र्ृपत्त से छुटकारा नही ांममल सकता।
सन्द्त तुलसीदास जी र्नय में कहते हैं -

हे हरर! यह भ्रम की अचधकाई ।

देखि, सुसि, कहि, समुझि, संसय-संदेह ि जाई ।।

हे हरर! यह भ्रम की अधिकता है फक देखने, सुनने, े कहनेऔर समझने ेपर भी, न तो सर्ांय ही जाता है और न सन्द्देह ही दूरू होता है।

सर्ांय, यह फक असत्य जर्त् को सत्य मानना और सन्द्देह यह फक एक परमात्मा की ही अखण्ड सत्ता है या कुछ और भी है।

जो जग मृषा, ताप िय अिुभि, होइ कहहु केहह लेखे ।
कहह ि जाय, मृगृबारर सत्य, भ्रम ि े दुखु होइ त्रबसेखे ||2||

कोई कहे फक ससांार असत्य है तो ससांार के ताप भी असत्य हैं, परन्द्तु तापों का अनुभर् तो सत्य प्रतीत होता है?

तो भैय्या! इसका उत्तर यह है फक मृर्तृषूर्ा का जल सत्य नहीांहै, परन्द्तु जब तक भ्रम है, तब तक र्ह सत्य ही हदखता है और उसी भ्रम के कारर् अज्ञानी मृर्ों को त्रर्र्ेष दु:ख होता है। इसी प्रकार जर्त् में भी भ्रमर्र् दु:खों का अनुभर् होता है।

सुभग, सेज, सोसो सपि, बाररचध बूड़ि भय लागै ।
कोहटहुँ िाि ि पार पाि सो, जब लचग आपिु जागै।।३।।

जैसे, कोई सुन्द्दर सेज पर सोया हुआ मनुष्य सपने में समुर में डूबने से भयभीत हो रहा हो, पर जब तक र्ह स्र्यां जार् नहीांजाता, तब तक करोडों नौकाओांद्र्ारा भी र्ह पार नहीांजा सकता। उसी प्रकार यह जीर्, अज्ञान ननरा में अचेत हुआ, ससांार सार्र में डूब रहा है तो र्ह स्र्रूप भर्र्ान आत्मा में त्रबना जारे्, सहस्रों सािनों द्र्ारा भी दु:खों से मुक्त नही ांहो सकता।

अित्रबचार रमीय सदा, संसार, भयंकर भारी ।
सम संतोष, दया त्रबबेक तें, व्यिहारी सुखकारी ।।4।।

यह अत्यन्द्त भयानक ससांार अनर्र्चार से ही पैदा हुआ, अज्ञान के कारर् ही मनोरम हदखाई देता है, यह उनके मलए ही सुखकारी है, जजनने अपने स्र्रूप भर्र्ान आत्मा को जान मलया है। सांसार अनर्र्चार से फकस तरह पैदा होता है, इस पर एक दृष्टान्द्त सुनो - -

एक भार्ती पजण्डत फकसी दूसूरे र्ाँर् को भार्त की कर्ा कहने र्या। उसने ननस्तार के मलए अपने सार् दो लोटा रख मलया। मार् शमें उसे एक नदी ममली। उसने सोचा फक यहाँ ँस्नान कर लें, फफर आर्े बढ़ें। नदी में स्नान करते समय पडांडत जी ने सोचा फक हाँदो-दो लोटा ले जाकर क्या करूँर्ा, मुझेसार् में एक लोटा लेकर चलना र्ा। अरे! जहाँ ँजाऊँर्ा, लोर् हाँलोटे का प्रबिां तो कर ही देंर्े। मुझे ेअपनेसार् एक ही लोटा रख लेना पयाप्शत है। दो-दो लोटा रखने में चोरी हो जानेका भी भय है। ऐसा सोचकर उसने एक ही लोटा ले चलने का ननश्चय फकया। पजण्डतजी ने नही में स्नान फकया और एक लोटा को हीांनदी की रेत में र्ड्ढा बनाकर नछपा हदया। उसने े सोचा फक लौटते र्क्त तो इसी मार् शसे ही लौटना है, उस समय लोटा ननकाल कर लेता जाऊँर्ा। लोटे को नछपाने के स्र्ान को भूल न जाऊँ इस र्र्चार से पहचान के मलए उसनेहीांरेत का मीनार बना हदया और हाँसे चल हदया। हाँसे कुछ ही दूरूी पर नदी में जो लोर् स्नान कर रहे र्े, उन लोर्ों ने पजण्डतजी को लोटा र्डातेतला नहीांदेखा, परन्द्तु मीनार बनातेहुए देख मलया। लोर्ों ने सोचा फक आज कोई न कोई महान् ्पर् शहै, इस पर् शमें स्नान करने ेके बाद रेत में मीनार बनानेका महत्र् है, तभी तो पजण्डतजी महाराज ने स्नान करके मीनार बनाया है। बस, फफर क्या र्ा सब लोर् स्नान कर करके रेत में मीनार बनातेर्ये और अपने-अपनेघर की ओर रर्ाना हुए। इस तरह नदी में हाँ पर लोर्ों के द्र्ारा सैकडों मीनारें बन र्यीं।

जब पजण्डत जी महाराज कर्ा समाप्त करके र्ापस लौटे, तब अपना लोटा ननकाल लेने के मलए र्े नदी में र्ये। हाँ पहुँचकर पजण्डतजी ने देखा फक नदी के रेत में सैकडों मीनारें बनी हुई हैं। इन मीनारों में पजण्डतजी की बनायी हुई मीनार खो र्यी। र्े ेअचम्भे में पड र्ये और यह ननश्चय नहीां कर सके फक इन मीनारों में उनकी बनाई हुई मीनार कौन-सी है? उन्द्होंने घटों भर तक पच्चीस-तीस मीनारों में अपना लोटा ढूँढा, परन्द्तु उन्द्हें लोटा न ममला। लाचार हो, उदास धचत्त अपनेर्ाँर् को चल हदये।

भाई! देखो-ससांार, हानन-लाभ और त्रबना अर् शको समझे ेऔरों की देखा-देखी ही करता है। त्रबना अर् शफकये, मीनारों का सांसार बस र्या। इस ससांार की रचना, अनर्र्चार से ही हुई। ससांार, अनर्र्चार से ही पैदा होता है।

ुलिमसदास, सब त्रबचध, प्रपंच जग, जदवप झूठ, श्रुति गौ ।
रघुपति भगति, सन्द्संगति त्रबिु, को भि ास िसौ ।।

(र्नय पत्रिका 121)

मानसकार कहते हैं फक र्ेद कह रहे हैं, यद्यर्प सासांाररक प्रपचां सब प्रकार के असत्य हैं, फकन्द्तु रघुनार्जी की भजक्त और सन्द्तों की सर्ांनत के त्रबना इस ससांार के भीर्षर् भय का नार् नहीां हो सकता और न इस भ्रम का ही ननर्ारर् हो सकता है।

जासु कृपाँूअस भ्रम ममहट जाई, चगररजा सोइ कृपाल रघुराई ।।

'म'ैं आत्मा को ही मनैं ेमाया, ससांार मान मलया है, यह जब तक न जाना जायेर्ा, तब तक दु:ख है। 'म'ैं आत्मा की ही कृपा से 'म'ैं का ज्ञान होता है, इस 'म'ैं को जानो, फफर माया और ससांार नही ांऔर जब माया और ससांार नहीांरहा, तब उससे उत्पन्द्न हुआ दु:ख नही।ां जजस भर्र्ान आत्मा 'म'ैं की कृपा से, इस भ्रम का ननर्ारर् होता है,

चगररजा सोइ कृपाल रघुराई ।।

प्रश्न होता है, यह कैसा है -

आहद अन्द्त कोउ जासु ि पािा। मति अिुमाति तिगम अस गािा ।।

ई आहद, अन्द्त और मध्य से रहहत है।

र्ेद, र्ास्त्र, श्रुनत आहद भी जजसको नही ांजान सके, उन्द्होंने केर्ल अपना- अपना अनुमान ही बताया।

उसकी महहमा इस प्रकार है -

त्रबिुपद चलइ सुिइ त्रबिु कािा। कर त्रबिु करम करइ त्रबचध िािा।
आिि रहहि सकल रस भोगी। त्रबिु बािी बकिा ब़ जोगी ।।
िि त्रबिु परस ियि त्रबिु देखा। ग्रहइ घाि त्रबिु बास असेषा ।
अमस सब भााँति अलौफकक करिी। महहमा जासुजाइ िहहं ंबरिी ।।
दोहा-
जेहह इमम गावहहं ंबेद बुध जाहह धरहहं ंमुति ध्याि ।
सोइ दसरथ सुि भगि हहि कोसलपति भगिाि ।।118।।

राम सो परमिामा भिािी। िहूँ भ्रम अति अत्रबहहि िि बािी ।।

हे पार्तशी र्ही परमात्मा श्री रामचन्द्र जी हैं। उसमें फकसी भी प्रकार का भ्रम का होना अननष्टकारक है।

अस संसय आिि उर माहीं। ग्याि त्रबराग सकल गुि जाहीं।।

इसमें भ्रम जहााँ हुआ फक मनुष्य के ज्ञान, र्ैराग्य आहद सभी र्ुर् नष्ट हो जाते हैं।

सुति मसि के भ्रम भंजि बचिा। ममहटगै सब किुरक कै रचिा ।।
भइ रघुपति पद प्रीति र्पिर्ीी । दारि असंर्भिाा र्बिीी ।।

भर्ान कर्ीर के इन भ्रम नार्क र्चनों को सुनकर, माताजी के सब सर्ांय ना हो र्ये। उनके मन में जो असम्भार्ना र्ी फक -

जौं िृपृ र्िय ि ब्रह्म फकमम ।।

दर्र्र् सुत राम, कभी ब्रह्म हो ही नही ांसकते यह जाता रहा और भर्र्त चरर्े में उनकी दृढ़ ननष्ठा हो र्यी।

बस, यही ांपर र्कर्ी-र्ीता का उपसहांार है।

रामु अममि गिु सागर, थाह फक पिाइ कोइ ।
संन्दिह सि जस फकछु सिुेर्ूँ, िुम्हहहं ांसिुायर्ूँ सोइ ॥

॥ॐ श्री सदगुर दिेाय िमाः ।।

श्री रामचन्द्राय नमः

श्री र्ोस्र्ामी तुलसीदास कृत रामचररत मानस

बालकाण्डान्द्तर्तश

2. राम नाम महहमा

मूकं करोति ि ाचालं पंगु लंघयिे चगररम् ्।

यत्कृपिामहं बंदे परमिांद माधिम् ्।।

चौपाई -

बंदउूँ राम ि ाम रघुबर को । हेिु कृसिािु भािु हहमकर को ।

त्रबचध हररहर मय बेद प्राि सो । अगिु अिूपम गुि तिधाि से ।।

म ैंश्री रघुनार्जी के राम नाम की र्दंना करता हूँ फक जो कृर्ानु (अजग्न) भानु (सूय)श और हहमकर (चरांमा) का कारर् है तर्ा उनका र्जक्तदाता है। राम के प्रताप से ही ये तीनों तेजस्र्ी, प्रकार्र्न र् ज्योनतमाशन हुए हैं। राम नाम के एक-एक अिर से ये तीनों र्जक्त प्राप्त फकये हैं। यहद कृर्षानुमें से 'र', भानु में से 'अ' और हहमकर में से 'म' ननकाल मलया जाये तो तीनों 'र+ आ + म 'अर्ात्श ्राम ननकल जाने से र्े र्जक्तहीन और ननरर्कश हो जाते हैं। कृर्ानुमें से 'र' ननकल जानेसे कर्ानु रह जाता है, जो अजग्न का द्योतक न होने ेसे उष्र्ताहीन और जलाने की र्जक्त से रहहत है। भानु में से 'अ' ननकल जानेसे मसफश भनु रह जाता है, जो सूय शका प्रतीक न होनेसे प्रकार् देनेकी र्जक्त से रहहत हो जाता है। उसी प्रकार हहमकर में से 'म' के ननकल जानेपर केर्ल हहकर रह जाता है, जो चरांमा का प्रतीक न होने ेके कारर् र्ीतलता र् र्ानांत प्रदान नहीांकर सकता। इस तरह राम अजग्न, सूय शऔर चरांमा का कारर् है, प्रार् है, बीज है।

'तत्ममस' सामर्ेद का महार्ाक्य है जो जीर् र् ब्रह्म की एकता का समर्कश है। तत् ्त्र्म् ्का अर् शहै-र्ह तू है। तत् ्पदर्ाची रा और त्र्म् ्पदर्ाची म् ्का सयोर्ग होने से अमस पदर्ाची राम हो जाता है। अमस माने'है' होता है। इस तरह र्ह 'है' ही है जो राम है। 'है' अर्ात् श ्अजस्तत्र्, र्ही 'है', र्ही राम, अजग्न, सूय शर् चरांमा का कारर् है, बीज रूप है। र्ह प्रर्र् यानी ऊँ (ओांकार) का भी बीज है।

राम नाम के तीनों अिर र अ म िमर्ः कृर्ानु, भानुऔर हहमकर के बीजािर हैं, र अजग्न बीज है, अ भानुबीज और म चरांबीज है। जैसे अजग्न र्ुभार्ुभ र्स्तुओांको जलाकर भस्म कर देता है और कुछ र्स्तुओां का मल और दोर्ष जलाकर उनको स र्ुद्ध कर देता है, र्ैसे ही 'र' के उच्चारर् से मनुष्यों के र्ुभार्ुभ कमनशार् हो जाते हैं और मन का र्र्षयर्ासना रूपी मल जलकर भस्म हो जाता है। भानुबीज 'अ' र्ेदर्ास्त्रों के प्रकार्क है। जैसे सूय शअांकार को दूरू करके ससांार को प्रकार् देता है, र्ैसे ही 'अ' से अज्ञानरूपी अांिकार का नार् होकर ज्ञान

का प्रकार् होता है। चांरबीज में 'म' अमृत् से पररपूर् शहै। जैसे चरांमा ताप को हरता है और र्ीतलता प्रदान करता है, र्ैसे ही 'म' से हृदय में भजक्त का उदय होता है जो त्रिताप को हरता है तर्ा र्ीतलता और र्ानांत प्रदान करता है। सारार्ां, राम नाम के स्मरर् से र्ैराग्य, ज्ञान और भजक्त की प्राजप्त होती है। सब र्ुभार्ुभ कमों तर्ा अनतां जन्द्मों के पापों का नार् होता है, हृदय का अज्ञान रूपी अिंकार नष्ट होकर ज्ञान का प्रकार् होता है और तीनों तापों का नार् होकर परम र्ानांत प्राप्त होती है।

दूसूरा भार् यह है फक जर्त् ्प्रमसद् तीन राम हुए हैं- परर्ुराम, राम और बलरामा अजग्नर्ां् में परर्ुराम, सूयर्शर्ां में राम और चरार्ां में बलराम। यहद इन र्ीां में से राम ननकाल हदये जायेंतो ये र्ांर् भी अन्द्य र्ीां की भाँनत ख्यानतहीन हो जायर्ें और र्ेस्मृनत के र्त शमें डूब जायर्ें।

त्रबचध हररहर मय िदप्रा सो। अगिु अिूपम गिु तिधिा सो ।।

यह राम नाम ब्रह्मा, र्ष्र्ु और मर्् रूप है तर्ा र्ेदों का प्रार् ऊँ (ओकांार) है। फफर भी र्ह र्ुर्ों से रहहत र् अनुपमेय होनेके सार्-सार् र्ुर्ों का भण्डार है।

यह राम नाम कैसा है? यह 'र' यानन रकार से र्ंधिरूप अर्ात्श ्ब्रह्मारूप है, 'अ' यानन आकार से हररमय अर्ात्श ्र्ष्र्ुरूप है और म यानन मकार से हरमय अर्ात्श ्र्कांर रूप है। इस तरह राम ब्रह्मा, र्ष्र्ु और मर्रूप है। तात्पय,श भर्ान राम देर्ों के देर् और र्ेदों के प्रार् ऊँ (ओकांार) हैं। ओांकार के अउम में 'अ' हररर्ाचक, 'उ' र्ंधि र्ाचक और 'म' हरर्ाचक है। इस तरह ऊँ (ओकांार) भी र्ंधि-हरर-हर मय है। फफर यह राम का नाम तीनों र्ुर्ों से यानन सत्,् रज, तम से परे है। तीनों र्ुर्ों से रचा हुआ जो यह जर्त् ्प्रपांच है, उससे राम अमलप्त है, क्योंफक र्ह (राम) ननराकार है, ननर्र्कशार र् असर्ां है। फफर राम एक है, सत् ्धचत् ्आनदां है और मन, र्ार्ी, बुद्धि से परे है। मन र्ार्ी से परे होने के कारर् भर्ान राम अननर्चनशीय है, इसमलए उसकी उपमा फकसी से नहीां की जा सकती। र्ह सर्र्शा अनुपमेय है। तीनों र्ुर्ों से रहहत होते हुए भी भर्ाम राम के नाम का जप र् स्मरर् सब मसद्धियों का दाता है। इस तरह राम का नाम सब र्ुर्ों का भण्डार है। ससांार में ऐसी कोई र्स्तु नहीां जो राम नाम के प्रताप से प्राप्त न हो सके।

राम यह र्ेदों का प्रार् है, क्योंफक र्ेद का मूल जो ओकांार है, र्ह राम नाम से ही ननकला है। यर्ा -

स्िसिा में सोहम् ्हुआ, सोहम् ्में ओंकार ।
ओंकार से ररिाहुआ, साधो करो विचार ।।

ऊँ (ओम) र्दद आत्मा का बिोक है। ओकांार का अ उ म और मिाा अनुस्र्ार अजस्तत्र् का रूप राम का द्योतक है। यह अजस्तत्र् रूप राम अद्शिमिाा रूप से ननत्य जस्त है और उसका कभी नार् नहीां होता। उसे चाहे र्जक्त कहो, चाहे र्जक्त का आिार कहो, आत्मा कहो, चाहे राम कहो, चाहे जो कहो सब एक ही है। र्ह अद्शिमिाा र्ार्ी से परे है और र्ही ओकांार है, जो राम नाम से ननकला है।

महामंजिेई जपि महेसू । कासी मुकुति हेिु उपदेसू।।

भर्ान राम का नाम महामिां है, जो सब मिोंों में श्रेष्ठ है और जजसे र्कांर जी हमेर्ा जपते रहतेहैं। र्कांर जी द्वारा उस महामिां का उपदेर् कार्ी में मरनेर्ाले लोर्ों के मलए उनके मुजक्त का कारर् होता है।

कार्ी का अर् शहै-"कार्: ब्रह्मप्रकार्: यस्यांअर्स्र्ायांसा कार्ी।" अर्ाशत् ्जजस अर्स्र्ा में ब्रह्म का प्रकार् हो यानन आत्म अनुभर् हो, उसे कहतेहैं कार्ी। भार् यह है फक राम नाम के माध्यम से र्कांर जी कार्ी में ननर्ास करनेर्ाले लोर्ों को आत्मतत्त्र् का उपदेर् करते हैं और जब उन लोर्ों को आत्म अनुभर् हो जाता है, तब स्र्रूप में र्स्भोर रहने र्ाले प्रार्ी जीते जी मर कर मुक्त हो जाते हैं। जीर् भार् का अभार् होना और आत्म भार् का जार्तृ होना ही जीते जी मरना है। आत्म भार् के प्राप्त होने पर जीर् आर्ार्मन के चि से छुटकारा पा जाता है और यही उसका कार्ी में मुजक्त है।

महहमा जासु जाि गिराऊ । प्रथम पूस्जअि िाम प्रभाऊ ॥

उस राम नाम की महहमा को र्ीं के अधिपनत र्ेर्जी भली भाँनत जानते र्े और इसीमलए उस राम नाम के प्रभार् से र्े अग्रपूज्य हो र्ये और सब मार्ांमलक कायों में सब देर्ों की अपेक्षा उनकी पूजा सर्शप्रर्म होने लर्ी।

'र्ऊ' का अर् शहोता है र्ीं का राजा, र्ीं का पनत, र्ीं का ईर् अर्ाशत र्पनत या र्ेर्। 'र्' र्दद समूह का र्ाचक है। समूहों के रिक, समूहों के पालन करनेर्ाले परमात्मा को र्पनत कहते हैं। सम्पूर् श दृश्य मिा का जो अधिष्ठान है, इांहरय र्ीं का जो सचाांलक है, र्ही र्पनत है। इस प्रकार अजस्तत्र् रूप, सर्ाशिार सर्शव्यापक, देर्ाधिदेर्, परात्पर ब्रह्म भर्ान आत्मा राम ही र्ेर् या र्पनत है। मर्-पार्शती-पुि र्ेर्जी उन र्ाधिपनत देर्ाधिदेर् सनातन ब्रह्म भर्ान राम के प्रतीक हैं और चूँफक र्े राम की महहमा को जानते र्े, इसमलए उनके माध्यम से ऊ अनाहददेर् भर्ान राम का पूजन सर्मशर्ांल कायों के आरम्भ में सर्शप्रर्म फकया जाता है।

एक बार देर्ों में र्र्ाद खडा हो र्या फक सब में अग्रर्ण्य या अग्रपूज्य कौन है? ब्रह्माजी की सभा में सर्शसम्मनत से यह तय हुआ फक पृथ्र्ी की पूर् शपररिमा करनेजो सर्शप्रर्म आयेर्ा, र्ही सब में अग्रपूज्य होर्ा। सब देर्तार् अपने-अपनेर्ीघ्रर्ामी र्ाहनों पर चढ़कर दौड चले। र्ेर्जी का र्ाहन मूर्षक िीमी र्नत र्ाला र्ा और इसीमलए र्े सबसे पीछे रह र्ये। रास्ते में उनको नारद जी ममले। नारद जी के उपदेर् पर उनको राम की महहमा का ज्ञान हुआ और र्े राम का नाम पृथ्र्ी पर मलखकर उसकी प्रदक्षिर्ा कर सर्शप्रर्म ब्रह्माजी के पास पहुँच र्ये और इस कारर् र्े सबसे अग्रपूज्य बनाये र्ये। यह है राम के नाम की महहमा और र्ेर्जी के अग्रपूज्य होने का रहस्य।

श्रीर्रेर्जी के अग्रपूज्य होने का एक और महत्रपूर् शकारर् है। उनके श्री र्ग्रह का एक मुख्य भार् यानन मुख र्जमुख है जो एकिार परब्रह्म रूप ओकांार (ॐ) का ही प्रतीक है। उनके सूडां सहहत र्ज-आनन को देखकर (ॐ) ओकांार का स्पष्ट रूप से आभास ममलता है। ओकांार सृजृष्ट का आहदबीज और अव्यक्त परब्रह्म का व्यक्त स्रूप है। ओांकार और परब्रह्म का र्ाच्य-र्ाचक सम्बन्द् है। श्रीर्रेर्जी परन मर्ांल स्रूप सरि्शार आहददेर् ओकांार परब्रह्म ही हैं। रे् श्रीराम रूप ही हैं। अतः उनका सर्ाग्रश पूज्य होना उधचत एर् ांस्भार्क है और उनके र्मर्ष्ट अधिकार का मूल कारर् है।

जिा आहद कवि ाम प्रिापू। भयउ मसद्ध करर उल्टा जापू ।।

भर्ान राम के नाम के महत्र् को ऋर्ष प्रर आहद कर् र्ाल्मीफक जी जान र्य क्योंफक उस नाम के उल्टा जाप से भी रे् मसद्िा को प्राप्त हो र्ये।

र्ाल्मीफक जी राम नाम का जप ननरांतर, अटूट र्नत से करते रे्। जप अटूट होने से राम का उच्चारर् रा मरा मरा मरा मरा मरा म होने लर्ा। रे् जप में इतने तन्मय हो र्ये फक उन्द्हें फकसी बात की सुधि नहीांरही। उनकी मनोर्रूत्त सासांाररक र्र्षयों से उलट कर आजत्मक या ब्रह्ममय हो र्यी। ऋर्षराज ने नाम का जप सिाार् जीभ से न कर छोटी जीभ से, जो कांठ के भीतर रहती है और जजसको कौआ या अतांजीभी कहते हैं, फकया। फलस्रूप उनकी र्रूत्त सांसार से उलटकर तत्काल अतांमुखशी हो र्यी और रे् ननर्र्कशल्प अर्स्िा को प्राप्त हो र्ये। रे् जप में या तपस्या में इतने लर्लीन हो र्ये फक उन्द्हें तन-र्दन की सुधि नहीां रही और उनके र्रीर पर र्ल्मीक जम र्यी। उनकी दृजष्ट में ससांार रह ही नही ांर्या। उनके मलए सरि्श केर्ल आत्मा- राम ही र्ा, राम के अनतररक्त कही ांकुछ र्ा ही नही।ां इस प्रकार र्रूत्त को उलटकर जप करके र्ाल्मीफक जी मसद्ि हो र्ये तर्ा भूत भर्ष्य का ज्ञान, उनके मलए हस्तामलक र्त् हो र्या और उन्द्होंनेरामायर् के रचनाकार आहद कर् होने का यर्ोपाजनश फकया।

सहसिाम सम सुति मसि बािी। जवप जेईं वपय संग भिािी ।।
हरषेहिु हेरर हर ही को। फकय भूषि तिय भूषि ी को ।।
िाम प्रभाउ जाि मसि ीको । कालकूट िल दीन्द्ह अमी को ।।

भर्ान राम का नाम एक बार लेना र्ष्णु के सहस्र् बार नाम जपने के बराबर है-ऐसा मर्र्जी का र्चन सुनकर पार्तशी जी राम नाम जपकर महादेर्जी के सार् भोजन करनेबैठी। राम नाम के प्रनत पार्तशीजी की प्रीनत, ननष्ठा र् र्र्श्र्ास तर्ा अपनेर्चनों पर उनकी अटूट श्रद्िा दैखकर मर्र्जी ने उन्द्हें पनतव्रता जस्त्रयों में मर्रोमर् कर हदया और अपनेअर्ां का भी भूर्षर् अर्ाशत् अिांधर्नी बना हदया। राम नाम की महहमा को स्यां र्कांर जी अच्छी तरह से जानते हैं और उसी के प्रभार् से हलाहल भी उन्द्हें अमृत का सा फल हदया।

अब यहाँप्रश्न होता है फक र्र्ष क्योंकर अमृत तुल्य हुआ ? भर्ान मर् ननरांतर श्रीराम नाम का जप करते रहते हैं। जप में रे् इतने तल्लीन रहतेहैं फक उन्द्हें भर्ान राम के अनतररक्त कुछ दूसरा हदखता ही नही।ां रे्

सर्दशा ननर्र्कशल्पार्स्ा में अर्ात्श ्स्र्रूपस्् रहतेहैं। उनकी दृजष्ट में न तो ससांार है और न प्रपचां जननत कोई अन्द्य पदार्ा्श उनकी दृजष्ट में न तो र्र्ष है और न अमृत्। उनकी िारर्ा में सब कुछ राम है। अतः, जो पदार्् श

ससांार र्ालों की नजर में यानन जीर्ाहदयों की दृजष्ट में र्र्ष र्ा, ई र्कां र जी की दृजष्ट में राम र्ा, राम के अनतररक्त कुछ भी नही।ां राम अपना आप अपना स्र्रूप है। अपना स्र्रूप यानन स्र्-स्र्रूप फकसी को भी अहहतकारी न होता। ई सर्दशा सर्रूशपेर्् हहतकारी या कल्यार्कारी होता है। अतः, र्कां रजी क हलाहल र्र्ष भी अमृत् तुल्य फल हदया।

दोहा -

बरषा ररुिरघुपति भगति, िुलसी सामल सुदास ।

राम िाम बर बरि जुग, र्सिा भादि मास ।। 18।।

तुलसीदास जी कहते हैं फक श्री रघुनार्् जी की भजक्त तो र्र्षाश ऋतु है, श्रो भक्तजन िान की फसल हैं और राम के नाम के दोनों सुदांर अिर रा और म श्रार्ा और भादों महीनें हैं।

जजस तरह श्रार्् और भादों के महीनों में अच्छी र्र्षाशहोनेसे िान की फसल के बाढ़ अच्छी होती है, उसी तरह राम नाम के दोनों अिरों को अच्छी तरह से हृदयः िारर्् करनेसे यानन उनके ननरांतर जप से भक्तों के हृदय में भजक्त की र्रृद्धि होती और उनका सब प्रकार से कल्यार्् होता है। र्े ेकृतकृत्य हो जाते हैं।

आखर मधुर मिोहर दोऊ । बरि त्रबलोचि जि स्जय जोऊ ।

सुममरि सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक तिबाहू ।।

राम नाम के दोनों अिर 'र' और 'म' मिुर और मन के हरने र्ाले हैं, सब र्र्ों के नेि हैं अर्ात्श ्सब अिरों के ऊपर र्ोभायमान होते हैं तर्ा भक्तजनों के जीर्न और उनके हृदय को आलोफकत करते हैं। उनका स्मरर्् सब कोई सरलतापूर्कश क सकतेहैं, जो सबके मलए सुखदायक है और सब र्स्तुओांके देने र्ाले हैं। उनका ज इस लोक में तो लाभकारक है ही, परलोक को भी सुिारने ेर्ाला है अर्ात््श ्मिो क सुलभ कर देता है।

कहि र्सुि सुममरि सुहठ िीके । राम लखि सम वपय िुलसी के ।

बर्रि बरण प्रीति त्रबलगिी। ब्रह्म जिी सम सहज संघिी ॥

ये दोनों अिर 'र' और 'म' कहनेके मलए, सुनने ेमें तर्ा जप करने ेके मल अनत उत्तम हैं। राम र्दद का 'रा' राम-र्ाचक है और 'म' लक्ष्मर्् र्ाचक है। इसमल तुलसीदास के मलए राम और लक्ष्मर्् के समान प्यारे हैं। इन दोनों अिरों को पृर्क पृर्क र्् शका मानकर र्र्नश करने में दोनों का अलर्-अलर्् सांबिां प्रतीत होता परन्द्तु,ु यर्ार्् शमें ये दोनों ब्रह्म और जीर्् के सदृर्् एक हैं, अमभन्द्न हैं।

सरसरी तौर से ऊपर देखने पर 'र' और 'म' अलर्-अलर् र् शके प्रतीत होते हैं। 'र' य र् शऔर 'म' प र् श का है। 'र' मूद्शि सबांिाि है और 'म' औष्ठ सांबिाी। 'र' रै्राग्यर्ाची है और म भजक्तर्ाची है। पुनः इनके र्नश में न सर्ां है और न प्रीनत है। परन्द्तु, अर् शमें और लक्ष्य में सर्ां और प्रीनत दोनों है, क्योंफक 'रकार' ब्रह्म र्ाचक है और 'मकार' जीर् र्ाचक है। जजस प्रकार ब्रह्म और जीर् अलर्-अलर् न होकर एक ही हैं, उसी प्रकार 'र' और 'म' मभन्द्न-मभन्द्न न होकर एक भर्ान राम को ही इांधर्त करते हैं।

जीर् और ब्रह्म दोनों एक हैं, अमभन्द्न हैं। सनातन ब्रह्म भर्ान राम सत्य हैं, अखण्ड और अद्रै्त हैं। एक या अद्रै्त ई है, जजससे मभन्द्न कोई दूसूरा नहीां। एक ई है, जो सबका आिार है और जजसके त्रबना फकसी शन्द्य र्की यासोसि अधिक ामेंभेदोत्एकहै, सेएकधिंकनहीां। इस्मलए ब्रह्म (ईश्र्र) में कोई भेद नही, ाां ई अभेद रूप है। ब्रह्मा से आहद लेकर एक कर् पयन्द्शत सब ब्रह्म हैं, ब्रह्म से अमभन्द्न है। सारा चराचर ही ब्रह्म या ईश्र्र है। फफर जीर्, ब्रह्म से कैसे मभन्द्न होर्ा? इसमलए जीर् भी ब्रह्म है। जीर् र् ब्रह्म में कोई भेद नहीां, दोनों एक हैं, अमभन्द्न हैं। जो जीर् है र्ही ब्रह्म है और जो ब्रह्म है र्ही जीर् है। दोनों में स्र्ाभार्क एकता या अमभन्द्नता है।

रि ाायि सररस सुभ्रिाा। जग पालक त्रबसेवष िजिाा।
भगति सुतिय कल करि त्रबभूषण। जगहहि हिु त्रबमल त्रबधु ुपूषि।।

ये दोनों अिर 'र' और 'म' नर र् नारायर् के समान प्ेरेमी भाई के सदृर् हैं। ये ससाांर के पालन करनेर्ाले हैं तर्ा भक्तजनों के र्ेर्ेष रूप से रिक हैं। फफर ये दोनों अिर भजक्त रूपी सौभाग्यर्ती सुन्द्दर काममनी के कानों के आभूर्षर् हैं तर्ा ससाांर के कल्यार् के मूल कारर् र् ननमलश पूर् शचन्द्रमा के समान पोर्षक और र्ानांतदायक हैं।

स्र्ाद ोष सम सुगति सुधा के। कमठ सेष सम धर बसुधा के।
जि मि मंजु कंज मधुकर से। जीह जसोमति हरर हलधर से।।

फफर, ये दोनों अिर सद्र्नत के देनेर्ाले और अमृत के समान सतांोर्षप्रद तर्ा अमरता प्रदान करने ेर्ाले हैं। ये कच्छप (कछुर्ा) तर्ा र्ेर्ेषनार् के समान पृथ्र्ी को िारर् करनेर्ाले हैं। फफर ये सतांजनों के मन रूपी सुन्द्दर कमलों के मलए भौरों के समान हैं और जजह्वा रूपी यर्ोदा को श्रीकृष्र् र् बलराम के समान प्रय हैं।

जजस प्रकार अमृत अपनी अमरता प्रदान करने ेर्ाले र्ुर् के कारर् सर्शप्रय अपनी सतांोर्षदायक र् आनदांदायक स्र्ाद के मलए प्रसांनीय है, उसी प्रकार ' और 'म' ये दोनों अिर सब जीर्ों के अत्यतां प्रय, आनांद के दाता और सद्र्नत र्दाता हैं। जजस प्रकार पृथ्र्ी कच्छप और र्ेर्ेषनार् पर आिाररत है, उसी तरह या समस्त जर् प्रपचां रा + म अर्ात्श ्राम पर आिाररत है। राम ही समस्त चराचर क आिार है और उसका मूल कारर् है। जजस प्रकार रस के लोभी भौरे कमल के सुन्द्दा फूलों पर र्ुजांारते ेर् मडांराते रहतेहैं, उसी तरह T + 7 भक्तों के ननमलश मन रूप कमलों में सदा रमर् करते हैं। जजस प्रकार यर्ोदा मैया को कृष्र्चन्द्र जी औ बलराम जी अत्यतां प्रय र्े और र्े उनका नाम सदा ही मलया करती र्ी, उसी तरु 'रा' और 'म' यर्ोदारूपी जजह्वा के अत्यतां प्रय हैं और उसके

जररये सदा जपे जार हैं। जजस प्रकार एक बालक के त्रबना घर की र्ोभा नही,ां उसी तरह मुख रूपी घरः जजह्वा रूपी माता की र्ोद में 'रा' और 'म' रूपी बालक न हो, तो मुख रूपी घर के र्ोभा नही।ां जैसे, यर्ोदा मैया को श्रीकृष्र् और बलराम प्र्रय र्े,े र्ैसे ही भक्तों की जजह्वा को ये दोनों अिर अत्यांत प्र्रय हैं। यर्ोदा जी जैसे सदा उनके लालन-पाल में लर्ी रहती र्ी, र्ैसे ही भक्त जापक जन इन अिरों को सदा ध्यान में रखते हैं औ स्मरर् करते हैं ।।

एक छिु एकु मुकुटमति, सब बरिति पर जोउ ।
िुलिसी रघुबर िाम के, बरि त्रबराजि दोउ ।।

तुलसीदास जी कहते हैं फक राम नाम के दो अिरों में से रकार सब अिरों के ऊपर छि के समान और मकार मुकुट में मर्ि के समान अर्ात्श ्त्रबन्दु ुके रूपः र्ोमभत होतेहैं। िि और मर्ि जडडत मुकुट जजसके मसर पर होता है, र्ह राज कहलाता है। उसी तरह जो भक्त इन दोनों र्र्ों को अपनेहृदय के अन्द्र िारर् करते हैं, र्े भक्त मर्ोमर्ि कहलाते हैं। र्े जीर्ों की श्रेर्ी में न होकर राम (ब्रह्म) है हो जाते हैं। स्र्रहीन होने से 'र' और 'म' सब र्र्ों के ऊपर र्र्ाजते हैं। र्ैसे ही ज इनका अर्ात् श,् राम का अर्लम्बन लेते हैं, र्े भी (स्र्रहीन) श्र्ाँस रहहत होकर यान ननर्र्कशल्पता को प्राप्त कर सद्र्नत पाते हैं।

समुझि सररस िाम अर िामी, प्रीति परसपर प्रभु ुअिुगामी ।।
िामि रूप दुई ईस उपाधी । अकथ अिाहद सु सामुझझ साधी ।।

समझने ेमें नाम और नामी (नामिारी) एक समान हैं और उनका पारस्पररक प्र्ेम तर्ा सबांि स्र्ामी और सेर्क के सदृर् है। नाम और रूप दोनों ईश्र्र की उपाधि अर्ात्श ्माया हैं और इसीमलए अधिष्ठान आत्मा के सदृर् अकर् और अनाहद हैं तर्ा ननमलश र् जस्र् बुद्धि से समझने ेर् सिाने योग्य है।

नाम और नामी (नाम र्ाला) अलर्-अलर् नही ांहो सकते, दोनो एक ही हैं। जजस प्रकार पुरुर्ष से प्रकृनत मभन्द्न नहीां, स्र्भार्ी से स्र्भार् मभन्द्न नहीां, उसी प्रकार नामी से नाम मभन्द्न नही,ां दोनों एक ही हैं। अध्यस्र् अधिष्ठान के अनुरूप रहता है, र्ैसे ही नाम नामी के अनुरूप होता है। जो र्ुर्ु नामी में होतेहैं, र्े ही र्ुर्ु नाम में भी होतेहैं। भर्र्ान में अनन्द्त र्ुर्ु हैं और र्े सभी र्ुर्ु उनके नाम में भी हैं। नाम बीज है। बीज में फकतना बडा र्ृि समाया रहता है, र्ह बाद में तब दीखता है जब उस बीज से पेड तैयार होता है। जजस प्रकार बीज के अदांर सूक्ष्मानतसूक्ष्म रूप में र्पडां, डामलयाँ, पत्ते, फूल, फल आहद र्ि्यमान रहते हैं। उसी प्रकार नाम में भी भर्र्ान के समस्त र्ुर्ु र्ि्यमान रहते हैं। नाम नामी से अमभन्द्न है। नाम ही भर्र्ान है और भर्र्ान ही नाम है।

उपाधि कहते ेहैं उपनाम को, जो फकसी भी व्यजक्त के व्यजक्तत्र् को ढाँकता है। जजसको जो ढाँके र्ही उसकी उपाधि है। जजस प्रकार उपाधि व्यजक्तत्र् को ढाँकती है, उसी प्रकार नाम और रूप भर्र्ान के भर्र्ानपने को ढाँकते हैं, इसमलए ये भर्र्ान की उपाधि हैं, भर्र्ान की माया हैं। भर्र्ान की उपाधि है माया और भर्र्ान है

'म'ैं आत्मा। अपनेआप में आत्मा को कुछ मान लेनेसे 'म'ैं आत्मा उस मान्द्यता रूपी झाडी में नछप जाता है। यही भर्ान के भर्ान पनेका ढक्कन है। मान्द्यता का त्यार् यानन आत्म-ज्ञान की प्राजप्त, स्र्रूप का बोि, मायापनत भर्ान आत्मा 'राम' का ज्ञान, यही मान्द्यता रूपी ढक्कन का उिरना है और माया का सिाना है। माया का आिार मायापनत को पहहचानना ही माया का समझना है तर्ा माया से तरना है।

प्रत्येक स्र्तु में अजस्त, 'भाँनत' प्रिय नाम और रूप से पाँच अांर् र्द्यमान रहते हैं। अजस्त माने हैं अजस्तत्र् अर्ाशत् ्सत्।् भानत मानेभासता है अर्ात्श ्जो चेतन है, धचत् ्है। प्रिय माने आनांद, आनन्द्दायक, आनदांस्र्रूप। अजस्त भाँनत और प्रिय ये तीन भर्ान आत्मा के बोिक हैं और नाम तर्ा रूप माया के द्योतक हैं। उदाहरर् के मलए डडांा लीजजये। डडांा का अजस्तत्र् लकडी है, डडांा में जो भासता है र्ह लकडी है और डडांा में जो प्रियता है र्ह लकडी की है। उसी तरह र्रीर को लीजजये। र्रीर का जो अजस्तत्र् है यानन 'है' पना है, र्ह पचांमहाभूतों का है और पचां महाभूत सब भर्ान आत्मा पर आिाररत है। देह का जो भानतपना है र्ह चेतन का है यानन ' आत्मा का है। देह की जो प्रियता है, उसमें जो आनांद है, र्ह आनांद-स्र्रूप 'b आत्मा का है। इसमलए र्रीर नाम की कोई स्र्तुही नही ांहै, जो कुछ र्रीर रूप हदखाई दे रहा है, र्ह 'म'ैं आत्मा ही है। 'म ैंर्रीर हैं' - ऐसा जो कहा जाता है, र्ह र्रीर को मान कर कहा जाता है, जानकर नही।ां यहद र्रीर को जानने े(जाँचने चलो, तो देह ममलता ही नही।ां जो ममलता है र्ह है भर्ान आत्मा 'म'ै। अर्ात्श ्सर कुछ एक कर् से लेकर ब्रह्मा पयन्द्शत समस्त चराचर भर्ान आत्मा राम है। भर्ान आत्मा राम के अनतररक्त कही ांकुछ है ही नही।ां

जर्त् ्प्रपचां के अदांर जो कुछ भी दृजष्टर्ोचर होता है र्ह सब मान्द्यता है। र्ह मुड आत्मा को कुछ मानने पर ही हदखाई देता है और उसकी पहहचान के मलए उसक कुछ न कुछ नाम और रूप रहता है। अतः नाम और रूप र्ंकल्प हैं, मान्द्यता है माया है यहद अजस्त भाँनत प्रिय न हो तो नाम और रूप का आिार कौन होर्ा अजस्त, भानत, प्रिय ही नाम रूप का आिार है। अजस्त अर्ात्श ्अजस्तत्र् ही भासता है और अजस्तत्र् ही प्रिय है। अजस्त यानन जो 'है' है, र्ह सत् ्है र्ही भासता है औ इसमलए र्ह चेतन है। चूँफक र्ह प्रिय है, इसमलए र्ह आनदांस्र्रूप है। अतः जो 'है है, जो अजस्तत्र् है र्ही सत् ्है, धचत् ्है, आनांद है। उसका न नाम है और न रूप है। र्ह भास ही भास है, र्ह अकर् है। जहाँ 'क्या' का र्ंकल्प हुआ फक नाम और रू: पैदा हो र्ये और माया बीच में आ घुसी। यही नाम रूप माया है, सीता है। यही माया भर्ान की उपाधि है जो भर्ान को ढाँकती है।

यह माया कब से है? माया तब से है जब से भर्ान है, क्योंफक र्ह पुरुर्ष ई प्रकृनत है और भर्ान कब से है? जब से माया है, क्योंफक दोनों अमभन्द्न हैं ईश्र्र है माया है और माया ही ईश्र्र है। भर्ान कैसे माया हो सकता है? मान्द्यता ही क नाम माया है। जब भर्ान आत्मा को कुछ माना जाता है, तब र्ही मान्द्यता माय कहलाती है। इसमलए भर्ान ही माया है। कहूँ तो भर्ान नहींऔर न कहूँ तो माय नहीं, क्योंफक भर्ान अकर् है, मन र्ार्ी से परे है। जजसको आत्म ज्ञान हो र्या है जजसको स्र्रूप का ज्ञान हो र्या है, र्ही जानता है फक आत्मा अकर् है, अनाहद है अनांत है। इसमलए र्ही आत्मज्ञानी जानता है फक यह नाम रूप र्ाला जर्त् ्प्रपचां में अपनेअधिष्ठान आत्मा के अनुरूप अकर् और अनाहद है। कोई नहीं जानता फकया प्रपचां कब पैदा हुआ, कैसे पैदा हुआ र् फकससे

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 93 पैदा हुआ। जजसने भी देखा और जर भी देखा, उसे उसी प्रकार उसी रूप में देखा। चूँफक यह

प्रपचां भर्ग्न अर्ग्

आत्मा राम पर आिाररत है और उससे अमभन्द्न है, इसमलये यह भी भर्ग्न आत्मा के सदृर् अकर् और अनाहद है।

माया या प्रकृनत भर्ग्न का स्र्भार् है। स्र्भार्, स्र्भार्ी से मभन्द्न नहीांहोता। जब माया भर्ग्न से अमभन्द्न है, तब र्ह भी भर्ग्न के समान अकर् और अनाहद है। यद्यर्प भर्ग्न अनतां है, अर्र्नार्ी है, परन्द्तु माया अनतां र् अर्र्नार्ी नही ांहै। माया जजस अधिष्ठान आत्मा में कजल्पत है, उस सनातन ब्रह्म भर्ग्न राम का बोि या अनुभर् हो जानेपर माया का अतां हो जाता है। माया की प्रतीनत अज्ञान की हालत में होती है और तब होती है जब उसे उसके अधिष्ठान भर्ग्न आत्मा, राम से मभन्द्न माना जाता है।

जब अधिष्ठान का ज्ञान हो जाता है, तब माया का भी अतां हो जाता है। यहद उपाधि न हो, तो ननरूपाधि भर्ग्न आत्मा को जानने की इच्छा कौन करेर्ा? नाम रूप उपाधि भर्ग्न आत्मा को नछपाने की झाडी है और उस उपाधि के ही कारर् सनातन ब्रह्म राम को देखने के मलए जीर् को जजज्ञासा होती है। जब स्र्रूप का दर्नश हो जाता है तब जीर्, ब्रह्म सुख का, आत्मानदां का, अनुभर् करता है। जजसने मायापनत भर्ग्न आत्मा, राम को जान या पहहचान मलया है, जजसने स्र्रूप का अनुभर् कर मलया है, उसी ने प्रबला माया को जीत मलया है। यह बलर्ती माया सबसे नहीां जीती। उसे जीतने के मलए मायापनत भर्ग्न आत्मा राम 'म' ैं के स्र्रूप का ज्ञान होना अननर्ायश है।

को ब़ छोट कहि अपराधू । सुति गुि भेद समुझझहहहं ंसाधू ।
देझखअहहं ंरूप िाम आधीिा । रूप ग्याि िहहं ंिाम त्रबहीिा ।।

नाम और रूप में कौन बडा है और कौन छोटा है, यह कहते नही ांबनता। फकसी एक को बडा कहना या छोटा कहना र्लत होर्ा। सािुजन उनके र्ुर्ों का भेद सुनकर उनके बडप्पन या छुटपन को खुद ही समझ जायर्ें। रूप नाम के अिीन है, ऐसा देखा जाता है, क्योंफक त्रबना नाम के रूप का यर्ार्् शज्ञान नही ांहोता।

भूल से मनुष्य नाम और नामी को दो मभन्द्न र्स्तु मान लेते हैं। कोई नाम को नामी से छोटा और कोई नामी को नाम से छोटा कहतेहैं। नाम और नामी में छोटे-बडे ेका र्र्चार अनुधचत है। नामी अपने नाम से ही जाना जाता है। नाम के त्रबना नामी की पहहचान नही ांहो सकती। हीरा हार् में है और उसके मूल्य की कल्पना भी है, परन्द्तु जब तक उसकी पहहचान नहीां है, हार् में आया हुआ हीरा भी काँच ही समझा जाता है और मनुष्य उसकी कदर नहीांकरता। पहहचान लेनेपर, नाम जान लेनेपर र्स्तु का मूल्य बढ़ जाता है। इस तरह नाम की महहमा अपार है। भर्ग्न का नाम भर्ग्न की ही तरह चेतन है और उसकी र्जक्त भी असीम है। चूँफक नाम और नामी में कोई भेद नहीां है, इसमलए नाम और रूप को एक-दूसूरे से छोटा अर्ा् बडा कहना बहुत र्लत होर्ा।

रूप त्रबसेष िाम त्रबिु जािें। करतल गत ि परहहं ंपहहचािें।
सुममररअ िाम रूप त्रबिु देखें। आित हृदय सिेह बिसेषें ।।

त्रबना नाम के जानेहर्ेली पर रखे हुए पदार् शकी र्र्ेषता अर्ा महत्ता नहीां जानी जाती। नाम जान लेने पर यानन पदार् शकी सही पहहचान हो जानेपर र्स्तु की उपयोधर्ता अर्ा अनुपयोधर्ता की सही कीमत आँकी जा सकती है, परन्द्तु नाम जान लेनेपर उस पदार् शके रूप को देखे त्रबना भी नामी के मलए हृदय में र्र्ेष प्ेरेम अर्ा आकर्षर्श पैदा हो जाता है। त्रबना रूप को प्रत्यि देखे नाम के बार-बार स्मरर् से नामी के प्रनत र्र्ेष अनुरार् उत्पन्द्न हो जाता है।

ामि रूप गति अकथ कहिाी। समुझि सुखद ि परति बखिाी ।
अगिु सगिु त्रबच िाम सुसाखी । उभय प्रबोधक चिुर दुभाषी ॥

नाम और रूप अर्ात्श ्माया की र्नत या महहमा अकर्नीय है। यद्यर्प समझ जानेपर यह सुख की देने र्ाली है, परन्द्तुउस सुख का बखान नही ांफकया जा सकता, क्योंफक ई र्ार्ी से परे है। ननर्ुर्श ब्रह्म और सर्ुर् भर्र्ान के बीच नाम ही एक सच्चा सािी या मध्यस्र् के रूप में है, जो एक चतुर दुभार्षये के समान दोनों का सम्यक प्रकार से ज्ञान अर्ा समाान करता है।

माया की र्नत या माया की महहमा अपरांपार है, क्योंफक उसका अधिष्ठान भर्र्ान आत्मा की महहमा अननर्चनशीय है। भर्र्ान की महहमा का ज्ञान हो जानेपर माया की असत्यता का भी बोि हो जाता है और यह भर्र्ान के नाम के स्मरर् से सुर्म हे जाता है। जजस प्रकार एक चतुर दूभार्षया या दलाल खरीददार और बेचनदार दोनो को ममलाकर दोनों का काय शकरा देता है, उसी तरह नाम रूपी दलाल जापक की भार्ना के अनुसार सर्ुर् ईश्र्र का भी दर्नश कराता है और ननर्ुर्श ब्रह्म का भी बोि कराता है।

मान्द्यता का ही नाम माया है। कौन मानता है और फकसको मानता है? .... यह जान लेनेपर ई सुखदायक है, परन्द्तु उसका ननर्यश नही ांफकया जा सकता। 'म'ैंने पहले अपनेआपको जीर् की कल्पना फकया। यही कल्पना माया है और यह भर्र्ान के नछपनेकी झाडी है। जब यह मान्द्यता हट र्यी और मायापनत का ज्ञान हो र्या, तब जजसका दर्नश होता है ई भर्र्ान आत्मा 'म'ैं राम ही है। उस भर्र्ान राम के नाम की महहमा अकर् है और रूप भी अकर्नीय है। नाम पहहले मलया जाता है। नाम लेकर पुकारने पर नामी प्रकट होता है और तब उसके रूप का दर्नश होता है। बार-बार नाम लेकर पुकारने ेसे नामी को बरबस आना पडता है और पुकारने ेर्ाले की ओर ध्यान देना पडता है। जजस प्रकार एक अबोि बालक रोकर अपनी माँ को पुकारता है और जब र्ोडे ेरोने पर भी नहीां आती, तब जोर-जोर से और लर्ातार रो-रोकर पुकारता है और तब माँ को सब काम छोडकर दौडकर बच्चे की ओर ध्यान देने के मलए बरबस ही आना पडता है, उसी तरह बार-बार नाम जपनेसे भर्र्ान को अपनेजापक भक्त की पुकार पर ध्यान देना ही पडता है और दौडकर आना ही पडता है। इसमलए नाम की महहमा अकर्नीय है।

अपनेइष्ट के नाम का जप चार प्रकार से फकया जाता है। मुँह से जो जप फकया जाता है उसे बैखरी र्ार्ी कहते हैं। उससे अन्द्तःकरर् र्ुद्ि होता है और मन का मैल दूरू हो जाता है। र्ैखरी र्ार्ी द्र्ारा फकया र्या जप भी

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 95 दो प्रकार का होता है, एक सिाारर् और दूसूरा प्रारुां। सिाारर् जप में र्दद जापक के कान में पडता है, परन्द्तु प्राांरु

जप में र्दद इतने िीमे से होतेहैं फक जापक को भी सुनाई नही ांपडते। कांठ से जो जप फकया जाता है, उसे मध्यमा र्ारृ्ी कहते हैं। ई जप स्र्प्नार्स्र्ा में होता है और उससे र्ीपि दूरू होता है। हृदय से जो जप फकया जाता है उसे पश्यताी र्ारृ्ी कहते ेहैं और ई सुर्षुजप्त अर्स्र्ा में होता है। इससे हृदय पर का आर्रर् दूरू होता है। नामभ से जप होता है उसे परार्ारृ्ी कहते ेहैं और ई तुरीयार्स्र्ा का द्योतक है। इन सभी जापों में मन से जो मानमसक जप फकया जाता है, उसका महत्र् अत्यधिक है, क्योंफक उससे जापक का मन ननर्र्कशल्प हो जाता है। इसमलए नाम की महहमा अकर्नीय है।

श्री र्ष्रृु, ब्रह्मा, कांर, र्जक्त, राम, कृष्र्, दत्तोये, र्ेर्र् आहद देर्ताओां में जो भी अपना इष्ट हो और जजनकी उपासना की जाती है, र्े सब भर्ार्न की श्रेर्ेर्ी में आते हैं और उनके आर्े भर्ार्न की उपाधि लर्ायी जाती है। जैसे-भर्ार्न राम, भर्ार्न कृष्र्, भर्ार्न र्ेर्र् इत्याहद। अपनेइष्ट भर्ार्न की मूनत शको हृदय देर् में अफांकत करके उसकी मानमसक पूजा करे। मानमसक पूजा करने ेके बाद फफर सब अांर्ों का यानन आठों अर्ांों का अर्ात्श ्चरर्, नामभ, हृदय, कांठ, ग्रीर्ा, मुख, नामसका भृकुटी का एक के बाद एक ध्यान करें। चरर् के ध्यान से रुरू करके भृकुटी में अतां करें। ध्यान इतना र्हरा हो फक जजस-जजस अर्ां का ध्यान फकया जाये र्ह अांर् ध्याता के मानस पटल पर ननरांतर अफांकत हो। जब आर्खरी ध्यान भृकुटी में केजन्द्रत होता है, तब ध्याता को इष्ट का कोई भी अर्ां हदखलाई नहीांपडता। र्ह सर्शा ननर्र्कशल्प हो जाता है, त्रिपुटी का लोप हो जाता है और ध्याता को अपना ही स्र्रूप हदखाई देता है। सबका लोप होने ेपर देखने र्ाला स्र्यांरह जाता है, इसमलए नाम और रूप की कहानी अकर् है।

प्रबोि तीन प्रकार से होता है, भार्ना, र्र्चार और जजज्ञासा। हृदय में सर्ुर् मूनत शकी भार्ना करके इष्ट के नाम का जप फकया जाये तो र्ह नाम का जप सर्ुर् का बोि कराता है। हृदय में र्र्चार करते हुए फक मैंकौन हूँ, कहाँ ँसे आया हूँ, कहाँ ँको जाऊँर्ा, मेरा क्या अतां होर्ा आहद पर र्र्चार करते हुए इष्ट के नाम का जप फकया जाता है तो र्ह नाम जप ननर्ुर्श ब्रह्म का बोि कराता है और जब हृदय में ब्रह्म को जानने की जजज्ञासा लेकर नाम का जप फकया जाता है, तब आत्म-तत्र् का आत्म स्र्रूप का दर्नश होता है। क्योंफक, इष्ट के नाम का जप सर्ुर् और ननर्ुर्श ब्रह्म का यानन जजसकी जो िारर्ा होती है उसका दर्नश कराता है, इसमलए नाम ही ऐसा सफल दलाल है जो दोनों को यानन जापक और इष्ट को ममला देता है। इसमलए नाम और रूप की महहमा अकर्नीय है। फकसी सतां ने र्र्चार के बारे में कहा है -

को मैं आयों कहाँ, फिकि जैहौं का सार ।।
को मैं िीजि को वपिा, याको कहि विचार ।।

इस पर र्हराई से र्र्चार करने पर ही मनुष्य जन्द्म सार्कश होता है।

दोहा-

राम ाम मति दीप घर, जीह देहरी द्वार ।।

तुलिसी भिीर बाहरहुँ, जौं चाहमस उस्जयार ||21||

तुलसीदास जी कहते हैं फक यहद तुम इस र्रीर रूपी मकान के भीतर और बाहर उजेला (ज्ञान का प्रकार्) चाहते हो, तो जजह्वा रूपी द्वार पर राम नाम रूपी मर् का दीपक रखो । र्रीर एक महांदर है जजसमें भर्ान 'आत्मा' राम स्र्ाप्रपत है। यहद उस भर्न के

भीतर और बाहर प्रकार् करना चाहो, तो जीभ रूपी द्वार पर राम नाम रूपी मर् का दीपक रखो। देहरी पर दीया रखने से भीतर और बाहर दोनों तरफ उजाला होता है। मर् दीपक रखने का भार् यह है फक र्ह ननरांतर प्रकामर्त रहता है और पर्न के झोकों से (र्र्षय रूपी पर्न के झोंके से) बुझता नही,ां जबफक सिान जन्य दीपक हर्ा के झोकों से बुझ जाता है। राम का नाम मर् दीपक है, जजसे जजह्वा रुपी द्वार पर रखनेसे भीतर और बाहर, जहाँ ँदोनों ओर अिंकार रहता है, प्रकार् होता है।

भीतर का अिंकारक्या है और बाहर का अांिकार क्या है? भीतर अिंरा रहने ेसे यानन हृदय में अज्ञान का अिंकार रहने से जीर् अपने आपको जैसा है, र्ैसा न जानकर, भर्ान 'आत्मा' राम न जानकर जीर् मानता है और बाहर के अिंकार के कारर् अज्ञाननयों को भर्ान 'आत्मा' राम अपना स्र्रूप न भासकर ससांार हदखाई देता है।

देहरी के भीतर दीपक रखने से बाहर का अांिकार और द्वार के बाहर दीया रखने से घर के भीतर का अिंरा दूरू नहीं हो सकता, इसमलए राम नाम रूपी मर् दीपक को ऐसी जर्ह रखना चाहहए (जीभ रूपी देहरी पर) जजससे भीतर और बाहर दोनों तरफ का अिंकार एक सार् समान रूप से दूरू हो जाये।

राम नाम रूपी मर् दीपक को जजह्वा रूपी द्वार पर फकस प्रकार रखना चाहहए? र्ले के भीतर कांठ में एक छोटी-सी जीभ है, जजसे कौआ या पडजीभ भी कहतेहैं। उस अन्द्तजजह्शर्ा से राम नाम का ननरांतर जप करनेसे सािक तत्काल ननर्र्कशल्पार्स्र्ा को प्राप्त हो जाता है और उसका जीर् भार् अर्र्ा देह भार् अर्र्ा जर्त् ्भार् अर्र्ा अन्द्य सभी भार्ों का अभार् हो जाता है। उसमें केर्ल 'यार्ानहम्' ् - म ैंजैसा हूँ-यही भार् रह जाता है। इसतरह अन्द्तजजह्शर्ा से राम नाम का जप करने ेसे जापक जब समाधिस्र् हो जाता है तो उसके समस्त र्र्कल्पों का अभार् हो जाता है। समस्त र्र्कल्पों का अभार् होना ही भीतर और बाहर का प्रकामर्त होना है। भीतर ज्ञान के प्रकार् में हृदय में अनाहद काल से जो जीर् भार् बना हुआ है, उसका नार् होकर आत्म भार् का उदय होता है और र्ुद्धि सत्य स्र्रूप भर्ान 'आत्मा' राम का दर्नश होता है। स्र्-स्र्रूप के दर्नश से अनुभर् होता है फक सारा चराचर मेरा स्र्रूप है और मेरे अनतररक्त कही ांकुछ है ही नही,ां केर्ल मैं अजस्तत्र् अर्ात्श ्में आत्मा र्र्ेर्ष हूँ। बाहर प्रकार् होनेपर जजसे हम अज्ञान के अिंकार में जर्त् ्मानतेर्े, उसका अभार् हो जाता है और सब कुछ राम ही राम भासता है। इस तरह जो राम नाम रूपी मर् दीप को अन्द्तजजव्शहा रूपी देहरी (द्वार) पर रखता है, र्ह सब

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 97 भार्ों का (याnन जीर् भार्, जर्त् ्भार् र् अन्द्य सब भार्) अभार् करके स्-रूरूप भर्ान 'आत्मा' रूप का दर्नश
करता है और ब्रह्म सुख का अनुभर् करता है।

ाम जीहूँ जवप जागहहं ंजोगी। त्रबरति त्रबरंचच प्रपंच त्रबयोगी।
ब्रह्म सुखहहं ंअिुभिहहं ंअूिपा। अकथ अिामय िाम ि रूपा ।।

र्ैबीतरार् योर्ी ब्रह्म रधचत ससांार को सर्शा त्यार् चुके होतेहैं और जो जीभ से भर्ान राम के नाम का जाप करते हैं, ब्रह्म सुख का अनुभर् करते हुए मोह ननर्ा में याnन अर्द्या रूपी रात्रि में जार्ते हैं, उस ब्रह्म सुख या आत्मानन्द्द का अनुभर् ऐसा र्कार रहहत है, ऐसा अर्नशीय है फक जजसकी कोई उपमा नही,ां उसका न कोई नाम हदया जा सकता है और न उसका रूप या आकार प्रकार कर्न फकया जा सकता है।

राम के नाम का र्ह जप जजससे आत्म सुख का अनुभर् होता है, फकस प्रकार फकया जाता है? कांठ के भीतर जो अन्द्तजजह्शर्ा है, जजसे कौआ या काकल जजह्वा भी कहतेहैं, उससे राम का नाम जप करनेसे मन अर्लम्ब ननर्कशल्प हो जाता है और उसे ससांार के अजस्तत्र् का कुछ भी ज्ञान नही ांहोता। उस ननर्कशल्पार्स्र्ा में र्ह उस आत्म सुख का अनुभर् करता है जो सर्शा र्नशातीत है तर्ा उपमा रहहत है। अन्द्तजीभ से नाम जपने से सब प्रपचां का एर् ांसब भार्ों का अभार् हो जाता है। जीर् भार् तर्ा जर्त् ्भार् सब खत्म हो जाते हैं। भीतर प्रकार् होने से जीर् भार् दूरू हो जाता है और बाहर प्रकार् होने से जर्त् ्भार् नतरोहहत हो जाता है। भीतर बाहर दोनों ओर प्रकार् होने ेसे जर्त् ्भार् नतरोहहत हो जाता है। भीतर बाहर दोनों ओर प्रकार् होने ेसे जापक ननर्कशल्पार्र्ा का, ब्रह्मानदां का अनुभर् करता है और यही योर्ी का अर्द्यारूपी रात्रि में जार्ना है। ऐसे र्ैराग्यर्ान योर्ी की दृजष्ट में मसर्ाय भर्ान 'आत्मा' राम के दूसूरे का अजस्तत्र् ही नहीं रहता, उसके मलए नाम रूपात्मक जर्त् ्प्रपचां का सर्शा अभार् हो जाता है और र्ही उसका मोह ननर्ा में जार्ना है। जीर् भार् और जर्त् ्भार्, दोनों भार्ों का अभार् ही र्ह ब्रह्म सुख है, र्ह आत्मानन्द्द है जजसकी कोई उपमा नही ांऔर जो र्ार्ी के र्नश से परे है।

राम नाम रूपी मर्र् दीप को अन्द्तजीभ रूपी देहरी पर रखनेसे म ैंक्या र्ा, म ैंक्या हूँ, म ैंक्या रहूँर्ा। म ैंक्या र्ा, अब म ैंकैसा हूँ और आर्े कैसा रहूँर्ा आहद सब प्रकार के भार् दूरू हो जाते हैं और स्ाभार्क ननर्कशल्पता आ जाती है। यही अनुपमेर् ब्रह्म सुख है, जजसका अनुभर् जापक को होता है। सार्ारर् बोलचाल की जीभ से राम नाम का जप करनेपर न तो जीर् भार् दूरू होता है और न जर्त् ्भार् का नार् होता है, ये दोनों भार् बनेही रहतेहैं, परन्द्तु कौआ से जब यह नाम जपा जाता है तब सब भार् लुप्त हो जाते हैं और स्ाभार्क ननर्कशल्पता आ जाती है। में ब्रह्म है म ैंआत्मा हूँ, म ैंसार्ी हूँ आहद सब भार् अांकार के द्योतक है, परन्द्तु देहरी पर दीपक रखते ही सब भार् तुरांत भार् जाते हैं और आत्म सुख का अनुभर् होने ेलर्ता है। जजस अर्स्ा में समस्त भार्ों का अभार् होता है, र्ही योर्ी का मोह ननर्ा में जार्ना है और र्ही ब्रह्म सुख है, जजससे फकसी प्रकार का सुख र् दुुःख का अनुभर् नही ांहोता और जो सर्शा अनुपमेय है। सुख-दुुःख तो मन के र्र्षय हैं, परन्द्तु ब्रह्म सुख तो इजन्द्रयों से परे, मन से परे, स्-रूरूप भर्ान आत्मा ही है, र्हाँसुख- दुुःख को कहाँ ँस्ान?

आनन्द मुझ आत्मा का एक दृश्य है म ैंउसे देखता हूँ, उसे अनुभर् करता हूँ। उसी तरह समाधि भी मुझ आत्मा का एक दृश्य है, जजसे म ैंजानता हूँ। धचत्त की चचांलता में जो दृश्य प्रतीत होता है र्ह बाहर का दृश्य है और धचत्त की एकाग्रता में जो दृश्य प्रतीत होता है र्ह भीतर का दृश्य है। स्र्ाभार्र्क ननर्र्कशल्पता ही योधर्यों की योर् ननरा है। जजस आनन्द का अनुभर् म ैंइजन्द्रयों के द्र्ारा करता हूँ, र्ह रृ्त्त जन्य अर्ा् िर्र्क आनन्द है। उससे इजन्द्रयजन्य सुख ममलता है। ब्रह्म सुख अर्ा् आत्मानदां र्ह सुख है जो धचत्त की जस्र्रता और धचत्त की चचांलता से सर्र्ा असांबधांति है और सदा एक रस रहता है। र्ह अपना स्र्रूप ही है। र्ार्ी उस सुख अर्ा् आनदां का र्र्नश नही ांकर सकती, इसमलए उसकी उपमा फकसी से नही ांदी जा सकती। र्ह अनुपमेय है। र्ह सुख-दु:ख से परे सब र्र्कारों से रहहत है। उपमा उस चीज की दी जाती है, जो मन र्ार्ी का र्र्षय है, जहाँ ँमन र्ार्ी की पहुँच है। जो सुख सापेि (दु:ख की अपेिा से) होता है, र्ार्ी उसी का र्र्नश करती है, परन्द्तु जो सुख अपेिा रहहत होता है, जो सुख-दु:ख से परे होता है, जो मन र्ार्ी की पहुँच से बाहर है, र्ार्ी उसे कैसे र्र्नश कर सकती है? इसमलए र्ह अकर् है।

सामान्य सुख जो हर्ष-शर्र्षाद से परे है, र्ही ब्रह्म सुख है। र्ह इतना प्रर्ातां महासार्र है फक उसमें न कहीां कोई तरांर् है और न कहीांकोई ज्र्ारभाटा है। र्र्कल्प ही तरांर् है और सांकल्प ही ज्र्ारभाटा है। सकांल्प-र्र्कल्प रूपी ज्र्ारभाटा एर् ांतरांर् से रहहत ब्रह्मानन्द महान प्रर्ातां सार्र है। र्ह आत्म सुख इतना मनमोहक प सुदांर है फक कश्मीर भी उसके सामने कुछ नहीां र्ह इतना र्ीतल है फक हहमालय भी उसकी अपेिा उष्र् है। र्ह इतना ऊँचा है फक सुमेरु भी उसकी तुलना में नीचा है और र्ह करोडों चन्द्रमा की अपेिा अधिक र्ानांतदायक है। उस ब्रह्म सुख के अनुभर् काल में मुझ आत्मा के अनतररक्त कहीां कुछ नहीांरहता, केर्ल 'म'ैं ही 'म'ैं रहता हूँ। यही आत्म-दर्नश है और यही आत्मानन्द है, जजसकी कोई उपमा नही।ां

सुख अर्ात्श ्सु + ख। सु माने सुन्दर और ख मानेआकार्। इसीमलए सुन्दर आकार् ही सुख स्र्रूप है। आकार् का जो आकार् र्ही सुन्दर आकार् है, सुब स्र्रूप है, ब्रह्मानन्द है। आकार्र्ार्ी मर्य है, मन मर्य है, बुद्धिमर्य है, कर्नीय है, परन्द्तु जो आकार् का आकार् है, जो ब्रह्म सुख है, र्ह मन अर्ा् र्ार्ी अर्ा् बुद्धि से परे है, इसमलए र्ह अकर् है। जो ब्रह्म सुख आत्मज्ञानी, बिोर्ान पुरुर्ष जो अननर्चशनीय आनन्द का दाता है हाँनाम या रूप अर्ा् माया या ससांार फकसी की र्ुांजाइर् नहीां। र्ह सर् शसे परे है, इसमलए अकर् है। इसमलए जो ब्रह्म सुख का अनुभर् करना चाहे र्ह राम नाम रूपी मर्र्दीप को अन्द्तजजह्शर्ा रूपी देहरी (द्र्ार) पर रखे

जािा चहहहं ंगूढ़ गति जेऊ । िाम जीहूँ जवप जािहहं ंिेऊ ।
साधक िाम जपहहं ंलय लाएँ। होहहं ंमसद्ध अतिमाहदक पाएँ ।।

जो भर्ान के र्ूढ़ रहस्य को जानना चाहते हैं, र्े उसके नाम की अभ्यतांर जीन से जप कर जान लेते हैं। लौफकक मसद्धियों के चाहने र्ाले अर्ार्ी सािकर् में एकाग्रतापूर्कश राम नाम का जाप करके अर्र्मा, महहमा आहदक मसद्धियों को प्रा कर मसद् हो जाते हैं।

जो सिाक भर्ान के नाम की रूढता को, उनकी यराृ् शमहहमा को जानन चाहते हैं अर्ा जो ब्रह्म सुख का अनुभर् करना चाहते हैं अर्ा जो अष्ट मसद्धि प्राप्त करना चाहते हैं, रे् अन्द्तजजह्शरा् से राम नाम का जप लय लराकर करते हैं औ अभीष्ट की प्राजप्त करते हैं। र्ह नाम, नाम नहीं और र्ह जप, जप नहीं, जजससे नान का दर्नश न हो, अभीष्ट की प्राजप्त न हो।

जो सुख सिान से प्राप्त होता है र्ह जीर् सुख है, िर्क है और जो सुख त्रबन सिान के ममलता है र्ह सामान्द्य सुख है, ब्रह्म सुख है, आत्मानन्द्द है। अन्द्तजीभ नाम जपना सिान जन्द्य जप नहींहै, क्योंफक उससे जो ब्रह्म सुख प्राप्त होता है अहांर्म्य है, मन रा्री् से परे है, इजन्द्रयों की पहुँच के बाहर है। र्ह प्राजप्त की प्राजप्त है जीर् सुख या सासांाररक सुख, जो इजन्द्रयों के जररये प्राप्त होता है, र्ह अप्राजप्त के प्राजप्त है। प्राजप्त की प्राजप्त का सुख यानन ब्रह्म सुख का अनुभर् ब्रह्म ही करता है, जो नही।ां जीर् भार् के रहतेब्रह्मानन्द्द की प्राजप्त नही ांहो सकती। अन्द्तजजह्शरा् से नाम जप करने ेपर मन ननर्र्कशल्प हो जाता है और जीर् भार्, जर्त् ्भार् आहद स भार्ों का अभार् हो जाता है केर्ल 'म'ैं ही 'म'ैं का अनुभर् होता है और यही ब सुख है। सिाारर् जीभ से नाम जपने से जीर् भार् बना रहता है और सुख-दुखः की प्रतीनत होती है। यह जीर् सुख है, अभ्यतांर जजह्वा से नाम जपनेपर ननर्र्कशल्पता प्राप्त होती है और आत्मानांद का अनुभर् होता है। यही नाम की रूढ र्नत है।

जीर् का जीर्न भर्ान 'म'ैं आत्मा है। अभ्यतांर जीभ से नाम जपनेपर जीर् जीर् न रह जाता है, परन्द्तु ु सिाारर् जीभ से नाम जपने पर जीर् भार् का अभार् नहीं होता। तब उसे मन की एकाग्रता की आर्श्यकता पडती है और जब मन एकाग्र होता है, तब जापक को सुख ममलता है। जब मन चचांल होता है, तब जीर् जापक को ग्लानन होती है। योर्ी जब अन्द्तजजह्शरा् से नाम जपता है, तब उसे मन की जस्र्रता अर्ा चचांलता की अपेिा नही ांरहती। तब मन स्र्भार्तः ननर्र्कशल्प हो जाता है और सब भार्ों का अभार् हो जाता है। यही नाम जप की रूढ र्नत है।

जजसकी र्नत रूढ़ है, जजसका दर्नश रूढ है, जजसकी महहमा रूढ़ है, जजसका सिाात्कार रूढ़ है, जजसका जानना रूढ़ है, र्ह भर्ान आत्मा 'म'ैं कैसा है, क्या है आहद कोई नहीं जानता, कोई नही ांकह सकता उस परमात्मा को ऐसा है, र्ैसा है, कहना सब कपोल-कजल्पत है। उस ब्रह्म सुख का जानना इसमलए रूढ़ है फक र्ह परमात्मा सर् शमें, सर् शका सर् शरूप से सब कुछ होकर र्द्यमान है। यहद उसमें कुछ र्र्लिर्ता होती तो हर एक का ध्यान उिर जाता, हर एक उसे जानने ेका प्रयत्न करता। चूँफक 'म'ैं आत्मा सर् शमें सर् शरूप से सब कुछ होकर रहता हूँ, इसमलए उसकी ओर सर् शसिाारर् की दृजष्ट एकाएक नहींजाती। इसमलए उस परमात्मा का जानना, उस ब्रह्म सुख का जानना रूढ़ है, उसकी र्नत रूढ है। जो आँख की आँख है, जो मन का मन है, जो बुद्धि की बुद्धि है, जो रा्री् की रा्री् है, उसे आँख या मन या बुद्धि या रा्री् क्या जाने? इसमलए र्ह ब्रह्म सुख, र्ह भर्ान आत्मा, रा्री् का र्र्षय नही ांहै और यही उसकी रूढ़ता है।

लर् लराकर जपना क्या है? सिाारर् जजह्वा से नाम जपने से जीर् भार् बना रहता है और इसमलए मन चचांल रहता है तरा् प्रपचां में दौडता है। परन्द्तु कौआ से नाम का जप करनेपर तत्काल लर् लर् जाती है, क्योंफक

तब र्र्र्तयाँअन्द्तमुखश हो जाती हैं, मन अमन हो जाता है, धचत्त धचत् ्हो जाता है और बुद्धि बिो हो जाती है। इस प्रकार नाम जप से सिाक अर्र्लम्ब समाधिस्् हो जाता है और कालातांर में मसद्धियाँप्राप्त कर मसद् हो जाता है।

जपहहं ्िामु जि आरि भारी । ममटहहं ्कुसंकट होहहं ्सुखारी।
राम भगि जग चारर प्रकारा । सुकृिी चाररउ अिघ उदारा ।।

ससांार में भर्र्ान के चार प्रकार के भक्त यानन जजज्ञासु, अर्ार्थी, आत शऔर ज्ञानी होतेहैं और र्े चारों ही सुकृनत यानन पुण्यात्मा, पापरहहत और उदार होतेहै और नाम जप के अधिकारी होते हैं। आत शभक्त, जो भारी दुुःख से दुखी रहतेहैं। भर्र्ान का नाम जप कर अपनेकहठन सकांट से छुटकारा पातेहैं और सुखी होतेहैं। च

हुँ चिुर कहुँ िाम अधारा । ग्यािी प्रभुहह विसेवष वपआरा ॥
चहुँ जुग चहुँ श्रुति िाम प्रभाऊ । कमल त्रबसेवष िहहं ्आि उपाऊ ॥

इन चारों प्रकार के भक्तों को राम नाम का ही आिार होता है और चारों ही नाम जप के अधिकारी हैं। ध्यानर्-िारर्ा में, पूजा-पाठ में, यज्ञ आहद कायों में, सबमें भक्तों को भर्र्ान के नाम का ही सहारा है, परन्द्तु इन चारों प्रकार के भक्तों में प्रभुका ज्ञानी भक्त ही र्श्रेष्ठ प्यारा है, भर्र्ान जो चराचर का अजस्तत्र् है, 'म' ें करके जा सबमें प्रकट है, उसे जो जानता है, उसका जो अनुभर् करता है, ई ज्ञानी भत भर्र्ान को र्श्रेष्ठ प्र्य है। ज्ञानी भक्त भर्र्ान आत्मा को अपनेसे मभन्द्न नहीांमानता ई उसे अमभन्द्न जानता है। चारों युर्ों में र् चारों र्ेदों में नाम का महत्र् प्रमसद् है परन्द्तु कमलयुर् में तो उसका र्श्रेष्ठ प्रभार् है। नाम जप के मसर्ाय भर्सार्र तरने क कोई दूसूरा उपाय नहीां है।

दोहा-सकल कामिाहिीि जे, रामभगति रस लीि ।
िाम सुप्रेम वपयूष हद, तिन्दहहुँ फकए मि मीि ||24||

जो सब प्रकार की कामनाओांसे रहहत हैं और भर्र्ान राम की भजक्त रूपी जर में सर्दशा ननमग्न रहतेहैं, र्े ज्ञानी भक्त भी राम नाम के र्शुद्ि प्रेम से भरे हुए अमृत् कुण्ड में अपनेमन रूपी मछली को सदा डुबाये रहते हैं।

भक्त चार प्रकार के होतेहैं। चारों प्रकार के भक्तों में से तीन को अर्ात्श ्आत अर्ार्थी और जजज्ञासुको तो कामनायें (अर्,श िम,श काम र् मोि की) रहती हैं परन् ्ज्ञानी भक्त के मन में फकसी प्रकार की कामना नहीांरहती।

ज्ञानी भक्त सर्दशा ननःस्र्ार् शऔर पूर्शपेर् कामना रहहत होतेहैं। र्े अमस भानत, प्र्य रूप से सब में रमनेर्ाले भर्र्ान राम के प्रेम रूपी अमृत् कुण्ड में अप मन को मछली बना के डुबाये रहते हैं। जैसे मछली जल में जन्द्मती है, पलती है, जर में ही खाती है-पीती है, जल में मरती है, उसके आर्े जल, पीछे जल, दाय-ेबार जल, ऊपर-

नीचेजल अर्ात् श ्सब तरफ जल ही जल रहता है, रै्से ही ज्ञानी भ अजस्त, भानत, प्रिय र्ासुदेर् से अमभन्द्न होकर अपने आप में ही आते, आप में ही जाते, आप में ही उठते, आप में ही बैठते, अपने आप में ही सोते, आप में ही जार्ते, आप में ही खाते ेऔर आप में ही पीतेहैं। आप ही आरे्, आप ही पीछे, आप ही दायें, आप ही बाय,ें आप ही ऊपर, आप ही नीचेअर्ात्श ्सब ही तरफ अपनेआप ही हैं। उनकी दृजष्ट में मसर्ाय भर्ान 'आत्मा' राम के कहीं कुछ भी नही।ं रे् समस्त व्यर्हार करते हुए भी भर्ान राम में, अपने स्र्-स्रूप आत्मा में ही र्तेश हैं।

अगिु सगिु दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अिाहद अिूपा ।।

सनातन ब्रह्म भर्ान राम, जो अकर्नीय, अगि्र आहद अन्द्त रहहत र् उपमा रहहत हैं, उनके दो स्रूप हैं यानन ननर्ुर्श और सर्ुर्।

भर्ान के ये दोनों स्रूप सर्ुर् और ननर्ुर्श भक्तों की भार्नाओं के अनुसार हैं। यर्ार् शमें र्ह परमात्मा, र्ह सर्ात्शमा, जो सर् शव्यापक ब्रह्म है, न सर्ुर् है, न ननर्ुर्श है और सब कुछ है। र्ह पुरुर्ष पुरुर्षोत्तम सनातन ब्रह्म राम सर्ुर् भी है, ननर्ुर्श भी है, साकार भी है, ननराकार भी है और उससे र्िलर् भी है। आज तक परमात्मा के र्र्षय में सतां महात्माओां ने जजतना भी र्र्चन फकया है, सब अनुमान से फकया है, परमात्मा उससे भी कही ांज्यादा र्िलर् है।

भर्ान ऐसा है या रै्सा है, कहा ही नहीांजा सकता, क्योंफक र्र्नश करनेर्ाली र्जक्त सीममत है और भर्ान असीम है, अनन्द्त है, अपार है, अगि्र है। मन र्ार्ी से परे अननर्चशनीय तत्र् सीममत उपकरर्ों द्र्ारा कैसे बखान फकया जा सकता है? र्ेदों द्र्ारा इस अलौफकक र्िलर् र् अलख तत्र् का केर्ल लक्ष्य कराया जा सकता है।

भार् प्रिान भक्तों को र्ुर्ों की दृजष्ट से र्ह परमात्मा सर्ुर् हदखता है और र्ुर् रहहत व्यापक दृजष्ट र्ाले ज्ञान प्रिान भक्तों को र्ही भर्ान ननर्ुर्श भासता है। र्ास्तर् में सब दृजष्टयों से अतीत तत्र् एक ही है, अलख है, र्िलर् है। चूँफक आँख उसे देख नही ांसकती, मन र्हाँपहुँच नहीांसकता, बुद्धि उसका ननश्चय नही ां कर सकती, धचत्त उसका धचतांन नहीांकर सकता इसमलए र्ार्ी उसका र्र्नश नहीां कर सकती। र्ह अकर्नीय है, अननर्चनशीय है, क्योंफक फकसी ने उसे देखा नही,ां र्ार्ी उसका बखान नहीांकर सकती इसमलए फकसी से उसकी उपमा नहीां दी जा सकती, र्ह अनुपमेय है। र्ह सनातन ब्रह्म भर्ान आत्मा राम अज है, अर्र्नार्ी है और आहद अन्द्त रहहत है। कोई नहीां जानता, कोई नहीां कह सकता फक परमात्मा कब पैदा हुआ और फकससे पैदा हुआ? र्ह सर्ात्शमा अनाहद है, अनन्द्त है। र्ह इतना अपार और असीम है फक कोई उसका पार, अ ांत र् र्ाह नहीां पा सकता। यहद र्ह सीममत र्र्भूनतयों र्ाला होता, तब ही कोई उसका पार र् र्ाह पातेअर्ा उसका र्र्नश कर पाते। तो सब र्ुर्ों में ही असीम है और सब दृजष्टयों से र्िलर् है। इसीमलए र्ेदों ने अ नेनत-नेनत कहकर मौन िारर् कर मलया।

भर्ान राम सब रुर्ों से अतीत हैं, जो सब रुर्ों से अतीत है, उसी में ही रुर् रहतेहैं। जो फकसी एक रुर् में आबद्ध हो, उसमें सभी रुर् नही ंरह सकतेउसमें अनन्द्त रुर् अनाहद काल से ननत्य ननरन्द्तर रहतेहैं, र्ास्तर् में सभी रुर से सर्शा ननमलप्शत है। सरुर्, ननरुर्श, साकार, ननराकार, व्यक्त, अव्यक्त आहद र् उस परमात्मा के द्योतक र्ेर्षर् हैं न फक उसके र्नश करनेर्ाले सज्ञां ा। उसक यर्ार् शर्नश हो ही नहींसकता, इसीमलए र् अकर्नीय है, अनुपमेय है।

यहाँ ँएक बात र्ेर्ेष रूप से समझनेकी यह है फक परमात्मा में एक ही सार् र्लिर् रुर्ों का समार्ेर् है। परमात्मा जहाँ ँसरुर् है हाँननरुर्श भी है। ज साकार है, हाँननराकार भी है। जहाँ ँव्यक्त है, हाँअव्यक्त भी है। उसमें ये र्र्ोंी रुर् फकस प्रकार है, उसे लौफकक दृष्टान्द्तों द्र्ारा समझा जा सकता है। काष्टः अजग्न ननराकार रूप से व्याप्त होने के कारर् प्रर्ट रूप से हदखती नही,ां पर रू काष्ठ को रर्डने पर प्रर्ट हुई अजग्न साकार होकर हदखने लर्ती है। जल र्ाष्प रूप में पररर्नततश रहने के कारर् ननराकार होनेसे हदखता नहीं, परन्द्तु र्ही भाप बादल होकर बरसनेलर्ता है, तब बूँदों के रूप में प्रत्यि हदखता है। जब जडक व्यक्त और अव्यक्त दोनों हो सकती है, तब चेतन स्र्रूप, सर् शर्जक्तमान र्लि रुर्ों र्ाले परमात्मा में यह रुर् हों, तो कर्ाा फकस बात की?

अतः, जैसे प्रर्ट अजग्न और रुप्त अजग्न अलर्-अलर् न होकर एक हैं, प्रल जल और अप्रत्यि जल मभन्द्न-मभन्द्न न होकर एक ही हैं, उसी तरह साकार भर् और ननराकार ब्रह्म, सरुर् ईश्र्र और ननरुर्श आत्मा दो पृरूक जक्त न होकर एक हैं। ये सब एक ही तत्र् के, एक ही स्र्तुके मभन्द्न-मभन्द्न नाम र् मभन्द्न-मभन्द्न रूप की भार्नाओां के अनुसार प्रतीत होतेहैं।

मोरे मि ब़ ाम दुहू ि । फकए जेहह जुग तिजबस तिज बूि े॥

मेरी समझ के अनुसार दोनों से अर्ात्श ्सरुर् और ननरुर्श ब्रह्म से नाम बड अर्ात्श ्अधिक प्रभार्ली है, क्योंफक नाम के ही बल से, नाम के जप के प्रभार् सरुर् ब्रह्म का भी सािात्कार यानेअनुभर् होता है। नाम के ही आिार से सरुर्- साकार भर्ान का दर्नश तर्ा ननरुर्श र् ननराकार ब्रह्म का अनुभर् होता है। नाम ऐसा जररया है, जजससे दोनों प्रकार के ब्रह्म का सािात्कार होता है।

प्रौढ़ सुजि जति जािहहं ंजि की। कहउँ प्रीति प्रीति रचच मि की ।।

नाम के सबांि में यह जो कुछ भी मनैं ेकहा है, र् मेरे मन में जैसा र्श्र्ास है, भर्ान के प्रनत मेरी जैसी प्रीनत है और मेरी जैसी रुधच है, उसके अनुसार ही मनैं ेकहा है। मेरा यह कर्न सत्य ही मेरे र्श्र्ास र् मेरी प्रीनत र् रुधच के अनुसार ही है या इसमें कुछ बनार्टीपन है, उसे ज्ञानी सज्जनर्, बिोर्ान भक्तर्, भली-भाँनत जानते हैं, उनसे कुछ नछपा हुआ नहीं है।

एकु दारगि देझखअ एकू । पािक जुग सम ब्रह्म त्रबबेक ।।

अजग्न दो प्रकार की होती है एक ग़ुप्त और दूसूरी प्रर्ट। ग़ुप्त अजग्न अप्रत्यि रूप से लकडी में सर्ि्श र्ि्द्यमान रहती है और प्रत्यि अजग्न प्रकट रूप से सबको चमचशु से हदखाई देती है। उसी तरह ब्रह्म भी दो प्रकार है यानन सग़ुर् और ननग़ुर्श अर्ा्त साकार और ननराकारा ननराकार ब्रह्म ग़ुप्त रूप से सर्ि्श व्यापक है और सग़ुर् ब्रह्म साकार रूप िारर् कर ससांार में अनेकों चररि करता है।

ग़ुप्त अजग्न यद्यर्प काष्ठ में सर्ि्श एक समान व्याप्त रहता है तर्ार्प र्ह फकसी को हदखाई नहीांदेती और उससे फकसी का कुछ काम भी नहीां ननकलता। जब र्ही ग़ुप्त अजग्न लकडी को रर्डने ेसे प्रर्ट की जाती है तब र्ह सबको हदखाई देती है और उससे ससांार का बहुत-सा काम भी होता है। उसी तरह ब्रह्म को समझना चाहहए। जो ननग़ुर्श ननराकार ब्रह्म चराचर में सर्ि्श एक समान व्याप्त है, परन्द्तु जो फकसी को हदखाई नही ांदेता र्ही नाम जप के रर्ड से भक्तों के द्र्ारा प्रर्ट फकया जाता है और तब र् ससांार र्ालों को प्रत्यि रूप से हदखाई देता है। र्ही साकार रूप िारर् करने र्ाला भर्ग्ान भक्तों के कल्यार्ार् शर् देर्ता, ब्राह्मर्ों के रिर्ार् शतर्ा पृथ्र्ी का भार उतारनेके मलए अनेको सुन्द्दर चररि करता है। सग़ुर् परमात्मा का प्रादुभ्ाशर् ससांार में इसी ननममत्त होता है।

उभय अगम जुग सुगम िाम िे। कहउूँ िामु ब्र ब्रह्म राम िे ।।

दोनों (सग़ुर् और ननग़ुर्श) अर्म हैं, परन्द्तु नाम जप से दोनों सुर्म हो जाते हैं और इसमलए म ैंननग़ुर्श ब्रह्म और सग़ुर् राम को बडा कहता हूँ। ननग़ुर्श ब्रह्म अर्म है इसमलए फक र्ह चमचशु से फकसी को हदखाई नहीां देता और

उसके जप में कोई आिार नहीांहोता। ननग़ुर्श ब्रह्म का जप ननरालबां होता है इसमलए र्ह अर्म है। सग़ुर् ब्रह्म चूँफक आकार-प्रकार र्ाला होता है इसमलए र्ह सबों को प्रत्यि रूप से हदखाई देता है। सग़ुर् ब्रह्म ससांार में सािारर् मनुष्यों के समान अनेकों चररि करता है जजन्द्हें देखकर बडे–बडे ेज्ञानी पुरुर्ष भी भ्रम में पड जाते हैं।

इसमलए सग़ुर् भर्ग्ान भी अर्म है अर्ात्श ्उसकी र्नत समझ में नहीां आती भर्ग्ान के नाम के जप से दोनों प्रकारके ब्रह्म का सािात्कार हो जाता है इसमलए ब्रह्म सग़ुर् तर्ा ननग़ुर्श की अपेिा नाम ज्यादा बडा है अर्ात्श ्अधिक प्रभार्श्ाली है।

ब्यापकु एक ब्रह्म अत्रबिासी । सि चेिि घि आिांद रासी ॥

अस प्रभु हृदयें अछत अत्रबकारी। सकल जीर् जर् दीन दुखारी ॥ नाम ननरूपन नाम जतन ते। सोउ प्रर्टत जजमम मोल रतन ते े॥

ई ब्रह्म जो एक है, अज है, अर्र्नारी् है, सव्र्शयापक है, सत्य स्रूप है चैतन्द्य घनभूत है और आनदां का सारं है, ऐसे सर्र्शा र्र्कार रहहत भर्ग्रान के हृदय में र्र्राजमान होते हुए भी ससांर के सारे जीर् दीन र् दुःखी हैं (यह बडे ेअचम्भे की बात है) परन्द्तु नाम के यत्न से यानन नाम के जप से राम का महत्र् उसी प्रकार प्रर्ट हो जाता है, जजस तरह रत्न के परख हो जानेपर उसकी कीमत की जानकारी ह जाती है।

ईश्र्र एक है। हर मजहब र्ाले ईश्र्र को एक मानते हैं। यहद ईश्र्र एकः अधिक होते तो हर एक ईश्र्र के बनाये हुए मनुष्य अलर्-अलर् प्रकार के होत मुसलमानों के (ईश्र्र) खुदा के बनाये हुए मनुष्य हहन्द्दुओंांके भर्ग्रान राम या कृर्ष के बनाये हुए मनुष्यों से मभन्द्न होतेया ईसाइयों के ईश्र्र ईसा के बनाये प्रार्ी मूसा बनाये हुए प्रार्र्यों से मभन्द्न फकस्म के होतेया राम के बनाये हुए मनुष्य र्ैर्ोंं के ईश्र् मर्र् के बनाये हुए आदममयों से अलर् ही प्रकार के होते। परन्द्तु, ऐसा है नहीां। सब मनुष्य, सब िम शअर्ग्र मजहब के मानने ेर्ाले मनुष्य एक ही प्रकार के होतेयद्यर्प हर मजहब र्ालों के ईश्र्र के नाम मभन्द्न-मभन्द्न हैं, परन्द्तु र्े सब नाम एक तत्र् के हैं, एक ही र्जक्त या अजस्तत्र् के हैं। इससे मसद्धहै फक ईश्र्र एक है जो सबर आिार है, सबका आत्मा है। उस एक के त्रबना फकसी की मसद्धि नहीां, क्योंफक भर्ग्र एक है और सबका आिारभूत है, उसका फकसी से भेद नही।ां ई सबसे अभेद रूप और सबमें अभेद रूप से व्याप्त है। ब्रह्मा से लेकर एक कर् पयन्द्शत ई सारे चर-अ में एक-सा व्याप्त है। इस तरह ई सर्ग्राशार आत्मा राम जो एक है, सव्र्शयापक भी

जो सव्र्शयापक होता है, जो सर् शमें अभेद रूप में व्याप्त रहता है, ई आकार प्रकार से रहहत होता है। ई ननरर्यर् ननराकार होता है, उसका न आहद होता है न अतां, उसका कभी नार् नहीां होता। नार् होता है आकार-प्रकार का। जजसका कोई आकार नही,ां कोई प्रकार नहीां, ई कैसे नार् होर्ग्ा। ई अर्र्नारी् होता है। भर्ग्रान आत्मा 'म'ैं का कोई आकार-प्रकार नही,ां ई ननराकार है इसमलए अर्र्नारी् है।

भर्ग्रान आत्मा राम यानन 'म'ैं का िम शजानना है। 'म'ैं आत्मा कद से जान रहा हूँ कोई नही ांजानता। 'म'ैं आहदकाल से जानते आ रहा हूँ और अनतां काल तक जानता रहूँर्ग्ा। 'म'ैं त्रबना फकसी उपकरर् के जानता हूँ। मेरा जानना िम शअर्र्नारी् है। चूँफक, िम शिमी से मभन्द्न नही ांहोता, इसमलए म ैंआत्मा अर्र्नारी् हूँ, अखण्ड हूँ। परात्पर भार् में आत्मा, भर्ग्रान राम का ज्ञान अखण्ड है। 'म'ैं आत्मा जानते - जानते कभी नही ांकता और सबको जानता हूँ। 'म'ैं आत्मा जार्ग्ृत अर्स्था के प्रपचां को जानता हूँ, स्र्प्न के प्रपचां को जानता हूँ और सुर्षुजप्त के आनांद को भी जानता हूँ। 'म ैंहूँ' का ज्ञान सबको है। यद्यर्प सुर्षुजप्त अर्स्था में म'ैं और हूँ का ज्ञान नही ांरखता फफर भी 'म'ैं आत्मा का परात्पर भार् सर्दशा सब काल में और सर् शअर्स्था में रहता है। परात्पर भार् कालातीत है, अर्स्थातीत है, भार्ातीत है, ननत्य है इसमलए अर्र्नारी् है।

फफर, ई परमात्मा ब्रह्म है। ब्रह्म ई है जो ब्रह्मा से आहद लेकर कर् पयन्द्शत सारे चराचर को आच्छाहदत कर रखा है और जजससे बाहर ननकल कर कोई जा नहीां सकता। ब्रह्म के मानेर्ृहत् ्भी होता है अर्ाशत ् जो बडे ेसे भी बडा है। चूँफक भर्ग्रान राम एक है, अजस्तत्र् रूप है, उससे न कोई बडा है और न कोई छोटा है। ई ब्रह्म है, ई महात्मा है।

फफर भर्ान राम सत् ्है, धचत् ्है, आनांद का भण्डार है। भर्ान का नाम र + आ+ म का सयाीर् है। रकार धचत्र्ाचक है, आकार सत्र्ाचक है और मकार आनदांर्ाचक है। यानन भर्ान राम सत् ्+ धचत् ्+ आनांद का द्योतक है। सत् ्र्ह है, जजसका कभी नार् नही ांहोता और जो सर्कशाल एक-सा र्द्यमान रहता है। भर्ान राम सत्य ्स्रूप हैं, अर्नार्ी हैं। धचत्् सस्् है, जो भूत ान अर्ात् र्तमशान र् भर्ष्य सबको जानता है, सब कुछ जानता है और जजसके मलए अज्ञात कुछ भी नहीां। र्ह ज्ञानस्रूप ही है। आनांद र्ह है, जो सबको प्रय है, जजसको सब चाहते हैं और जजसकी प्राजप्त के मलए सभी सर्कशाल प्रयत्न करते हैं। भर्ान राम ज्ञान स्रूप होते हुए आनांद स्रूप हैं, सुख स्रूप है, क्योंफक उसको पाने के बाद फकसी अन्द्य स्तु की चाह नहीांरहती। उस भर्ान राम को प्राप्त करजीर् सब कुछ भूल जाता है, सब प्रयत्नों का अतां हो जाता है, क्योंफक र्ह तो आनांद का भण्डार ही है, आनांद स्रूप ही है। इस तरह भर्ान 'आत्मा' राम जो अज है, अर्नार्ी है, एक है, ब्रह्म है, व्यापक है, र्ह सत्य स्रूप ज्ञान स्रूप और आनांद स्रूप भी है, इसमलए श्रुनत ने उस सनातन ब्रह्म के मलए सत्यम्,् मर्म्,् सुन्दरम् ्कहा है।

सर् शव्यापक होनेके नाते भर्ान राम घट-घट के र्ासी हैं, सबके हृदय में। ननर्ास करते हैं। अब यहाँ र्काां होती है फक आनांद के सार्र भर्ान राम जब सबके हृदय में ननर्ास करते हैं। तब ससाांर के समस्त जीर् दीन र् दुुःखी क्यों रहतेहैं? जब आनांद स्रूप भर्ान हृदय में ननर्ास करते हैं, तब जीर् को दुुःखी नही ांहोना चाहहए। जीर् का दीन र् दुुःखी होने का कारर् है, उसका अपने स्रूप का भूलना। जीर् यर्ार् शमें ब्रह्म है, सत् ् धचत् ्आनांद है, अज है, अर्नार्ी है। जीर् में और ब्रह्म में कोई भेद नही।ां परन्द्तु, जीर् अपनेको ब्रह्म से मभन्द्न ुर, अल्प र्जक्त र्ाला, ननबलश, एक देर्ीय, पररनछन्द्न, असत्,् जड, जन्द्मने मरनेर्ाला, र्कारर्ान, सुखी- दुखी, पापी-पुण्यी आहद मानता है। उसकी िरर् है फक र्ह माया के र्र् में है और माया के र्र् में होने के कारर् र्ह दीन र् दुुःखी है तर्ा जन्द्मता, मरता है। इसी हीन मान्द्यता के कारर् ही र्े सब प्रार्ी जो अपनेको िुर ससाांरी जीर् मानते हैं, दीनर् दुुःखी रहते हैं। यहद उनकी जीर् भार्ना का अतां हो जाये, यहद र्े यर्ार् शमें अपनेको ब्रह्म या आत्मा या राम जानें, यहद उन्द्हें अपनेआत्म स्रूप का ज्ञान हो जाये, तो उनके सारे दुुःख दूर हो जाय ंऔर र्े ब्रह्मानन्द्द का सुख उसी प्रकार अनुभर् करें जजस प्रकार जौहरी या पारखी के द्र्ारा रत्न की परख एर् ांमोल हो जानेपर दरर मनुष्य सुख शहोते हैं।

रत्न यद्यर्प बहुत मूल्यर्ान होता है तो भी र्ह एक अनाडी कुांजडे के हार् कांकड पत्र्र के समान है। जब फकसी पारखी के द्र्ारा उस रत्न की परख हो जाती है और जब र्ह र्ान पर चढकर सुन्द्दर आकार र् अपने स्र्ाभार्क चमक को प्राप्त कर लेता है, तब उसके र्ास्तर्क मूल्य की जानकारी होती है, जजस प्रकार रत्न के यर्ार् शमूल्य की जानकारी हो जानेपर रत्न का स्र्ामी सुखी होता है, उसी तरह नाम जप से स्-स्रूप का ज्ञान हो जाने पर जीर् को आत्मानदां की प्राजप्त होती है और उसके सारे दुुःख दूर हो जाते हैं। आत्मानदां की प्राजप्त अर्ात्श ्स्-स्रूप का ज्ञान नाम के जप से अन्द्तजजह्शर्ा से नाम का जप कर जीर् को होता है। इस तरह नामक

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 106 जप ही सब सुखों का भण्डार है। यहाँ पर ब्रह्म या स्-स्रूप की उपमा रत्न से हैं र्यी है और ब्रह्म का ज्ञान मूल्य
को आँकता है तर्ा रत्न का परखना है।

दोहा-तिगिु ि यहह भातूँ ब्रि, िाम प्रभाउ अपार ।
कहउँ िामु ब्र राम िें, तिज त्रबचार अिुसार ।।24।।

इस प्रकार ननर्ुर्श ननराकार ब्रह्म से नाम बडा है तर्ा नाम का प्रभार् भी असीम है। अब अपने र्ेचार के अनुसार भर्र्ान राम से भी नाम को बडा तर्ा अधिक प्रभार्ाली कहता हूँ।

राम भगि हहि िर ििु धारी। सहह संकट फकए साधु सुखारी ॥
िामु सप्रेम जपि अियासा । भगि होहहं ुमुद मंगल बासा ।।

श्री रघुनार् जी ने भक्तों के कल्यार् करने के ननममत्त मनुष्य र्रीर िारर् फकया और स्तः अनेकों दुःख सहकर सिु जनों को सुख पहुँचाया। परन्द्तु, जो भक्त पे्रेमपूर्कश उनके नाम का जप करते हैं, रे् सहज ही आनांद र् कल्यार् के घर हो जाते हैं।

राम एक िापस तिय िारी । िाम कोहट खल कुमति सुधारी ।।
ररवष हहि राम सुकेिसुिा की। सहहि सेि सुि कीस्न्द्ह त्रबबाकी ।।
सहहि दोष दुख दास दुरासा । दलइ िामु ुस्जमम रत्रब तिमस िासा ।।

श्री रामचन्द्र जी ने एक ही ऋर्ष पत्नी का अर्ात्श ्रौतम ऋर्ष की पत्नी अहल्या का उद्िार फकया। श्री रघुनार् जी ने र्श्र्ाममि जी र् अन्द्य ऋर्षयों के यज्ञ की रिा के ननममत्त सुकेतु की पुिी ताडका का उसकी सेना र् दोनों पुि सुबाहु एर् ांमारीच सहहत नार् फकया। परन्द्तु, उनका नाम भक्तों की र्ी हुई आर्ाओां को फफर से जर्ाकर पूर् शकर देता है तर्ा उनके दोर्ष और दुःख को इस प्रकार सम्पूर् शनष्ट कर देता है जैसे सूय शरात्रि के अांिकार का नार् करता है।

भंजेउ राम आप भि चापू । भि भय भंजि िाम प्रिापू ।।
दंडक बिुप्रभु कीन्द्ह सुहाििा। जि मि अममि िाम फकए पािा ।।
तिमसचर तिकर दले रघुिंदि। िामु सकल कमल कलुष तिकंदि ।।

श्री रामचन्द्र जी ने स्तः तो भर्र्ान र्ांर के िनुर्ष को ही तोडा, परन्द्तु उनके नाम की ऐसी महहमा है फक उसका जप करने र्ालो को ससांार चि में फँसने का भय ही दूरू हो जाता है अर्ात्श रे् जन्द्म-मरर् के दुःख से तर्ा आर्ार्मन के चि को तोडकर सर्र्ा मुक्त हो जाते हैं। भर्र्ान राम ने तो अकेले दांडकर्न को र्ाप मुक्त करके उसे रमर्ीय र् पर्र् बिनाया, परन्द्तु उनके नाम ने असखां्य भक्तों के मन रूपी र्न को सुन्द्दर र् पर्र् बिना

 हदया। रघुनार् जी ने तो केर्ल रिासों के समूह का नार् फकया, परन्द्तु उनके नाम के स्मरर् से कमलयुर् के
समस्त पापों का नार् होता है।

दोहा-सबरी गीध सुसेिकति सुगति दीस्न्द्ह रघुिाथ ।

िामि उघारे अममि खल बेद त्रबहदि गुिगाथ ||25||

रघुनार् जी तो भीलनी र्बरी, धर्द् जिटायु और कुछ सद्भक्तों को सद्‌र्फक हदया, परन्द्तु नाम ने तो असख्ांय पार्पयों का उद्िार फकया, जजनकी र्ुर् र्ेदों र्र्तश है।

राम सुकंठ त्रबभीषि दोऊ । राखे सरि जाि सबु कोऊ ॥
िामि गरीब अिेक िेर्ाजे । लोक बेद बर त्रबररद त्रबराजे ॥

श्री रामचन्द्र ने सुग्रीर् और र्भीषर् इन दोनों र्र्ातों की रिा की यह बान सब कोई जानते हैं, परन्द्तु नाम ने तो अनेकों दीन दुःखी र्र्ातों का उद्िार फकया जजनकी कर्ा सांसार में र्ेदों में प्रर्ट है।

राम भालु कवप कटकु बटोरा । सेिु हेिु श्रम कीन्द्ह ि थोरा ॥
िामु लेि भिमसंधु सुखाहीं । करहु त्रबचार सुजि मि माहीं॥

श्री रघुनार् जी ने रीछ र् बन्द्दरों की बहुत बडी सेना इकट्ठी कर समुर के एक छोटे से हहस्से पर पुल बाँिनेके मलए बहुत पररश्रम फकया, परन्द्तु उनके नाम के स्मरर् से ही सारा ससांार-सार्र सूख जाता है। हे सज्जनर्! आप लोर् अपनेमन में इस पर र्चार करें।

रामेश्र्र से लकांपुरी पहुँचने के मलए श्रीरामचन्द्र जी ने 400 कोस चौडा समुर के टुकडे पर पुल बाँिनेके मलए करोडों भालू र् र्ानरों की सहायता ली, परन्द्तु राम के नाम के स्मरर् से सारा भर् सार्र ही सूख जाता है। अब यहाँ पर र्चार करना है फक र्ह राम कौन है, जजसका नाम लेने से भर् सार्र सुख जाता है और उसका नाम फकस प्रकार मलया जाये? 'रमुक' िीडायाँिातु से 'राम' र्दद बनता है। जो सारे चराचर में ब्रह्मा से आहद लेकर कर् पयन्द्शत सब में रम रहा है, जजसमें योर्ी महाल जन रमर् करते हैं, उसे कहते हैं राम। जजसे आँख देख नहीं सकती, कान सुन नह सकता, त्र्चा स्पर् शनही ांकर सकती, र्ार्ी बखान नही ांकर सकती, मन जहाँ पहुँच नहीं सकता, बुद्धि ननश्चय नही ांकर सकती, धचत्त धचतांन नहीांकर सकता, र्ह इजन्द्रयों से परे, र्ुर्ों से अतीत, सर् श व्यापक भर्र्ान राम हैं। र्ह र्ही राम है, जो रूप सर् शका आत्मा है, सर् शका सर् शहै, सारे चराचर का आिार है और सब में अजस्तद रूप से रम रहा है। ब्रह्मा से आहद लेकर कर् पयन्द्शत कोई भी देर्, कोई भी र्स्तु कोई भी अर्स्र्ा तर्ा कोई भी काल ऐसा नहीं जो उस राम से, जो उस अजस्तत्र् से रहहत हो र्ही अजस्तत्र् 'है' ही राम है, जो सब में 'र्' करके प्रमसद्ि है, प्रर्ट है। 'है' और 'म' ये दोनों ही अनुभर् करनेयोग्य या सािात्कार करने योग्य है। र्ही र्ह राम है, जजसके स्मरर् से भर् सार्र सूख जाता है।

भर्ग्ान आत्मा राम जो सर् शका ि◌आर है इस जर्त् ्प्रपांच का भी जो जड है, ममथ्या है, स्र्प्नर्त् ्है, माया रधचत है, ि◌आर है। भर्ग्ान पर ि◌आररत होने ेके कारर् यह जर्त् ्प्रपचां भर्ग्ान का ही स्र्रूप है, भर्ग्ान से अमभन्द्न है, क्योंफक अध्यस्र् अधिष्ठान के ही अनुरूप होता है। जो प्रार्ी अज्ञानर्र् उसे भर्ग्ान से मभन्द्न मानता है, उसके मलए यह सांसार आर्ार्मन का कारर् होता है, परन्द्तु जो उसे अधिष्ठान भर्ग्ान आत्मा का स्र्रूप जानता है, उसके मलए ससांार का अत्यन्द्ताभार् हो जाता है, उसकी दृजष्ट में ससांार नाम की कोई र्स्तु ही नही ांरह जाती, उसके मलए भर्सार्र सूख जाता है, जो अधिष्ठान भर्ग्ान 'आत्मा' राम को 'है' या 'म ैं' को अपना स्र्रूप जानता है, जजसकी उसमें अटूट ननष्ठा है, जजसकी दृजष्ट में भर्ग्ान आत्मा 'म ैं' के अनतररक्त कुछ है ही नही, ां उसके मलए भर्सार्र सूख जाता है, उसके मलए भर्सार्र का सर्र्शा अभार् ही हो जाता है। सर् शदृश्यमान को भर्ग्ान आत्मा राम का स्र्रूप जानना, अपनेआपके अनतररक्त कहीं कुछ न देखना, सर्दशा अपने स्र्-स्र्रूप में जस्त्त रहना ही भर्ग्ान राम का स्मरर् है, भर्ग्ान का भजन है, भर्ग्ान की भजक्त है।

जीर् अपनेको र्रीर मानकर अमभमान करता है फक यह देह में हूँ और यह देह मेरा है। र्ास्तर् में ऐसा नही ांहै। र्रीर जन्द्म लेता है, बढता है, ि◌ीर् होता है, र्ृद्ि होता है और अतां में नार् हो जाता है। परन्द्तु, आत्मा सभी अर्स्र्ाओं में जैसे का तैसा रहता है, एक स्र्रूप रहता है, र्ह न तो जन्द्मता है और न मरता है। उस आत्मा को न तो अजग्न जला सकती है, न जल र्ीला कर सकता है और न अस्र्- र्स्र् छेदन कर सकते हैं या काट सकते हैं। र्ह सदा सर्दशा र्ातां, ननर्र्कशार, ननश्चय, एक रस रहता है, र्ह सब कुछ देखता है, सुनता है तर्ा अनुभर् करता है। र्ह आत्मा हम स्र्यां हैं, र्रीर से सर्र्शा मभन्द्न।

जब तक देहाध्यास है, तब तक देहामभमान है और जब तक देहामभमान है, तब तक जीर् आर्ार्मन के चि में फँसे रहकर जन्द्म-मरर् का दु:ख भोर्तेरहता है। आर्ार्मन का चि तभी टूटता है जब जीर् भार् का अभार् होकर आत्म भार् का उदय होता है। जब तक व्यजक्त जीते जी नहीं मर जाता भर् सार्र नहीं सूखता। जब तक व्यजक्त अपनेआपको र्रीर मानता है, तब तक जीता है। जब देह भार् त्यार् कर आत्म भार् लाता है, जब अपनेआपको भर्ग्ान आत्मा 'म ैं' जानता है, तब र्ही उसका जीते जी मरना है। अपनेआत्म स्र्रूप को पहहचानकर अपने'म ैं' को भर्ग्ान आत्मा 'म ैं' जान लेनेपर व्यजक्त जीते जी मरता है। जजसकी दृजष्ट में भर्ग्ान आत्मा 'म ैं' के अनतररक्त कुछ है ही नहीं, उसी के मलए भर् सार्र सूखता है। जजस प्रकार प्रकार् या सूय शदेर् में ि◌ांकार कहींहदखाई नही ांदेता, ि◌ांकार देर् में ही अ ांिकार हदखाई देता है, उसी प्रकार आत्म देर् में देखने पर प्रपचां कहीं हदखाई नहीं देता। प्रपचां तो मान्द्यता देर् की यानन जीर् देर् की र्स्तु है। अत:, जजसे आत्म स्र्रूप का ज्ञान है, जजसकी अपनेस्र्रूप आत्मा 'म ैं' में दृढ़ ननष्ठा है, ईश्र्र में अटूट र्र्श्र्ास है, श्रद्िा है, प्रेम है उसी के मलए भर् सार्र सूखता है और र्ही भर्सार्र तरता है। इस प्रकार र्र्चार कर जो सज्जन अपने स्र्-स्र्रूप में ननमग्न रहतेहैं, र्े अनायास ही भर्सार्र पार हो जाते हैं।

राम सकुल रि ििुमारा। सीय सहहि तिज पुर पगु धारा ॥

राजा रामु अिध रजधािी । िािा गु सुर मुति बर बािी ।।

श्री रामचन्द्र जी ने युद्ध में रार् को उसके समस्त कुल सहहत मारा और सीता जी के सार् अपने नर्र अयोध्या को लौट आये। फफर राजर्द्दी ग्रहर् कर अयोध्या को अपनी राजिानी बनाकर राज्य फकये, जजसका रुर् र्ान सुन्दर र्ार्ी से देर्ता र् मुनन रूनृ्द करते हैं।

सेिक सुममरि ि ामु सप्रीिी । त्रबिु श्रम प्रबल मोह दलु जीिी ॥
फिरि सिहैं मगि सुख अपिे । ि ाम प्रसाद शोच ि हहं ंसपिे॥

जो सेर्क, जो भक्त प्रेमपूर्कश भर्र्ान के नाम का स्मरर् करते हैं याननन आत्म स्र्रूप में जस्र्त रहते हैं, र्े अनायास ही मोह या माया को उसके पूरे दल सहहत जीत लेते हैं और ननजानन्द की मस्ती में मस्त आनन्दपूर्कश र्र्चरतेहैं। नाम के प्रभार् से स्र्प्न में भी उन्हें फकसी प्रकार का सोच र् दुःख नही ांहोता।

यहााँ ँपर मोह या अज्ञान से रार् और मोह दल से कुांभकर्,श मेघनार् र् अन्य प्रबल रार्सों की ओर सकोंत है। आठ चिों र् नर् द्र्ारों की अयोध्यापुरी जैसी यह मानर् देह है, जजसमें भर्र्ान आत्मा 'म'ै का ननर्ास है और अयोध्या के राज्य मसहाांसन पर बैठना मानो आत्मानन्द में जस्र्त होना है।

राम को रार् र् उसके बलर्ान सैन्य दल को नार् करने में बहुत पररश्रम करना पडा, परन्तु राम के भक्तर् राम नाम का प्रेमपूर्कश स्मरर् करके सुर्मता पूर्कश मोह या अज्ञान तर्ा अज्ञान जननत काम, िोि, लोभ आहद मोह के प्रबल सैन्य दल को नष्ट कर देते हैं। जो बोिर्ान पुरुर्ष अपनेआत्म स्र्रूप में जस्र्त रहतेहै, उनकी दृजष्ट में न तो प्रपचां रहता है, न र्र्षय रहतेहैं और न र्र्षयों को ग्रहर् करने र्ाली इजन्द्रयााँरहती हैं। उनकी दृजष्ट में र्र्षयों का तर्ा र्र्षयों को र्र्षय करने र्ाली इजन्द्रयों का सर्शा अभार् रहता है। हााँ शुद्ध आत्मा 'म'ै के अनतररक्त कुछ रहता ही नही।ां अतः, काम, िोि, लोभ आहद अज्ञान जननत सर् र्र्कार, इजन्द्रयााँअर्र्ा माया जननत समस्त र्र्कार आप ही नष्ट हो जाते हैं और आत्मननष्ठ पुरुर्ष अपनेस्र्रूपानन्द में मस्त र्ोच र् र्ोक रहहत र्र्चरते हैं।

दोहा-ब्रह्म राम िें ि ामु ब्र बर दायक बर दाति ।
राम चररि सि कोहट महूँ मलय महेस स्जयें जाति ॥26॥

ब्रह्म तर्ा इससुप्रकशािीमर्र्ानरुर्शम दोनों से भी बडा एर्ां अधिक प्रभार्र्ाली है और ब्रह्मा जैसे बडे–बडे र्रदाताओां को भी र् देनेर्ाला है। ऐसा हृदय में र्र्चार कर करोडों रामचररि में से महादेर् जी ने राम नाम के दो अिरों को सार जानकर ि रर् कर मलया।

िामि प्रसाद सूँभुअत्रबिासी । साजु अमंगल मंगल रासी ।।
सुक सिकाहद मसद्ध मुति जोगी । ि ाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी ।।

नाम के प्रभार् से कांरजी अर्द्नारी् हो र्ये और उनके र्रीर पर का अर्ुभु र्ेर्ष र् साज-सज्जा (मुडांमाला तर्ा श्मर्ान की भभूनत) मांर्लकारी हो र्या। नाम के ही प्रताप से र्ुकुदेर्जी, सनक सनन्द्दन बन्द्र्ु, मिसद्र्ि, मुननरृन्द्द, योर्ी जन आहद सब ब्रह्मानन्द्द का सुख भोर्तेहैं।

िारद जािेउ िाम प्रतापू। जग वप्रय हरर हरर हर वप्रय आपू।
िामु जपि प्रभु कीन्द्ह प्रसादू।ू भगि मसरोमति भे प्रहलादू ू।।4।।

नाम की महहमा को नारद जी ने जाना और इसमलए उस नाम के जप के प्रभार् से र्े उन भर्र्ान राम और मर्र्जी को प्रिय हैं, जो सारे ससांार को प्रिय हैं र् पूज्य है। भर्र्ान के नाम के जप के ही प्रताप से प्रह्लाद जी भर्र्ान की प्रसन्द्नता प्राप्त कर सके और भक्तों के मसरताज बन र्ये।

ध्रुि सगलाति जपेउ हरर िाऊँ। पायउ अचल अिूपम ठाऊँ।
सुममरर पििसुत पािि िामू। अपिे बस करर राखे रामू।।

अपनी सौतेली माँके कटु र्चनों से दु:खी होकर ग्लानन के कारर् ध्रुर्जी ने दु:ख के हरनेर्ाले भर्र्ान हरर के नाम का जप फकया और फलस्र्रूप अचल और उपमा रहहत स्र्ान प्राप्त फकया। अांजननपुत्र हनुमान ने भर्र्ान राम के पर्र्त्र नाम का जप कर भर्र्ान को ही अपनेर्र् में कर मलया अर्ाात् श भर्र्ान राम के अतीर् कृपा-पात्र हो र्ये।

अपतु अजाममलु गजु गतिकाऊ। भये मुकुत हरर िाम प्रभाऊ॥
कहा कहाँलचग िाम बड़ाई। रामु सकहहं िाम गुि गाई॥

इनके अनतररक्त पापी अजाममल, ग्राह पीडडत र्जेन्द्र इन्द्रद्युम्न, र्ेश्या पर्र्ांला आहद सब नाम के जप के प्रताप से पापों से अर्र्ा सकांट से मुक्त हो र्ये। नामों की बडाई अर्र्ा महहमा म कहाँ तक र्ाऊँ। नाम की महहमा का बखान म नहीांकर सकता। स्र्तः भर्र्ान राम भी अपने नाम की महहमा का बखान नही ांकर सकते।

नामी से नाम मभन्द्न नही ांजो र्ुर् नामी में है, र्े सभी र्ुर् नाम में भी हैं। भर्र्ान राम अनन्द्त हैं, अपार हैं, असीम हैं, इसमलए उनके नाम भी अनन्द्त हैं, अपार हैं, असीम हैं तर्ा उनके र्ुर् भी अनन्द्त हैं, अपार हैं, असीम हैं, चूँफक भर्र्ान राम के र्ुर्ों का र्र्नश मन, र्ार्ी से परे है, इसमलए उनके नाम के र्ुर्ों का र्र्नश भी मन र्ार्ी का र्र्षय नहीां है। फकसी भी र्स्तु का बखान र्ार्ी के द्र्ारा फकया जाता है। जब भर्र्ान राम के नाम के र्ुर्ों का र्र्नश मन, र्ार्ी से परे है, तब स्र्तः भर्र्ान राम भी अपनेनाम की महहमा का र्र्नश फकस प्रकार कर सकेंर्े, क्योंफक नाम की महहमा का बखान भी र्े र्ार्ी के द्र्ारा ही करेंर्े। अत:, भर्र्ान राम भी अपने नामों की महहमा का र्र्न करनेमें असमर्् शहोंर्े।

नाम बीज है। बीज के अदांर ऱ्र्ाल र्ृ सूक्ष्मानतसूक्ष्म रूप में नछपा हुआ रहता है। ई पहहले तो हदखाई नही ांदेता, परन्द्तु बाद में अकुांररत होने ेपर एर्ांबढनेपर स्पष्ट दीख पडता है। जैसे बीज के अांदर जड र्डां, र्ाखाय,ें पत्ते, फूल, फल इत्याहद सूक्ष्म रूप में र्द्यमान रहते हैं, र्ैसे ही नाम में भर्र्ान के सभी र्ुर् समार्ष्ट रहते हैं। जब नाम का जापक श्रद्धा और र्श्र्ास के सार् नाम का जप करता है, तब उसे रे् सभी फल ममलतेहैं, जजसकी आकाांक्षा ई भर्र्ान से करता है। नाम का प्रभार् बडा भारी है। यहद नाम को नामी से बढ़कर कहा जाये तो कुछ अत्युजक्त नहीं होर्ी इसमलए नाम की महहमा का र्र्यन स्र्तः भर्र्ान राम भी नही ांकर सकते।

दोहा–ामु राम को कल्पिर, कमल कल्याि तितासु।
जो सुममरि भयो भागँू ि, ि ुलसी ि ुलसीदासु 126।।

तुलसीदास जी कहते हैं फक कमलयुर् में भर्र्ान राम के नाम का स्मरर् स्र्् शकी र्भूनत कल्पर्ृ के समान सर्कशामनाओां की पूनत शकरने ेर्ाला तर्ा सब प्रकार के कल्यार् का दाता है। र्े कहतेहैं फक उस नाम के जप से में स्र्त जो भार्ां के समान त्याज्य र्ा, तुलसी के समान भर्र्ान को र्प्रय र् ग्राह्य हो र्या। तात्पय,श भर्र्ान राम के भजन के प्रताप से ऱ्र्षयी तुलसीदास भर्र्ान के भक्त र् कृपापाि हो र्ये।

चहुँ जुग िीति काल तिहुँ लोका। भए िाम जवप जीि त्रबसोका ।।
बेद पुराि संि मि एहू - सकल सुकृि िल राम सिेहू ।।

चारों युर् में, तीनों लोक में और तीनों काल में (भूत, र्तमशान, भर्र्ष्य) भर्र्ान के नाम को जप कर जीर् र्ोक रहहत हो र्ये अर्ाात्श ्सुखी हुए। र्ेदों का, पुरार्ों का र् सतां महात्माओां का सब का यही मत है फक भर्र्ान राम के नाम में प्ेरेम होना सब पुण्यों का फल है। पूर्ाजशजतश पुण्यों के उदय होनेपर ही भर्र्ान राम के प्रनत सहज स्नेह होता है, जो कैर्ल्य पद का देने र्ाला है।

ध्याि ु प्रथम जुग मख त्रबचध दूजे। द्वापिर परिोषि प्रभु पूजे।।
कमल केिल मल मूल मलीिा । पाप पयोतिचध जि मि मीिा ।।

प्रर्म युर् सतयुर् में ध्यान िारा से, द्र्तीय युर् िेता में यज्ञाहद से और तृतीय युर् द्र्ापर में पूजा-पाठ से भर्र्ान प्रसन्द्न होते हैं। चौर्ा युर् कमलयुर् केर्ल पाप की जड र् खानन है और उस र्ें पाप के समुर में लोर्ों की मन रूपी मछली रात-हदन डूबी रहती है।

िाम कामिर काल कराला । सुममरि समि सकल जग जाला ।।
राम िाम कमल अमभमि दािा । हहि परलोक लोक वपिु मािा ॥

भर्र्ान राम का नाम भयकांर काल के समान है और स्मरर् करने ेसे भर्सार् के सारे जल को यानन जन्द्म मरर् के फन्द्दे को नष्ट कर देता है। फफर कमलयुर् में भर्र्ान राम का नाम कल्पर्ृ के समान सब

कामनाओं को पूरा करता है तर्ा इस मृतूयु लोक में माता-र्पता के समान एर् ंपरलोक में ममि के समान हहत का सिानेर्ाला है। तात्पय शयह है फक भर्ान राम के नाम के जप से इस लोक में सुख तर्ा मृतूयु उपरान्द्त सद्गनत की प्राजप्त होती है। नाम के स्मरर् से ससांार का आर्ार्मन का चि नष्ट होता है।

हिहं ंकमल करम ि भगति त्रबबेकू । राम िाम अिलंबि एकू ।।
कालिेमम कमल कपट तिधिू। िाम सुमति समरथ हिुमािू ।।

कमलयुर् में न तो ननष्काम कम शही होता है, न तो ज्ञानोपाजनश हो सकता है और न भजक्त ही की जा सकती है। उसमें केर्ल मिा एक राम नाम का सहारा है। कमलयुर् कालनेमी रिास के समान पाप र् कपट का भण्डार है और भर्ान का नाम उसके नार् करने ेके मलए बुद्धिमान हनुमान के समान समर् शहै। भार् यह है फक जजस प्रकार चतुर हनुमान जी ने काल-नेमम रिास के कपट को भेद कर उसका नार् फकया, र्ैसे ही भर्ान राम का नाम कमलयुर् के पापों का अतां कर देता है।

दोहा-राम िाम िरकेसरी किककमसपु कमलकाल ।
जापक जि प्रहलाद स्जमम पामलहह दमल सुरसाल ॥27॥

भर्ान राम का नाम नरमसहां के समान है, कमलयुर् दैत्यराज हहरण्यकश्यप के सदृर् है और राम नाम के जपनेर्ाले भर्तर् प्रहलाद के जैसे हैं। जजस प्रकार देर्ताओं के बैरी हहरण्यकश्यप को मार कर नरमसहां भर्ान ने अपनेभक्त प्रहलाद की रिा की, उसी प्रकार राम नाम रूपी नरमसहां भर्ान कमलयुर् रूपी हहरण्यकश्यप का नार् कर नाम जपनेर्ाले प्रहलाद रूपी भक्तों की रिा करते हैं।

तात्पय शयह है फक कमलयुर् में राम नाम का जप कमलयुर् के सम्पूर् शपापों को नार् कर जापक को इस लोक में सुख देता है तर्ा उनके परलोक को सुिारता है। उनको सद्गनत देता है और र् ननजानन्द्द की मस्ती में मस्त रहकर र्चरतेहैं। राम का नाम चाहे जजस भार् से भी जपा जाय, र्ह सब प्रकार से कल्यार्प्रद ही होता है। इसीमलए कहा भी है फक "भायें कुभायेंअनखे आलस हूँ, नाम जपत मर्ांल हदमस दसहूँ।"

भाय ूँकुभायूँअिख आलसहूँ। िाम जपि मंगल हदमस दसहूँ।
सुममरर सो िाम राम गुि गाथा । करउूँ िाइ रघुिाथहह माथा ।।

भर्ान राम का नाम अच्छे भार् से भजो, चाहे बुरे भार् से भजो, ईर्ष्याश से भज चाहे आलस्य से भजो, भजनेसे सब ही हदर्ाओं में सब प्रकार का कल्यार् होर् उस कल्यार्कारी राम के नाम का स्मरर् कर तर्ा उन रघुनार्जी के चरर्ो प्रर्ाम कर उसके र्ुर्ों की र्ार्ा की रचना करूूँर्ा।

भर्ान के नाम का जप चाहे जजस भार् से भी फकया जाये, र्ह सर्कशाल र् सर् शअर्स्र्ाओं में सर्शि कल्यार्कारक होता है। र्ह जप यदा-कदा न होकर ननरांतर होर्े, तब ही र्ह उत्तम है। प्ेरम भार् से या सद्भार् से

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 113 भजनेर्ाले तो ससाांर सार्र से तर ही जाते हैं, परन्द्तु ईष्याश भार् से या बैर भार् से या आलस्य से भजने र्ालों को

भी र्ेदयाननिान प्रभु परमपद देते हैं। दर्रर्, कौल्र्या तर्ा र्सुदेर्, देर्की ने भर्र्ान को र्ात्सल्य भार् से भजा, र्ोर्पयों ने पनतभार् से भजा, अजुनश र् उद्धर् ने सखा भार् से भजा, र्र्भीषर् ने सद्भार् यानन भजक्त भार् से भजा, हनुमान र् भरत ने सेर्क भार् से भजा, कुम्भकरर् ने आलस्य भार् से भजा, बामल ने अनख अर्ात्श ् ईष्याश भार् से भजा और रार्र्, हहरण्यकश्यप, कांस, मर्शुपाल आहद ने कुभार् यानन बैर भार् से भजा। दर्रर् से लेकर हनुमान र् भरत तक के सब भक्तों को सद्र्नत तो ममली ही, परन्द्तु कुम्भकरर्, बामल, रार्र्, कांस आहद को भी, जजन्द्होंने भर्र्ान को आलस्य तर्ा अनख से भजा, करुर्ासार्र प्रभु ुने मिो पद हदया। त्रबना भर्र्ान के भजन के, त्रबना भर्र्ान के ननरांतर स्मरर् के फकसी की सद्र्नत नहीांहोती।

मोरर सुधाररहह सो सब भाँनत। जासु कृपा ि हहं ंकृपा ूँअघानत ।।

र्ेकृपा सार्र प्रभु, जजनकी कृपा को प्राप्त कर स्र्यांभर्र्ती कृपा भी नही ांअघाती अर्ात्श ्और अधिक की आकाांक्षा करती है, र्े मेरी सब बातों को सब प्रकार से सुिारेंर्े।

भर्र्ान श्री राघर्ेन्द्र अहेतु की कृपा करने र्ाले हैं। उनकी कृपा फकसी हेतु को लेकर नहीां होती। र्े तो सहज कृपालु हैं। र्े स्र्ाभार्र्क रूप से ही सभी भूत प्रार्र्यो पर कृपा करते हैं। र्े कृपा की साक्षात् ्मूनत शहैं और उन कृपामय की कृपा अनर्रत् ्रूप से सब पर बरसती रहती है। उस अजस्र रूप से प्रर्ाहहत कृपािारा में सभी डुबकी लर्ा सकते हैं तर्ा लाभ उठा सकतेहैं। भर्र्ान की जीर्मात्र पर बरसती कृपासुिा का सबसे बडा और ज्र्लन्द्त उदाहरर् मानर् र्रीर की प्राजप्त है। "कबहुँक करर करुर्ा नर देही, देत ईर् त्रबनु हेतु सनेही।" प्रायः सभी जीर्ों से ननत्य इतनेपाप कम शहोतेरहते हैं फक उनसे ननस्तार पाना करोडों र्षश में भी सभांर् नही,ां फफर भी उन पाप कमों की ओर ध्यान न देकर प्रभु अपनेकृपामयी प्रकृनत के अनुरूप मानर् देह प्रदान कर हर एक को भर्त्प्राजप्त अर्ा्र मोक्ष का अर्सर देते हैं।

कृपा को माया भी कहते हैं। कृपा और माया पयायशर्ाची र्ब्द हैं। माया ही भर्र्ती सीता है। माया ईश्र्र से मभन्द्न नहीां, अज से अजा मभन्द्न नही।ां अतः, देर्ाधिदेर् परात्पर पुरुष भर्र्ान श्रीराम से परमाद्या मूल प्रकृनत भर्र्ती सीता मभन्द्न नहीां। जजस प्रकार र्ार्ी से अर् शमभन्द्न नहीां, जल से तरांर् या लहर मभन्द्न नहीां, चन्द्र से चजन्द्रका मभि नही,ां उसी प्रकार भर्र्ान राम से माया रूपी सीता मभन्द्न नही।ां कहने में दोनों मभन्द्न- मभन्द्न प्रतीत होतेहैं, परन्द्तु यर्ार्तशः दोनों एक हैं। जजस तरह भर्र्ान राम कल्यार् के दाता तर्ा सहज कृपालु हैं यानन अहेतुकी कृपा करने ेर्ाले हैं, तद्र्त जर्जननी सर्शे्र्शयस्कर भर्र्ती सीता भी कृपा की मूनत शही हैं। अतः, भर्र्ती भास्र्ती कृपादेर्ी स्र्यां कल्यार्काररर्ी जर्न्द्माता सीता जी ही हैं। सहज ही त्रबना हेतु ुकृपा करन उनका स्र्भार् ही है। र्े भर्त्कृपा की साकार प्रार्मयी प्रनतमा हैं। उनका कृपापूर् शभार् भक्त और भर्र्ान दोनों को आह्लाहदत कर देता है। र्े करुर्ाननिान प्रभुद्कृपा भडाांर को प्रार्र्मात्र के कल्यार् के मलए उदार हृदय से सर्दशा लुटाती रहती है। कृपारूर्पर्ी जर्जननी सर् शकल्यार्काररर्ी जानकी जी करुर्ारश हृदय से भर्त्कृर रस ननरांतर र्र्तरर् करते हुए कभी नही ांअघाती।

जजस तरह रुभारी् से रुभार् मभन्द्न नहीां, उसी तरह पुरुर्ष से प्रकृनत मभन्द्न नहीांजैसे कृपाननिान परमानन्द्ददाता भर्ा्न राम ननत्य व्यापक र् अनन्द्त हैं, रै्से है उनकी कृपा भी ननत्य अनन्द्त र् सर् शव्यापक है। अत:, उनकी कृपा सम्पूर् शर्श्र्: चर-अचर पर त्रबना फकसी भेदभार् के ननरांतर बरसती ही रहती है। धचरूपा् भर्त भास्ती कृपादेर्ी उस कृपारस को ननरांतर लुटाते ेहुए कभी नहीांअघाती, इसमल फक र्े कल्यार्कारररी् जर्दम्बा जो हैं। पुि, कुपुि हो सकता है, परन्द्तु माता कुमाल नहीां होती। र्ह सदा सर्दशा अपनी सताांन का कल्यार् ही चाहती है और उस पर कृ करती ही रहती है।

भक्तर्त्सल करुर्ाननिान भर्ा्न राघरे्न्द्र अपने जनों पर तो कृपा करते ही परन्द्तु उनमें र्ैलिर्ता यह है फक र्ुिओांपर भी कृपा करते हैं। उनके र्ुिुर्ए क्योंफक र्े बैरी हैं और उन्द्हें नष्ट करना चाहते हैं, उनकी अहेतु की कृपादृजष्ट से र्ांच नही ांरहते। उनकी सतत् ्प्रर्ाहर्ीला सहज कृपा सर्कशामलक है और र्ह सिानों ननभरश नही ांकरती। र्ह अकारर् ही सब पर बरसती रहती है, क्योंफक र्ह देर् का स्र्ु और व्यजक्त से परे है। र्ह सर्रूशपों में सर्र्श प्रकामर्त होती है। कृपा और कृपा दो मभन्द्न तत्र् नही ांहैं। रािसराज रार् श्रीराम का नाम ही ममटा देना चाहता उसने श्रीराम एर् ांलक्ष्मर्जी को मार डालनेके मलए घमासान युद्ि फकया। परन्रू र्भूमम में जब उसके रर् र् सब आयुि र्नष्ट हो र्ये और र्ह मरर्ोन्द्मुख हो र्ए तब दयालु प्रभु के हृदय में करुर्ा का सचाांर हो र्या और रे्रार् से बोले - (र्ाल्मीफक रामायर्) फक आज तुमने ेबडा भयांकर युद्ि फकया है और मेरे बडे–ेबडे ेर्ीरों को आहत भी कर हदया है, परन्द्तु तुम बहुत र्क र्ये हो और अस्ि-र्सि हीन हो र्ये हो। ऐसी ननस्सहाय हालत में मैं तुमको मारना नही ांचाहता, तुम लकांा में जाकर र्श्राम करो और स्र्स्र् होकर तर्ा आयुिों से सुसजज्जत होकर मेरे से आकर युद्ि करो और फफर मेरे बल को देखो। ऐसी दया, ऐसी कृपा क्या कोई सािारर् व्यजक्त कर सकता है, ऐसी दयालुता, ऐसी कृपात्र्सलता कृपा के सार्र भर्ा्न राम में ही देखी जाती है। र्े तो सािात् ्कृपा की मूनत श ही हैं। उनकी कृपा ऐसी अहेतु की है फक जीर्नपयन्द्शत दुष्कुम शकरने र्ाले रािसों एर् ांअसुरों को भी जजन्द्होंने भर्ा्न के र्ुद्ि रर् में तन-त्यार् फकया, अपना परमिाम प्रदान फकया। इसमलए कहा है- "जासु कृपा नहह ां कृपा अघाती।" फकतना सार्कश र् उपयुक्त र्र्शेर्र् है ।।३।।

राम सुस्र्ामम कुसैर्क मोसी । तिज हदमस देझख दयातिचध पोसो ।।

लोकहुँ बेद सुसाहहब रीिी । त्रबिय र्सिु पहर्ाचि प्रीिी ।।

।। इति श्री राम महहमा समाप्ि ।।

3. मनु र्तरूपा बरदान

मूकं करोति ि ाचालं पंगुं लंघयिे चगररम् ् ।
यत्कृपामहिं ि न्दे परमिांद माधिम् ् ।।

स्ायिंभूमिु अर सिरूपा । स्जन्दह िें भै ि रसृसृकट अिूपा ॥
दंपति धरम आचरि ि ीका । अजहुँ गाि श्रुति स्जन्दह कै लीका ॥
िृप उत्तािपाद सिु ि ासू । ध्रुि हरर भगि भयउ सिु जासू ॥
लघु सिु ि ाम वप्रयव्रि ि ाही । बेद पुराि प्रसंसहह जाही ॥
देिहूति पुति ि ासु ुकुमारी । जो मुति कदिम कै वप्रय ि ारी ॥
आहद देि प्रभु दीि दयाला । जठर धरेउ जेहह कवपल कृपाला ॥
सांख्य सास्् स्जन्दह प्रगट बखािा । ि त्त्् त्रबचार तिपुि भगिािा ॥
िेहह मिु राज कीन्दह बहु काला । प्रभु आयसु सब त्रबचध प्रतिपाला ॥
दोह-होइ ि विषय त्रबराग गिृ बसि भा चौथपि ।
हृदय ें बहुि दुखु लाग जन्म गयउ हररभगति त्रबिु ।।142||
बरबस राज सिुहह ि ब दीन्दहा । ि ारर समिे गिि बि कीन्दहा ॥
िीरथबर ि ैममष त्रबख्यािा । अति पुिीि साधक मसचध दािा ॥
बसहहं ि हाँ मुति मसद्ध समाजा। ि हूँ हहय ँहरवष चलेउ मिु राजा ॥
पंथ जाि सोहहहं मतिधीरा । ग्याि भगति जिु धरे सरीरा ॥
पहुँचे जाइ धेिुमति ि ीरा । हरवष ि हािे तिरमल ि ीरा ॥
आए ममलि मसद्ध मुति ग्यािी । धरम धुरंधर िृपररवष जािी ॥
जहें जहूँ ि ीरथ रहे सुहाए । मुतिन्दह सकल सादर करिाए ॥
कृस सरीर मुतिपट पररधािा । सि समाज तिि सुिहहं पुरािा ॥
दोहा - द्िादस अच्छर मंत्र पुति जपहहं सहहि अिुराग ।

बासुदेि पद पंकरुह दंपति मि अति लाग ||143||

करहहं अहार साक ि ल कंदा । सुममरहहं ब्रह्म सस्च्चदािंदा ।।
पुति हरर हेिु करि ि प लागे । बारर अधार मूल ि ल त्यागे ।।

उर अमभलाष तिरंरि होई । देझखअ ियि परम प्रभु सोई ।
अगिु अखंड र्अि आिदी । जेहह चचंहिहं ंपरमारथबादी ।।
तिि िति जेहह बेद तिरूपा । तिजिांद तिरपाचध अिूपा ॥
संप्रभु त्रबरंचच त्रबकिु भगिाा। उपजहहं ंजासु अंस िे िाा ।।
ऐसेउ प्रभु सेिक बस अहहीं। भक्ति हेिु लीला िििु गहई ॥
जौं यह बचि सत्य श्रुति भाषा । िौ हमार पूज्जहह अमभलाषा ।।
दोहा-एहह त्रबचध बीिबरष षट सहस बारर आहार ।
संबि सप्ि सहस्ि पुिति, रहे समीर अधार ।।144||
बरष सहस दस त्यागेउ सोऊ । ठाढ़े रहे एक पद दोऊ ॥
त्रबचध हरर हर िप देझख अपारा। मिु समीप आये बहु बारा ।।
मागहु बर बहु भातँूि लोभाए । परम धीर िहहं ंचलहहं ंचलाए ।।
अस्स्थमाि होइ रहे सरीरा। िदवप मिाग मिहहं ंिहहं ंपीरा ।।
प्रभु सबग्यि दास तिज जािी। गति अिन्य िापस िृप रािी ।।
मागु मागु बर भै िभ बािी। परम गभीर कृपामिृ सािी ।।
मिृक स्जआिति चगरा सुहाई। श्रिि रंध्र होइ उर जब आई ।।
हकट पुकट िि भए सुहाए । मािहुँ अबहहं ंभि िे आए ।।
दोहा-श्रिि सुधा सम बचि सुति पुलक प्रिुस्ल्लि गाि ।
बोले मिु करर दंडिि प्रेम ि हृदय समाि ।।146।।

कानों से प्रभु के अमृतृमय र्चन सुनकर महाराज मनुइतने ेप्रसन्द्न हुए और उनका र्रीर इतना पुलकायमान हो र्या फक उनका प्रेम उनके हृदय में नहीां समा रहा र्ा। र्े दांडर्त कर बोले ...

सुिु सेिक सुरिर सुरधेिु । त्रबचध हरर हर बंहदि पद रेिू ।।
सेिि सुलभ सकल सुख दायक । प्रििपाल सचराचर िायक ।।

हे सेर्कों के कल्पतरु स्र्रूप प्रभु! हे भक्तों के कामिेनु! आपके चरर्ों की रज की र्ांना ब्रह्मा, र्ष्र्ु और महेर् भी करते हैं। आप सबके र्ांनीय और पूजनीय हैं। हे र्रर्ार्तों के रक्षक! हे अर्खल चराचर के स्र्ामी! सुननये, आप सेर्ा (भजन) करनेसे सब को सुलभ हैं और सब को सुख देनेर्ाले हैं 111, 211

जौं अिाथ हहि हम पर िेहू । िौ प्रसन्द्ि होइ यह बर देहू ।।
जो सरूप बस मसि मि माहीं। जेहह कारि मुति िियि कराहीं ॥
जो भुसुंडड मि मािस हंसा । सगुि अगुि जेहह तिगम प्रसंसा ॥

देखहहं ंहम सो रूप भरर लोचि । कृपा करहु प्रिरति मोचि ॥

हे अनार्ों के हहतकारी प्रभु! यहद आपकी हम पर दया है तो प्रसन्द्न होकर हमे यह र् दीजजये फक आपका जो स्रूप मर्ज़ी के हृदय में बसता है, जजस स्रूप के दर्नश के मलए मुनन र् यत्न करते हैं, जो स्रूप काकभुरुडांड जी के मन रूपी मानसरोर में हांस रूप से ननर्ास करता है और र्ेद जजसका र्ुर्ान करते हैं फक जो ननर्ुर्श होते हुए सर्ुर् है और सर्ुर् होतेहुए ननर्ुर्श हैं, उसका हम नि भरकर दर्नश करें। हे र्र्ातों के दु:ख दूरू करने र्ाले स्ामी! आप हम पर ऐसी कृपा करें फक हम आपके रूप को जी भर के देखें।

कर्ांर जी के हृदय में भर्ान का कौन-सा रूप बसता है? स्र्यां महादेर् जी अपनेश्रमुख से धर्रराज कुमारी के प्रनत कहते ेहैं-

बन्द्दौं बाल रूप सोइ रामू। सब मसतघ सुलभ जपि जेहह िामू।।

फफर भर्ान राम का जन्द्म महोत्सर् र्र्नश करते हुए र्े कहतेहैं -

औरउ एक कहूँ तिज चोरी। सुि चगररजा अति दृढ़ मति िोरी ।।
कागभुसुंडड संग हम दोऊ । मिुज रूप जािइ िहहं ंकोऊ ॥
परमािंद प्ेरम सुख िूले । बीचथन्द्ह फिरहहं ंमगि मि भूले ॥

इस कर्न से ज्ञात होता है फक मर्ज़ी को भर्ान राम का बाल रूप अधिक प्रय है और र्ही बाल रूप सदा उनके मन में बसता है।

अब भुरुडांी जी के मन मानस में जो रूप ननर्ास करता है, उसे भी उन्द्हींके मु से सुननये -

जन्द्म महोत्सि देखउूँ जाई । बरष पाचूँ िहूँ रहऊूँ लोभाई।
इकटदेि मम बालक रामा । सोभा बपुष कोहट सि कामा ।।
तिज प्रभु बदि तिहारर तिहारी। लोचि सुिल करउूँ उरगारी ॥

इस तरह मसद् होता है फक महात्मा काकभुरुडांी भी भर्ान राम के बाल रूप के पुजारी हैं। मुननर् जैसे र्ाल्मीफक, र्भर्ां, सुतीक्ष्र्, भरद्र्ाज, अर्स्त्य, मर्र्ष आहद भी सब परात्पर भर्ान के राम रूप के भक्त र्े और उसी रूप के दर्नश के अमभलार्षी र्े। अतः, दम्पत्त्त ने उसी र्श्र् र्मोहन राम रूप के दर्नश की इच्छा की जजससे भर्ान नेपूर् शफकया और उन्द्हें बाल चररत का सुख भी प्रदान फकया।

दंपति बचि परम वप्रय लागे । मृदुल ुत्रबिी प्ेरम रस पागे ।।
भगि बछल प्रभु कृपातििािा। त्रबस्बास प्रगटे भगिािा ।।

भक्तों के ऊपर अनुग्रह करने र्ाले, दया के सार्, सारे चराचर में रमनेर्ाले, सर्वर्यापक भर्ान को राजा रानी के र्नम्र और मिुर र्चन बहुत ही र्प्रय लरे्। उनके प्रेम से सने हुए कोमल र्चनों को सुनकर सारे चराचर में ओत-प्रोत रहने ेर्ाले प्रभु प्रर्ट हो र्ये।

दोहा–ील सरोरह ील मति ील ीरधर स्याम ।
लाजहहं ि सोभा तिरझख कोहट-कोहट सि काम ||146||
सरद मयंक बदि छत्रब सीा । चार कपोल चचबुक दर ग्रीा ।।
अघर अरि रद सुन्दर ासा । त्रबधुकर तिकर त्रबतिंदंक हासा ।।
ि अंबुज अंबक छत्रब ीकी । चचिति लमलि ििाो जी की ।।
भृकुहट मिोज चाप छत्रब हारी । तिलक ललाट पटल दुति कारी ।।
कुंडल मकर मुकुट मसर भ्राजा । कुहटल केस जिु मधुप समाजा ।।
उर श्रीबत्स रचचर बिमाला । पहदकहार भूषण मति जाला ।।
केहरर कंघर चार जिेऊ । बाहु विभूषि सुन्दर िऊ ।।
करर कर सररस सुभग भुजदंडा । कहट तिषंग कर सर कोदंडा ॥
दोहा–ड़ि त्रबतिंदंक पिी पट, उदर रेख बर ीति ।
ामिभ मिोहर लेति जिु जमिु भिैर छत्रब छीति ।।147।।
पद राजिी बरति िहहं जाहीं। मुति मि मधुप बसहहं जेन्दह माहीं॥
बाम भाग सोममभि अिुकूला । आहदसस्क् छित्रबतिचध जगमूला ।।
जासु अंस उपजहहं गिुखािी । अगिति लस्च्छ उमा ब्रह्मािी ।।
भृकुहट त्रबलास जासु जग होई । राम बाम हदमस सीा सोई ॥
छत्रबसमुर हरर रूप त्रबलोकी । एकटक रहे ियि पट रोकी ॥
चचिहहं सादर रूप अिूपा । ृसृप्ि मािहहं मिु सिरूपा ॥
हरष त्रबबस ि दसा भुलािी । परे दंड इ गहह पद पािी ॥
मसर परसे प्रभु तिज कर कंजा । ुरि उठाए करिापुंजा ॥
दोहा-बोले कृपातिधाि पुति अति प्रसन्द् मोहह जाति ।
मागहु बर जोइ भाि मि महादाति अिुमाति ।।148।।
सुति प्रभु बचि जोरर जुग पािी । घरर धीरजु बोले मृदु बािी ॥
ाथि देझख पद कमल ुम्हारे । अब पूरे सब काम हमारे ।।
एक लालसा बड़ उर माहीं। सुगम अगम कहह जाति सो ाहीं॥

ुम्हिहह दि अति सुगम गोसाई । अगम लाग मोहहं ंतिज कृपिाई ॥
जथा दररर त्रबबुध िर पाई । बहु संपति मागि सकुचाई ।।
ासुि ुप्रभाउ जिा िहहं ंसोई । िथा हृदय मम संसय होई ॥
सो िुम्ह जािहु अंतरजामी । पुरिहु मोर मिोरथ स्ािमी ।।
सकुच त्रबहाइ मागु िृप मोही । मोरें िहहं ंअदेय कछु िोही ॥
दोहा - दाति मसरोमति कृपातिचध िाथ कहउँ सतिभाउ ।
चाहउँ िुम्हहह समाि सुि प्रभु ुसि किि दुराउ ||149||
देझख प्रीति सुति बचि अमोले । एिमस्ु करुतिचध बोले ॥
आपु सररस खोजौं कहें जाई । िृप िि िय होब म ैआई ॥
सिरूपहह त्रबलोफक कर जोरे । देत्रब मागु बरू जो रुचच िोरे ॥
जो बरू िाथ चिुर िृप मागा। सोइ कृपाल मोहह अति वप्रय लागा ॥
प्रभु परंिु सुहठ होति हढठाई । जदवप भगि हहि िुम्हहह सोहाई ॥
ुम्हि ब्रह्माहद जिक जग स्ािमी । ब्रह्म सकल उर अंिरजामी ॥
अस समुझझ मि संसय होई । कहा जो प्रभु प्रिाि पुति सोई ॥
जेतिज भगि िाथ िि अहहीं। जो सुख पािहहं ंजो गति लहहीं||
दोहा- सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति सोइ तिज चरि सिेहु ।
सोइ त्रबबेक सोइ रहति प्रभु हमहह कृपा करर देहु ।।150||

हे नार्! जो आपके अनन्द्य (खास) भक्त हैं, रे् जो सुख पाते हैं और जो र्नत प्राप्त करते हैं, र्ही सुख, र्ही र्नत, र्ही भजक्त, अपने चरर् कमलों में र्ही स्ाभार्र्क अनुरार्, र्ही र्र्ेक (ज्ञान) और र्ही रहनन, हे प्रभु!ु हमें कृपा करके दीजजये ....

महारानी र्तरूपा प्रार्नशा करती हैं, हे प्रभो! हमें र्ही सुख जजसकी चाह अनाहदकाल से जीर् मिा को है, जजससे पाकर पाना कुछ भी बाकी नही ंरह जाता और जजसे पाकर तीनों काल की स्मृनत का लोप हो जाता है, र्ही अर्र्ल भजक्त, जजसे बडे–बडे ेयोधर् मुनन ढ़ूँढते ेऔर प्राप्त करने ेका यत्न करते हैं, जजसे पाकर र्ीश्रशम िम शका त्यार् हो जाता है, जजसे प्राप्त कर भक्तों का मद और माया नार् हो जाता है, जो स्तिां है, अनुपम है और सतों की कृपा से प्राप्त होती है, प्रभु चरर्ों में र्ही सहज सनेह जजससे फकसी र्स्तु की कामना नही ंरह जाती और जो ससांर सार्र तरने के मलए नौका रूप है, र्ही र्र्ेक जजससे फकसी में फकसी भी प्रकार का कोई र्ुर् या दोर्ष कभी भी न हदखाई दे और ऐसी रहनी जैसे सतां महात्माओंकी होती है, कृपा कर देर्।

ई कौन-सा सुख है जजसकी खोज अनाहद काल से जीर् मिा को है? ई कैसा सुख है, जजसके मलए “योरी् यतन करहह ांजेहह लारी्। भूप राज तजज होहह ांर्रारी्।" ई कैसा सुख है, जजसको प्राप्त करने ेके मलए जीर् मिा अनाहद काल से ससाांर में नाना प्रकार के रु्भारु्भु कमों में रत हैं और जजसे प्राप्त फकये त्रबना जीर् कभी सुखी नहीां होता? ई कौन-सा सुख है, जजसको त्रबना प्राप्त फकये जीर् का आर्ार्मन बदां नहीां होता? ई सुख है आत्म सुख, ब्रह्म सुख, ननज सुख या ननजानदां, ननत्य सुख या ननत्यानदां, ब्रह्मानदां, स्रूपानदां। ई ऐसा सुख है, जजसका कभी िय नहीां और जो ननरांतर प्राप्त होता रहता है, जो इजन्द्रयों से परे है और मन र्ारी् की ५ के बाहर है। जीर् को र् प्रनत िर् सुख तो ममलता रहता है, परन्द्तु ईजन्द्रय जन्द्य होनेसे िर्रक है, आर्मापायी है, उससे जीर् को र्ाांनत नहीां मम. ती। जीर् को र्ाांनत तो तभी ममलती है, जब उसे सुख का भण्डार, आनांद का स र, ननत्यानदां की प्राजप्त होती है। नहदयाँ ँतभी र्ातां और जरूर होती है जब उन्द्हें अरिा् जल का अपार भण्डार (समुर) ममलता है। कहा भी है "सररता जल जलनननधि म्हुँ जाई। होइ अचल जजमम जजर् हरर पाई।" जजस प्रकार नहदयाँ सार्र में पहुँचकर र्ातां हो जाती है, उसी प्रकार बिोर्ान पुरुर्ष यानन भक्त जन अपनेस्र्-स्रूप भर्र्ान आत्मा को प्राप्त कर, उसका दर्नश या अनुभर् कर र्ातां और सुखी होतेहैं। इसी ब्रह्म सुख, ननत्य सुख या आत्मानदां की याचना महारानी र्तरूपा ने भर्र्ान से की।

समस्त प्रारी् मिाका लक्ष्य ननत्य सुख, धचर सुख या ब्रह्मानदां की प्राजप्त है। जन्द्म से लेकर मृत्यु पयन्द्शत प्रारी् ननत्य सुख की खोज में रहता है। उस ननत्य सुख की प्राजप्त के मलए ई रु्भारु्भु कम शकरता रहता है। जब उसे ननत्यानदां प्राप्त हो जाता है, तब उसका रु्भारु्भु कम शकरना बदां हो जाता है। ननत्यानदां की प्राजप्त के मलए ही समस्त कम,श नाना प्रकार के सािन, यम, ननयम, व्रत आहद फकये जाते हैं। जजस आत्मानदां को चोर चोरी में, र्ाबी र्ाब में, दुराचारी दुराचार में ढूँढ़ता है, उसी ननत्यानदां को तपस्री् तप में, योरी् योर् में, सन्द्यांासी सन्द्यांास में, रै्रारी् रै्राग्य में ढूँढ़ता है। उसी सुख की प्राजप्त के मलए पूजा, पाठ, दान, पुण्य, ध्यान, िारर्ा आहद फकये जाते हैं।

इजन्द्रय जन्द्य या र्र्षय जन्द्य जजतनेभी कम शहोतेहैं, उनसे जो सुख ममलता है उनका पररर्ाम दुुःख रूप होता है। मन जन्द्य, र्ारी् जन्द्य, कम शजन्द्य जो भी सुख ममलता है, ई सुख सच्चा सुख नही,ां क्योंफक उससे अतां में दुुःख ममलता है। सुख के अभार् में दुुःख है। जब सुख नहीांतब दुुःख तो ममलता ही है। ई सुख जजसे पाकर सुख-दुुःख दोनों का अभार् हो जाता है, उस सुख की याचना है। जजस िर्रक सुख का पररर्ाम दुुःख है, उस दुुःख से मन दुुःखी होता है। जजस दुुःख का फल सुख है, उससे मन दुुःखी हो जाये, रै्सा सुख भी नहीांचाहहये। ई सुख चाहहये जजसमें न सुख हो, न दुुःख हो, जो सुख-दुुःख से रहहत हो अर्ात्श ्पररर्ामहीन हो। जो सुख आर्मापायी है, उसमें हँसना या रोना होता है। ई सुख जो सुख-दुुःख रहहत हो अर्ात्श ्पररर्ाम रहहत हो, र्ही ननत्य सुख है, आत्म सुख है। बिो रू्न्द्य मनुष्य इस आत्म सुख में रू्न्द्यता का अनुभर् करता है। ई यर्ार् शमें सुख-दुुःख से परे पद है जो आनांद का सार्र है और जजसे प्राप्त कर पाने र्ाले का व्यजक्तत्र् ही खतम हो जाता है। जैसे समुर को पाकर नहदयों को यह याद नही ांरहती फक आज से पहहले हम क्या र्ीां, उसी प्रकार नदी रूपी जीर् को आनांद सार्र की प्राजप्त होने पर यह याद नहीां रहती फक पहहले ई ज्ञानी र्ा या अज्ञानी, बद्िा् या मुक्त। र्ही सुख है जहाँ न सुख है, न दुुःख, न र्ोक है, न मोह, न ज्ञान है, न अज्ञान, न हर्ष शहै, न र्र्षाद और न फकसी प्रकार के अन्द्य र्कार।

जजस सुख को पाकर प्राजप्त अर्ी अप्राजप्त के र्ंकल्पों का नार् हो जाता है, र्ही सुख, र्ही आत्म सुख र्ही आत्मानदां की चाह है।

जजस सुख की प्राजप्त के मलए जीर् अनाहद काल से अनन्द्त सिानाएँ करते आ रहा है, उसी सुख की प्राजप्त के मलए कोई 'है' को पूजता है तो कोई 'नही'ां को मानता है। जब र्ह सुख प्राप्त हो जाता है, तब जीर् न फकसी की ननदाां करता है और न स्तुनत करता है। तब उसके सब सािनों का अतां भी हो जाता है। जब सािनों का अतां हो जाता है, तब फफर स्तुनत या ननदाां फकसकी करेर्ा और क्यों करेर्ा? जहाँ पहुँचकर जजस आनांद सार्र को प्राप्त कर, जीर् की पुनरार्रृ्त्त ससाांर में नहीांहोती, उस सुख की चाह है। जब उसे ब्रह्म सुख ममल र्या तो र्ह र्र्षय जन्द्य िर्र्क सुख के पीछे क्यों दौडेर्ा? मरृ् रुपी मन को जब र्ास्तर्र्क जल रूपी आत्म सुख ममल र्या तब फफर र्ह मरृ्तषृ्र्ा रूपी कामनाओां के पीछे क्यों दौडेर्ा? अपनेअदांर के खजाने को न जानने के कारर् कस्तूरी मरृ् इिर-उिर जर्ांल पहाडों में सुर्ांि के पीछे पार्ल बनेफफरता है। परांतु जब कभी उसकी नाक अपनी नामभ की ओर चली जाती है और जब उसे अपनेही अांदर सुर्ांि के भण्डार का पता चल जाता है, तो उसका भटकना बदां हो जाता है। उसी प्रकार जीर् अपनेही अदांर आत्म सुख रूपी आनांद सार्र को पाकर र्र्षय सुख रूपी बाहरी सुर्ांि के पीछे दौडना छोड देता है। जब सद्र्ुरु की " कृपा से र्ह जान जाता है फक आनदां का सार्र उसी के अांदर हहलोरें मार रहा है, तब उसका भटकना अर्ा सािन बदां हो जाता है। जजस सुख को पाकर मन अमन हो जाता है, धचत्त धचत् ् हो जाता है और बुद्धि बोि हो जाती है, उसी सुख की याचना है।

जजस सुख की याचना महारानी र्तरूपा कर रही है और जजस सुख के मलए योर्ी जतन करहह जेहह लार्ी। भूप राज तजज होहह त्रबरार्ी।" - र्ह क्या एक स्र्ान में ममलता है? नहीां, र्ह तो सारे चराचर में व्याप्त है कर्-कर् में लबालब है। र्ह समस्त जर्त् ्प्रपचां में पररपूर् शहै। र्ह एक देर्ीय न होकर सर्िश ओत-प्रोत है, सारे र्र्श्र् की आत्मा है, सारे चराचर का अजस्तत्र् है। र्ही तुम्हारे अदांर भी है और र्िाा की मजांजल भी तुम्हारे अदांर है। र्ही आत्मा सुख का भण्डार है, आनन्द्द का सार्र है और उसी आत्म सुख की याचना महारानी ने की है।

जजस सुख का फल दु:ख है, र्ह सुख अप्राजप्त की प्राजप्त है। र्ह सुख सािन जन्द्य है और िर्र्क है। जो प्राजप्त की अप्राजप्त है, जो सुख न सुखानुभूनत है और न दु:खानुभूनत है, र्ह कृपा साध्य है। महारानी जी ने जजन छह र्स्तुओां की याचना की है याननन सुख, र्नत, भजक्त, चरर् सनेह, र्र्र्ेक और सतां रहनी र्े सभी कृपा साध्य है, र्े सािन साध्य नहीां हैं। र्े सतांों की कृपा से अर्ा भर्र्ान की कृपा से प्राप्य हैं। उनके मलए मन, र्चन, कम श फकसी के द्र्ारा भी सािन नही ांहो सकता। उनके मलए सतां या भर्र्ान की कृपा ही एकमात्र सािन है। र्े प्राजप्त की प्राजप्त है। यद्यर्प र्े सर्दश ा प्राप्त हैं, परन्द्तु जीर् अपनी अज्ञानता के कारर् उन्द्हें भूला हुआ है। सतां महात्मा की कृपा से जब र्ह आत्म सुख का अनुभर् कर लेता है, तब र्ह ननहाल हो जाता है और उसका भटकना बदां हो जाता है।

मन, र्चन, कम शद्र्ारा जजतने भी काय शहोते हैं र्े अपनेआप 'म'ैं को कुछ मान कर ही होतेहैं और उनका फल दु:खानुभूनत है। मन, र्चन, कम शद्र्ारा होने र्ाले समस्त काय शअपनेआप 'म'ैं आत्मा को जब कुछ न

 मानकर होते हैं, तब अनुभूनत की यानन 'म'ै आत्मा की अनुभूनत होती है। अपनेआप 'म'ै

आत्मा को कुछ न मानना

ही आत्मा का जानना है और जो 'म'ै आत्मा हूँ, र्ही सुख-दुःख से परे है। उसका अनुभर् ही सुख-दुःख से परे ब्रह्म सुख है, आत्मानदां है। जीर्ों के सारे काय शस्र्रूप जस्नत में होतेहैं, चाहे र्े ेअनजाने में ही क्यों न हों। इस प्रकार सारा चराचर स्र्रूपस्र् है, समाधिस्र् है। इसमलए र्ह प्राजप्त की प्राजप्त है, क्योंफक सबको प्राप्त है। परन्द्तु, ु अज्ञानी इसे अप्राजप्त की प्राजप्त मानकर उसके मलए अनाहद काल से सािन करते हुए भटक रहे हैं। सतां महात्मा उसे ि र् मा में लखा देते हैं। जब म ैआत्मा अपने आप को कुछ मानता हूँ, तभी र्दद, स्पर्,श रूप, रस, र्न्द्ि आहद र्र्षयों का र्र्कल्प होता है। परन्द्तु, जब म ैर्र्षयों का अनुभर् करनेचलता हूँ, तब न तो मान्द्यता रहती है और न ही र्र्षयों का अनुभर् होता है। केर्ल 'म ैही म'ै र्ेर्ेष रह जाता हूँ और केर्ल मुझ आत्मा का ही अनुभर् होता है। भूत, र्तमशान, भर्र्ष्य तीनों काल में कभी भी न कुछ हुआ र्ा, न हो रहा है और न होर्ा। र्ा तो म ैआत्मा, हूँ तो म ैआत्मा और रहूँर्ा तो म ैआत्मा। यही ननष्ठा आत्म सुख है, आनांद का सार्र है और इसी र्र्ुद्ि आल सुख की याचना महारानी जी ने की है।

अपनेआप 'म'ै आत्मा को कुछ मानना जीर् देर् का काय शहै और कुछ न मानना आत्म देर् है। जीर् देर् में प्रपचां है, रार्-द्र्ेर्ष है, हर्ष-शर्ोक है, सुख-दुःख है, हानन-लाभ है, पुण्य-पाप है, ि म-शअिम शहै, इत्याहद अनेकों द्र्न्द्द्र् हैं। परन्द्तु, आत्म देर् में इन सबका अत्यतांाभार् है, केर्ल है तो भर्र्ान 'म'ै आत्मा। 'म ैजीर् हूँ' यह र्र्कल्प ही अकेला केर्ल जीर् नही ांहै, अर्पतु 'म'ै और 'हूँ' के बीच में जो कुछ भी आता है सभी जीर् देर् के हैं, जीर् देर् में हैं और जीर् देर् ही है। इसी अनुभूनत से कमजशाल से छुटकारा ममलता है। यहद र्स्तुतः, कमजशाल होता तो उससे कभी छुटकारा नही ांममल सकता र्ा। यर्ार् शमें कमजशाल मान्द्यता है, है ही नही।ां इसी की अनुभूनत आत्म सुख है और इसी के मलए महारानी र्तरूपा की याचना है।

महारानी जी ने छह चीजों की याचना की और उन सबकी प्राजप्त के मलए कृपा करने की प्रार्नशा की। इससे यह मसद्ि होता है फक सब सािन साध्य न होकर कृपा साध्य हैं। सािन द्र्ारा जो सुख प्राप्त होता है र्ह कृत्रिम, अननत्य और ि र्र्क है, र्ह नार् को प्राप्त होता है। परन्द्तु, जो सुख त्रबना फकसी प्रकार के सािन के स्र्ाभार्र्क रीनत से प्राप्त हो या सतां अर्र्ा भर्र्त् ्कृपा का फल हो, र्ह सहज सुख है। ऐसा ही सहज सुख, सहज र्नत, सहज भजक्त, सहज सनेह, सहज र्र्र्ेक और सहज रहनी की याचना है। यह सहज सुख, आत्म सुख या ब्रह्म सुख आत्मा ही है। अननत्य या ि र्र्क सुख का तो अनुभर् होता है, परन्द्तु आत्म सुख या ब्रह्मानन्द्द तो आत्मा ही है। जजस सुख को पाकर मन सुखी हो, र्ह कृत्रिम या ि र्र्क सुख है, उसका अनुभर् 'म'ै आत्मा करता हूँ और जजस सुख को पाकर मन अमन हो जाये, धचत्त-धचत् ्हो जाय और बुद्धि बोि हो जाय, र्ह सहज सुख है, आत्म सुख है। इस सहज सुख में सुखानुभूनत अर्र्ा दुखानुभूनत का अभार् रहता है। सुखानुभूनत और दुःखानुभूनत के अभार् का जो भार् है र्ह सहज सुख है।

मन का स्र्रूप है चचांलता। लय और र्र्क्षेप भी मन के स्र्रूप हैं। मन की चचांलता का नाम ही र्र्क्षेप है। नीदां आ जाना मन का लय है। फकसी र्र्षय के अनुभर् काल में यहद मन र्र्क्षिप्त हो जाय तो र्ह काय शनही ांहो

सकता। यहद मन लय हो जाये तो नीदां आ जानेपर भी काय शनहीांहो सकता। कर्ा के श्रर्् काल में या मसनेमा देखतेसमय मन का न तो लय होता है और न र्ीपिा र्हअमन हो जाता है अर्ात्श ्- मन का कहीां पता नहीांरहता। मन क्यों अमन हो जाता है? इसमलए फक मन नाम की कोई र्स्तुही नही ांहै। जो कुछ है र्ह म ैंआत्मा। 'म'ैं हूँ, इसमलए मन नहीांहै। यहद 'म'ैं अमुक (मान्यता) हूँ, तब तो मन है और यहद 'म'ैं हूँ तो मन नहीांहै। 'म'ैं कैसा = हूँ? 'म'ैं जैसा हूँ, र्ैसा ही हूँ, 'म'ैं जहाँ ँहूँ र्हीां हूँ, 'म'ैं जो हूँ र्ही हूँ। 'म'ैं मन, र्ार्ी = का र्र्षय नहीांहूँ। र्ार्ी नहीां कह सकती फक 'म'ैं कैसा हूँ। फफर भी 'म'ैं हूँ, जो भी हूँ, जैसा भी हूँ, जहाँभी हूँ, 'म'ैं हूँ। मुझ भर्ान आत्मा को मन, बुद्धि आहद की जरूरत = नहीां है, क्योंफक म ैंज्ञान स्र्रूप हूँ। इसमलए मुझ आत्मा को अनुभर् करने ेके मलए - फकसी उपकरर् की जरूरत नहीांहै। 'म'ैं ननत्य ज्ञान स्र्रूप हूँ, मुझ आत्मा का ज्ञान = सहज ज्ञान है। जब 'म'ैं स्र्यां अपनेआप को कैसा हूँ, क्या हूँ, कहाँ ँहूँ आहद र्ार्ी = द्र्ारा व्यक्त करनेमें असमर् शहूँ तो दूसूरे मेरा र्र्नश कैसे कर सकते हैं? 'म'ैं मन र्ार्ी = से परे हूँ, केर्ल सत्ता मि अजस्तत्र् मि र्ेर्ेष रह जाता है। सोइ अनुभूनत, सोइ सुख। सोइ सुख क्यों कहा? सु मानेसुन्दर और ख मानेआकार्। इस तरह सुख का - अर् शहोता है सुन्दर आकार्, ननर्र्कशार, ननलेप आकार्। म ैंआत्मा आकार्र्त् ्सुन्दर, ननलेप, ननर्र्कशार हूँ। मुझ आत्मा में फकसी भी प्रकार का कोई र्र्कार नहीां, 'म'ैं सहज - सुख स्र्रूप हूँ। जजस देर् में 'म'ैं (आत्मा) हूँ, इस सज्ञांानुभूनत का भी अभार् है, र्ह आत्म देर् है। र्ही सहज पद, सहज सुख, सहज समाधि, सहजानदां, ब्रह्मानदां है। 'म'ैं हूँ- इस सज्ञांा की अनुभूनत तो जार्तृ अर्स्र्ा में जब मन, बुद्धि, धचत्त रहता तय होती है, परन्द्तु सुर्षुजप्त अर्स्र्ा में जब मन नहीां रहता तब इसकी अनुभूनत नहीांहोती। इसमलए इस सज्ञांा की अनुभूनत का अभार् सहज सुख है। 'म'ैं हूँ इस सज्ञांा की

भीफकअमुभूअतुभूनतअभार्ानुभूनत फकसी र्र्षय के अनुभर् काल में ही होती है। जब 'म'ैं हूँ, इस सज्ञांा नही,ां तब फफर र्दाहदक र्दों की अनुभूनत कैसे होर्ी? हाँतो केर्ल अजस्तत्र् मि र्ेर्ेष रह जाता है। र्ही सहज सुख की याचना है। महर्र्ष र्ाल्मीफक ने भर्ान राम की महहमा का बखान करते हुए कहा है -

राम सरूप िुम्हार, बचि अगोचर बुद्चध पर ।
अत्रबगि अकथ अपार िेति िेति तिति तिगम कह ।।

'म'ैं आत्मा भर्ान राम इस प्रकार र्र्नशातीत है -

फकसी को बिांन से ननकलनेकी इच्छा क्यों नही ांहोती? इसमलए फक उसका र्ह बन्द्नि उसका स्र्तः का माना हुआ है। क्योंफक, कोई दूसूरा उसे बिाां नही ांरहता, र्ह अपनेको बिांनयुक्त नही ांसमझता। र्ह जानता है फक र्ह जब चाहेर्ा तब ननकल सकेर्ा। परन्द्तु, जब यह मालूम होता है फक फकसी दूसूरे ने उसे बिांन में डाला है, तब उसे घबराहट हो जाती है, उसे दुुःख होता है और र्ह उससे ननकलने ेका प्रयल करता है। स्र्तः के माने हुए बिांन में घबराहट नहीांहोती, उसमें ननजश्चतता रहती है। र्ही सहज सुख।

फकसी ने देखने, सुनने,े हँसने,े रोने, खाने, पीनेका अभ्यास नही ांफकया। फियाय ेंउसकी स्र्ाभार्र्क होती हैं। कोई भी प्रार्ी सहज ही देखता है, सहज है सुनता है, सहज ही खाता है, सहज ही पीता है आहद। मन, र्चन,

कम शद्र्ारा होनेर्ाले काय शसब कृत्रिम होतेहैं या सहज? रे् सब काय शसहज कम शहैं, क्योंफक उन कम शके करने ेका अनुभर् मुझे नही ांहोता। यहद म ैंदेख रहा हूँ या सुन रहा हूँ या खा-द रहा हूँ या कुछ कर रहा हूँ और उस काय शके करने ेका मुझे ेभान होता है, तब जो कुः म ैंकरता हूँ, र्ह कृत्रिम है। पर यहद जब कुछ भी अनुभर् या भान न हो तो र्ही सहा कम शहै। र्ही सहज कम शसुख है और जो कम शकरता है र्ह भी सहज है। जजतने कम शसब हो रहे हैं, रे् सब सहज अर्स्र्ा में ही हो रहे हैं। सहज द्र्ारा सहजार्स्र्ा ही सहज कम शहोतेहैं। जब कम शसहज, सब अर्स्र्ा सहज, तब कम शका करने र्ाल भी सहज होर्ा। जो सुख सहज है, उसे सािना द्र्ारा प्राप्त नहीांफकया जा सकता। भी सहज ही प्राप्त होर्ा इसमलए सोइ सुख।

जब म ैंआत्मा अपनेआप को कुछ मान लेता हूँ फक म ैंजीर् हूँ या म ैंदेह हूँ आहद। तब भी मुझ आत्मा का सहजपना कहीं नहीं चला जाता। अपने आप को कुछ मान लेनेसे तो म ैंर्ह नहीांहो जाता। यहद मानने से म ैंर्ैसा हो जाऊँ, तो उसकी स्मृनत मुझे ेसदा बनी रहती। परन्द्तु, र्ैसा होता नहीां। इससे मसद्ि होता है फक माननेके बाद भी म ैंर्ही रहता हूँ, जैसा मानने ेके पहहले र्ा। र्ार्ी द्र्ारा जो कुछ व्यक्त फकया जाता है र्ह सहज नहीं है, क्योंफक र्ह सोच-समझकर बोला जाता है और बोलने र्ाले को उसका भान रहता है। परन्द्तु, देखने-सुनने ेका कम श सहज है। जजस अर्स्र्ा में देखा सुना जाता है, र्ह अर्स्र्ा सहज है। उसके मलए कोई सािन नही ांफकया जाता इसमलए देखने-सुनने ेर्ाला भी सहज है। मन, र्चन, कम शद्र्ारा रात-हदन जो व्यर्हार होतेहैं रे् सब व्यर्हार सहज और अर्स्र्ा भी सहज, इसमलए व्यर्हार करनेर्ाला भी सहज। इस सहजार्स्र्ा में न सुख का अनुभर् होता है और न दुःुख का। र्ह सुख-दुःुख से परे अर्स्र्ा है। र्ह सहजार्स्र्ा ही सहज सुख है। सहजानुभूनत में सहज सुख का अनुभर् ननहहत है। उसका अनुभर् कर लेनेपर ही सहज सुख की अनुभूनत होती है। यह जो सहज अर्स्र्ा की अनुभूनत है, उसके अनतररक्त कुछ है ही नही।ां यही सहज सुख है, यही सहजार्स्र्ा है, यही सहजानन्द्द है। इस अनुभूनत में देर्, काल, र्स्तु, सुख-दुःुख आहद का अभार् रहता है। इसका अनुभर् सहज, इसकी अर्स्र्ा सहज, इसका अनुभर्कत्ता शसहज, इसका अनुभर् करानेर्ाला सहज, इसका सब कुछ सहज है। यही सहज सुख है, सहज ही सुख है और इसी सहज सुख के मलए महारानी र्तरूपा की याचना है।

2. सोइगति -

र्नत के चार अर् शहोतेहैं र्मन, मिो, ज्ञान और प्राजप्त। यहाँ पर र्नत का अर् शमिो या मुजक्त मलया र्या है। कैसी र्नत ? कैसी मुजक्त? स्र्ाभार्र्क र्नत या सहज मुजक्त। ससाांर में कोई प्रार्ी ऐसा नही ांजो बांिना चाहता हो। सब ही मिो चाहते हैं। सब ही स्र्तांिता की बाँछा करते हैं। प्रार्ीमाि मुक्त रहना चाहते हैं। एक मुजक्त होती है बांि की अपेिा और दूसूरी होती है स्र्ाभार्र्क। बांि की अपेिा जो मुजक्त है र्ह कृत्रिम है, सािन जन्द्य है और सािन से ममलती है। दूसूरी मुजक्त स्र्ाभार्र्क मुजक्त है, यह सािन जन्द्य न होकर कृपा साध्य है। अपनेआप में आत्मा को कुछ मान लेना यही बांिन स्र्रूप है और अपनेआप को कुछ न मानना जैसे का तैसे जानना, यही मिो है।

ननरालबाीपननर्षद में ब्रह्म, ईश्र्र, जीर्, प्रकृनत, परमात्मा, जानत, कम-शअक ज्ञान-अज्ञान, बिां-मिो, रुरु-मर्ष्य, र्द्रान-मूख,श सन्द्यांासी आहद की व्याख की र्यी है। सब िमों को पररत्यार् करके ननरहांकार होकर श्रोत्रिय ब्रह्मननष्ठ सद्रुर की र्र् में जाकर "अहां ब्रह्माजस्म", "तत्ममस', सर् शखलुममदां ब्रह्म नेहनानाफक फकांचन इत्याहद। महार्ाक्यों द्र्ारा बार-बार र्ेचार करके अपने स्रूप भर्ीन आर् को ननश्चय करके ननर्र्कशल्प समाधि में अर्ात्श ्अपनेस्रूप आत्मा में जस्त होका जो स्तिां र्ेचरता है, र्ही सन्द्यांासी है, र्ही पूज्य है, र्ही पडांडत है, र्ही परमहांर् है, र्ही ब्राह्मर् है, र्ही अर्ूित है और र्ही मुक्त है। बिां की अपेिा जो मुजक्त है, क मुजक्त नही ांचाहहए, स्र्ाभार्र्क मिो चाहहए। हृदय में जो अज्ञान की ग्रधांर् है उसक खुलना ही मिो है। बांिहै-ऐसा मानकर ही बिांन से छुटकारा पाने का सकांल्प होन है, परन्द्तु महारानी र्तरूपा की याचना तो सहज मिो अर्ाशत् ् स्र्ाभार्र्क र्नत मलए है। बिांन यहद र्ास्तर्र्क है तो उसकी ननर्ृर्त्त नहीांहो सकती, क्योंफक सत्य क नार् नहीां होता। बिांन यहद असत्य है तो मान्द्यता होने के कारर् र्ह है ही नहीां, फफ छुटकारा या मुजक्त फकससे? अभार् रूप पदार् शसे कैसा बिांन और कैसा छुटकारा सत्यासत्य कहना भी दोर्षपूर् शहै। इसमलए बिांन की िारर्ा ही र्तत है। बिांन तीन काल में है ही नहीां। बिांन का र्ेकल्प ही बिां है और मिो का र्ेकल्प ही मुजक्त है। क और मिो के र्ेकल्पों से रहहत जो अर्स्था है र्ही स्र्ाभार्र्क मिो है, र्ही सहर र्नत है।

यहद ऐसा कहो फक "म ैंबद् हूँ" तो फफर प्रश्न उठता है फक तुम्हें बिाांा फकसनेयहद कहो फक – 'म ैंमुक्त हूँ' - तो फफर फकसनेमुक्त फकया और फकससे मुक्त फकया म ैंअपनेआपको नही ांजानता, क्या इसमलए म ैंबद् हूँ? अपनेआपको जो माया ईर् न जाने र्ही जीर् है और जो अपनेआप को माया का ईर् जानेमर्र् है। तब कौन है, जो अपने आपको माया का ईर् न जानने ेके कारर् जीर् कहलाता है? जीर् तो है नही।ां जाननेसे मर्र् और न जानने ेसे जीर् नाम पडा है। र्ह र्ही है ज जीर् है और न मर्र् है। जब र्ह र्ही है तो उसमें न बिां है और न मिो है। बिांन मान्द्यता में जीर् है और मिो की मान्द्यता में मर्र् है। बद् दिर्ा में जीर् और मुक्त दा में मर्र्। ऐसा जो ननश्चय है, ऐसी जो जस्नत है, र्ही सहज र्नत है। बिां की अपे मिो है। बांिनि के अभार् में मिो का भी अभार् है। उसी तरह जीर् के अभार् में रर का भी अभार् है। इसमलए न बिां है और न मिो है। न जीर् है, न मर्र् है। ऐसा ननश्चय, ऐसी जो जस्नत, र्ही सहज र्नत है।

यहद म ैंकहता हूँ में ऐसा हूँ तो ऐसा को जानकर ही तो म ैंकहता हूँ फक म ैंऐसा हूँ। तो न तो म ैंऐसा को नहीां जानता और न म ैंजैसा हूँ इसको नही ांजानता। म ैंदोनों को जानता हूँ। तो फफर अज्ञान कहाँर्या? अज्ञान है ही नही।ां जब अज्ञान नही ांतब बिां भी नही।ां ऐसा जो देर् है, ऐसी जो जस्नत है, र्ही सहज र्नत है, तो फफर अज्ञान फकसमें, अज्ञान है फकसको और अज्ञान फकस पर? यहद कहो फक मुझ आत्मा में अज्ञान है या मुझ आत्मा को अज्ञान है या मुझ आत्मा का अज्ञान है या मुझ आत्मा पर अज्ञान है, तो क्या 'म ैंहूँ' इसका भी अज्ञान फकसी को है? जब 'म ैंहूँ' इसका अज्ञान फकसी को नहीां, तब बिांन कहाँ?ँ जब बिांन नहीां तब मिो भी नही।ां इस तरह बिांन से मुजक्त, मिो से मुजक्त, अज्ञान से मुजक्त और ज्ञान से मुजक्त, यानन सब प्रकार की मान्द्यताओां से मुजक्त। ऐसा जो ज्ञान है, ऐसा जो ननश्चय है, र्ही सहज र्नत है। यह सािन साध्य नहीां है। यह सबको स्र्ाभार्र्क रूप से प्राप्त है। कोई बद् निहीां है, सब मुक्त हैं। सद्रुरु मुक्त को ही मुजक्त लखाते हैं। बद् िको मुजक्त नही ांहदलाते। जजस प्रकार

रि्, घोडा नहींहो सकता, उसी प्रकार जीर् भी ब्रह्म नहींहो सकता। ब्रह्म ही ब्रह्म होता है। ऐसा जो ननश्चय है र्ही सहज र्नत है।

र्नत मानेमिो और र्नत मानेज्ञान भी होता है। मुझ आत्मा का जो जानना िम शहै, उसको सीखने के मलए क्या कोई मरि्क की आर्श्यकता होती है या कोई सािन करना पडता है? नही,ां यह ज्ञान स्र्ाभार्क है। म ैं आत्मा अनाहदकाल से जान रहा हूँ। यहद यह ज्ञान कृत्रिम होता है, तो आज तक उसमें कुछ न कुछ कमी हो ही जाती। परन्द्तुउसमें कभी कमी नहीं होती, ज्ञान का भण्डार अटूट है। सािन द्र्ारा प्राप्त ज्ञान यानन सीखा हुआ ज्ञान भूल जाता है। परन्द्तु, स्र्ाभार्क ज्ञान मुझ आत्मा का सहज ज्ञान अखडां है, र्ह कभी नही ांभूलता। म ैंकब से जानता हूँ इसे कोई नही ांजानता। इस सहज ज्ञान या स्र्ाभार्क ज्ञान को ही सहज र्नत कहते ेहैं। जब म ैंसब जानता हूँ, तब मेरे ज्ञान नापनेमें कभी कोई कमी नही ांआती, तब फफर अज्ञान कहाँ?ँ "ज्ञान अखण्ड एक मसताबर'। मुझ आत्मा का ज्ञान अखण्ड है। में आत्मा सर् शकाल में, सर् शअर्स्र्ा में ज्ञान स्र्रूप हूँ। सतां महात्मा इसी सहज ज्ञान का अनुभर् करते हैं। इसी सहज ज्ञान को, सहज पद भी कहते हैं। यही सहज र्नत है।

ननश्चय करते-करते बुद्धि र्क जाती है, धचतांन करते-करते धचत्त र्क जाता है, सोचते-सोचते मन र्क जाता है, चलते-चलते पैर र्क जाते हैं, देखते सुनते ेर् अन्द्य काम करते-करते आँख, कान आहद सब इजन्द्रयाँभी र्क जाती हैं, परन्द्तुम ैंआत्मा जानते-जानते कभी नही ांर्कता, इसमलए म ैंआत्मा अखण्ड ज्ञान स्र्रूप हूँ। इसी को सहज प्रकार् भी कहते हैं। सहज प्रकार् ही सहज ज्ञान है, भर्ान आत्मा है और यही सहज र्नत है।

जानना फिया है। इससे मालूम होता है फक जानने ेर्ाला जानने की फिया से मभि है। परन्द्तुनहींयर्ार् शमें ऐसा नहींहै। जजस प्रकार आँख और देखना, कान और सुनना अलर्-अलर् नही,ां जजस प्रकार स्र्भार् से स्र्भार्ी मभन्द्न नहीं, उसी प्रकार जाननेर्ाला जानने से मभन्द्न नहीं। इसमलए मुझ आत्मा का जाननापना मुझ आत्मा से मभन्द्न नही।ां जानना ही मुझ आत्मा का िम शहै, स्र्भार् है। छोटे बच्चेको भी ज्ञान है। पैदा होतेही र्ह देखता है, सुनता है, हँसता है, पीता है इत्याहद। यहद उसे ज्ञानर होता तो र्ह न तो देखता, न रोता, न हँसता, न पीता इत्याहद कुछ भी कम शनहींकरता। उसका र्ह ज्ञान सहज ज्ञान है, इसमलए फक आत्मा अखण्ड ज्ञान स्र्रूप है।

'म ैंनही ांजानता' - इस बात को म ैंजानता हूँ। 'म'ैं जानता हूँ' - इसको भी म ैंजानता हूँ। जानना और नहीं जानना दोनों को म ैंजानता हूँ। इसमलए म ैंआत्मा सहज ज्ञान स्र्रूप हूँ। यह सहज ज्ञान है और सािन का र्र्षय न होकर कृपा साध्य है। इस पर सबको अधिकार है। म ैंबद्ि हूँ, तब भी 'म'ैं हूँ। म ैंमुक्त हूँ, तब भी म ैंहूँ। म ैंआत्मा हर हाल में हूँ। 'म'ैं आत्मा पर कोई बिांन नहीं, म ैंसर्दशा मुक्त हूँ। जब म ैंज्ञान प्राप्त करूँ तब भी मुक्त और न ज्ञान प्राप्त करूँ तब भी मुक्ता बिांन मानना ही बिांन का कारर् है। सब स्र्ाभार्कतः ही मुक्त हैं, ऐसा ज्ञान ही सहज ज्ञान है। जैसा म ैंसहज हूँ, जैसा में सहज ज्ञान स्र्रूप हूँ, र्ैसा ही सब कोई है, न कोई कम है और न कोई ज्यादा है। सब कोई सहज ज्ञान स्र्रूप हैं। म ैंज्ञानी हूँ या म ैंब्रह्म हूँ, इस ज्ञान के मलए मलखना-पढ़ना, सीखना आहद की जरूरत है। परन्द्तु 'म ैंहूँ' इसके मलए मलखने- पढ़ने, सीखने की आर्श्यकता नही।ां यह कृपा साध्य है और

इसीमलए महारानी जी याचना की फक 'मोहह ांकृपा करर देहु' । यही कृपा साध्य ज्ञान है और यही सहज र्नत है। इसीमलए कहा र्या है -

दुलुभिोविषय त्यागाः दुलुभंित्दिशिम् ्।
दुलुभिो सहजािस्था, सद्गुरोः करणां त्रबिा ।।

फफर कैसी र्नत ? नहदयों की सी र्नत। जजस प्रकार नहदयाँ अपनेनाम रूप पररत्यार् कर समुर रूप हो जाती हैं, उसी प्रकार र्ंद्र्ान र्ेंकी पुरुर्ष नाम रूपर मुक्त होकर हदव्य पुरुर्ष जो परमात्मा है, उसको प्राप्त हो जाते हैं। नहदयाँ समुद पहुँचने के पहहले फकनारे पर ही नाम रूप का त्यार् कर देती हैं। नाम रूप ही तो नदी र्ी। नाम रूप का त्यार् करते ही नदी खतम हो र्यी। तब फकसने प्राप्त फकया, फकसको प्राप्त फकया और कौन प्राप्त हुआ? यहद नदी बची रहे तो उसे अतीत की याद रहे। जब नदी ही नहीं रही, तब फकसको याद रहे? जब नहदयों को पूर्ापशर की स्मृनत ही नही ांरहती, तब समुर कौन कहेर्ा? नहदयों नेही अपनेलक्ष्य का नाम समुर रखा र्ा। जब नाम करर् र्ाली नहदयाँ ँही नही ांरहीं, तब समुर कौन कहेर्ा? जब नहदयाँ नही,ां तब समुर नही।ां नहदयों की अपेिा

से समुर र्ा। अब जो बच रहा हैर्ह न नदी है और न समुर है। समुर को प्राप्त होने के बाद ही नहदयों को मोि ममलता है, नहदयों के अतां होनेके बाद। नहदयों के अजस्तत्र् का अभार् अर्ाात ््नहदयों का खतम होना ही नहदयों का मोि है, इसी प्रकार जीर् का मोि है। जीर् का बांधन क्या है? जीर् भार् की मान्यता ही जीर् का बांधन है। आर्ार्मन जीर् का रूप है। म ैंजीर् हूँ-र्ह जीर् का नाम है। म ैंआत्मा को पहहले देह माना। फफर मान्यता फकया फक म ैंदेह हूँ। यह देहामभमान हुआ। जीर् भार् के भार् में जीर् का बांधन है और जीर् भार् के अभार् में जीर् का मोि है। जीर् भार् का अभार् कब और कैसे होता है? जीर् भार् का अभार् आत्म भार् में होता है। आत्म भार् का भार् यह है फक मुझ आत्मा के अनतररक्त कुछ है ही नहीं। 'म ैंहूँ', 'म'ैं जैसा हूँ र्ैसा ही हूँ, इसका दृढ़ ननश्चय ही आत्म भार् है। आज के पहहले म ैंक्या र्ा, आज क्या हूँ, कल क्या रहूँर्ा, आहद की तननक भी याद न रहना तर्ा तीनों कालों तीनों अर्स्र्ाओं के प्रपचांों की स्मृनत का अभार् ही आत्म भार् है। जीर् के मुक्त होने का र्ास्तवर्क अर् शयही है फक जीर् अपनेआप से मुक्त हो जाय। भूत, र्तमशान, भवर्ष्यत् ्की स्मृनत का सर्शा अभार् हो जाना ही अपनेआप से मुक्त हो जानेका र्ास्तवर्क अर् शहै। यही सोइ र्नत है, जजसकी याचना महारानी र्तरूपा ने भर्र्ान से की।

फफर कौन सी र्नत? र्ह र्नत पाने के बाद पाना कुछ बाकी न रहे, जजसे प्राप्त करने ेके बाद प्राप्त करना कुछ भी न रहे, जजसे जान कर जानना कुछ र्ेर्ेष न रहे, जजसे देखकर देखने का अतां हो जाय। जब सारा प्रपचां मुझ आत्मा ही का रूप है, तब जो (प्रपचां) हदखता है, र्ह देखने र्ाला ही हदखता है, क्योंफक हदखने र्ाले का तो अजस्तत्र् ही नही।ां जब हदखना नहीं, तब देखने र्ाला भी नहीं है। । अत: जजस देर् में हदखना और देखना दोनों का अभार् हो, र्ही र्नत।

परात्पर भार् 'म'ैं आत्मा का स्र्भार् जानना है। र्ह त्रबना उपकरर् के जानता है। जजस तरह आँख त्रबना उपकरर् के देखती है, कान त्रबना उपकरर् के सुनता है, नाक त्रबना उपकरर् के अनुभर् सूँघती है। जजह्वा त्रबना

 उपकरर् के रसों का स्र्ाद लेती है, त्र्चा त्रबना उपकरर् के अनुभर् करती है। उसी तरह म ैं आत्मा त्रबना उपकरर्

के जानता हूँ। यहद र्ास्तर् में इजन्द्रयों का अजस्तत्र् हो तो उन्द्हें अपने र्र्षयों का र्र्षय करने ेके मलए उपकरर् की आर्श्यकता हो। परन्द्तु, ऐसा है नही।ां इससे रपर होता है फक इजन्द्रय, इजन्द्रय नहीांहै, र्ह परात्पर भार् 'म'ैं आत्मा है। त्रबना उपकरर् के देखना, सुनना, स्पर् शकरना आहद की सामथ्य शइजन्द्रयों में नहीांहै, र्ह सामर् शमुझ भर्ग्ान आत्मा की है। अर्र आत्मा के िम शमें और इजन्द्रयों के िम शमें र्र्षमता हो, तब तो ये दो पृर्क-पृर्क हैं। क्योंफक दोनों के िम शसमान हैं, इसमलए इजन्द्रया का अजस्तत्र् मभन्द्न नही ांहै, र्े भर्ग्ान आत्मा ही हैं। जजस तरह भर्ग्ान आत्मा रामः सारा प्रपचां र्र्कल्प है, उसी तरह मुझ आत्मा में इजन्द्रयाँ अध्यस्र् हैं। जजस तरह दे को ढूँढ़ने ेसे देह नही ांममलती, उसी तरह इजन्द्रयों को ढूँढने से इजन्द्रयाँनहीांममलती जजस प्रकार 'म'ैं आत्मा के अज्ञानी जीर्ों को 'म'ैं आत्मा देह हदखता हूँ, उसी प्रकार अज्ञान के कारर् 'म'ैं आत्मा ही उन्द्हें इजन्द्रयाँप्रतीत होता हूँ।

देह, इजन्द्रयाँ, मन आहद सब मुझ आत्मा पर अज्ञाननयों के र्र्कल्प हैं। जबः म ैंदेखता हूँ तब आँख देखती हैं, जब म ैंसुनता हूँ तब कान सुनता है। यही बात सभी इजन्द्रयों में लार्ू होती है। इससे मसद्ि होता है फक न तो इजन्द्रयाँहैं और न उनके िम शहैं। जो कुछ है सब भर्ग्ान आत्मा म ैंहै और सब मेरा ही िम शहै। परात्पर भार् "म'ैं' आत्मा का िम शजानना है। इसे जानकर जानना कुछ बाकी नही ांरह जाता, इसे प्राप्त कर और कुछ प्राप्त करना र्ेर्ेष नहीांरह जाता। इसी र्नत की याचना महारानी ने की ।

3. सोइ भगति -

कैसी भजक्त? सहज भजक्त ऐसी सहज भजक्त जजसके मलए कोई सािन न करना पडे।े सहज रूप में भर्ग्ान की ही भजक्त होती है, दूसूरे की नहीां क्योंफक भर्ग्ान सहज है और सहज ही प्राप्त होता है। (सहज माने रुभार्त:) भर्ग्ान आत्मा रुभार्तः भर्ग्ान है। भर्ग्ान आत्मा स्र् का भार् है। भर्ग्ान आ सहज है, उसकी भजक्त सहज है, उसकी प्राजप्त सहज है, उसका धचतांन सहज उसका ध्यान सहज है, उसकी िारर्ा सहज है अर्ाग्त् उसका सब कुछ सहज सहज की ही भजक्त सहज होती है। जजस भजक्त में देर्, काल, र्स्तु की अपेिा नर उसको ही सहज भजक्त कहते ेहैं। जजस भजक्त में मन, र्चन, कम शके ननरोि अर्र्ा अननरोि की अपेिा न हो, र्ही सहज भजक्त है। जजस भजक्त में भक्त और भर्ग्ान की स्मृनत न हो, उसे सहज भजक्त कहते हैं। जजस भजक्त में अरे न हो, अटक या खटक न हो, र्र्धि या ननर्षेि न हो, उसे सहज भजक्त कहते हैं। महारानी र्तरूपा याचना करती हैं फक हे प्रभो! आप हमें कृपा कर ऐसी ही सहज भजक्त दें।

भर्ग्ान आत्मा जो सहज है, उसे देर्, काल, र्स्तु आहद फकसी की अपेिा नहीां। जो सहज है, र्ही सर्र्श सदा लबालब भरा है। 'म'ैं आत्मा सर्देशर् करके पूर्,श सर् शर्स्तु करके पूर्,श पूर् शकरके पूर्,श अपूर् शकरके पूर्,श सर् श करके पूर् शहै। र्ह सर् शमें है, सर्र्श है, सर्ाग्शार है, सब कुछ है। भर्ग्ान् ्सहज होने ेके नाते उसकी भजक्त पूर् शहै और सहज है, इतनी सहज है फक कहा नहीांजा सकता। र्ीता में भर्ग्ान कृष्र् कहते ेहैं- हे अजुनश! सर्कशाल में भर्ग्ान का स्मरर् भी कर और युद्ि भी कर। यहद भर्ग्ान की भजक्त सहज न हो, सरल न हो, सर्कशालीन न हो, तो स्मरर् भी करना और युद्ि भी करना दोनों एक सार् नहीां हो सकते। इससे मसद्ि होता है फक इस स्मरर् का

सबांर्ि मिन, बुद्धि, धचत्त से नही ांहै। यह रमरर् सर् शर्में हो सकता है इसमलए फक भर्ग्ान र्ैकजल्पक नहीां है। र्ैकजल्पक पदार् शके स्मरर् के मलए देर्, काल, र्स्तु की अपेिा होती है, र्ेकल्पिार के मलए नहीां। 'म'ैं आत्मा सर् शर्कल्पों का आिार हूँ, इसमलए मुझ आत्मा का धचतांन, स्मरर् सब काल में हो सकता है और होता है। म ैं आत्मा कहाँ नहीांहूँ, फकसमें नहीांहूँ, क्या नहीां हूँ? जब में आत्मा सहज हूँ, सर्ग्श हूँ, सर् शका सर् शहूँ, तो मुझ भर्ग्ान आत्मा की भजक्त भी सहज है और र्ह सर्ग्श सब काल में हो सकती है। मन, र्ार्ी का र्र्षय र्ैकजल्पक है और म ैं भर्ग्ान आत्मा, मन, र्ार्ी का र्र्षय नहीां है। र्ह अर्ार्ां मनस र्ोचर है, सहज है। जहाँमन, र्ार्ी का व्यापार बदां हो जाता है, र्हीं भर्ग्ान की सहज भजक्त होती है। इसमलए, उस भर्ग्ान आत्मा का स्मरर् सर्कशाल में हो सकता है।

मन को रोकनेके मलए कुछ करना ननर्रिी है और कुछ न करना अननर्रिी है। जजस भजक्त में मन, र्चन, कम शसे कुछ न करना पडे ेर्ही सहज भजक्त है। मन जब रूक जाता है तब क्या 'म'ैं भी रुक जाता हूँ? नही,ां म ैंनहीां रुकता। मन के रूकने को कौन जानता है? उसे म ैंजानता हूँ। यहद मन रुकता है तो मुझेलाभ नही ांऔर नही ांरुकता तो मुझेकोई हानन नही।ां म ैंआत्मा र्ीर्ांका र्ीर्ां रहता हूँ। इसमलए मुझ आत्मा की भजक्त के मलए मन, र्चन, कम श के ननर्रिी अर्र्ा अननर्रिी का कोई प्रयोजन नही।ां यही मुझ आत्मा की सहज भजक्त है।

जजस भजक्त में भक्त और भर्ग्ान की स्मृनत न हो, उसे सहज भजक्त कहते हैं। जब परर्ाना र्मा में जल र्या, तब परर्ाना के जल जानेपर र्मा ही कहाँ ँरहा? जब नदी का अजस्तत्र् ही खतम हो र्या, तब समुर ही कहाँ रहा? उसी तरह जब जीर् ही नहीांरहा, जीर् भार् नहीां रहा, तब ईश्र्र ही कहाँरहा? र्ैकजल्पक भर्ग्ान में यह बात नही ांहोती।

ईसाई में गो ईसाई सा है, पर ईसाईपिेकी खबर ही िहीं।
इस्लाम में िो इस्लाम सा है, मगर मुस्स्लमपिेका असर ही िहीं।
हा ूँहहन्दू ूमें हहन्दू ूसा दीख प़,े पर हहन्दूपिेू का बसर ही िहीं।
हर जाति में जाति उसी की है, पर जाति की उसको खबर ही िहीं।

र्ैकजल्पक भर्ग्ान मुजस्लमों का, ईसाइयों का, हहन्दुओांां का यानन सब मजहब र्ालों तर्ा कट्टरपधांयों का होता है। हहन्दुओांां का र्ैकजल्पक भर्ग्ान कैसा होता है? र्ह चोटी र्ाला है, मालािारी है, चार भुजा र्ाला है, निुर्िारी है, मुरली र्ाला है। इत्याहद। सांतों का, फकीरों का भर्ग्ान, भर्ग्ान है और अन्द्य लोर्ों का भर्ग्ान र्ैकजल्पक है। र्ैकजल्पक भर्ग्ान के कारर् ही झर्डा-लडाई र् खून-खराबा होता है।

जजस भजक्त में अरे न हो र्ह सहज भजक्त है। अपनेस्र्-रुरूप भर्ग्ान आला की भजक्त ही ऐसी है, जजसमें अरे की र्ुजांाइर् नही।ां र्ैकजल्पक भर्ग्ान की भजक्त में अरे रहती है। उसमें ऐसा करो, र्ैसा न करो, इस र्क्त करो, उस र्क्त न करो, इस प्रकार करो, उस प्रकार न करो, यहाँकरो, र्हाँ न करो आहद अटक रहती है। जजस

भजक्त में अटक है उसमें खटक है, जहाँखटक है हाँभटक है, जहाँ ँभटक है हाँलटक है, पतन है, आर्ार्मन है। सहज भजक्त में र्ंधि-ननर्षि की रु्जांाइर् नहीांं-

विचध तिषेध श्रुति शास्र् की, मे् दि सब मेट।
ारियण जाके हृदय, जागि प्ेर्म चपेट ।।

अपनेस्र्-स्र्रूप में ननमग्न हो जाना ही भर्र्ान की सहज भजक्त है। जीर् भाद के अभार् में ही ऐसी सहज भजक्त होती है। कुछ भी न करना, कुछ भी अटक न रहन कृपा का फल है। सहज भजक्त अन-अभ्यास का फल है और अन-अभ्यास आत्म- समपर्श का पयायश है। अभ्यास व्यजक्तत्र् का प्रतीक है और अपनेआप 'म ँ को कुछ मानना ही व्यजक्तत्र् है। अपनेआप 'म ँ को कुछ न मानकर रु्दि् सनातन ब्रह्म सत् ्धचत्, ् आनदां जानना ही सहज भजक्त है, कृत-कृत्य पद है। इसमें न भक्त न भर्र्ान न दृष्टा न दृश्य, न जीर् न ईश्र्र, न ज्ञाता न ज्ञेय, कुछ भी नहीांरह जाता। केर्ल मि 'म ँही म ँ र्ेर्ष रह जाता है।

भजक्त के र्र्ेचन में र्र्नय पत्रिका का ननम्न पद पूर्शरूपेर् लारू् होता है -

रघुपति भगति करि कहठिाई ।
कहि सुगम करिी अपार जीौसोइ जेहह बति आई ।।1।।
जो जेहह कला कुसल ताकहूँ सोइ सुलभ सदा सुखकारी।
सिरी सिमुख जल-प्रिाह सुरसरी बहै गज भारी ।।2।।
ज्यों सकिरा ममलै मसकिा महूँ, बर्लिं ि कोउ त्रबलगिौ ।
अति रसग्य सूच्छम वपपीमलका, त्रबिु प्रयास ही पिौ||3||
सकल दृश्य तिज उदर मेमल, सीौतिरा िस्ज जोगी ।
सोइ हररपद अिुभिै परम सुख, अतिसय द्र्ौत त्रबयोगी ।।4।।
सोक मोह भय हरष हदिस तिमस, देस काल िहें िाहीं ।
िुलिसदास यहह दसाहीि संसय तिरमूल ि जाहीं।।5।।

जहाँ तक र्ार्ी का र्र्षय है सब ही दृश्य है। उसे अपने स्र्रूप में ममलार्ेअर्ात्श ्अपना स्र्रुप आत्मा जानै। "मसया राम मय सब जर् जानी", "र्ासुदेर् सर्मशनत"'। जहाँ तक मन र्ार्ी का र्र्षय है सब र्र्कल्प है। मन, बुद्धि, धचत्त, अहांकार, पचां महाभूत, सब प्रपचां मि, मुझ भर्र्ान आत्मा के त्रबना फकस पर आिाररत होर्ें? म ँआत्मा ही सब र्र्कल्पों का आिार हूँ, मुझ आत्मा से मभन्द्न प्रपचां है ही नही।ां इसमलए म ँआत्मा ही सब प्रपचां हूँ। मुझ आत्मा करके ही प्रपांच की मसद्धि होती है। 'म ँ ही सब कुछ हूँ। मुझ भर्र्ान आत्मा में सब का ममलना होता है। 'म ँ आत्मा से मभन्द्न कुछ रहा ही नही।ां यही हुआ सकल दृश्य ननज उदर मेमल सोर्ैननरा तजज जोर्ी। यहाँ पर सोने का अर् शहै जस्त होना। र्र्कल्पों के अभार् में नर्र्कशल्पता आ जाती है। इसी नर्र्कशल्प अर्स्ा में जस्त होना है। कैसे? ननरा तजज-मोह ननरा तजज-यानन मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ है ही नही ांइस ननश्चय में। मुझ

आत्मा से मभन्द्न अर्ात्श ्मुझ आत्मा के अनतररक्त कुछ है ही नहीां, इस अनुभूनत में, इस ननर्ि्कशल्प अर्स्र्ा में जस्त्त होना ही परम सुख है, आत्म पद है, कैर्ल्य पद है, सहजानन्द्द है, सहज भजक्त है।

श ्   जजस समय मनुष्य र्ाढी ननरा में रहता है, तब प्रपचां का अभार् रहता है, परन्द्तु ननरा अर्ात् स्र्प्नार्स्र्ा में प्रपचां का उदय होता है। जजस प्रकार स्र्प्नार्स्र्ा का प्रपचां स्र्प्न दृष्टा से मभन्द्न नहीांहोता, उसी प्रकार जार्ृत अर्स्र्ा के प्रपांच का दृष्टा जार्ृत के प्रपचां से मभन्द्न नहीां होता। दोनों एक हैं। सजातीय से सजातीय का मेल होता है। सजातीय से र्र्जातीय का मेल नहीां होता। यहद प्रपांच का स्र्रूप और हो और दृष्टा यानन 'म'ैं आत्मा का स्र्रूप कुछ और हो तो दोनों का मेल नहीांहोर्ा। परांतुप्रपचां और प्रपचां दृष्टा 'म'ैं आत्मा सजातीय हैं इसमलए इन दोनों का मेल होता है। यहद प्रपांच मुझ आत्मा से सर्श्ा मभन्द्न होता, तब तो प्रपचां और म ैंआत्मा का मेल कभी नहीां होता। परन्द्तु, दोनों अमभन्द्न हैं, अतः 'म'ैं आत्मा ही प्रपांच हूँ। इस अनुभूनत में 'म'ैं आत्मा के अनतररक्त कुछ रहता ही नहीां और यही हरर पद है, यही परम पद है और यही सहज भजक्त है।

जब महात्मा कार्भुर्ुडाी भर्र्ान राम की बाल लीला देखने अयोध्या र्ये र्े ्तब लीला देखते-देखतेर्े एकदम ऐसे भ्रम में पड र्ये फक यहद ये सजच्चदानदां भर्र्ान हैं तो फफर इनकी यह लीला सािारर् बालकों के समान कैसी? भुर्ुडाी जी चक्कर पड र्ये, जजसे देखकर भर्र्ान हँस हदये। भर्र्ान के हँसते ्ही भुर्ुडाीजी उनके पर में समा र्ये और हाँदो घडी में सब लीला देख मलये, परन्द्तु राम को एक ही देखा लीला देखकर जब महात्मा भुर्ुडाी बाहर आये तब भर्र्ान प्रसन्द्न होकर उनसे र्र माांर्ने को बोले। महात्मा कार्भुर्ुडांड र्र मार्ांते हैं -

अत्रबरल भगति विसुद्ध ि्, श्रुति पुरि जेहह गाि ।
जेहह खोजि जोगीश मुति, प्रभु प्रसाद कोउ पाि ।।

हे प्रभु!ु म ैंकुछ नही ांजानता, मुझे ्आपकी अर्र्ल भजक्त ही चाहहए। (अर्र्लः अ+र्र्ल । अ = नहीांऔर र्र्ल माने जजससे मभन्द्न कोई दूसूरा, इस तरह अर्र्ल क अर् शद्धुआ भर्र्ान आत्मा) जजस भजक्त का र्ायन र्ेद, पुरार् आहद करते हैं, सतां- महात्मा र्ं जजसका ननरूपर् करते हैं, बडे-्बडे ्योर्ी मुनन जजसके मलए याचन करते हैं, परन्द्तु जजसे आपकी कृपा से कोई-कोई ही पातेहैं, र्ही आपकी र्र्ुद्ध भजक्त (र्र्ुद्ध यानन र्र्र्ेष करके र्ुद्धि अर्ात्श ्सब र्र्कारों से रहहत) जो सब र्र्कार से रहहत हो, मुझे ्कृपा करके दीजजये। अर्र्ल तो स्र्यांभर्र्ान आत्मा ही है औ र्ह भर्र्ान नही ांजजससे मभन्द्न कोई दूसूरा हो। भर्र्ान एक है। र्ह एक नही ांजजस मभन्द्न दो या दस, सौ या हजार या लाख आहद कुछ हो। एक के त्रबना फकसी की मसई नही।ां एक ही सबका आिार है और र्ह स्र्तां सत्तार्ान है। अपना स्र्तां अजस्तत रखनेके मलए एक को फकसी की अपेिा नहीां। इसमलए एक भर्र्ान है। जब अर्र् भर्र्ान आत्मा 'म'ैं दूसूरा होता तो उसका ज्ञान बडा या छोटा होता, परन्द्तु ऐसा नही।ां जो ज्ञान, जो जाननापना, जो सतपना एक र्रीर में है, र्ही आत्मा, र्ह ज्ञान, र्ही जाननापना सब र्रीरों में है। जैसा जहाँ ँऔर जो म ैंआत्मा इस र्रीर हूँ, र्ैसा हाँऔर र्ही में आत्मा सर् शर्रीरों में हूँ। जैसा जजसको, जजस प्रकार आत्मा इस र्रीर को जानता हूँ, र्ैसा उसको उसी प्रकार 'म'ैं आत्मा सब र्रीरों सब र्रीरों में जानता हूँ। इसमलए 'म'ैं आत्मा

अर्र्ल हूँ और उसकी भजक्त भी अर्र्ल है। महारानी र्तरूपा नेइसी अर्र्ल भजक्त, आत्म पद, परम पद, कैर्ल्य पद, कृत-कृत्य पद के मलए याचना की है।

'म'ैं आत्मा सबको सब जर्ह से, सब काल में, सब अर्स्र्ाओं में जानता हूँ। न र्रीर अनेक हैं और न 'म'ैं अनेक हूँ। 'म'ैं के त्रबना र्रीर नही ंइसमलए र्रीर अनेक नही।ं 'म'ैं के त्रबना जब र्रीर नहीं, तब म ैंअनेक नही।ं यहद र्कल्पािार म ैंआत्मा न होऊँ, तो मान्यता फकस पर मानी जायेर्ी? इसमलए 'म'ैं ही र्कल्पािार हूँ और 'म'ैं ही र्कल्पक हूँ। 'म'ैं आत्मा एक हूँ, इसके बिो में अन्य का अजस्तत्र् ही नहीं, अन्य की प्रतीनत ही नही।ं इसी भजक्त को श्रुनत पुरार् भी र्ाते हैं और इसी की याचना बडे– बडे ेयोर्ेश्र्र तर्ा मुनीश्र्र भी करते हैं। ऐसी अर्र्ल भजक्त को 'म'ैं ही मसद्ि करता हूँ। 'म'ैं आत्मा ने ही माना और मुझ आत्मा को ही माना सारा कररश्मा 'म'ैं आत्मा का ही है। यही अर्र्ल भजक्त है और इसी र्ुद्ि अर्र्ल भजक्त की याचना महारानी ने की।

इसी अर्र्ल भजक्त को या सहज भजक्त को पाकर भक्तर्र् र्ाश्रशम के अमभमान को त्यार् कर दायरे से बाहर कर इस िरािाम पर स्तिां होकर र्चरतेहैं -

चले हरवष िस्ज िगर िृपृ, िापस ितिक मभखारर ।
स्जमम हरर भगति पाइ श्रम, िजहह आश्रमी चारर ।।

जजस प्रकार र्षाश ऋतु में राजा, तपस्र्ी, बजांारा और मभखारी र्नृ्द एक स्र्ान पर रुक जाते हैं और र्षाश के अतां होते ही र्रद ऋतु के आनेपर अपना-अपना स्र्ान छोडकर चल पडतेहैं, उसी तरह र्रद ऋतु रूपी र्ुद्ि हरर भजक्त को पाकर भक्तर्र् र्ाश्रशम के अमभमान को त्यार् कर अर्ाशत् र्र्् शऔर आश्रम के बिांन को तोडकर इस पृथ्र्ी पर स्तिां होकर र्चरतेहैं। मनुष्य जजस भजक्त को पाकर र्् शऔर आश्रम के दायरे से बाहर ननकलकर पृथ्र्ी पर स्तिां रूप से र्चरतेहैं, उसको ही सहज भजक्त, सहज पद, कृतकृत्य पद कहते ेहैं। जब तक र्ाश्रशम का अमभमान है, तब तक देहामभमान है। देहामभमान देहाध्यास पर आिाररत रहता है और देहाध्यास

स्र्रूप में 'म'ैं देह हूँ, से होता है और देह है, ध्यास के छूटने ेपर देहामभमान अर्ात्
िारर्ा का त्यार् हो जाता है और देहामभमान के अभार् में र्् शऔर आश्रम का भी अमभमान र्ल जाता है। जब र्ाश्रशम का अमभमान र्ल जाता है, जब अपनेआप को र्ुद्ि आत्मा 'म'ैं का 'म'ैं अनुभर् करने ेलर्ता है, तब र्ह भक्त कम शके बिांनों से बाहर ननकल जाता है और श्रुनतयों के बताये मार् शपर चलने के मलए बाध्य नहीं रहता। ऐसी अनुभूनत ही हरर भजक्त है, सहज भजक्त है, अर्र्ल भजक्त है और महारानी र्तरूपा ने इसी के मलए याचना की है। यही है **"सकल दृश्य तिज उदर मेमल तिरा िस्ज सौजोगी।"**

इस ससांार में अज्ञान रूपी रात्रि में परमार्ी-जजसकी दृजष्ट में मुझ आत्मा से मभि कुछ है ही नही–ंऔर प्रपचां र्ंयोर्ी ही यानन जजस की दृजष्ट में प्रपचां नाम की कोई चीज ही नहीं, जार्ते हैं। **"एहह जग जाममति जागहहं ं जोगी। परमारथी प्रपंच त्रबयोगी।"** और **"जातिअ िबहहं ंजिी जागा। जब सब विषय त्रबलास त्रबरागा।"** अनाहद काल की अर्द्या की ननरा से जब जीर् जार्ता है, तब र्ह अनुभर् करता है फक मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ है ही

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 133 नही,ां म ैंही सब कुछ हूँ। उसे अनुभूनत होती है फक न प्रपचां है, न इजन्द्रयाँ है, न देह है, न और कुछ है, सब कुछ 'म'ैं ही 'म'ैं हूँ। परन्द्तु, जब मोह ननर्ा में सोता है, तब कहता है फक म ैंससांारी जीर् हूँ, म ैंजन्द्मता-मरता हूँ, म ैंआता -जाता हूँ, म ैंस्र्ी-नकी हूँ आहद। मोह ननर्ा से जार्ने पर अपने आप म ैंआत्मा से मभन्द्न कुछ नही ांदेखता। उसकी दृजष्ट में हर्ष-शर्ोक, सुख-दुुःख, देर्-काल, हानन- लाभ आहद कुछ भी नही ांरहता, र्ह केर्ल 'म'ैं का ही अनुभर् करता है। उसकी ननर्र्कशल्प अर्स्र्ा हो जाती है और यही ननर्र्कशल्पानुभूनत ही सहज भजक्त है, परम सुख है, आत्मानदां है और इसी के मलए महारानी ने याचना की।

जब तक हरर भजक्त की प्राजप्त नहीांहोती, तब तक सर्ांय र्पययश का नार् नहीां होता। स्र्रूप का बोि होने ेपर ही सांर्य-र्पययश, मद, माया आहद का नार् होता है। कहा र्या है -

त्रबमल ग्यान जल जब सो िहाई। िब रह राम भगति उर छाई ।।
सब कि ेसो दुलुभि सुरराया। राम भगति रि गि मद माया ।।

र्मल ज्ञान मानेआत्म अनुभर्, स्र्रूप का बोि। स्र्रूपानदां रूपी जल मे डुबकी लर्ाना ही रामभजक्त में सराबोर होना है। उस आत्मानुभूनत के फलस्र्रूप आत्मज्ञानी का माया का बांिन (माया अर्ात्श ्मान्द्यता अपने आप 'म'ैं आत्मा को देह मानना) तर्ा उसका मद अर्ात्श ्अमभमान, देहामभमान (यह देह म ैंहूँ, यह देह मेरा है आहद) नार् हो जाता है। राम की भजक्त में सराबोर भक्त, अपने स्र्रूपानदां में सर्दशा ननमग्न रहनेर्ाला तत्र् ज्ञानी न तो कभी माया के चक्कर में फँसता है और न कभी देहामभमान होता है। उसकी दृजष्ट में मसर्ाय एक भर्र्ान आत्मा 'म'ैं के कुछ भी नही ांरहता। यही स्र्ितां भजक्त है। इसी स्र्ितां भजक्त या सहज भजक्त के अिीन ज्ञान- र्ैज्ञान सभी रहतेहैं और महारानी र्तरूपा ने इसी की याचना भर्र्ान से की। यह भजक्त न परा है, न अपरा है, न सर्ुर् ब्रह्म की है और न ननर्ुर्श ब्रह्म की। यह भर्र्ान की भजक्त है, स्र्ितां और सहज। यह भर्र्त् ् कृपा अर्ात्श ्सांत कृपा से प्राप्त होती है। यह सािन साध्य नही ांहै, केर्ल कृपा साध्य है।

4. चौर्ा र्र जो महारानी र्तरूपा ने भर्र्ान से मार्ांा र्ह भर्र्ान के श्रीचरर्ों में सहज सनेह है। सहज सनेह र्ह है जो त्रबना फकसी सािन के, त्रबना फकसी प्रयास के प्राप्त हो। ऐसा सहज सनेह भर्र्त कृपा से ही प्राप्त होता है। जो भक्त हैं, र्े भर्र्ान के भक्त होतेहैं। उनके मलए सर्ुर् ब्रह्म या ननर्ुर्श ब्रह्म में कोई अतांर नही।ां उनके मलए भर्र्ान मानेभर्र्ान, व्यापक भर्र्ान जो चर-अचर में, कर्-कर् में व्याप्त हैं, सर्त्श ठसाठस भरा है। भर्र्ान में सर्ुर् या ननर्ुर्श का र्र्कल्प भक्तों की भार्ना का द्योतक है और भर्र्ान के यर्ार्् शस्र्रूप के अज्ञान का पररर्ाम है। सतां तुलसीदास जी ने कहीां पर भी सर्ुर् ननर्ुर्श , साकार या ननराकार ब्रह्म में भेद नहीां माना है। जो ननर्ुर्श है, र्ही सर्ुर् है और जो सर्ुर् है र्ही ननर्ुर्श है। यर्ा -

सगुिहह अगुिहह िहहं ंकछु भेदा। गािहहं ंमुति पुराि बुध बेदा ।
जो गुि रहहि सगुि सोइ कैसे। जलु हहम उपल त्रबलग िहहं ंजैसे ।।

कांर र्ीता के अतांर्तश भर्ान मर् ने सजच्चदानन्द्द भर्ान श्रीराम के स्रूप का जो र्नश फकया है
की अभेदता के
तरा ऱ्ाहोपरान्द्त त्रबदाई के समय जनक जी ने भर्ान राम की जो स्तुनत की है रे् सर्ुर् ननर्ुर्श
प्रत्यि प्रमार् हैं। ऐसा सर् शव्यापक भर्ान सर्ुर् भी है, जो ननर्ुर्श भी है, उसके चरर् कमलों में सहज सनेह की
याचना महारानी र्तरूपा ने की।

रामानुज भरत बिोर्ान रे्। भर्ान श्रीरामचन्द्र जी के चरर् कमलों में उनका अटूट प्ेरेम रा। फफर भी रे्
र्ीा मैया से याचना करते हैं -

अरथ ि धरम ि काम रचच गति ि चहऊूँ तिरबिा ।
जिम जिम रति राम पद यह बरदािु आेा ।।

जब-जब म ैंजन्द्म िारर् करूँ भर्ान श्रीराम के चरर् कमलों में मेरा सहज सनेह हो, इसके अनतररक्त मुझे ेऔर कुछ नही ांचाहहए। यद्यर्प बिोर्ान को फकसी स्तु की चाह नही ांरहती, तर्ार्प भर्ान के प्रनत कृतज्ञता जतानेको उनके चरर् कमलों में सहज सनेह के मलए प्रार्नशा करते हैं। बिोर्ान होने पर ही भर्ान के चरर् कमलों में सहज सनेह होता है। जो अपनेको ससांारी जीर् मानता है, उसका जीर् हृदय कभी भी कामना रहहत नहीांहो सकता। कामना रहहत आत्म-देर् का ननर्ासी अर्ात्श ्आत्म रे्त्ता ही हो सकता है और ऐसे भक्तों को भर्ान के चरर् कमलों में सहज सनेह की ही आकाांिा रहती है और महारानी र्तरूपा ने भर्ान के चरर् कमलों में ऐसे ही सहज सनेह की याचना की।

भर्ान राम अपनेश्रीमुख से कहते हैं -

िाजी जिक बंधु सिु दारा। िािु धिु भि सुहृद पररिारा।
सब कै ममिा िाग बटोरी। मम पद मिहहं ांबाचूँध बरर डोरी ।।

माता-र्पता, भाई, स्त्री, पिु पररर्ार, तन, िन, िाम आहद सबका माया-मोड मन से त्यार् कर इनके मोह रूपी िारे् को रस्सी के रूप में बटकर भर्ान श्री हरर के चरर् कमलों में बाँि दे। तात्पय,श यह है फक ससांार का, स्जन का तरा अन्द्य सबका मोह-ममता त्यार् कर भर्ान के चरर् कमलों में ननष्कपट प्रीनत करे। जब तक भर्त् ्चररों में अनन्द्य प्ेरेम नही ांहोर्ा, तब तक मोह ममता आहद माया के र्कारो का त्यार् नहीांहोर्ा और हृदय कामना रहहत नहीांहोर्ा। भक्तों के अनन्द्य प्ेरेम, सहज सनेह के र्ीभूत होने के कारर् ही अजन्द्मा, असर्ां, ननर्ुर्श , ननरांजन, ननराकार, सव्र्शयापक, सर्ात्शमा भर्ान राम को र्रीर िारर् कर प्रर्ट होना पडता है। भर्ान फफर कहते भी हैं -

अस सज्जि मम उर बस कैसे। लोभी हृदयेंबसइ धिु जैसे ।
िुम सारररखे संि विप्रय मोरे । धरऊूँ देह िहहं ांआि तिहोरे ॥

ऐसे ही अनन्द्य भक्तों के सहज सनेह के समान श्री चरर्ों में सहज सनेह के मलए महारानी र्तरूपा ने भर्र्ान से याचना की।

5. महारानी र्तरूपा ने पाचांर्ीं र्स्तु ुजो मार्ी है सोइ र्न्र्ेक ? उसका स्र्रूप भर्र्ान के श्रीमुख से -

सिुह्ु िि माया कृि िुि अर दोष अिेक ।
िुि यह उभय ि देझखअहहं ंदेझखअ सो अत्रबबेक ।।
अस त्रबबेक जब देइ त्रबधािा। िब िस्ज दोष िुिहहं ंमि रिा ।।

भर्र्ान श्रीरामचन्द्र जी भरत जी से कहते हैं फक माया रधचत इस ससांार में अनेकों र्ुर् हैं और अनेकों दोर्ष हैं, उनमें इतने र्ुर्-दोर्ष हैं फक जजतनी धर्नती नही ांपरन्द्तु, र्ुर् अर्ाशत् ्र्न्र्ेक यही है फक दोनों को यानन र्ुर् और अर्ुर्् (दोर्ष) कोन देखे, उनको सर्शा त्यार् देर्ें और यहद देखता है तो र्ही अर्न्र्ेक है, अज्ञान है, ऐसा र्न्र्ेक यानन र्ुर् र् अर्ुर्् का त्यार् तभी प्राप्त होता है जब र्ीधाता की कृपा होती है। यह र्न्र्ेक अन्द्य प्रकार से नही ांममलता। कहने ेका तात्पय शयह है फक ऐसा र्न्र्ेक, ऐसा सहज ज्ञान, भर्र्त् ्कृपा पर अर्लजम्बत है। यह कृपा साध्य है, सािन साध्य नही।ां ऐसा र्न्र्ेक जजसमें र्ुर् और दोर्ष दोनों न देखे जायें, दोनों का त्यार् फकया जाय, र्ह परमहांस दृजष्ट, भर्र्त् ्दृजष्ट कहलाता है।

<u>दृजष्ट तीन प्रकार की होती है -</u>

1. काग दृस्कट - जजसमें र्ुर् को त्यार्कर कर दोर्ष को ग्रहर् फकया जाता है।

2. हंस दृस्कट - जजसमें दोर्ष को त्यार् कर र्ुर् ग्रहर् फकया जाता है।

3. परहंस दृस्कट - जजसमें र्ुर् और दोर्ष दोनों को त्यार् कर केर्ल भर्र्ान आत्मा 'म' ैं को ग्रहर् फकया जाता है, जजसमें 'म' ैं आत्मा के अनतररक्त फकसी अन्द्य की प्रतीनत नहीांहोती।

भर्र्त् ्दृजष्ट में र्ुर् या दोर्ष कुछ नहीां हदखता, कुछ नही ांरहता। जहााँअपना आप 'म' ैं आत्मा के अनतररक्त कुछ नही,ां हााँमाया जननत र्ुर्-दोर्ष कहााँ? ँ जब अपने आप 'म' ैं आत्मा को कुछ माना जाता है, तब माया के र् में होना पडता है और तब ही फकसी में दोर्ष और फकसी में र्ुर् हदखाई देते हैं। जब फकसी को नर माना जाता है, तब उसमें र्ुर् और दोर्ष भी हदखता है। जब उसे नारायर् जाना जाता है, तब उसमें र्ुर् हदखते हैं और न दोर्ष हदखते हैं। नारायर् में, भर्र्ान में र्ुर्-दोर्ष नही ांहैं। र्ुर् और दोर्ष मानने ेमें ननहहत है, जानने में नही।ां र्ुर् देखकर रार् होता है और दोर्ष देखकर र्र्र् अर्ा त्यार् होता है। मानना ही अर्न्र्ेक है और जानना र्न्र्ेक है। यहद जानने चलो तो सब कुछ अपना आप 'म' ैं भर्र्ान आत्मा हदखेर्ा। सबको अपना स्र्रूप जानना, अपने आप 'म' ैं आत्मा को 'म' ैं का 'म' ैं ही जानना परमहांस दृजष्ट है और यही र्न्र्ेक है।

माया में रु्र्-दोर्ष की प्रतीनत कैसे होती है? अनाहदकाल से जीर् अपने आपको कुछ न कुछ मानकर फकसी न फकसी काय शमें प्रर्ृत्त होता है। जब अपनेआपको माना फक 'म ैंऐसा हूँ' तो ऐसा मानना ही माया है। इस पद में 'म'ैं के अनतररक्त दूसूरे हदखाई देंरे् और तब अपने अदांर और अपने बाहर भी रु्र्-दोर्ष हदखाई देंरे्। जो जैसा अपनेआपको मानता है र्ैसा ही उसे अपनी परछायी सब जर्ह हदखाई देती है। जो अपनेआपको कुछ न मानकर 'म'ैं जैसा हूँ, र्ैसा ही हूँ-ऐसा जानता है र्ह भर्ग्ान है और यही नर्र्ेक है। जजसका ननश्चय जैसा अपना आप 'म'ैं हूँ र्ैसा ही हूँ-ऐसा हो तो र्ही रु्र्-दोर्ष का त्यार् है और र्ही परमहांस दृजष्ट है। जब अपनेआप 'म'ैं आत्मा को जान लेता हूँ, तब ससांार भी अपने'म'ैं का स्र्रूप हदखाई देता है। जब ससांार अपना आप म ैंहदखाई देता है, तब न रु्र् हदखाई देता है और न दोर्ष हदखाई देता है। अपनेआप 'म'ैं को त्रबना कुछ मानेर्र्कार (काम, िोि आहद) भी सामने नहीां आते। जजतने भी र्र्कार हैं सब अपनेआप 'म'ैं को कुछ माननेपर ही पैदा होतेहैं। अपने आप म ैंको 'म'ैं जानने में फकसी भी प्रकार के र्र्कार का आिमर् नहीांहोता। जो अपनेआप म ैंको 'म'ैं ही जानना है र्ही भर्ग्ान है और यही नर्र्ेक है।

अपनेआप 'म'ैं को - म ैंअमुक हूँ-मानना माया है। इस अमुक भार् का आिार 'म'ैं आत्मा हूँ। त्रबना 'म'ैं के अमुक नही।ां इसमलए 'म'ैं ही अमुक रूपी माया का आिार, पनत, रिक हुआ। भर्ग्ान आत्मा को जान लेने पर ही माया से छुटकारा ममलता है। जब भर्ग्ान आत्मा को यानन 'म'ैं को 'म'ैं जानना ही नर्र्ेक है, तब भर्ग्ान को जानना सहज है। र्ैकजल्पक भर्ग्ान (भर्ग्ान ऐसा है) को जानना कहठन है, परन्द्तु यर्ार्थ शभर्ग्ान को (भर्ग्ान जैसा है र्ैसा ही है) जानना सहज है। 'म'ैं हूँ-त्रबना फकसी मान्द्यता के, त्रबना कोई आकार-प्रकार के, इसका ज्ञान ही सहज नर्र्ेक है। नर्र्ेक का नर्र्ेक होना कृपा साध्य है। यह सािन का नर्र्षय नहीांहै। 'म ैंहूँ' इस नर्र्ेक को प्राप्त करने के मलए फकसी भी प्रकार के सािन की आर्श्यकता नही ांहै। परन्द्तु, यम ननयम द्र्ारा, मन, र्चन, कम श द्र्ारा जो भी सािन फकये जाते हैं, र्े र्ैकजल्पक भर्ग्ान (भर्ग्ान ऐसा है या 'म'ैं ऐसा हूँ) के मलए फकये जाते हैं। जो कुछ ज करना िरना है सब माया देर् में है। 'म ैंहूँ' इसके मलए कुछ करना िरना नही ांहै। कुछ करो तब भी 'म'ैं आत्मा हूँ और कुछ न करो तब भी म ैंआत्मा हूँ। यह सहज नर्र्ेक सतकृपा या भर्र्त कृपा का फल है और इसी सहज नर्र्ेक के मलए महारानी र्तरूपा ने भर्ग्ान से याचना की।

6. छठर्ाँपद जजसके मलए महारानी र्तरूपा की प्रार्नशा र्ी, र्ह है "सोइ रहनन" कैसी रहनी? इसकी झलक र्र्नय पत्रिका के नीचे के पद से ममलती है फक

कबहुँक हौं यहह रहनि रहौंगो।
श्री रघुिाथ कृपालु कृपािें", संि-सुभाि गहौंगो ।।1।।
यथा लोभ संतोष सदा, काहूसों कछु ि चहौं गो ।
पर हहि-तिरि तिरंिर, मि-क्रम-बचि िेम तिबहौंगो ।।2।।
परष बचि अति दुसुह श्रिि सुति, िेहह पाक ि दहौंगो ।

त्रबगि माि सम सीिल मि, पर-गुि िहहं दोष कहौंगो ||३||

पररहरर देह जर्निति चचंता, दुखु-सुख समबुद्चध सहौंगो ।
ुलिमसदास प्रभु यहह पथ रहह, अत्रबचल हरर भगति लहौंगो ||4||

भक्त अपनेभर्र्ान से प्रार्नशा करता है, हे दयाननिान श्री रघुनार्जी! आपकी कृपा से मुझे ेसतोंं का सा स्र्भार् कब ममलेर्ा? जब आपकी कृपा होर्ी तब ही मुझे ेसतोंं का सा रुभार् और सतोंं के समान रहन-सहन ममलेर्ा। जो कुछ भी सरलतापूर्कश प्राप्त हो उस पर ही सांतुष्ट रहना, फकसी से कुछ भी र्स्तु की मारं न करना और न फकसी र्स्तु की कामना करना, सदा ही मन, र्चन, कम शसे दूसूरों की भलाई करनेमें लरे् रहना, फकसी का भी कठोर र्चन सुनकर िोधित न होना तर्ा उसे र्ानांतपूर्कश सुन र् सह लेना, कभी भी अपमान की आर् में न जलना, सब प्रकार की मान्द्यताओां को त्यार् कर समदर्ी होकर र्र्चरना तर्ा फकसी के रु्र् अर्र्ा दोर्ष को न देखना, देह जननत सारी धचतांाओां को त्यार् देना, सुख-दुःख को बराबर मानकर समबुद्धि से ननर्ाहश करना, इस प्रकार का रुभार् और ऐसी सतां रहनी मुझे ेप्राप्त हो। ये सब बातें सिान साध्य न होकर भर्र्ान की कृपा पर अर्लत्रांबत हैं। जब भर्र्ान की कृपा होर्ी तब ही इस प्रकार की मनोर्रूत्त बनेर्ी और इस प्रकार की रहनी ममलेर्ी और तब ही भर्र्ान के चरर्ों में अर्र्ल भजक्त होर्ी। महारानी र्तरूपा ने इसी सतां रहनी के मलए भर्र्ान से प्रार्नशा की।

'सोइ रहनन' याने सतां रहनी। इसका दूसूरा भार् सहजार्स्र्ा है। जब 'म ैंहूँ' - इसका ज्ञान सहज है तो इसकी रहनी भी सहज है। यद्यर्प म ैंहूँ - इसका ज्ञान सबको है, फफर भी म ैंकैसा हूँ, म ैंक्या हूँ, म ैंकौन हूँ, इसका ज्ञान फकसी को नहीं है। में कैसा हूँ, म ैंक्या हूँ आहद प्रकार के प्रश्न जहाँ उठे फक हमैंान्द्यता आ र्यी और सहजपना जाता रहा। कुसी है नही,ां मेज है नहीं, परन्द्तु हदखाई दे रहे हैं। यर्ार् शमें लकडी हदखाई दे रही है। ससाांर है नही,ां परन्द्तु दृजष्टर्ोचर हो रहा है। र्स्तुतः, र्ह भर्र्ान है। जो कुछ भी हदखाई दे रहा है र्ह सब भर्र्ान है। फफर ऐसा क्यों भान नही ांहोता फक म ैंभर्र्ान देख रहा हूँ? जब में रुतः भर्र्ान हूँ तो फफर कैसे भान होर्ा फक जो कुछ म ैंदेख रहा हूँ र्ह सब भर्र्ान देख रहा हूँ और भर्र्ान के मसर्ाय कोई दूसूरा देखने र्ाला हो, तो उसे भान हो फक 'म'ैं भर्र्ान देख रहा हूँ। जब में देखने र्ाला ही भर्र्ान हूँ और जजसको देखता हूँ र्ह भी भर्र्ान ही है, तो फफर भर्र्ान देखने का भान फकसको होर्ा और कैसे होर्ा? भान तो दो में होता है। जब म ैंही 'म'ैं हैं, जब मुझसे मभन्द्न कोई दूसूरा नहीं तो फफर फकसको भान हो फक म ैंभर्र्ान देख रहा है। सबको देखने र्ाले को, सबको जानने र्ाले को कौन दूसूरा देखेर्ा, कौन दूसूरा जानेर्ा जब कोई दूसूरा 'म'ैं आत्मा के अनतररक्त है ही नहीं? यही ननश्चय ही, इसी जस्र्नत में जस्र्त होना ही सहज रहनी है, सहजार्स्र्ा है। जब अपने आप 'म'ैं को कुछ माना, तब क्या त्रबर्डा और जब जाना तब क्या बना? कुछ त्रबर्डा और रन कुछ बना। म ैंजैसे पहहले र्ा र्ैसे अब भी हूँ और आर्े भी रहूँर्ा। मुझ आत्मा में कोई पररर्तनश नही।ां

यही ननश्चय ही, इसी पर ननष्ठा ही सहज रहनी है, सहजार्स्र्ा है और इसी की प्राजप्त के मलए महारानी र्तरूपा नेभर्र्ान से कृपा कर देनेकी प्रार्नशा की ।। 151||

सुति मृदु ुगूढ़ रचचर बर रचिा । कृपामसंधुं बोले मृदु ुबचिा ||1||

जो कछु रचच ुम्हरे मि माहीं। म ैंसो दीन्दह सब संसय ाहीं ।।2।।
मिु ुत्रबबेक अलौफकक ोरे । कबहुँ ि ममहटहह अिुग्रह मोरे ||३||

कोमल, रूढ़, सुन्दर और श्रेष्ठ प्रार्नशा (रचना) को सुनकर दयासार्र प्रभु कोमल र्चन बोले फक तुम्हारे मन में जो कुछ है, तुम्हारी जैसी रुधच है, ई सब मनैं ेतुम्हें दी, इसमें तननक भी सदोंह नही।ां हे माता! मेरी कृपा से तुम्हारा यह अलौफकक ज्ञान कभी नही ांममटेर्ा।

भर्ान ने दम्पनत के इस सदोंह को फक सारे चराचर के स्र्ामी जर्त् ्के आिार ब्रह्मा, र्ष्ि्रु,ु महेर् आहद के उत्पत्त कताश प्रभु हमारे पिु होंर्े फक नही,ां महारानी र्तरूपा को माता का सबांिि देकर यहीांपर ननमूलश कर हदया और भर्ान ने माता के र्र्ेक को अलौफकक इसमलए कहा फक बहुिा पिु पर माता-र्पता का प्यार अांि होता है, परन्दतु माता कौर्ल्या का प्यार भर्ान श्री रामचन्द्र जी पर असीम और मातृर्त् ्होतेहुए भी एक उच्च कोहट के भक्त का सहज सनेह र्ा। भर्ान की लील देखते हुए माता जी कई भ्रम में पड ई र्ी, परन्दतुप्रभु ुकी कृपा से तुरन्दत ही सभांल जाती र्ी और भक्त र्र्षयक ज्ञान जार्तृ हो जाता र्ा। अतः, अलौफकक र्र्ेक प लोकोत्तर ज्ञान कहा है।

बंहद चरि मिुकहेउ बहोरी । अिर एक त्रबिंी प्रभु मोरी ॥
सिु विषइक ि पद रति होऊ । मोहह ब् मूढ़ कहै फकि कोऊ ॥
मति त्रबिु ि ति स्जमम जल त्रबिु मीिा । मम िजीि तिमम ुम्हहह अिीिा ॥

चरर्ों में प्रर्ाम करके मनु महाराज फफर बोले हे प्रभो! मेरी और भी एक प्रार्नशा है। चाहे कोई मुझे ेमूख श या मदां बुद्धि क्यों न कहे, आपके चरर् कमलों में मेरी प्रीनत पिु भार् से हो। जैसे मर्ि के त्रबना सप शव्याकुल रहता है और जल के त्रबना मछली जीर्र्त नहीां रह सकती, उसी प्रकार मेरा जीर्न भी आपके अिीन रहे। तात्पय शहै फक जैसे जल से त्रबलर् होतेही मछली मर जाती है, र्ैसे ही आपके त्रबछडुते ही मेरे जीर्न का भी अतां हो जाये।

अस बर माचग चरि गहह रहेउ । एिमस्तु करुणातिचध कहेऊ ॥
अब ुम मम अिुसासि मािी। बसहु जाइ सुरपति रजिािी ॥

ऐसा र्र मार्ां कर र्े भर्ान के चरर्ों को पकडकर रह र्ये। तब दयाननिान प्रभु ुने एर्मस्तु (ऐसा ही हो) कहा औरफफर बोले फक अब तुम मेरी आज्ञा मानकर स्र्र् शलोक में जाकर ननर्ास करो।

सोरठा - ि हूँ करर भोग त्रबलास, ाि गएूँ कछु काल पुति ।
होइहहु अिि भुआल, ि ब म ैं होब ुम्हार सिु ।।152||

हे तात! हाँभोर् र्लास करते हुए कुछ समय तक रहो, उसके बाद जब तुम अर्ि के राजा होर्े, तब म ैं तुम्हारा पिु होऊँर्ा।

इच्छामय िर िष सूँरि। होइहरूँ प्रगट तिकि िुम्हारे ।।
अंसन्द्ह सहहि देह घरर िाा। कररहरूँ चररि भगि सुखदिा ॥

हे तात! अपनी इच्छा से मनुष्य रूप िारर् करके अपनेअांर्ों के सहहत तुम्हारे घर में प्रकट होऊँर्ा और भक्तों को सुख देनेर्ाले अनेकों चररि करूांर्ा।

भर्र्ान यहाँ ॅपर सकोंत कर रहे हैं फक जो रूप अभी तुम देख रहे हो उस रूप से न आकर अपनी इच्छा के अनुसार मनुष्य रूप िारर् कर भक्तों की अमभलार्षा पूर् शकरने के मलए तर्ा उनको कुछ देनेके मलए अकेले न आकर अपने अर्ांों के सार् अनेकों प्रकार की नर लीला करने ेप्रकट होऊँर्ा। भर्र्ान अजन्द्मा होने के नाते जन्द्म िारर् नहीांकरते। उनका र्रीर रज, बीय शजननत पाँच भौनतक न होकर धचदानन्द्मय होता है और इच्छामय होता है अर्ात्श ्लोर्ों को उनकी अपनी भार्नाओां के अनुरूप हदखाई देता है।

भर्र्ान अर्ांों के सहहत प्रकट होने ेका र्चन दे रहे हैं। र्े अांर् कौन-कौन से हैं जो परात्पर प्रभु ुके सार् इस िरािाम पर अर्तीर् शहुए? 'नारद पचांरि' में बैकुण्ठािीर् श्रीर्ह्रुका भरत रूप में, र्ेर्र्षर्ायी श्रीमन्द्नारायर् का लक्ष्मर् रूप में और श्र्ेत द्र्ीप ननर्ासी भूमापुरुर्ष का र्िुघ्न रूप में श्रीराम सेर्ार् शअर्तीर् शहोने ेका उल्लेख है। इसकी पुजष्ट नामकरर् के समय र्ुरुदेर् र्मर्ष्ठ जी के द्र्ारा भी हो जाती है। र्ह्रु ुजर्त् ्का पालन भी करते हैं, अतः "र्र्श्र् भरन-पोर्षन कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई।" र्ेर्र्षर्ायी श्रीमन्द्नारायर् इस जर्त् ्के आिार तर्ा िरा के िारर् करने ेर्ाले हैं। अतः, लक्ष्मर् जी र्ेर्ार्ायी श्रीमन्द्नारायर् हैं। भर्र्ान की स्तुनत करते हुए महर्र्ष र्ाल्मीफक जी ने लक्ष्मर् जी के सबांि में व्यक्त फकया है- 'जो सहससीसु अहीसु महहिरु लखनु सचराचर िनी ।' जो हजार मसर र्ाले र्ेर्षनार् के स्र्ामी श्रीमन्द्नारयर् हैं, जो इस िरािाम को िारर् फकये हुए हैं, र्े लक्ष्मर् जी के रूप में प्रर्ट हैं और र्िुघ्न के रूप में भूमापुरुर्ष के मलए कहा है-**"जाके सुममरि िे ररपु िासा। िाम सिुहि बेद प्रकासा ॥"** स्मरर् करने ेसे भूमापुरुर्ष भर्र्ान राम, र्िुघ्न के रूप में भक्तों के द्ुःख र् र्र्कार रूपी र्िुओांका नार् करते हैं। इस प्रकार ये तीनों जो परात्पर पुरुर्ष भर्र्ान श्रीराम के अर्ां हैं, श्रीरामचन्द्र जी के भाई के रूप में अर्तीर् शहुए।

जेसुति सादर िर ब़ भागी। भि िररहहहं ंममिा मद त्यागी ।।
आहद सस्क्जेहह जग उपजाया। सोउ िअिररहह मोरर यह माया ॥

जो बडे ेभाग्यर्ाली मनुष्य मेरे उस भर्र्त् ्चररि को आदरपूर्कश तर्ा मोह ममता और (मद) देहामभमान को त्यार्कर सुनेंर्े, र्े ससांार सार्र को सरलतापूर्कश तर जायर्ें। मेरी आहदर्जक्त, मेरी परमार्जक्त प्रकृनत स्र्रूपा माया, ये भर्र्ती सीता जी भी, जो अर्खल ब्रह्माण्ड का सृजृन करती हैं, पृथ्र्ी पर अर्तार लेंर्ी। (यही त्रिर्ुर्ाजत्मका माया यानन सीताजी, जो ससांार की उत्पर्त्त किी हैं, भर्र्ान राम के अयोध्या में जन्द्म लेनेसे लेकर

राजर्द्दी तक के समस्त चररि की है। अजन्द्मा अकत्ताश भर्ग्ान राम कुछ भी नहींफकये। सारा राम-चररि सीता रूर्पर्ग्ी आहद र्जक्त माया का फकया हुआ है)।

पुर उब म ैंअमभलाष ि्ुम्हारा । सत्य सत्य प्रि सत्य हमारा ।।
पुति-पुति अस कहह कृपातिधिा । अंरिधिा भये भगिाा ॥

म ैंतुम्हारी अमभलार्षा पूर् शकरूँर्ा, मेरी यह प्रनतज्ञा सत्य है, सत्य है, सत्य है। बारम्बार ऐसा कहकर दयासार्र भर्ग्ान राम अदृश्य हो र्ये।

दम्पति उर घरर भगि कृपाला । िेहह आश्रम तििसे कछु काला ॥
समय पाइ ििु िस्ज अियासा । जाइ कीन्द्ह अमरिाति बासा ।।

र्ेदोनों स्िी-पुरुर्ष यानन महारानी र्तरूपा और महाराज मनुभर्ग्ान की भजक्त को हृदय में िारर् कर कुछ समय पयन्द्शत उस आश्रम में और ननर्ास फकये। तत्पश्चात् ्समय पाकर त्रबना कष्ट र्रीर त्यार्कर इन्द्रलोक में जाकर सुख भोर्ने लर्े ।।7, 8।।

दोहा- यह इतिहास पिुीि अति उमहह कहह ि्ृषकेिु ।
भरद्वाजि सिु अपर पुति रामजिम कर हेिु ||153 ||
॥ इति श्री मिु शिरूपा बरदाि आख्यािा समाप्ि।

िद्वीय खण्ड़

1. लक्ष्मण गिीा

2. ास्ल्मिकी आश्रम

3. चचिकूट दरबार

1. लक्ष्मर् र्ीता

आत्म जजज्ञासुओं!

जजस समय भर्ग्ान श्रीराम, लक्ष्मर् और सीता र्न यिाा में र्ंर्ा तट पर पहुँचे ेतो हाँ पर भर्ग्ान राम रात के समय मससुंपा र्ृ के नीचेजर्ंली पत्तों का त्रबछौना बनाकर भूमम पर सोये। भर्ग्ान राम को जमीन पर सोते देखकर, ननर्षाद राज को बडा दु:ख हुआ। उसका र्रीर रोमाधांचत हो र्या और नेत्रों से जल बहने लर्ा, र्ह प्रेम सहहत लक्ष्मर् से कहने लर्ा।

महाराज दर्रर् जी का महल तो स्र्भार् से ही सुन्दर है, इन्द्र भर्न भी जजसकी समानता नहीं पा सकता। उसमें सुन्दर मर्र्यों से रचे चौबारे हैं, जजन्हें मानो कामदेर् ने ही अपने हार्ों से बनाकर सजाया है। जो पर्र्त्र, बडे ेही र्र्लर् सुन्दर भोर् पदार्ों से पूर् शऔर फूलों की सुर्न्ध् से सुर्ामसत हैं। जहाँ, ॅ सुन्दर पलर्ं और मर्र्यों के दीपक हैं तर्ा सब प्रकार का पूरा आराम है। जहाँ ओढ़ने-त्रबछानेके अनेक हदव्य र्स्त्र, तफकये और र्द्दे हैं, जो दूि के फेन के समान कोमल, ननमलश और सुन्दर हैं, उन चौबारों में भर्ग्ान श्रीराम और माता सीताजी र्यन करते र्े। जो अपनी र्ोभा से रनत और कामदेर् के र् शको हरर् करते र्,े र्ही माता सीता और श्रीराम आज घास-फूस की सार्री पर र्के हुए, त्रबना त्रबछौनेके ही सोये हैं। ऐसी दर्ा में देखे नहीं जा सकते-

मातु वपता पररजि पुरबासी । सखा सुसील दास अर दासी ।।
जोगिहहं ंस्जन्हहहह प्राि की िाई। महह सोइ िइ राम गोसाईं ।।
वपता जिक जग त्रबहदि प्रभाऊ । ससुर सुरेस सखा रघुराऊ ।।
रामचंदु ुपति सो बैदेही । सोइ महह त्रबचध बाम ि केही ।।
मसय रघुबीर फक काि जोगू । करम प्रधाि सत्य कह लोगू ।।

(अ.क.-दो. 90 के बाद)

भर्ग्ान राम और सीता क्या र्न के योग्य हैं? लोर् कहतेहैं फक र्ात्ति फकसको प्रनतकूल नही ंहोता।

दोहा- कैकयिस्न्दिी मंदमति, कहठि कुहटलपि, कीन्ह।
जेहहं ंरघुिंदि जािफकहह, सुख अिसर दुखु दीन्ह ।।

(अ.क.दो. 91)

ननर्षादराज, लक्ष्मर् से कहनेलर्ा फक नीच बुद्धि कैकेई ने बडी कुहटलता की, जजसने श्रीराम और जानकी के सुख के समय दुुःख हदया।

भइ हदिकर कुल त्रबटप कुठारी। कुमति कीन्दह सब त्रबस् दुिखुारी ।।

ई सूय शकुलरूपी रृ् के मलए कुल्हाडी हो र्यी। उस कुबुद्धि ने सम्पूर् शर्श्र् को दुुःखी कर हदया।

भयउ विषादु ुतिषादहह भारी। राम सीय महह सयि तिहारी ।।

भर्र्ान राम और माता सीता की इस दर्ा से दुुःखी ननर्षाद जब बार-बार कैकेई पर दोर्ष लर्ानेलर्ा तब लक्ष्मर् बडे ेप्रेम से उसे र्ान्द्त करने ेके मलए कोमल र्चनों से ज्ञान, र्ैराग्य और भजक्तरस से सनी हुई र्ार्ी कहने े लर्े। लक्ष्मर् का ननर्षाद के प्रनत यह जो उपदेर् हुआ, उसे सन्द्त समाज में 'लक्ष्मर् र्ीता' कहते हैं।

बोले लखि मधुर मृदु ुबािी। ग्यिा त्रबराग भगति रस सािी ।।
काहु ि कोउ सुख दुखु कर दािा। तिज कृि करम भोग सबु भ्रािा ।।

भाई ननर्षाद इस ससांार में कोई फकसी को सुख-दुुःख देने र्ाला नही ांहै। सब अपने-अपनेकमों का ही फल भोर्तेहैं। इसमलए कैकेई माता पर दोर्ष लर्ाना ठीक नही।ां इसी आर्य पर र्ुरुदेर् र्मर्ष्ठ ने भरत से कहा र्ा फक -

दोहा - सुिहु भरि भािी प्रबल त्रबलझख कहेउ मुतििाथ ।
हाति लाभुजीिि मरिु जसु अपजसु त्रबचध हाथ ।।

(अ.का. 171)

र्ुरुदेर् र्मर्ष्ठ र्ोक भरे र्दों में भरत से कहतेहैं फक भैय्या भरत ! भार्ी बडी प्रबल होती है, यह र्लर्ख अर्ात्श ्लखने की चीज नहीांहै, क्या फकसी ने अपनेभार्ी अर्ात्श ्प्रारदि को देखा है? इसमलए, हानन-लाभ, जीर्न-मरर्, सुख-दुुःख, यर्- अपयर् की जो र्र्धि (तरीका) है, ई अपने हार् में है।

पुण्य-पाप बान्द्ध्यो जगि, को काटै समरथ्थ ।
ऐसे ज्ञातिि के कहे, यह सब अपिे हथ्थ ।।

भूतकाल अर्ाशत् ्अतीत के पुरुर्षार् शको सधांचत कहते हैं। उसी सधांचत के कुछ हहस्से को 'प्रारदि' कहते हैं और र्तमशान के पुरुर्षार् शको 'फियमार्' कहते के कुछ देर् में प्रारदि प्रिान है और आत्मदेर् में पुरुर्षार् शप्रिान है।

'काहु न कोऊ दुुःख-सुख कर दाता' से ज्ञान का प्रसर्ां र्ुरू होता है और प्रारदि भोर् अज्ञान के अदांर है। 'ननज कृत कम शभोर् सब भ्राता' यह तो पुरुर्षार् शका फल हुआ और सुख-दुुःख कम शका फल है।

जोग त्रबयोग भोग भल मंदा । हहि अिहहि मध्यम भ्रम ििंदा ।।
जिमु मरि्ु जहूँ लचग जग जालू। संपति त्रबपति करमु अर कालू ।।
धरति धामु धि्ु पुर परररारू । सरगु िरकु जहूँ लचग व्यिहारू ।।
देझखअ सुतिअ-गुतिअ मि माँूही । मोह मूल परमारथ िाहीं॥

योर्-र्ंयोर्, भोर्, सम्पत्त्त और र्ंपत्त्त, भला और बुरा, कम श(सधांचत, प्रारदि और फियमार्) और काल (भूत, भर्ष्यत्, ् र्तमशान) िरर् िन, िाम, कुटुम्ब, पररर्ार, स्र् शऔर नरक ये सब जहाँतक व्यर्हार में देखे, सुने ेऔर र्ुने ेजाते हैं, कहाँ ँहै? तो मानसकार कहते ेहैं फक देखना, सुनना और र्ुनना ये सब 'मनमाँही' है। मन में है, बाहर नहीीं, और मन कहाँ ँहै? तो मन अज्ञान से पैदा होता है 'मोह मूल' अर्ात्श ्मन का मूल कारर् अज्ञान है। परमार् शअर्ात्श ्स्र्रूप आत्मा में इसका सर्शा अभार् है। र्र्षय समझो - र्ाढ़ी नीदां, सुर्षुजप्त अर्स्ा में मन नहीीं रहता, क्योंफक र्ह अपनेकारर् अज्ञान में लीन रहता है। मन के लीन होने के तीन स्ान हैं- सुर्षुजप्त, मूच्छाशऔर समाधि।

सुर्षुजप्त में मन अज्ञान में लीन होता है। मूच्छाशमें मन दु्ःख में लीन होता है और समाधि में मन आनन्द् अर्ात्श ्स्र्रूप में लीन होता है। बन्द्नि और मोि का कारर् भी मन ही है। सुर्षुजप्त अर्स्ा (र्ाढी नीदां) में जब मन का अभार् रहता है, तब मन से उत्पन्द्न सारे प्रपचों का भी अभार् रहता है, क्योंफक इन प्रपचों का जो कारर् मन है जब र्ही नही ांरहता, तब उसका काय,श यह सारा प्रपचां भी नहीीं रहता। मन के अभार् में "योर् र्ंयोर् भोर् भल मन्द्ा" से लेकर "मोह मूल परमारर् नाहीीं" तक जजतने प्रपचां हैं, र्े भी नही ांरहते। मर्र र्ुदि् स्र्रूप 'म'ैं आत्मा तो रहता हूँ। मेरा अभार् नही ांहोता।
देखो भैय्या ! यहाँपर अब हम मन के र्र्षय में कुछ कहेंर्े, क्योंफक -

मि के हारे हार है, मि के जीिे जीि ।
पार ब्रह्म को पाइये, मि ही के परिीि ।।

जजसको तुम अर्द्या, अज्ञान, ससांार कहते ेहो उसी को व्यजष्ट जर्त् ्में मन और समजष्ट जर्त् ्में माया कहतेहैं। इस मन की बीमारी से कोई अछूता नही ांहै। यह बीमारी सबको है। राजा, मभखारी, मूख,श र्द्र्ान, र्ृहस्, र्रक्त फकसी को भी इस बीमारी से छुट्टी नही।ां इससे छुट्टी तो उसी को ममलती है, जजस पर सन्द्तकृपा हो जाती है। मानसकार र्रनय में कहतेहैं -

जौ तिज मि पररहरै त्रबकारा ।
िौ कि द्वैि-जनिि संसृति-दुखु, संसय सोक अपारा ।।

(पद 124)

द्वैत का अर् शहोता है दो। जन्म-मरर्, पाप-पुण्य, र्ि‍ु–ममि, सुख-दु:ख, बन्द्-मिो, ज्ञाता-ज्ञेय, रष्टा-दृश्य आहद ये जजतनेद्वैत हैं, दो हैं। सब मन के र्‍कार हैं, यहद हमारा मन र्‍कारों को छोड दे तो फफर द्वैत भार् से उत्पन्द्न ससांारी दु:ख, भ्रम आहद अपार र्ोक क्यों हो। यह सब मन के कारर् ही होता है।

सि‍ु, ु ममि, मध्यस्थ ि‍ीति ये मि कीन्द्हें बररआई ।
त्यागि, गहि, उपेच्छिीय, अहह, हाटक, ि‍ृकी ि‍ाई ॥

र्ि‍ु, ु ममि और उदासीन इन तीनों की मन ने ही हठ से कल्पना कर ली है। र्ि‍ु ुको साँप के समान त्यार् देना चाहहए, ममि को सुर्र्‍ शके समान ग्रहर् करना चाहहए और उदासीन की तृर्‍ के समान उपेिा कर देना चाहहए। ये सब मन की ही कल्पनाएँ हैं।

असि, बसि, पसु, बस्ति‍ु, त्रबत्रबध-त्रबचध, सब मति महूँ रह जैसे ।
सरग, ि‍रक, चर-अचर लोक बहु, बसि मध्य मि ि‍ैसे ॥

जैसे बहुमूल्य मर्र्‍ में भोजन, र्स्‍ि, परु ुऔर अनेक र्स्तुएँ भरी रहती हैं, उस प्रकार स्र्र्,श नरक, चर, अचर और बहुत से लोक-लोकान्द्तर इस मन में भरे हैं। भा यह है फक जैसे बहुमूल्य मर्र्‍ को बेचकर उस ममले हुए दामों की रकमों से भोजन सामग्री, तरह-तरह के र्स्‍ि, परु, हार्ी, घोडे, े र्ाय, भसैं आहद खरीद मलये जा हैं, तब ये सब मर्र्‍ में हैं। इसी तरह स्र्र्-शनरक, चर-अचर और लोक-लोकान ये सब मन के भीतर हैं।

त्रबटप-मध्य पिुररका, सि‍ू महूँ, कंचुफक त्रबिहं ि‍बिाये ।
मि महूँ ि‍था लीि ि‍ािा ि‍ुि, प्रगटि अिसर पाये ।।

फकसी र्‍र्‍ को बढ़ई को हदखा दो तो र्ह उसे देखकर कह देर्ा फक इससे इतनी कुमसयशाँ, ँ तख्त, टेत्रबल, बेंच, दरर्ाजे, चौखट आहद बनेंर्े। ऐसे ही फकसी बुनकर के सामने सूत का त्रबन्द्डल अर्र्ा ट्टा रख दीजजए, तो र्ह भी उससे बन सकनेर्ाले कपडे, े चद्दर, ि‍ोती आहद की सख्ंयाएँ त्रबना बताये ही बता देर्ा। तात्पय शयह फक र्‍र्‍ में टेत्रबल, कुसी, बेंच, तख्त तर्ा सूत में र्स्‍ि त्रबना बनाये ही भरे हैं। उसी प्रकार इस मन में भी अनेक प्रकार के र्‍रीर लीन रहते हैं, जो समय पाकर प्रर्ट होते रहतेहैं।

देखो, कभी-कभी स्र्प्न होता है फक म ैंआकार्र्‍ में उड रहा हूँ। प्रश्न होता है फक म ैंतो आकार्र्‍ में कभी नहीं उडा तब ऐसा स्र्प्न कैसे देखा। उत्तर है- अरे ! इस जन्म में न सही, फकसी जन्म में उडे ेहोंर्े।

रघुपति-भगति-बारर छामलि चचि, त्रबिु प्रयास ही सूझै ।
ि‍ुलिमसदास कह चचद्-त्रबलास जग, बूझि-बूझि बूझै ।।

जब भर्ग्न की भजक्त रूपी जल से धचत्त िुलकर ननमलश हो जायेर्ा तब अनायास ही स्र्-स्र्रूप भर्ग्न आत्मा का अनुभर् हो जायेर्ा।

श्री मानसकार कहते हैं फक जर्त् ्भर्ग्न आत्मा का र्ृलास है। यह समझते- समझते ही समझा जाता है। बूझते-बूझते ेतीन बार बूझत-बूझत क्यों कहा र्या? इसका उत्तर र्ृनय के एक सौ ग्यारह नम्बर के पद में ममलेर्ा। इस पद में मानसकार कहते ेहैं फक इस ससांार को कोई सत्य कहता है, कोई असत्य कहता है और कोई सत्यासत्य कहता है।

कोउ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मािै।।

ये तीनों भ्रम ही हैं अर्ात्श ्न सत्य है, न असत्य है, न सत्यासत्य है। यह कब सूझता है, जब भर्ग्न आत्मा 'म'ैं का ज्ञान हो जाता है, जब अपनेआप को जान लेता है। इस पद में र्े कहते हैं फक -

केशि! कहह ि जाइ ि कहहये ।

देखि िि रचिा विचचि अति समुझझ मिहहं मि रहहये ।।

(पद-111)

तीन प्रकार के धचि होतेहैं -

1. धचि, 2. र्धचि, 3. अनत र्धचि ।

1. चचि-

कार्ज, दीर्ाल, कपडे ेके पदे आहद पर जो बनेहुए रहतेहैं, उन्द्हें धचि कहते हैं।

2. विचचि -

कैमरे से जो फोटो मलया जाता है, उसे र्धचि कहते ेहैं।

3. अति विचचि -

तृर् से लेकर ब्रह्मा पयन्द्शत पर्ु, ु पिी, कीट, पतर्ां, मनुष्य आहद सारा दृश्यमान जर्त् ्यह अनत र्धचि है। इसे अनत र्धचि क्यों कहा? न्द्र्षय समझो -

फकसी भी धचि को बनानेके मलए इतनी सामग्री आर्श्यक है -

1. ई पदार् शचाहहए जजसका धचि बनाना है, क्योंफक उसे देखकर ही र्ैसा ही धचि बनाना पडेर्ा।

2. जजस पर धचि बनाना है ई आिार (कार्ज, दीर्ाल, कपडे ेके पदे, बोड शआहद) चाहहए। यहद ये आिार नही ांहोंर्े तो धचि बनाया फकस पर जायेर्ा।

3. अन्द्य सामग्री जजसे धचि बननेमें लर्ा है-रांर्, बुरुर् आहद जजनके द्र्ारा धचि बनाया जायेर्ा ई चाहहए।

4. धचिकार चाहहए, जो धचि को बनायेर्ा। जब तक ये चारों सािन उपलदि नहीां होंर्े धचि नहीां बन सकेर्ा।

धचि और र् धचि के बननेमें तो ये चारों सामग्री लर्ी हैं। तभी ये बनेहैं, परन्द्तुतुम्हारे इस र्रीर से लेकर पर्ु–ुपिी, कीट-पतर्ां, आहद जजतने र्रीर दृजष्टर्ोचर हो रहे हैं, जो अनतर्धचि हैं, इनके बनने के मलए इन सामधग्रयों का प्रयोर् हुआ है या नही,ां इस पर र्चार करना है, तब मानसकार कहते हैं फक -

सून्द्य भीति पर चचि, रंग िहहं,ं िि ुत्रबिु मलखा चचिेरे ।
धोये ममटइ ि मरइ भीति, दुखु पाइअ एहह िि ुहेरे ।।

तुम्हारा यह जो र्रीर बना है ई फकस र्रीर को देखकर बनाया र्या? क्या ऐसा और र्रीर र्ा, जजसे देखकर यह बनाया र्या? तो ननश्चय करने ेपर जान पडेर्ा फक ऐसा धचि र्श्र् में दूसरा नही ांममलेर्ा। इसी तरह प्रत्येक र्रीर के बननेमें उसके समान कोई भी दूसरा र्रीर नहीां र्ा, जजसे देखकर यह बनाया र्या हो, पर बना है, इसमलए इसे अनत र्धचि कहा फक यह त्रबना धचि के ही बना है।

दूसरी चीज है, यह 'र्रीर' धचि फकस आिार पर बना? तो मानसकार कहतेहैं फक "र्ून्द्य भीनत पर" इसका आिार भी कुछ नही ांहै। तीसरी चीज-इस र्रीर के बननेमें रांर्, बुरुर् आहद कौन सी सामग्री का प्रयोर् हुआ तो ई भी कुछ नही ांअर्ा्त् ्र्ून्द्य। चौर्ी चीज धचिकार अर्ा्त् ्इस र्रीर धचि का बनानेर्ाला कौन है?

उत्तर है- 'मन' जो त्रबना र्रीरका है और मन ने ही इसे बनाया। मृत्युकाल में प्रार्ी मन में जजसकी कल्पना करते-करते प्रार् त्यार् करता है, ई तुरन्द्त दूसरे जन्द्म में उसी र्रीर का ननमाशर् कर लेता है, ई र्ही बन जाता है। इससे मसद् िहुआ फक इस र्रीर का बनानेर्ाला धचिकार मन है, जजसनेइसे बनाया। इस तरह ननश्चय हुआ जजसे देखकर यह अनत र्धचि बना ई धचि नहीां है अर्ातश 'र्ून्द्य'। जजस आिार पर यह बनाया र्या, ई आिार नही ांहै 'र्ून्द्य भीत' पर अर्ाशत आिार भी र्ून्द्य।

रांर् बुरुर् आहद सामग्री जजसके द्र्ारा बनाया र्या तो ई भी र्ून्द्य ही है और धचिकार जजसनेइसे बनाया तो ई धचिकार भी "तनु त्रबनु मलखा धचतेरे" त्रबना तन का है अर्ातश ्र्ह भी र्ून्द्य। तब जब धचि र्ून्द्य आिार र्ून्द्य, सामग्री रांर्, बुरुर् आहद र्ून्द्य और धचिकार (बनानेर्ाला) र्ून्द्य है, तब इनसे यह जो अनत र्धचि, बना ई ही कैसे र्ास्तर्क हो सकता है। अरे! ई भी र्ून्द्य ही है। चीटीं से लेकर ब्रह्मा पयन्द्शत ये जो अनत र्धचि है, ये सब परदेर् में है। स्र्देर् अर्ातश ्आत्मदेर् में इनका अत्यन्द्ताभार् है अर्ातश ्र्ून्द्य ही है। इस तरह सारा

 चराचर रूनूद्य में बना, रूनूद्य से बना, रूनूद्य करके बना और रूनूद्य ही बना अर्ात्श ्कुछ बना ही नही।ं 'म'ैं आत्मा ज्यों

का त्यों एक रस पररपूर् शअपनी महहमा में ननत्य जस्त हूँ। यह रून्द्य चैतन्द्य घनभूत से पररपूर् शअनुभूनत की अनुभूनत है। यह फकसी प्रकार िोनेसे नहीांममटता, परन्द्तु इसको मरने का डर लर्ा हुआ है, र्ाह! कैसा आश्चय शहै।

रत्रबकर िीर बसै अति दारि मकर रूप िेहह माहीं।
बदि-हीि सो ग्रसै ैचराचर, पिा करि जेजाहीं।

ग्रीष्मकाल में रेधस्र्तान अर्ा समतल र्ृस्तृत मैदान में मृर्ूजल दीख पडता है। उस मृर्ूजल समुर में एक मर्र रहता है। उसका मुँह नहीांहै, परन्द्तु 'ग्रसै ैचराचर' र्ह खा जाता है-फकसको? अरे! "पान करन जेजाहीां" जो उसे पान करनेजाते हैं।

भर्र्ान आत्मा के सत्तारूपी अजस्तत्र् में यह जो र्ीर प्रपचां ससाांर रूपी मृर्ूजल भासता है, जो है ही नही,ां इसको सत्य मानकर जो पान करने ेजाता है, उसे काल (समय) रूपी मर्र, जो त्रबना मुँह का है, खा जाता है। अभी 'र्ीर' अनत र्धिचि रून्द्य है, है ही नही,ां यह अनुभर् फकया र्या अब इस र्ीर को सत्य मानना फक यह म ैंहूँ और यह मेरा है, ऐसा मानना ही मृर्ूजल को पान करने ेजाना है। तो उन्द्हीां को काल रूपी मर्र खाता है। मोह रूपी र्न में र्चरने र्ाले मनुष्य मृर्ूरूप, जो ससाांरी अज्ञानी जीर् हैं, र्े ही इसे सत्य मानकर पान करते हैं, जजन्द्हें काल रूपी मर्र ननर्ल जाता है।

कोउ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मिौ।
िुलिमसदास पररहरै िीि भ्रम, सो आपि पहहचिौ ।।

ससाांर न तो स्र्यांपैदा हुआ है और न फकसी ने इसे पैदा फकया है। यहद कहो फक ससाांर स्र्यांपैदा हुआ है तो पैदा होनेके पहहले यह सत्य र्ा या असत्य र्ा? यहद, कहो सत्य र्ा तो सत्य की तो उत्पर्त्त नहीांहोती। उत्पर्त्त मानने ेपर उसका र्नार् मानना पडेर्ा, फफर र्ह सत्य न रहा। यहद असत्य कहो तो असत्य तो बन्द्ध्या का पुि होता है। अभार् रूप जो है ही नही,ां र्ह क्या पैदा होर्ा? यहद सत्यासत्य कहो तो सिाक-बिाक पदार् शसार्-सार् नही ांरह सकते। प्रकार् और अन्द्धकार एक सार् नही ांरहते। अब कहो फक इसे भर्र्ान ने पैदा फकया तो जजस भर्र्ान नेइसे पैदा फकया र्ह परमात्मा जन्द्मा है या अजन्द्मा है? यहद अजन्द्मा मानोर्े तो र्ह एक हदन मरेर्ा, क्योंफक जो जन्द्म लेता है र्ह एक हदन मरता है, फफर र्ह अर्र्नार्ी न हुआ। अब अजन्द्मा भर्र्ान ने पैदा फकया कहो तो जो स्र्यांपैदा नही ांहुआ उसे क्या तमीज है जो दूसूरों को पैदा करेर्ा। इस तरह ससाांर न सत्य है, न असत्य है, न सत्यासत्य है। ये तीनों भ्रम ही हैं। फकसी भी प्रकार से ससाांर की उत्पर्त्त मसद्ध नही ांहोती, ससाांर हुआ ही नही।ां अब प्रश्न होता है फक फफर र्ास्त्रों में ससाांर का होना बताया र्या है, र्ह क्या है? उत्तर है- अज्ञानी जीर्ों को समझानेके मलए र्ास्त्रों नै पहहले ननष्प्रपचां ब्रह्म, भर्र्ान आत्मा में ससाांर प्रपचां का अध्यारोप फकया। अभार् में भार् की उत्पर्त्त बतायी और उसी र्ास्त्र में आर्े चलकर फकये र्ये अध्यारोप का अपर्ाद (खण्डन) कर हदया र्या।

श ्त्रिपुटी इन्द्हें
ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय। प्रमाता, प्रमार्, प्रमेय। रष्टा, दृश्य, दर्नश जहाँ ँतक तीन है अर्ात्
'पररहरहु' इनका त्यार् कर दो, जब इनका त्यार् कर दोरे् तब 'आपन पहहचाने'े तब अपना स्रूप 'म'ैं आत्मा
भर्ान का ज्ञान होर्ा, अन्यर्ा नही।ं

'जोर्-त्रबयोर् भोर् भल मन्द्ा, हहत अनहहत मध्यम भ्रम फन्द्ा' से लेकर 'मोह मूल परमारर्ुनाहीं' तक ये सब मन की ही बीमारी है। मन स्यंरोर् है। मन रोर् के कारर् ही जीर्, ईश्र्र, ब्रह्म, जर्त्,् म,ैं तू, अपना, पराया, जड-चेतन आहद का भेद रूपी सब रोर् पैदा होतेहैं। र्ाढी नीदां में यह मन जब नहीं रहता तब ये सब भेद भी नही ंरहते। र्ुद्ध तत्त्र् 'म'ैं का 'म'ैं आत्मा ही रहता हूँ। मन फकतना चचांल रहता है, यह सब जानते हैं। मन को रोकनेके मलए ही 'योर्दर्नश' एक दर्नश ही बना है। बडे सेे बडे सेिान इस मन को रोकने के मलए फकये जाते हैं, फफर भी यह मन काबू में नहीं होता। श्री मानसकार र्नय में कहते हैं -

मेरो मि हररजू! हठ ि िजै ।
तिमसहदि िाथ देखूँ मसख बहु त्रबचध, करि सुभाउ तिजै ॥
ज्यों जुबी अिुभिति प्रसि अति, दारि दुखु उपजै।
है अिुकूल त्रबसारर सूल सठ, पुति खल पतिहहं भंजै ॥
लोलुप भ्रम गृह पसु ज्युों जहूँ िहूँ, मसर पदत्राि बजै।
दिवप अधम विचरि िहह मारग, कबहुूँ ि मूढ़ लजै॥

(पद 89)

र्ेकहते हैं फक हे हरर! मेरा मन अपनी आदत नहीं त्यार्ता। म ैंरात-हदन इसे अनेक प्रकार से समझाता हूँ, पर यह अपनी ही आदत के अनुसार चलता है। जैसे, युर्ती स्त्री सिताांन जननेके समय अत्यन्द्त असह्य कष्ट का अनुभर् करती है, उस समय र्ह मन में ननश्चय करती है फक अब भर्ष्य में म ैंपनत के पास नहीं जाऊँर्ी और पुनः ऐसा प्रसर्ां न आने देंर्ी, परन्द्तुर्ह मूखाशसमय टल जानेपर सारी र्ेदना को भूलकर उसी दुःख देनेर्ाले पनत का सेर्न करती है। ऐसे ही, रोटी के टुकडे को लालची कुत्ता जहाँ जाता है, उसके मसर पर जूतेपडतेहैं तो भी र्ह नीच उसी रास्ते भटकता है और जरा भी लजज्जत नही ंहोता। ऐसी ही दर्ा मेरे मन की है। र्र्षयों में कष्ट पानेपर भी यह उन्द्हीं की ओर दौड-दौडकर जाता है।

हौं हारयो करर जिति त्रबत्रबध त्रबचध, अतिसै प्रबल अजै ।
तुलिसदास बस होइ िबहहं जब प्रेेरक प्रभु बरजै ॥

मानसकार कहते हैं फक म ैंइसके मलए अनेक उपाय कर चुका और सिान करके र्क र्या, परन्द्तु यह मन बडा बलर्ान और अजेय है, यह र्र् में नहींहोता। यह र्र् में तो तभी हो सकता है, जब इसे इसको प्रेेरर्ा देने र्ाला इसका र्ासक जो प्रेेरक है, र्ह ही इसे रोके। अच्छा, तो चलो अब र्चार र्ाहटका में र्ोडा घूमें।

मन को सिान के द्र्ारा र्् में नहीां कर सकते, जब इसे इसका पे्रेरक प्रभु ुसमझायेर्ा तब यह अपने आप र्् में हो जायेर्ा।

प्रश्न होता है फक इसका पे्रेरक प्रभु कौन है। उत्तर है- जो कहता है फक मेरा मन मेरे र्् में नहीांहै, र्ही उसका पे्रेरक (स्र्ामी) है। देखो-अभी जब तुम कर्ा सुन रहे हो तब तुम्हारा मन तुम्हारे में काबू में है या नही? ां यहद मन काबू में नहीांरहेर्ा तो तुम कर्ा सुन नहीांसकते, पर सुन रहे हो इससे मसद्ध है फक तुम्हारा मन तुम्हारे र्् में है। इसे र्् में करने ेके मलए तुम घर से कौन-सा सिान करके चले र्् अर्र्ा यहाँआकर तुमने कौन सा सिान फकया है, जजससे फक तुम्हारा मन तुम्हारे र्् में हुआ? इसका उत्तर है फक कुछ भी सिान नही ांफकया र्या यह अपनेआप र्् में है।

र्र्षय समझो - मन जब र्् में होता है, तभी ससांार के सब काम होतेहैं। जब तुम मसनेमा देखने जाते हो तब घर से कौन-सा सिान करके जाते हो फक तीन घटें तक कुसी पर ऐसे मूनतर्शत् ्बैठे रहतेहो मानों फकसी ने काठ की पुतली बनाकर त्रबठा हदया हो। इसके मलए क्या ध्यान, िारर्ा अर्र्ा समाधि लर्ाकर जाते हो। दुकान में घटोंं बैठे हुए एक-एक पाई का रोकड ममलाते हो। दफ्तर में बडे ेसे बडे ेकाम करते हो, अदालत में र्कालत करते समय सूक्ष्म से सूक्ष्म तकश करते हो आहद। यहद इन कामों के करते समय तुम्हारा मन तुम्हारे र्् में न रहकर उद्र्ग्न, चचांल, अजस्र्र रहे तो क्या तुम ये सब काम कर सकतेहो? कदार्प नही,ां पर सब काम ठीक-ठाक होतेरहतेहैं। कही ांपर कुछ भी भूल नही ांहो पाती। अब र्र्चार करना है फक इस तरह मन, जो अपने र्् में रहता है, र्ह सिान से र्् में रहता है या त्रबना सिान के ? उत्तर ममलेर्ा, त्रबना सिान के मन र्् में रहता है, क्योंफक इसे र्् में होने के मलए मनैं कोई सिान नहीां फकया। फफर भी, र्् में रहा। तब मन बेकाबू(र्् से बाहर) कब हो जाता है? जब म ैं अपनेआप को कुछ मान लेता हूँ। इसका प्रमार्् लो -

अभी कर्ा सुनने ेबैठे हो और कर्ा सुन रहे हो, तब अपने आप को कुछ मानकर कर्ा सुन रहे हो या त्रबना कुछ माने स्र्ाभार्र्क ? उत्तर है- त्रबना कुछ मानेस्र्ाभार्र्का र्र्षय को खूब समझ लो, यह कांर्ाल पद नही ांसम्राट पद है। जब र्दद, स्पर््श रूप, रस, र्ि इन र्र्षयों का अनुभर्् करते हो, तब मन र्् में रहता है या बेर्् रहता है। तब अनुभर्् करते हो? उत्तर है- मन र्् में रहता है, तभी अनुभर्् होता है। प्रश्न होता है, यह सिान से र्् में हुआ रहता है या त्रबना सिान के ?

उत्तर ममलेर्ा- त्रबना सिान फकये र्् में रहता है, इसका रहस्य समझो जब 'म'ैं का 'म'ैं ही रहता हूँ, अपने 'म'ैं को कुछ नहीांमानता तब यह मन अपनेआप र्् में रहता है और जब में अपने'म'ैं को कुछ मान लेता हूँ, म ैं देह हूँ, जीर्् हूँ, ब्रह्म हूँ आहद तब मन काबू से बाहर हो जाता है। 'म'ैं को कुछ माना फक मन तुम्हार र बाली हो र्या और 'म'ैं के माने'म'ैं ही हूँ। इस भार्् में मन का स्र्ामी 'म'ैं हूँ।

अज्ञाननयों के मलए मन को रोकने ेके मलए कुछ करना जजतना सरल है। बिोर्ान के मलए उसे रोकने के मलए कुछ करना उतना ही कहठन है। इसीमलए, अज्ञानी मन को रोकने के मलए कुछ न कुछ सािना करते रहता है। यह मन सािन से र्् में नही ांहोता। ससांार में सतां तुलसीदास जैसे सािक कौन होर्ा? जो कहते हैं फक -

हौं हायो करर ििि त्रबत्रबध त्रबचध, अतिसै प्रबल अजै ॥

सब कुछ सािन करके म ैंर्क र्या, परन्द्तु यह मन र्् में नही ांहुआ। तो भैय्या! यह मन र्् में तभी होता है जब इसका प्ेरेरक भर्र्ान आत्मा 'म'ैं की इस पर कृपा होती है अर्ाशत् ्अपने 'म'ैं भर्र्ान आत्मा का बिो हो जाता है, त्रबना बिो हुए यह मन र्् में नहीांहोता।

'म'ैं हूँ इस भार् में तो मन नाम की कोई चीज ही नही ांहै। जब म ैंअपने आपको कुछ मानता हूँ, तभी मन पैदा हो जाता है। म ैंही इसे पैदा कर लेता हूँ और फफर इसे रोकनेका सािन करता हूँ। जजतने सािन हैं, इससे मनरूपी बीमारी दब जाती है। जड सहहत नार् नही ांहोती, इसे जड सहहत नार् करनेकी एक ही दर्ा है और र्ह दर्ा यह है फक मन नाम की कोई चीज ही नहीां है।

मन है ही नही।ां बर्े फक अपनेआपको देह मान्द्यता, जीर् मान्द्यता आहद से रहहत होकर देखो। बीमारी का कारर् मान्द्यता ही है। बजल्क, मान्द्यता ही मन है। साांसाररक र्र्षयों के अनुभर् काल में म ैंअपनेको कुछ नहीां मानता। में जैसा हूँ, जो हूँ, जहाँहूँ, र्ैसा ही, र्हीं और र्हाँही रहता हूँ। इसमलए, कुछ भी र्र्पि नही ांहोता, मन नही ां रहता, परन्द्तु जब म ैंअपने आपको पुजारी, ध्यानी आहद मान लेता हूँ, तब इस मान्द्यता में मन पैदा हो जाता है और पूजा, पाठ, ध्यान, िारर्ा में मन चचांल हो उठता है, फफर तो उस समय पुराने–पुराने ेमरे हुए पुरखे सामने आकर खडे ेहो जाते हैं। जजनकी इस समय यहाँ ँकोई जरूरत नहीां है। मन है नहीां तब तो इतनी परेर्ानी है और यहद होता तो क्या होता?

अरे! यहद यह होता तो 'म'ैं ही होता, डण्डा है नही ांऔर यहद डण्डा है तो लकडी ही है। जहाँ तक मन जाता है, र्हाँतक सांसार है, परन्द्तु 'म'ैं आत्मा कहाँतक हूँ, इसकी कोई सीमा नहीांहै।

मन के ननरोि करने ेके मलए, रोकनेके मलए तो सािन है, पर इसे जरूर करनेके मलए कोई सािन नही ां है। नदी को रोकने ेके मलए तो सािन है। बाँि आहद बनाकर यह रोकी जा सकती है, परन्द्तु इसे जरूर करने ेका कोई सािन नहीांहै। जरूर तो यह समुर में पहुँचकर ही होर्ी। इसी तरह मन जरूर तो तभी होर्ा जब यह आनन्द्द सार् सुख मसन्द्िुमें पहुँच जायेर्ा।

यहद तुम अपने को ससांारी जीर् मानतेहो, तब तो मन को रोकनेका सािन करो और यहद अपने आपको आत्मा जानते हो तो कुछ भी सािन मत करो। फकसी प्रकार का सािन करना मन के अजस्तत्र् को मानना है और कहा जा चुका है फक मानना ही मन है। कुछ भी मान लेना ही मन की उत्पर्त्त कर लेना है। जीर् कहो या मन कहो दोनों एक ही हैं। मन का ही दूसूरा नाम ससांार है।

मि माया प्रकृति जगि, चार ाम इक रूप ।
बि लचग ये साँचो लगै, िहह जिाा तिज रूप ।।

मन के अभार् में ससांार का अभार् है और मन के उदय में ससांार प्रपचां का उदय है। चचांलता का नाम ही मन है। चचांलता रहहत अर्स्र्ा 'म'ैं आत्मा ही है। चचांलता ही लहर है, इससे रहहत जल ही है। इसी तरह जब तक सकांल्प-र्ेकल्प रूपी लहर है, तभी तक मन है। इससे रहहत अर्स्र्ा ही आत्मा है। मन लहर के समान अपनेआप में र्ेलीन हो जाता है, तब र्ह आत्मा ही है। लहर, पहहले भी तो जल ही र्ा। मसर्ा जल के लहर अलर् है कहाँ?ँ अपनेआपका ही नाम मन है।

मन है नदी। कल्पना है ार और एकाग्रता बाँि है। मन र्ुद्ि है तो 'म'ैं ही हूँ और मन अर्ुद्ि है तो मन है। मन रूपी पारा को 'मन क्या है, कैसा है, कौन है' इस र्ेचार रूपी नली से पकडो फफर 'मन है ही नही'ां इसे र्ैराग्य रूपी जडी से मूजच्छांत करो, फफर इसे अभ्यास रूपी और्षधि से मार दो।

सर् शब्रह्म है 'अहमेर्ेदां' उसके मसर्ा अन्द्य कुछ भी नहीां, इस अजग्न से भस्म कर लो, फफर तो सर् शभर्रोर् नार्क और्षधि तैयार हो जायेर्ी, जो सम्पूर् शभर्रोर् की रामबार् दर्ा होर्ी। मन को रोकना कहठन है। उसे जरूर करना कहठन नही ांहै। प्रश्न होता है, रोकना क्यों कहठन है? इसमलए, कहठन है फक सिाक इसे रोकनेके मलए ज्यों-ज्यों सिान करता है, त्यों-त्यों यह और भी चचांल होता है। इसकी जड मजबूत होतेचलती है, क्योंफक सिान करने े र्ाला 'मन है' ऐसा मानकर ही तो सिान करता है, इससे इसकी जड ही तो मजबूत हुई।

अभ्यास और र्ैराग्य से ही मन पकडा जाता है। मन, र्चन, कम शके द्र्ारा एक ही काम को बार-बार करने का नाम अभ्यास और मन, र्चन, कम शके द्र्ारा दुःख रूप प्रपचां के त्यार् का नाम र्ैराग्य है। अनभ्यास के अभ्यास का नाम अभ्यास है और र्ेर्षय प्रपचां के अजस्तत्र् के त्यार् का नाम र्ैराग्य है। मन को रोकनेके मलए कुछ भी नहीां करना यही अभ्यास है, इसी को अनभ्यास कहते ेहैं। अर्, मन को जजन्द्दा रखना है तो उसके मलए अभ्यास करो और उसे मार डालना है तो उसके मलए कुछ भी मत करो। तुम्हारे ननत्य के सर् शव्यर्हाररक काय,श अभी कर्ा का सुनना, मसनेमा देखना, रोकड ममलाना, कचहरी कोटश, ऑफफस, स्कूल, कॉलेज, व्यापार, व्यर्साय आहद सभी काय शअनभ्यास में ही हो रहे हैं। इस समय मन नाम की कोई चीज ही नहीां है। यही मन को रोकने के मलए कुछ नहीां करना, अनभ्यास है। अनभ्यास से ही मन काबू में होता है, इसका यही प्रत्यि प्रबल प्रमार् है। अभ्यास से जो आनन्द्द की अनुभूनत होती है, र्ह िर्ेक आनन्द्द है, अननत्य सुख है। अभ्यास से र्ेर्षयानन्द्द की प्राजप्त होती है और अनभ्यास से आत्मानन्द्द की प्राजप्त होती है। जीर् देर् में अभ्यास का अभ्यास होता है। अनभ्यास का अभ्यास करने के मलए जीर् देर् को छोडकर आत्मदेर् में आना पडेर्ा, तभी यह अनभ्यास का अभ्यास हो सकेर्ा। जीर् देर् का ननर्ासी ऐसा करने में समर् शनहीां है। जीर् देर् का ननर्ासी मान्द्यता का पुजारी होता है और आत्मदेर् का ननर्ासी जानने ेका पुजारी होता है।

अनुभर् काल में 'म'ै आत्मा होकर, आत्मदेर् में रहकर अनुभर् करता हूँ और, जब 'म'ै जीर् बनता हूँ, तब सामने मन हदखाई देता है। उसे मारनेके मलए, जीतने के मलए कुछ करना पडता है। आत्मदेर् में मन नाम की कोई चीज ही नही ंरहती, रोकेंरे् फकसको? अनुभर् करना भर्ान आत्मा का काम है। अतः, अनुभर्काल में 'म'ै जैसा हूँ, रै्सा ही रहता हूँ। जीर् बनकर सिान करता हूँ, आत्मा होकर अनुभर् करता हूँ।

अनभ्यास की जरुनत में प्रपचांाभार् का अनुभर् होता है और अभ्यास की जरुनत में प्रपचां का दर्नश होता है। अनभ्यास में सभी व्यर्हार होतेहुए नहीं होतेहैं और अभ्यास में व्यर्हार नही ंहोतेहुए होतेहैं।

स्रूप जरुनत अनभ्यास काल का फल है। अमभमान रहहत होकर बालकर्त् ्सब काय शर् व्यर्हार करते रहना, यही अनभ्यास का स्रूप है। बालक खेलता है, खाता-पीता है, बोलता है, हँसता है, रोता है, परन्द्तु उस पर उसका अमभमान नहीं रहता। इसका फल यही है फक यहद कुबेर का खजाना भी ममल जाय अर्ा पर् का मभखारी हो जाये तो हृदय में ग्लानन की रेखा भी न पडे।े

मन से युद्किरके र्जय प्राप्त करने ेकी अपो उससे समझौता करके समस्या को सुलझाना अधिक हहतकर होता है। मन के र्ग्ों के जजतने ेसिान हैं, र्े तो उससे युद्किरना है, इसमलए सिान का मार् शन अपना कर इस तरह समझौता करे।

उत्तम पुरुर्ष 'म'ै के त्रबना फकसी भी देर्, काल, र्स्तु की मसद्धि नही,ं इसमलए मुझ आत्मा से मभन्द्न कुछ भी नही।ं सारा चराचर त्रबना 'म'ै के अपनी मसद्धि यहद कर लेता है तब तो सारा चराचर है और यहद त्रबना 'म'ै के अपनी मसद्धि नही ंकर सकता तब 'म'ै ही हूँ, जजसे सारा चराचर कहते हैं। यहद डण्डे ेसे तुम पूछोरे् फक तुम कौन हो? तो र्े भी यही कहेर्ा फक म ैडण्डा हूँ, तब 'म'ै ही हूँ जजसका नाम डण्डा है, क्योंफक 'म'ै के त्रबना डण्डा भी अपनी मसद्धि नहीं कर सकता। इसी तरह, यहद मन से पूछोरे् फक तुम कौन हो? तो र्े भी यह उत्तर देर्ा फक 'म'ै मन हूँ, तब 'म'ै ही हूँ, जजसका नाम मन है। जब 'म'ै ही मन हो र्या, तब मन का माना हुआ सारा चराचर म ैही हुआ। ऐसा र्िचार करना ही मन से समझौता करना है। इस र्र्ेफकनी बुद्धि से मन मुझ आत्मा में र्लीन हो र्या। यही मन पर र्जय पाना है। फकसी भी र्र्षय के र्र्षयकाल में क्या यह भान रहता है फक म ैअमुक हूँ, यह र्र्षय है और म ै र्र्षय कर रहा हूँ (ठीक अनुभर् करते समय, र्ोडा भी आरे्-पीछे नहीं) इन तीनों का अभार् रहता है, केर्ल अनुभर् ही अनुभर् रहता है। इस अर्स्र्ा में न कत्ताश है, न कम शहै और न फिया है केर्ल अनुभर् ही अनुभर् है। केर्लानुभर्ानन्द्द यह अर्स्र्ा आत्मस्रूप ही है। यही 'म'ै आत्मा हूँ।

मन रूपी र्ौ के मलए पचांाहदक र्र्षयरूपी घास है, जब मन ही न रहा, तब र्र्षय रूपी चारा ही कहाँ ँरहा।

"जोग-त्रबयोग भोग भल मन्द्दा" से लेकर "सरगु िरकु जैह लचग ब्यिहारू" तक ये सब मन के अन्द्दर है। इन्द्हें मन ने ही माना है, जब मन का ही अत्यन्द्ताभार् है, तब उपरोक्त सब प्रपचां ही कहाँ?ँ न तो इजन्द्रयाँएक समय में अनेक काम करती हैं और न मन एक ही समय में अनेक काम करता है, अतः मसद्है फक मन ही एक

प्रमुख इजन्द्रय है। जब ई श्रर्् फिया करनेलर्ता है, तब उसी मन का नाम कर्् शइजन्द्रय हो जाता है और जब देखने की फिया करता है तब आँख अर््ातश चिु इजन्द्रय हो जाता है। अतः, इजन्द्रयाँ अनेक नहीांहैं केर्ल एक ही है, जजसका नाम मन है।

मन को माना 'म'ै ने और मन ने माना जर्त् ्को। मन का स्रूल रूप रीर है। और मुझ आत्मा का स्रूल रूप मन है।

मन को जान मलया तो रीर नही ांऔर 'म'ै को जान मलया तो मन नही।ां जजस प्रकार जल के ज्ञान में लहर का अजस्तत्र् नही,ां उसी प्रकार 'म'ै के ज्ञान में नर्का अजस्तत्र् नहीां। अपनेआप को जानो तब मन नहीांऔर मन को जानो तब मन नही।ां जल को जानो तब लहर नही ांऔर लहर को जानो तब लहर नही।ां लहर को पर नही।ां तो क्या लहर ममलेर्ी? नही ांजल ही हार् आयेर्ा।

मन 'म'ै आत्मा का साकांजल्पक पिु है, जीर् इसे सिान के बल पर जीतना चाहता है, क्या जीर् की ताकत है ई उसे जीत सके? असम्भर्।

जीर्देर् में यह मन, मन है और 'म'ै देर् में यह मन 'म'ै आत्मा है।

मन की स्रापना फकया 'म'ै आत्मा ने, तब भर्ान आत्मा का पिु जो मन है ई 'म'ै के अनुर्ासन में रह सकता है, जीर् के अनुर्ासन के भीतर ई आ ही नहीां सकता। मन का अजस्तत्र् माननेपर मन पर र्जय नही,ां मन का अजस्तत्र् जाननेपर मन पर र्जय है।

मन के अभार् में ही प्रपचां का अभार् है। मन रूपी नदी जीर् देर् में रुकती है और आत्मदेर्में र्ातां होती है। यह मन कुछ करने से तो रुकता है और कुछ न करनेसे जरूर हो जाता है।

रुकने में मन का अजस्तत्र् है और जरूरता में उसका अजस्तत्र् ही समाप्त हो जाता है। सर्् शके मन के बहार् का एक ही लक्ष्य है, ई है ननत्यानन्द की प्राजप्त। कूकर, रूकूर, पर्ु,ु पिी, कीट, पतर्ां आहद प्रार्ीमाि का सबके मन का प्रर्ाह एक ही ओर है, अतः मसद् है फक मन एक ही है।

आत्मा भी एक ही है और मन भी एक ही है, सबका रीर एक पचांमहाभूतों से बना है। अतः, रीर भी एक ही है, अनेक नही।ां इस तरह एक ही है, जो सर्् शहै। इस अनुभूनत में सर्् शन रहा, एक ही रहा। जब सर्् शन रहा, तब एक भी न रहा, सर्् शके मलए ही तो एक कहा र्या, तब क्या रहा? बस, जो रहा ई न सर्् शहै, न एक है। जो है, सो है। जैसा है, र्ैसा है।

'म'ै हूँ इसकी अनुभूनत प्रार्ीमाि को है, सदैर् 'म'ै हूँ इसका ही अनुभर् प्रत्येक करता है, अमुक हूँ का नही।ां

'म'ै हूँ इस भार् में मन काबू में है, 'म'ै अमुक हूँ इस भार् में मन कभी भी काबूमें नहीां रह सकता।

जैसे ब्रह्म अफिय है, इसी तरह मन भी अफिय ही है, इन दोनों का प्रयोर् व्याकरर् र्ास्ि में नपुन्द्सक मलर्ां में हुआ है। मन न कहींजाता है, न आता है, अनन्द्त जन्द्मों के दृश्यों और कृत्यों के धचि अन्द्तःकरर् धचिर्ाला में टांरे् हुए हैं, इन्द्ही को ई समय-समय पर पलट-पलटकर देखा करता है, इसी को लोर् मन का आना-जाना मानते हैं।

धचन्द्हारी दृश्यानुभूनत है, र्ंकल्प का अभार् भासानुभूनत है, सर् शभार्ों का अभार् स्र्ात्मानुभूनत है। न फकसी का भार् करो, न फकसी का अभार्, यही स्र्ात्मानुभूनत है, यहाँ न सूक्ष्म है, न स्थूल, न जड है, न चेतन।

श्रुनत कहती है फक यहद बन्द्ध्या का पुि र्ेरे का मर्कार कर सकता हो, खरर्ोर् के सीर्ां हो सकतेहों, र्ीले केले के खम्भे में भोजन पकाया जा सकता हो, अभी की पैदा हुई कन्द्या भर्शती हो सकती हो, नपुसांक कुमार से यहद स्िी को भोर् सुख ममल सकता हो, यहद उपरोक्त सब हो सकते हों, तब तो समझो फक मन है, अन्द्यर्ा मन है ही नहीं। इसमलए, भैय्या ननर्षाद।

देझखअ सुतिअ गुतिअ मि माहीं। मोह मूल परमारथिुहीं ं।

यहाँ ँतक ज्ञान का प्रसर्ां है।

सपिेहोइ मभखारर ृिपु रंकु ाकपति होइ ।
जागे लाभु ि हाति कछु, तिमम प्रपंच स्जय ूँजोइ ।।

यहाँ ँसे र्ैराग्य का प्रसर्ां र्ुरू होता है। जैसे स्र्प्न में राजा अपने को मभखारी हुआ देखे और मभखारी अपनेको इन्द्र हुआ देखे, परन्द्तु जार्नेपर न कुछ लाभ हुआ, न कुछ हानन हुई। राजा, राजा ही है और मभखारी, मभखारी है। इसी तरह यह जर्त् ्प्रपचां का स्र्प्न है।

मोह तिसाूँसबु सोितिहारा । देझखअ सपि अिेक प्रकारा ।।

जजतने ेसब सांसारी जीर् हैं, र्े मोह ननर्ा अर्ात्श ्अज्ञान की रात्रि में सो रहे है और अनेक प्रकार के स्र्प्न देख रहे हैं।

अजस्तत्र्, भर्ान आत्मा को र्रीर मानना यही स्र्प्न है और र्रीर मानकर र्रीर के िमों को अपने आप में मानना यह सपनेके अदांर सपना है। अर्ात्श ्स्र्प्नान्द्तर है। पहहले 'म'ै र्रीर हूँ माना यह हुआ स्र्प्न, फफर इस मान्द्यता के बाद इसके िमों को अपनेमें माना, में स्िी हूँ, पुरुर्ष हूँ, बालक हूँ, युर्ा हूँ, र्ृद्ि हैं, र्पता, पुि, भाई, बहहन, माता, काका, मामा आहद हूँ। ब्राह्मर्, ित्रिय, र्ैश्य, र्ुरु हूँ। र्ृहस्र्ी, ब्रह्मचारी, र्ानप्रस्र्ी सन्द्यासी हूँ आहद माना, यह हुआ स्र्प्नान्द्तरा 'म'ै ससांारी जीर् हूँ इस मान्द्यता में 'म'ै अजस्तत्र् को जीर् माना यह हुआ

स्र्प्न। इसके बाद म ैंआता हूँ, जाता हूँ, खाता हूँ, पीता हूँ, सुखी हूँ, दु:खी हूँ, स्र्ी हूँ, नरकी हूँ आहद जीर् के िमों को अपने में मानना स्र्प्नान्द्तर है। ये स्र्प्न और स्र्प्नान्द्तर दोनों मोह की नीदां का स्र्प्न है।

प्रश्न है- स्र्ामी जी! इसको तो म ैंप्रत्यि देख रहा हूँ और आप इसे स्र्प्न कहते ेहैं, तो इसे म ैंकैसे मानूां?

उत्तर है- भैय्या! देखो जब तुम स्र्प्न देखते हो तब उस समय तुम्हें क्या यह अनुभर् होता है फक जो म ैं देख रहा हूँ र्ह स्र्प्न है, असत्य है, उसे भी तो प्रत्यि देखते हो। मर्र ऐसा अनुभर् नहीांहोता। उस समय यहद कोई तुम्हें समझार्े फक भाई! यह जो तुम देख रहे हो र्ह स्र्प्न है, जार्नेपर तुम्हें कुछ नही ांममलेर्ा, तब तुम नही ांमानोर्े, क्योंफक उस समय प्रत्यि सत्य अनुभर् कर रहे हो। स्र्प्न है यह तो जार्नेपर ही जाना जाता है। जार्नेपर त्रबना फकसी के समझाये तुम स्र्यां कहने ेलर्ते हो फक अरे! र्ह स्र्प्न र्ा, जजसे म ैंदेख रहा र्ा। इसी तरह अभी जो तुम प्रत्यि देख रहो हो र्ह अज्ञान की रात्रि में स्र्प्न देख रहे हो। यह तुम्हें असत्य तो तभी अनुभर् होर्ा, जब तुम स्र् स्र्रूप भर्र्ान आत्मा में जार् जाओर्े। तबला धचकारा में रात-हदन रामायर् र्ा रहे हो फक -

उमा कहउँ म ैंअनुभि अपिा, सि हररभजिुजगि सब सपिा ।
सीय राम मय सब जग जािी, करउँ प्रिाम जोरर जुग पािी ।।

तो इसका अनुभर् क्यों नही ांहो जाता? र्ह इसमलए फक तुम्हारा र्ाना बजाना और पढना भी सपनेमें ही हो रहा है।

महाराज जनक ने एक बार अपनेराजमहल में सोये हुए स्र्प्न देखा फक मेरे राज्य में पडोसी राजा ने चढ़ाई कर दी है। उसके सार् में युद्धमें हार र्या हूँ और मेरे राजपाट, कोर्ष, सेना, दास-दामसयाँ आहद सब पर उसका अधिकार हो र्या है। उसने मुझे ेराज्य से ननकाल हदया है। म ैंपर् का मभखारी हो र्या हूँ। मेरे पास र्रीर में मसफश एक िोती, जजसे फक में पहहने ेहुए हूँ के मसर्ा कुछ भी नही ांरहा। म ैंइिर-उिर मारा-मारा फफर रहा हूँ। इसी जस्र्नत में मुझेतीन हदनों तक खाने को कुछ नहीांममला है। म ैंभूख से अत्यन्द्त व्याकुल हो रहा हूँ। इतने में क्या देखता हूँ फक सामने िेि में मभखाररयों की भीड लर्ी हुई है और र्हाँ र्खचडी बँट रही है। म ैंभी कहीां से पडी हुई ममट्टी की हण्डी उठा लाया और उसमें िेि से र्खचडी मार्ांकर ला रहा र्ा फक एकान्द्त में फकसी पेड की छाया में बैठकर र्खचडी खाकर अपनी भूख ममटाऊँ फक इसी बीच दो साँड लडते हुए मेरे समीप आये और र्े मुझसे टकरा र्ये, जजससे मेरे हार् में रखी हुई र्ह र्खचडी की हण्डी छूटकर जमीन पर धर्र पडी जजससे हण्डी फूट र्यी और सब र्खचडी त्रबखर र्यी। म ैंअत्यन्द्त भूख से व्याकुल दु:ख के सार् झाड के नीचेआकर बैठ र्या हूँ। र्ह ऐसा स्र्प्न देख ही रहा र्ा फक घबराहट में उसकी नीदां खुल र्यी और र्े जार् उठे।

जार् जानेपर उन्द्हें स्र्प्न का सारा दृश्य आँखों के सामने प्रत्यि हदखने लर्ा। उन्द्हें बडी ग्लानन हुई और र्े सोचने लर्े फक म ैंअभी-अभी पर् का मभखारी र्ा, न भोजन की व्यर्स्र्ा र्ी, न र्स्ि का हठकाना र्ा। भूख से व्याकुल इिर-उिर मारा- मारा भटक रहा र्ा और अभी म ैंदेख रहा हूँ फक म ैंराजभर्न में हूँ। राजपाट, राननयाँ,

 दास-दामसयाँ, मिी, प्रजा, सेना, कोर्ष सब हैं, तब अभी-अभी जो म ैंमभखारी जनक रा् ह

सच है अर्ा् इस समय

जो में अपने को राजा जनक अनुभर् कर रहा हूँ, यह सच है। इन दोनों में कौन सच है? बस, इसी धचन्द्ता में पडे–पडे े उसनेबडी कहठनाई से रे्रे्ष रात त्रबताई।

प्रातःकाल होते ही उसने दरबार लर्ानेकी आज्ञा दी। दरबार में जब सब दरबारी और मत्रांमिडांल आकर बैठ र्ये, तब उसने मन में सोचा फक यहद म ैंअपनेस्र्प्न का सारा हाल उन्द्हें बताता हूँ तो यह मेरे मलए बडी लज्जा की बात होर्ी और इसमें मुझे ेअपमाननत होना पडेर्ा। अतः, उसने दरबाररयों और मत्रांयिों से कहा फक मेरे सामने एक प्रश्न है, इसका सतांोर्षजनक उत्तर जो कोई मुझे ेदे देर्ा, उसे में अपना आिा राज्य दे दूांर्ा। मेरी इस घोर्षर्ा की राज्य भर में डांांडी र्पटर्ा दी जाय। तत्पश्चात् ्उसने दरबाररयों के समि अपना यह प्रश्न रखा, प्रश्न केर्ल इतना ही र्ा फक -

यह सच है फक, िह सच है।

दरबाररयों की समझ में कुछ बात नहीां आयी और र्े ेउसका कुछ उत्तर न दे सके। इस घोर्षर्ा के अनुसार रोज बहुत से र्र्द्वान ऋर्र्ष-मुनन उनके दरबार में आते और इस प्रश्न का उत्तर देते, पर राजा को फकसी से भी सतांोर्षजनक उत्तर नहीां ममलता। उन्द्होंने सब र्र्द्वानों और ऋर्र्षयों को अपनेयहाँबन्द्दी बना मलया और उनकी आदरपूर्कश सेर्ा करते हुए उन्द्हें इस प्रश्न का उत्तर सोचते रहने के मलए प्रार्नशा की। उन्द्होंने कहा फक आप लोर् यही ांआराम से रहतेहुए इस प्रश्न का उत्तर सोधचये और मेरा समािान कीजजये। यहाँ ँआप लोर्ों की हर तरह से आराम और सुख-सुर्र्िा की व्यर्स्र्ा रहेर्ी। इसी प्रसर्ां में उनके यहाँअष्टार्क्र जी का र्ुभार्मन हुआ, जजसका र्रीर आठ जर्ह से टेढ़ा र्ा और जो कहोल ऋर्र्ष के पिु र्े। कहोल भी राजा जनक के यहाँबन्द्दी र्े। जब बालक अष्टार्क्र अपनी माता के र्भ शमें ही र्े तब एक हदन कहोल ऋर्र्ष र्ेद पाठ कर रहे र्े और उनकी र्भर्शती िमपशत्नी उनके पास बैठी चार्ल चुन रही र्ी।

कहोल ऋर्र्ष के सस्र्र पाठ करने ेमें कुछ अर्ुद्धि पाठ हुए, जजसे बालक ने माता के र्भ शसे ही टोक हदया। इस तरह जब उसे आठ बार टोकते हो र्या तब र्पता को िोि आ र्या र्े जान र्ये फक यह र्भ शजस्र्त बालक ही मुझे ेटोक रहा है। उसनेउसे तत्काल श्राप हदया फक जब अभी से तुझे ेअपनी र्र्द्वत्ता का इतना अमभमान है फक मेरी अर्ुद्धि ननकाल रहा है तो जा तू आठ जर्ह से टेढ़ा हो जा। बस, इसी श्रापर्र्र् उनका र्रीर र्भ शमें ही आठ जर्ह से टेढ़ा हो र्या। र्े माता के र्भ शसे इसी तरह पैदा हुए, इसीमलए उनका नाम अष्टार्क्र पडा। इनतहास बडा लम्बा है कहाँ तक कहें। ननदान राजा जनक ने उनकी र्र्धिर्त् ्पूजा की उनके समि नम्रतापूर्कश अपना र्ही प्रश्न रखा। प्रश्न सुनकर सप्तर्र्षीय अष्टार्क्र ने उनसे कहा फक ऐ जनक! तुम्हारा प्रश्न है फक "यह सच है, फक र्ह सच है" तो जैसा तेरा सक्षांप्ति प्रश्न है, र्ैसा ही सक्षांप्ति उत्तर इसका यही है फक "न यह सच है, न र्ह सच है" और इसका र्र्स्तृत उत्तर सुनना है तो र्ह भी सुन। ऐसा कह उन्द्होंने दरबाररयों के समि राजा के उस देखे हुए स्र्प्न का पूरा-पूरा र्र्र्रर् कह सुनाया। इसके बाद र्े कहनेलर्े फक सत्य र्ह है, जो तीनों काल (भूत, भर्र्ष्य और र्तमशान) और तीनों अर्स्र्ा (जार्ृत, स्र्प्न, सुर्षुजप्त) में ननत्य एक रस रहे, उसका फकसी िर् भी अभार् न हो। तुमने ेजो

मभखारी जनक देखा र्ा, र्ह जनक अभी र्मशान में नहीींहै, भर्र्ष्यकाल में भी उसका अभार् है, जार्तृ और सुर्षुजप्त अर्स्र्ा में भी र्ह नहीींहै। अतः, र्ह सच नहीीं है। इसी तरह अभी जो जनक हो र्ह स्र्प्न और सुर्षुजप्त में नही।ीं भूतकाल और भर्र्ष्यकाल अर्ात्श ्सौ हजार र्ष शबाद नहीींरहने र्ाला है। अतः, यह भी सत्य नहीींहै, क्योंफक तीनों काल और तीनों अर्स्र्ा में कभी न कभी इनका अभार् है। अतः, दोनों असत्य है। इसमलए, न यह सच है, न र्ह सच है। जार्तृ अर्स्र्ा के सब प्रपचीं स्र्प्न अर्स्र्ा में नहीीं रहते और स्र्प्न अर्स्र्ा के सब प्रपचीं जार्तृ अर्स्र्ा में नहीीं रहते। अतः, न यह सच है, न र्ह सच है। जार्तृ अर्स्र्ा में स्र्प्न अर्स्र्ा नहीीं और स्र्प्न अर्स्र्ा में जार्तृ अर्स्र्ा नही।ीं अतः, दोनों असत्य। दोनों जर्त् ्स्र्प्न है।

उमा कहउूँ म ैंअिुभि अपिा। सि हररभजिु जगि सब सपिा ।।

प्रश्न है - तब सत्य क्या है?

उत्तर है- अरे! जो इसे भी देखता है और उसे भी देखता है, र्ही सत्य है। जार्तृ अर्स्र्ा के सब प्रपचीं को और स्र्प्न अर्स्र्ा के सारे प्रपचों को जो सुर्षुजप्त अर्स्र्ा में अपने में समेटकर चैतन्यरूप से ननत्य र्द्यमान रहता है र्ह 'म'ैं आत्मा ही सत्य है। तीनों अर्स्र्ाओीं का जो सािी, दृष्टा और अनुभर् करने ेर्ाला 'म'ैं आत्मा ही है, र्ही सत्य है। जनक के द्वारा फकये र्ये अनेक प्रश्नों का महात्मा अष्टार्ि ने र्ैलिर् उत्तर हदया। जजससे, राजा जनक बडे ेप्रभार्र्त हुए और उनके ही उपदेर् से राजा जनक को आत्मतत्त्र् का बोि हुआ। तदनन्द्तर, उनकी ही आज्ञा से बन्द्दी हुए ऋर्र्षयों और मुननयों को छुटकारा ममला।

अपनेआत्मा 'म'ैं को सघाींत मानना स्र्प्न है और आत्मा 'म'ैं में सघाींत के िमो को मानना स्र्प्नान्द्तर है। 'म'ैं के मसर्ा जो भी है सब सघाींत है।

मान्द्यता जर्त् ्का नार्रक मोह ननर्ा में सोता है और आत्मदेर् का नार्रक मोह ननर्ा में जार्ता है।

मोह तिसाूँसबु सोिति हारा। देझखअ सपि अिेक प्रकारा ।
एहहं ंजग जाममति जागहहं ंजोगी। परमारथी प्रपंच त्रबयोगी ।।

इस रात्रि में योर्ी जार्ते हैं, कौन योर्ी? जो परमारर्ी हैं और जजनने प्रपचीं का त्यार् कर हदया है र्े। परमार्ी का अर् शहोता है, परम + अर्ी अर्ाशत् ्परमार्ी। तो परमार् शतो मसफश 'म'ैं आत्मा ही है। इसमें जो ननत्यरत है, र्ह है परमार्ी। जजसकी दृजष्ट में भर्र्ान आत्मा के मसर्ा अन्द्य कुछ है ही नही।ीं 'र्ासुदेर् ्ीसर्'श, 'नारायर्ेर्ेदीं सर्'श, 'आत्मैर्ेदीं सर्'श, 'ब्रह्मर्ेदीं सर्'श में जो रत है। इस प्रकार की जब अनुभूनत होने लर्े तब जानो फक जीर् जर्र्ा है। इस स्र्रूप के बोि में फफर ससाींर का अभार् हो जाता है अर्ात् शर् ्जर्त् ्प्रपचीं का स्र्प्न ममट जाता है। तब समझ में आता है फक जर्त् ्स्र्प्न है। उसे फफर समझाना नही ींपडता फक यह स्र्प्न है।

जातिअ िबहहं ंजीि जग जागा, जब सब विषय त्रबलास त्रबरागा ।।

जीर् ससांार में जर् र्या तभी जानो जब उसे र्न्र्षय और उसके र्लास से र्रैाग्य हो जाय।

र्रैाग्य दो प्रकार के होतेहैं - 1 अपर र्रैाग्य, 2. पर र्रैाग्य

र्दद, स्पर्,श रूप, रस और र्न्द्इिन र्न्र्षयों के भोर् को नार्र्ान, अननत्य और दु्ःख रूप समझकर उसके भोर् से जो घृर्ृा उत्पन्द्न हो जाती है और मन उनसे उदासीन होकर उसके र्लास का त्यार् कर देता है, उसे अपर र्रैाग्य कहतेहैं। यह अपर र्रैाग्य भी दो प्रकार का होता है।

1. सोपाधिक,

2. ननरुपाधिक

स्र्ीि, पुि, माता-र्पता, घर-द्र्ार, अडोसी-पडोसी आहद की ओर से धचत्त में जब र्रीप होता है, तब व्यजक्त इनको त्यार्कर चला जाता है। यह सोपाधिक र्रैाग्य है।

सन्द्त महात्माओांके सत्सरां और अनन्द्त जन्द्मों के पूर्ाजशजतश पुण्य उदय होने ेपर जो र्न्र्ेक बुद्धि द्र्ारा आत्मा, अनात्मा के र्र्चार द्र्ारा घर-द्र्ार का त्यार् कर देता है उसे ननरुपाधिक र्रैाग्य कहतेहैं।

ननरुपाधिक र्रैाग्य सडकर दुरुन्द्शियुक्त नहीांहोने पाता, परन्द्तु सोपाधिक र्रैाग्य की यहद उधचत रिा नही ांहुई तो र्ह सडकर दुरुन्द्शियुक्त हो जाता है। उसमें कीडे ेपड जाते हैं। इस तरह र्ह नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। सन्द्त महात्माओां ने र्रैाग्य की उपमा मक्खन से दी है। जैसे, ताजेमक्खन को जल्दी से जल्दी आर् में तपाकर, उसमें से महमहाता हुआ ताजा घी तैयार कर मलया जाता है, जो स्र्ाहदष्ट और स्र्ास्थ्यर्द्शिक होता है, परन्द्तु यहद उसी मक्खन को दो-तीन हदन अर्र्ा सप्ताहभर उसी तरह रहने हदया र्या, आर् में तपाकर घी तैयार न फकया र्या तो र्ह सड जायेर्ा। उसमें से दुरुन्द्शि आनेलर्रे्ी, उसमें कीडे ेपड जायर्ें। इस तरह र्ह मक्खन फेंक देने लायक ही रहेर्ा। र्ह फकसी काम का न रहा।

अब र्रैाग्य का दुरुजशन्द्ति होना और कीडे ेपडकर नष्ट होना क्या है, उसके लिर् सुनो - कुहटया बना लेना, महांदर आश्रम बनाना, चूल्हा-चक्की, मूसल-ढेकी आहद र्ृहस्र्ी की सामग्री रख लेना और फफर रुपया-पैसा जमा करना, इस तरह र्ह र्रैाग्यर्ान सािु ुर्ृहस्र् हो र्या, यही मानो र्रैाग्यरूपी मक्खन का सडकर दुरुजशन्द्ति होना और उसमें कीडे ेपडना है। इस मक्खन से अब ज्ञानरूपी घी नहीांननकल सकता। अनन्द्त जन्द्मों के पूर्ाजशजतश पुण्य के फलस्र्रूप तो यह र्रैाग्य जार्ा और घर-द्र्ार, स्र्ीि, पुि, कुटुम्ब परररर्ार सबका त्यार् फकया। इसके बाद जजस र्ृहस्र्ी का त्यार् फकया र्ा, उसी र्ृहस्र्ी को रूप बदलकर फफर अपना मलया। इस तरह र्ह दीन का रहा, न दुननया का। "िोबी का कुत्ता न घर का, न घाट का" हो र्या।

ननरुपाधिक र्ैराग्यर्ान को पहहले से ही र्ेर्क रहता है। अतः, उसमें दृढ़ता रहती है, इसमलए उसका र्ैराग्य त्रबर्डने नहीां पाता। उसके धर्रनेका भय नहीांरहता। ये दोनों र्ैराग्य बोि के पहहले होता है। अतः, इस बोि र्ूनूद्य र्ैराग्यर्ान को सन्द्त महात्माओांतरा् र्ास्रोंकी यही आज्ञा है फक र्ह ससांार में न त्रबचरे, क्योंफक उसे र्ेर्षयों के अजस्तत्र् का भान है। अतः सर्ांदोर्ष से उसे र्ेर्षयों में पुनः आसजक्त हो सकती है। उसके धर्रनेका भय है। अतः, र्ह एकान्द्त में रहकर अपनेर्ैराग्य को "खूष्ट न्द्याय" के समान पकाय।े "खुष्ट न्द्याय" का मतलब यह होता है फक (खूष्ट कहते हैं-खूँटे को) जजस तरह खूँटे को जमीन में र्ाडते समय बार-बार ठोकर मारना और फफर हहलाकर उसकी मजबूती देखी जाती है, इसमलए फक जो भी पर्ु इसमें बाँिा जाये, र्ह कही ांउखाडकर भार् न जाये। इसी प्रकार र्ह एकान्द्त सेर्न, सत्पुरुर्षों का सत्सर्ां और अध्यात्म र्ास्र्ेदान्द्त का र्ेचार करता रहे तरा् अपनेआत्मकल्यार्, भर्र्त् ्दर्नश के मलए अपने हृदय में मछली के समान तडप (जजज्ञासा) पैदा करे, इसी में उसका उद्धार है।

ससांार में सोपाधिक र्ैराग्यर्ान तो बहुत ममलेंर्े

"िारर मुई गृह सम्पति िासी, मू मुाइ होहह सन्द्यासी"

परन्द्तु, ननरुपाधिक र्ैराग्य हजारों लाखों में फकसी-फकसी को होता है। र्ेश्र् के इनतहास में भर्र्ान श्रीराम के समान र्ैराग्य न फकसी को हुआ है और न फकसी को होर्ा।

एक बार सोलह र्र्ष शकी अर्स्रा् में भर्र्ान राम की इच्छा तीर्ाटशन करने की हुई। राजा दर्रर् को जब राम की इस इच्छा की जानकारी ममली तब उन्द्होंने ेउनके तीर् शभ्रमर् के मलए एक सुन्द्दर रर् सजर्ाया और आर्श्यक व्यर्स्रा् कर राज्य के कुछ कमचशारी, सेर्कों एर् ांराम के ममिों के सार् उन्द्हें तीर् शभ्रमर् के मलए भेजा। राम अनेक तीर्ों में र्ए तरा् पर्र् तीर्ों के भ्रमर् के बाद र्े अयोध्या लौट आये। तीर्ों से लौटकर र्ापस आने के बाद उन्द्हें ऐसा प्रचण्ड र्ैराग्य हुआ फक न उन्द्हें भोजन में रुधच री् और न राजमहल के सुख भोर् की ओर उनका ध्यान रा्। उसके ननत्य की हदनचयाश में भी अन्द्तर हो र्या। खाने-पीने, उठने-बैठने, सोने, हास-पररहास सबसे उन्द्हें अरुधच हो र्ई। र्े हदन-रात या अमनस्क रहने लर्े। राम की अर्स्रा् कुछ ऐसी हो र्यी फक खडे ेहैं तो खडे ेही हैं, बैठे हैं तो बैठे ही हैं। न कुछ उत्सुकता है और न लालसा या कामना।

राजा दर्रर् को जब राम की इस परररर्नततश दर्ा का हाल मालूम हुआ, तब र्े ेबडे ेधचनांतत हुए। उन्द्होंने राम की दर्ा में परररतनश लानेके मलए अनेक प्रकार के भोर्-र्ेलास की सामधग्रयों का राम के समि आयोजन कराया। सुन्द्दर-सुन्द्दर र्षोडसी कुमाररयों को अपने हार्-भार् एर् ांकटिों से राम का हृदय परररर्नततश करने ेकी आज्ञा ममली। इन सुन्द्दर कुमाररयों ने राम के हृदय में परररतनश लाने के मलए अनेक युजक्तयों से काम मलया, लेफकन र्ेअसफल होकर लौट र्यीं। राम हदन-रात उदासीन र्ृर्त्त में डूबे रहतेर्े। उनके मन में प्रचण्ड र्ैराग्य, पूर् श रूप से घर कर र्या रा्। तीर्ाशटन का यही र्ास्तर्ेक फल है और तीर् शका यही महत्र् है। तीर् शकरने ेके बाद यहद र्ेर्षयों से परम र्ैराग्य और अन्द्तःकरर् पर्र् न हो सका तो र्ह तीर्ाटशन करना ही व्यर् शहै।

राम की इस दर्ा को देखकर सबको बडी धचतांा हुई। इसी बीच अयोध्यानर्री में मुनन र्ी्श्रामममि का आर्मन हुआ। राजा दर्रर् ने मुनन र्ी्श्रामममि का अपने दरबार में स्र्ार्त फकया और मुनन की चरर् न्र्दंना करने ्के बाद राम की सोचनीय दर्ा का सम्पूर् शर्तृ्तान्द्त उन्द्हें कह सुनाया। यह सब सुनकर मुनन ने पहहले राम के ननकट रहने र्ाले ममिों को बुलाया और उनके द्र्ारा राम की दर्ा की जानकारी प्राप्त की। राम के ममिों से मुनन को मालूम हुआ फक राम को न तो इस लोक के सुख भोर् में आसजक्त है और न इन्द्र के स्र्् शसुख की चाह है। उन्द्हें तो उस र्स्तु को प्राप्त करनेकी इच्छा है, जजसे पाकर और कुछ पाना बाकी न रहे। इस हाल को जानकर र्ी्श्राममि जी ने राम को राज दरबार में बुलर्ाया। राम दुबुलश, उदासीन एर्ंलडखडाते हुए पैरों से चलते हुए राज दरबार में मुनन की आज्ञानुसार उपजस्त हुए। उन्द्होंने मुनन के चरर्ों की न्र्दंना की। तदुपुरान्द्त, एक ओर हटकर खडे ्हो र्ये, तब र्ी्श्राममिजी ने पूछा राम! तुम्हारी यह क्या दर्ा है? अपनेमन की बात पूर् शरूप से व्यक्त करो फक आर्खर तुम चाहते क्या हो?

इस पर राम ने कहा भर्र्न्!् मुझे ्कुछ नहीचंाहहए। मुझे ्तो उस र्स्तु की लालसा है, जजसे पाकर मनुष्य को फफर कुछ पाना बाकी न रहे। म ्ैंदेखता हूँ फक मनुष्य के मलए इस लोक और परलोक में मसर्ाय दु्ःख के कुछ सार नही ्ंहै, मनुष्य जन्द्म से लेकर मतृ्यु पयन्द्शत दु्ःख ही दु्ःख में डूबा रहता है। इसे र्भ शमें असहनीय कष्टों का सामना करना पडता है। माता के उदर में, मल-मिू और दुर्न्द्शियुक्त पररजस्नत में यह र्भ शका कष्ट सहता रहता है, फफर लघुद्र्ार से इसका जन्द्म होता है। इन कष्टों के बाद बाल्यार्स्ा में जब तक बोल नहीं सकता, र्ारीररक र्ेदर्ा कष्टों में डूबा रहता है। पेट ददश, मसर ददश आहद कष्टों के आनेपर न तो उसे बता सकता है और न उससे छूटने में समर्् शही रहता है, मसर्ाय कष्टों को भोर्तेहुए रोतेरहने के उसके पास कोई चारा नहीं होता। माता तर्ा उसके सरांकि उसके कष्टों को समझ भी नहीसंकते। अतः, उन कष्टों के ननर्ारर् का कोई समुधचत उपाय भी नही ्ंफकया जा सकता। युर्ार्स्ा में इजन्द्रयों के प्रबल होने पर र्ासनाओं से सबांधांति अनेक कष्टों को भोर्ना पडता है, फफर र्दृ्धार्स्ा तो सारे कष्टों का आर्ार ही है।

इस प्रकार जन्द्म से लेकर मतृ्यु पयन्द्शत मनुष्य को ससांारमें कष्ट ही कष्ट भोर्ना पडता है। राम के मुँह से र्ैराग्य पूर् शइस र्र्ेचन को सुनते ्ही राज दरबार में बैठे हुए राजा दर्रर् अपने आसन से मूनछशत होकर भूमम पर धर्र पडे।् सम्पूर् शराज दरबार में र्ोक का र्ातार्रर् व्याप्त हो र्या। तब र्ी्श्राममि जी ने महर्र्ष र्मर्ष्ठ से कहा- हे भर्र्न्!् इस समय सम्पूर् शर्र्श्् में आपके समान परम पूज्यतत्त्र्ेत्ता ज्ञान के भण्डार कोई नहीं है। आप राम के इन कष्टों के ननर्ारर्ार् शउन्द्हें उधचत उपदेर् देनेकी कृपा कीजजये। महर्र्ष र्र्श्राममि के इस बात को सुनकर र्ुरु र्मर्ष्ठ उठे। उन्द्होंने, र्ुरु होतेहुए भी राम के चरर्ों की पुष्प पिाहदकों से पूजा की। उनका हृदय प्रे्म से र्दर्् हो उठा। आकार् से देर्ताओं द्र्ारा पुष्पर्जृष्ट हुई और राज दरबार में ही श्रीराम को र्ुरु र्मर्ष्ठ ने "योर् र्ामर्ष्ठ' महारामायर् का ज्ञान हदया।

भैय्या! र्मल र्ैराग्य का ऐसा स्र्रूप होता है। त्रबना इस र्ैराग्य के ज्ञान सुलभ नही ्ंहै और त्रबना ज्ञान के भर्र्ान के चरर्ों में भजक्त नहीहंो सकती, जो सर्् शदु्ःखों के नार्क और सुखों की खानन है।

अपर रै्राग्य में र्न्षयों के र्लास का त्यार् होता है, क्योंफक यहाँ ँबिो नही ांहुआ है, परन्द्तु पर रै्राग्य में र्न्षयों के अजस्तत्र् का ही त्यार् हो जाता है। लकडी को डण्डा मानकर उससे घृरा करना यह 'अपर' और डण्डा है ही नहीां यह तो लकडी ही है, यह 'पर' रै्राग्य है। अजस्तत्र् भर्ान आत्मा को र्न्षय मानकर उसका त्यार् 'अपर और र्न्षयों के अजस्तत्र् का ही त्यार् 'पर' रै्राग्य है।

कहहअ ताि सो परम त्रबरागी। तृि सम मसद्चध तीनि गुि त्यागी ।।

यह पर रै्राग्य है और

जातिअ िबहहं ांजी जग जागा। जब सब त्रब्रषय त्रबलास त्रब्ररागा ।।

यह अपर रै्राग्य है। यहाँतक रै्राग्य है, आरे् भजक्त का र्र्चन है।

सखा परम परमारथु एहू। मि क्रम बचि राम पद िेहू ।।

मन, र्चन और कम शतीनों से, राम के पद में पे्रेम होना यही सचा परमार् शहै।

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अत्रबगि अलख अिाहद अिूपा ।।

राम ब्रह्म है, परमार् शरूप है। रे् ेअजन्द्मा हैं, इजन्द्रयों से परे आहद-अन्द्त से रहहत और अनुपमेय है। उनके समान दूसूरा कोई नहीांहै।

सकल त्रबकार रहहि गि भेदा। कहह नित िेति तिरूपहहं ांबेदा ।।

सनातन ब्रह्म राम र्श्र् की आत्मा है, 'म'ैँ है। रे् समस्त र्कारों और भेदों से रहहत हैं। उसमें फकसी प्रकार का भेद नही ांहै। देखो भेद तीन प्रकार के होतेहैं -

1. सजिीीय भेद -

मनुष्य एक जानत है, परन्द्तुइसमें स्त्रिी हैं, पुरुर्ष हैं, बालक, युर्ा, र्ृद्ि हैं, ये सजातीय भेद हुए।

2. विजिीीय भेद -

मनुष्य भेद हुआ। और पर्ु में भेद। ये दोनों अलर्-अलर् जानत के हैं। अतः, यह र्जातीय

3. स्त्रिगि भेद -

एक ही र्रीर के अर्ों का भेद, आँख, कान, नाक, मुँह, हार्, पैर आहद का भेद स्र्त भेद है।

भर्र्ान राम में इन तीनों भेदों का अत्यन्द्ताभार् है।

राम में सजातीय भेद नही ांहै, फकस तरह? देखो-राम की क्या जानत है?

राम सस्च्चदािन्द्द हदिेसा ।।

राम, सत् ्है, धचत् ्अर्ात्श ्चेतन है और आनन्द्द स्रूप है। सजच्चदानन्द्द है और जीर् की जानत है।

ईस्रि अंस जिी अत्रबासी। र्चिे, अमल, सहज सुखरासी ।।

जीर् अर्र्नारी है, अर्ात्श ्सत् ्(सत्य) है। चेतन है और सहज सुखरार्ी अर्ातश आनन्द्द स्रूप है। इस तरह जीर् और ईश्र्र में सजातीय भेद त्रबलकुल नही ांहै। यहद, जीर् को राम ब्रह्म से मभन्द्न मानकर सत् ्मानोर्े, तो ब्रह्म और जीर् में सजातीय भेद आ जायर्ा। राम ब्रह्म से जीर् को अलर् मानकर यहद चेतन मानोर्े तो सजातीय भेद आ जायर्ा और इसी तरह राम से मभन्द्न मानकर आनांद स्रूप मानोर्े तो सजातीय भेद आ जायर्ा इसमलए सत् ्है तो राम, धचत् ्है तो राम, आनन्द्दस्रूप है तो राम। अतः, जीर् है ही नहीांर्ह राम ही है, क्योंफक इनमें भेद का अभार् है।

फफर समझो प्रश्न होता है फक सत् ्से मभन्द्न सत होता है या असत्?् उत्तर होर्ा-असत्।् चेतन से मभन्द्न चेतन होर्ा या जड। उत्तर है- जड होर्ा और आनन्द्द से मभन्द्न आनन्द्द होर्ा या दुःख? उत्तर है, दुःख होर्ा। अब यहद हम राम ब्रह्म से जीर् को सर्र्शा मभन्द्न मानेंर्े तो राम सत् ्है, धचत् ्है, आनन्द्दस्रूप है, तो जीर् उससे मभन्द्न होने पर सत् ्से मभन्द्न असत्,् चेतन से मभन्द्न जड और आनन्द्द से मभन्द्न दुःखरूप हुआ। इस तरह जीर् असत्,् जड और दुःखरूप हुआ। जब जीर् असत् ्हुआ, तो असत् ्कहते हैं जो है ही नहीांउसे, बन्द्ध्यापुिर्त्।्

इसमलए, यहद जीर् को भर्र्ान राम से मभन्द्न मानोर्े तो जीर् का अजस्तत्र् ही खतम हो जायर्ा, र्ह रह ही नही ांसकेर्ा, इसमलए भाई! यहद जीर् की रिा चाहते हो तो इस जीर् बेचारे को राम ब्रह्म से अलर् मत मानो। इसी में जीर् का जीर्न है। अलर् होतेही र्ह मर जायर्ा। रहेर्ा कहाँ? अरे यार! सत्य दो नही ांहोता, चेतन दो नहीां होता और आनन्द्द दो नहीांहोता। अतः, ब्रह्म और जीर् दोनों एक ही जानत के हैं। इसमें सजातीय भेद नहीांहै।

एक जीर् और दूसूरा ब्रह्म यह भेद फकसमें है? यहद यह भेद ब्रह्म में मानोर्े तो र्ह भेद रूप हो र्या, क्योंफक भेद तो दो में होता है, तो ब्रह्म या परमात्मा दो नहीांहो सकते और यहद अमभन्द्न है तो र्ह र्ही है, एक ही है, इस तरह भी भेद रहहत मसद्ध हुआ।

अब र्र्जातीय भेद पर समझो - अर्र राम ब्रह्म से एक फूल को भी, एक तृर् को भी अलर् मानोर्े तो उसमें र्र्जातीय भेद आ जायर्ा। अतः, नतनका-नतनका, जराश जराश, कर्-कर् भर्र्ान हैं।

'फूल है' इसमें 'फूल' र्ंकल्प है या र्स्तु ? उत्तर है-र्ंकल्प है। तब र्ंकल्प, तो अजस्तत्र्हीन होता है,

अभार्रूप।

शब्द ज्ञािुपािी िस्तु शून्द्यो विकल्पाः ।।

केर्ल र्दद भर सुनाई दे, परन्द्तु र्स्तु का अभार् हो, उसे र्ंकल्प कहतेहैं। डण्डा सुनाई पडा, परन्द्तु ढूँढने पर डण्डा नहींममलेर्ा, लकडी ही लकडी हार् में लर्ेर्ी। तब लकडी पर डण्डे ेका र्ंकल्प हुआ। इसी तरह 'फूल' यह र्ंकल्प फकस पर हुआ? अजस्तत्र् 'है' पर हुआ। भास पर हुआ 'म' ँ आत्मा पर हुआ, जो मन, र्ार्ी से परे है, उस पर हुआ। जो भास है, अजस्तत्र् है, र्ह अजस्त, भानत, प्रिय है, सत् ्है, धचत् ्है और आनन्द्दस्र्रूप है, सजच्चदानन्द्द है। इस तरह राम ब्रह्म में र्जातीय भेद का अभार् है। स्र्र्त भेद-जो पदार्श व्यापक होता है, उसमें भेद नहींहो सकता। भेद तो आकार-प्रकार में होता है। पररनछन्द्न में होता है, इसमलए राम ब्रह्म में स्र्र्त भेद का भी अभार् है।

'सकल त्रबकार रहहत र्त भेदा' का यही भार् है। र्ह अनूपा है, उपमा रहहत है। उसके समान दूसूरा कोई नही ांहै, अनुपमेय है। इस तरह राम ब्रह्म में तीनों प्रकार के भेद का अभार् है। तब र्ह हुआ अभेदरूप और एक। क्योंफक, भेद तो दो में होता है। जब र्ह अमभन्द्न है, तब र्ह र्ही है, एक ही है। इसको कहते ेहैं परमार्।श इसमें जो रत है, र्े परमार्ी योर्ी हैं। जो एक है, र्ह अनुपमेय है, उसके समान दूसूरा कोई नहींहै, जो जैसा है, र्ह र्ैसा ही है। र्ह ऐसा, र्ैसा नही ांहै।

देखो, यहाँ ँपर जजतने ेतुम बैठे हो उनके रूप-रांर्, आकार-प्रकार, सब एक- दूसूरे से त्रबल्कुल मभन्द्न हैं। उसके समान दूसूरा र्ंश्र् में कोई नहीं ममलेर्ा, जैसा उसकी आँख, कान, नाक, मुँह, चेहरा आहद र्ैसा दूसूरा कोई नही ांहै। र्ह जैसा है, र्ैसा ही है, जो है, र्ही है। र्ह अनुपमेय है, क्योंफक र्ह भर्र्ान है, र्ह एक ही है। उसके समान कोई दूसूरा नहीं है। इस अनुपमेयता से सब भर्र्ान हैं।

प्रश्न है- स्र्ामी जी! जब सभी भर्र्ान हैं, तब तो बहुत से भर्र्ान हो र्ये। क्या कई भर्र्ान हैं?

भैय्या! र्र्षय को ध्यान से समझो -

एक कर्ार्ाचक फकसी भार्ुक भक्त को रात भर रामायर् सुनाते ेरहे, जब र्ह रामायर् की कर्ा सुन चुका, तब र्ह भक्त कर्ार्ाचक से पूछने ेलर्ा फक पजण्डत जी महाराज! आपनेजो कर्ा सुनायी मनैं ेउसे बडे े ध्यान से सुना और सब बातें समझ में आ र्यीं, केर्ल एक ही बात मेरी समझ में नहींआयी, दयाकर उसी को समझा दीजजये।

पजण्डत जी ने कहा- भाई! कौन-सी बात समझ में नहींआई? पूछो। इस पर भक्त कहने ेलर्ा महाराज! ये जो आपने कर्ा कही उसमें राम रािस है या रार्् रािस है, यही में समझ नहीं सका। इस पर पजण्डत जी ने

अपना मसर पीट मलया और अपनेसारे पररश्रम पर पानी फफरा समझकर रे् कहने लरे् "भैय्या! न राम रिास है, न रार्् रिास है। रिास तो हम-तुम दोनों हैं।"

इस तरह मत सुनो! देखो, र्ऱ्षय समझो - अरे यार! बहुत से भर्ऱ्ान नहींहैं, जजसे तुम बहुत देख रहे हो, ई बहुत नहींहैं, एक ही हैं। यहाँ ँपर र्ऱ्चार करना है फक जो अनेक है, ई एक ही है या अनेक? देखो इस पण्डाल में जो श्रोता बैठे हैं, उनकी धर्नती करो। उनके मसर पर हार् रख-रखकर धर्नना आरम्भ करो-एक, आरे् बढ़ो, अब दो, अब यहींपर रुक जाओ और र्ऱ्चार करो फक जजसके मसर पर हार् रखकर दो कह रहे हो ई क्या दो है? या एक ही है, जजसे दो कह रहे हो। आरे् चलो 'तीन'। अब जजसके मसर पर हार् रखे हो, ई तीन है या एक है। उत्तर ममलेर्ा- ई एक ही है। आरे् चलो। चार, पाँच, छः इस तरह एक ही को तुम यह सब कहते ेचले आ रहे हो। र्स्तुतः, रे् है नही।ं सब एक ही हैं, जजसे तुम सौ, हजार, लाख करोड आहद कह रहे हो। यहद एक न हो तो सौ, हजार लाख की मसद्धि न हो। देखो-दो में से एक ननकाल लो, दो नही ंरहा। तीन में से एक ननकाल लो, तीन नही ंरहा। सौ में से एक ननकाल लो, सौ नही ंरहा, सौ का अजस्तत्र् खतम, ननन्यानबे ही रह र्ये। इसी तरह जजसमें से भी एक ननकाल लोरे् तो उसका अजस्तत्र् ही खतम। इससे मसद् हुआ फक यह जो अनेक कहा जा रहा है, ई एक ही है। एक र्ही है, जजससे मभन्द्न दूसूरा न हो, यही एक की व्याख्या है।

मनुष्य में मनुष्यत्र् िम,श मनुष्य के अनेक होने ेपर भी एक ही है। जस्त्रयों का स्त्रीत्र् िम,श देर्ताओं का देर्त्र् िम,श पर्ुओंका पर्ुत्र् िम शआहद। व्यजक्तयों के अनेकत्र् में भी एक ही है तो जो एक ही है र्ही राम है। इसका रहस्य फकसानों से पूछो-र्ल्े की रामर् को जब फकसान नापना प्रारांभ करता है, तब ई बडे ेलहजे ेके सार् रामर् नापना (धर्नना) प्रारांभ करता है। ई एक को एक नहींकहता। ई कहता है "रामे हे, रामे हे, रामे हे राम' इसके बाद ई दो कहता है। अतः, जो एक है, ई राम ही है।

ब्रह्माजी ने भर्ऱ्ान कृष्र् की स्तुनत करते समय कहा फक भर्ऱ्न! तुम एक हो।

एकस्त्त्मिात्मा पुरषाः पुराणाः सत्याः स्त्र्यिंज्योतिरिन्द् आद्याः ।
तित्योऽक्षरोऽजस्र सुखो तिरञ्जिाः पूणोऽद्र्यिो मुक्त उपाचधिोऽमृिाः ।।

भर्ऱ्ान एक है-मन एक है, इसमलए ई भर्ऱ्ान है। धचत्त एक है, इसमलए ई भर्ऱ्ान है, इजन्द्रयाँ, आँख, कान, नाक, मुँह, हार्-पैर आहद सब एक हैं। प्रश्न होता है-स्र्ामीजी! आँख, कान, हार्, पैर आहद तो दो हैं, आपने इन्द्हें एक कैसे कहा? उत्तर है-अरे! यहद आँख दो हैं तो फफर दो काम उन्द्हें करना चाहहए, एक आँख देखने का काम करे और एक आँख सुनने ेका तब तो रे् दो हैं, परन्द्तु ुजब रे् केर्ल देखते ही हैं, अन्द्य कुछ नही ंतब मसद् है फक ई एक ही है। इसी तरह अन्द्य हो की सख्ांया की मान्द्यता को समझो, जब ये सब एक-एक ही हैं। र्रीर एक, हड्डी एक, चमडा एक, रक्त एक। इस तरह सर् शएक ही एक है। इसमलए, सब भर्ऱ्ान ही है, क्योंफक भर्ऱ्ान एक है।

'मुक्ता' अपिेआप में, भासै रूप अिेक ।

महाशंखं लौ अंक ज्यों, बिा आप ही एक ।।

यही अध्यात्म है, परमाथ िरूप भगिाि है ।

भगि भूमम भूसुर सुरमभ, सुर हहि लाचग कृपाल ।

करि-चररि घरर मिुज िि, सुि ममटहहं जग जाल ।।

र्ही कृपालु भर्ान राम, भक्त, भूमम (पृथ्र्ी) ब्राह्मर्, र्ौ और देर्ताओं के हहत के मलए मनुष्य र्रीर िारर् करके लीलाएँ कर रहे हैं, जजसके सुनने से जर्त् के सब जजां ाल ममट जाते हैं।

सखा समुझझ अस पररहरर मोहु, मसय रघुबीर चरि रि होहु ।।

इसमलए भैय्या ननर्षाद! मोह को त्यार् कर भर्ान राम और सीता के चरर्ों में प्रेम करो। इसी में जीर्न की सार्कशता है। तुम यह जो कुछ देख रहे हो, ई भर्ान राम का चररि है और भर्ान के चररि में दोर्ष नहीां देखना चाहहए।

यही लक्ष्मर् के द्र्ारा ननर्षाद को ज्ञान-र्ैराग्य और भजक्त रस से सनी हुई मिुर र्ार्ी कही र्ई, जजसे सुनकर ननर्षाद आनन्द र्भोर हो उठा। बस, यही लक्ष्मर्- र्ीता का उपसहांार है।

2. िाल्मीफक आश्रम

दोहा - सुचच सुंदर आश्रमुतिरझख हरषे राजिििे ।

सुति रघुबर आगमिु मुति, आगे आयउ लेि ।।

(124)

श्रीराम, लक्ष्मर् और महारानी सीता जब र्ंगा पार करके धचिकूट र्ये तो सबसे पहहले रे् महर्षि श बाल्मीफक जी के आश्रम में र्ये। र्हााँकी पर्िता और सुन्दरता को देखकर भर्र्ान राम बडे ेहर्षितश हुए। उस समय महर्षि शर्ाल्मीफक जी को जब पता चला फक भर्र्ाम राम आ रहे हैं, तब रे् उनकी अर्ुर्ानी करने के मलए आर्े बढ़े और उन्होंने उनका अनतधर् सत्कार फकया।

मुनि कहुँ राम दंडित कीन्हा, आमसरबादु ुत्रबप्रबर दीन्हा ।
देझख राम छत्रब ियि जुिो, े करर सिमिु आश्रमहहं ंआिे ।।

भर्र्ान राम ने मुनन को दण्डर्त् ्फकया। उनकी अलौफकक छत्रब को देखकर मुनन के नेि र्ीतल हो र्ये। उन्होंने बडे ेप्रेम से आर्ीर्ािदश हदया और सम्मानपूर्किश उन्हें अपनेआश्रम में ले आये।

महर्षि शर्ाल्मीफक जी को प्रार्ों के प्रार् मर्ंलमूनत शभर्र्ान राम को अपनेआश्रम में पाकर जो आनन्द हुआ उसकी सीमा नहीं र्ी। उन्होंने माता सीता और लक्ष्मर् सहहत भर्र्ान राम को सुन्दर आसन पर त्रबठाया और उनके मलए मिुर कन्द मूल और फल खानेके मलए मर्ांाये। जजन्हें उन्होंने ेबडे ेप्रेम से खाया। र्ाल्मीफक जी श्रीराम के पास बैठे हैं और उनकी मर्ंल मूनत शको नेिों से देख-देखकर उनके मन में आनन्दका सार्र उमड रहा है। तब भर्र्ान राम महर्षि शर्ाल्मीफक जी से अपनेकमल सदृश्य हार्ों को जोडकर कानों को सुख देनेर्ाले मिुर र्चन कहने ेलर्े। हे मुननराज ! हम आपसे अयोध्या से अपनेयहााँआने ेका क्या कारर् बतार्ें, क्योंफक आप तो त्रिकालदर्ी हैं। भूत, भर्र्ष्य और र्तमिान तीनों काल तो ननत्य आपकी आाँखों के सामनेहैं। सम्पूर् शर्र्श्र् आपके मलए हर्ेली पर रखे हुए बेर के समान है।

हे प्रभो! र्पता की आज्ञा का पालन, माता कैकई का हहत, भरत जैसे िमात्शमा भाई का राजा होना और आपके पर्ि िकमल चरर्ों का दर्नश लाभ, यह सब मेरे परम सौभाग्य और पुण्य का प्रभार् है। हे मुनननार्! आपके श्रीचरर्ों के दर्नश से आज हमारे सब पुण्य सफल हो र्ये, उनका हमें फल ममल र्या। हम कृतकृत्य हो र्ये। भर्र्न! मेरे र्न आर्मन का कारर् तो आपसे नछपा नही ंहै। अतः, आप कृपा करके मेरे मलए फकसी ऐसे स्र्ान में रहने ेका ननदेर् कीजजये, जजससे मेरे कारर् मुननयों के भजन-पूजन में फकसी प्रकार की बािा न हो, र्े उद्र्ग्न न होनेपार्ें, जहााँ ंपर म,ैं लक्ष्मर् और सीता सहहत कुछ हदनों तक पत्तों और घास-फूस की कुटी बनाकर रहूाँ।

सहज सरल सुनि रघुबर बािी। साधु साधु बोले मुनि ग्यािी ।।
कस ि कहहु अस रघुकुल केिू। िुम्ह पालक संिि श्रुनि सेिू ू॥

महर्ष् शराल्मीफक जी भर्रान राम के सरल, सहज और रूढ़ र्चनों को सुनकर कहते हैं फक "श्रुनत सेतु ु
श ्उसकी जो मयादशा है,
पालक" हे राम ! तुम िन्द्य हो, तुम ऐसा क्यों न कहो, क्योंफक तुम श्रुनत जो रेद है, सेतु अर्ात्
उसके तुम पालक हो, रिक हो, मयादशा पुरुर्षोत्तम हो और महारानी जानकी सिाात् ्त्रिरुर्राजत्मका माया है।

व्याकरर् र्ास्ि में 'राम' र्दद अकमकश िातु है। इससे कत्तापशन मसद्निही ांहोता। यह अफिय होता है। 'रमुक' िीडायाम िातु से राम बनता है। यह आत्मनेपदी है। इसीमलए, राम सारे चराचर की आत्मा है, जो हदन-रात सबके अदांर से 'म'ै हूँ, 'म'ै हूँ कह रहा है। र्ही सर्ाशार, सर्शजक्तमान, चराचर का अजस्तत्र् सर् शकी आत्मा, राम है। माता जानकी जी सांसार की उत्पत्त्त, पालन और सांहार करने र्ाली त्रिरुर्राजत्मका माया है, मर्र र् ेस्र्तां नही ांहै। तुम्हारी सत्ता से चैतन्द्यता लेकर यह सब करती हैं, जैसे लोहा चुम्बक के कारर् फियार्ील होता है।

महाराज लक्ष्मर् तो र्ेर्ष के अर्तार हैं और आप तो र्स्तुतः जैसे हो, र्ैसे ही हो, जो हो, र्ही हो, जहाँ हो, र्हीांहो। आपको क्या कहा जाये फक आप कैसे हो? मनुष्य रूप में देर्ताओां का काम बनानेके मलए तुमने ेअर्तार िारर् फकया है।

देखो-अध्यात्म तत्त्र् का ननरूपर् तीन प्रकार से होता है-

1. स्तुनत के रूप में

2. र्ुरु मर्ष्य के सर्ांाद के रूप में

3. उपदेर् के रूप में

र्ेद स्तुनत, र्भ शस्तुनत, ब्रह्माजी द्र्ारा स्तुनत, ये सब स्तुनत के रूप में हुए। र्ीता में अजुनश को र्ुरु मर्ष्य के सम्र्ाद के रूप में और भार्र्त में उद्ि् को उपदेर् के रूप में अध्यात्म कर्न हुआ। यहाँमहर्ष् शर्ाल्मीफक जी स्तुनत के रूप में आत्म तत्त्र् का ननरूपर् कर रहे हैं।

र्र्षय समझो - महर्ष् शने जानकी को माया कहा। माया को सनातन ब्रह्म से यहद

मभन्द्न मानो तो माया नही,ां अमभन्द्न मानो तो माया नही।ां मभन्द्नामभन्द्न मानो तो माया नही ांतो ऐसा कहो न फक स्र्यां ब्रह्म ही है जो इस रूप में हदख रहा है। जो भर्र्ान आत्मा है, उसकी यह देर्ी माया र्ुर्मयी है, जजसका कोई पार नही ांपा सकता, यह ऐसी प्रबला है फक -

मसि चर्ररि देझख डेरोहीं, अपर र्िी केहह लेखे माहीं।

मसि त्रबरंचच कहुँ मोहइ, को है बपुरा आि ।।

(उ.का. दो. 62-ख)

तो भैय्या! इससे तरने का तो केर्ल एक ही उपाय है और र्ह यह है फक जो मुझ आत्मा को जान लेता है, र्ह इससे त्रबन प्रयास तर जाता है। बात यह है फक आिार या अधिष्ठान के जान लेनेपर माया का बाि हो जाता है। र्स्तु तो ज्यों की त्यों रहती है, केर्ल दृजष्ट बदल जाती है। डण्डा हदख रहा है, परन्द्तु ज्योंही यह जाना फक अरे! यह तो लकडी है, डण्डा, यह तो लकडी पर र्ंकल्प हुआ है, जो है ही नही ांसब केर्ल लकडी है, इस बोि से र्स्तु तो ज्यों की त्यों है, परन्द्तुअब लकडी ही हदखने लर्ी, डण्डा का अभार् हो र्या। डण्डे ेका बोि हो र्या।

फकसी नर्र में एक र्ैष्र्र् सािु रहता र्ा। र्ह र्ंर्ेजी का बडा भक्त र्ा। उसनेपााँच तोले सोनेकी एक र्ंर्ेर् जी की मूनत शबनर्ायी और पााँच ही तोले सोनेके र्जन की एक र्ंर्ेजी के र्ाहन मूसा (चूहे) की मूनत श बनर्ायी और र्ह दोनों की बडी श्रद्िा से पूजा करने लर्ा। जब कुछ हदन बीत र्ये, तब दैर् योर् से उस सािु के पास एक पैसा भी न रहा। उसे जीर्नयापन के मलए बडी कहठनाइयों का सामना करना पडा, तब उसने सोचा फक अभी इन दोनों मूनतयशों को बेचकर ममले हुए दामों से ननर्ाहश करें, फफर जब रव्य आ जायर्ा तब पुनः मूनतयशााँ ाँबनर्ा ली जायर्ेंी। ऐसा सोच, र्ह उन मूनतयशों को लेकर एक सुनार के पास बेचने र्या। सुनार ने दोनों को तौलकर दोनों का बराबर ही दाम लर्ाया और उसे दे हदया। दोनों के बराबर ही दाम देनेपर र्ैष्र्र् सािु ने सुनार से कहा फक अरे भूतनी के! र्ंर्ेजी को मूसे के बराबर कर हदया। अरे! र्ंर्ेर् जी स्र्ामी हैं, मूसा र्ाहन है। क्या, कभी स्र्ामी और उसका र्ाहन बराबर हो सकता है? इस पर सुनार ने कहा- अरे बैरार्ी!े स्र्ामीपना और र्ाहनपना अर्ाशत् ् र्ंर्ेर्पना और मूसापना जो तुमने ेइन मूनतयशों में मान रखा है, उसे तुम ननकालकर अपनेपास रख लो। हमको तो सोनेका दाम देना है। सोना तौल में दोनों का बराबर ही बराबर है। अतः, दाम भी बराबर ही बराबर हदया र्या। ग्राहक की दृजष्ट में आभूर्षर् है, परन्द्तु सुनार या सराफश की दृजष्ट में केर्ल सोना (अधिष्ठान) ही होता है। सुनार या सराफश की दृजष्ट में आभूर्षर् का बाि रहता है। आभूर्षर् की तौल या कीमत नही ांहोती, तौल और कीमत तो सोने की होती है। आभूर्षर् माना र्या है, सोना र्ास्तर्र्क है। अस्तु, आभूर्षर् है ही नही,ां सोना ही सोना है।

आत्मा की प्राजप्त के बाद प्रपचां का बाि हो जाता है। भास तो ज्यों का त्यों रहता है। केर्ल दृजष्ट बदल जाती है। सराफश की दृजष्ट में आभूर्षर् तो ज्यों का त्यों रहता है, परन्द्तु दृजष्ट सोने की रहती है। अधिष्ठान आत्म तत्र् के बोि हो जाने पर माया अर्ाशत् जर्त् ्प्रपचां का अर्ाशत् ्मान्द्यता का बाि हो जाता है। भास तो ज्यों का त्यों रहता है।

प्रश्न होता है- माया क्या है?

यह म ैंहूाँ, ये मेरा है, यह तू ूहै, यह तेरा है। बस, यही माया है। र्रीर म ैंहूाँ, र्रीर मेरा है। र्रीर तू है और र्रीर तेरा है, यह माया है, यह कहााँ ाँसे कहााँ तक है?

गो गोचर जहाँ लचग मि जाई। सो सब माया जािहु भाई ।।

र्ो मानेइजन्द्रय, र्ोचर मानेर्न्र्षय (चारार्ाह) जहाँ ँतक इजन्द्रयों का र्न्र्षय है, र्ह सब माया है।

मायापनत ही एक ऐसा देर् है, जहाँ ँइसका अत्यन्द्ताभार् है। र्ेर्ेष ब्रह्मलोक तक माया का सम्राज्य है। महर्र्ष शर्ाल्मीफक जी कहते हैं फक -

सो. - राम सरूप ि्म्हार बचि अगोचर बुद्चध पर ।।
अत्रबगि अकथ अपार िेति िेति तिगम कह ।।

(126)

महर्र्ष शजी की यह स्तुनत व्यापक अजस्तत्र् सत्ता भर्ान राम की है। जजस सत्ता ने सामने खडे ेहुए उस लीला र्ग्रह र्ीर को िारर् फकया है, उसी सत्ता ने सारे चराचर को िारर् फकया है। यह स्तुनत उसी अजस्तत्र् राम की हो रही है। यहद लीला र्ग्रह र्ीर के मलए होता तो "र्चन अर्ोचर" नही ांकहते, क्योंफक र्ह स्र्रूप तो प्रत्यि सामने खडा है, जो र्ोचर है। आँखों से हदखाई दे रहा है, उसके मलए तो र्े "नीलाम्बुज श्यामल कोमलार्ां" ऐसा कहते ेहैं। अत:, यह स्तुनत उस लीला र्ग्रह र्ीर के सार् सारे चराचर को जो िारर् फकया हुआ है, उस अजस्तत्र् की हो रही है।

र्ेकहतेहैं- हे राम! तुम्हारा 'स्र्' का जो रूप है, र्ह इजन्द्रयों और र्ार्ी का र्न्र्षय नहीां है, क्योंफक र्ार्ी उसी का र्कर्न करती है, जजसका आकार-प्रकार होता है। उसी को मन जब मानता है, तब आँख देखती है, कान सुनता है, धचत्त धचन्द्तन करता है, बुद्धि ननश्चय करती है। तब कहीां र्ार्ी उसी का र्कर्न करती है। तब जब [illegible] नहां' (जैसा 'म' ैं हूँ) तब, जब तुम स्र्यां, ऐसा 'म' ैं हूँ, यह कहने में समर्् शनही ांहो, तब दूसूरा, अर्ाशत मन, बुद्धि, र्ार्ी तुम्हें कैसे र्कर्न कर सकेर्ी, क्योंफक जो कुछ म ैं कहूँर्ा, र्ह र्ार्ी से ही तो र्कर्न करूँर्ा। इसका अनुभर् कर लो -

प्रश्न है- 'म' ैं को कौन जान रहा है?

उत्तर- 'म' ैं जान रहा हूँ।

क्या जान रहा हूँ? फक 'म' ैं हूँ, यही न? जी हाँ।

तो ये सत्तापद हुआ अजस्तत्र्। इसका ज्ञाता अर्ाशत जानने र्ाला 'म' ैं ही तो हूँ। इस सत्तापद में मुझ आत्मा अजस्तत्र् के मसर्ा देह, इजन्द्रयाँ, मन, र्ार्ी, बुद्धि ये है ही नही ांतो भाई! कौन कहेर्ा फक 'म' ैं ऐसा हूँ इसमलए -

रामसरूप ि्म्हार । बचि अगोचर बुद्चध पर ।।

अब 'स्र्' के रूप में र्ोडी देर ठहर जाओ। अब यहाँपर मसर्ा 'म' ैं आत्मा, चैतन्द्यघनभूत अजस्तत्र् के फकसी का भी पता नही।ां

हे राम ! (अजस्तत्र्, सत्ता, भर्ग्न आत्मा 'म' ँ) तुम अर्ग्नारी् हो, अपार हो, कहाँसे कहाँ तक हो इसका पता नही।ां तुम व्यापक हो, अखण्ड हो, अपार हो, अद्वैत हो, अजर, अमर अर्ग्नारी् हो। बस, इतना ही कहकर र्ेद अर्ात्श ्रारी् लौट आती है। (र्ेद र्ारी्रूप ही तो है)।

मान्यता जर्त्,् मन र्ारी् का र्ष्र्य है और आत्म जर्त्,् मन, र्ारी् से परे 'आर्ार्मनसर्ोचर' है। जजस अिार 'म' ँ आत्मा भर्ग्न ने कीट, पतर्ां से लेकर ब्रह्मा, र्ष्र्ुऔर महेर् तर्ा सारे चराचर को िारर् फकया है, हे राम ! तुम्हारा र्ह स्र्रूप 'र्चन अर्ोचर बुद्धि पर' मन, बुद्धि, धचत्त, र्ारी् आहद से परे है।

जगु पेखि ्िम्ह देखतिहारे । त्रबचध, हरर संभु िचाितिहारे ।
िउ ि जािहहं ंमरमु ्िम्हारा। और ्िम्हहह को जाितिहारा ।।

जर्त् ्तुम्हारा दृश्य है, तुम इसके रष्टा हो। उस जर्त् ्प्रपचां के नचानेर्ाले ब्रह्मा, र्ष्र्ु ्और महेर् हैं। र्े भी जब तुम्हारे मम शको नहीां जान सकतेतब फफर दूसूरों की क्या ताकत है, जो तुम्हें जान सकें।

तुम में देर्, काल, र्स्तु का अत्यन्द्ताभार् है, यही तुम्हारा मम शहै, जजससे ये भी नही ांजान सकते। प्रश्न है- तो क्या ब्रह्मा, र्ष्र्ु और महेर् इनसे मभन्द्न हैं? उत्तर है- हाँ,ँ क्योंफक-

उपजहहं ंजासु अंस ि ि ाा। विकि विरंचच सम्भु भगिाा ।।

जो अजस्तत्र् दूसूरे र्दों में 'म' ँ उस लीला र्ग्रह र्रीर राम का है अर्ार्शत् ्उस र्रीर को जजसने िारर् फकया है, उसी 'म' ँ आत्मा ने ही ब्रह्मा, र्ष्र्ु और महेर् के र्रीर को भी िारर् फकया है और र्ही 'म' ँ आत्मा समस्त चराचर को िारर् फकया है, परन्द्तु यहाँब्रह्मा, र्ष्र्ु और महेर् को इसमलए बडप्पन हदया र्या क्योंफक, ये ईश्र्र कोहट के हैं।

जब ब्रह्मा, र्ष्र्ुऔर महेर् उनके अ ांर् से उपजते हैं, तब इनका अन्द्त भी होता है, ये मरते भी हैं। इस पररजस्र्नत में जो उपजहह और मरहह, र्े ेजो न उपजते हैं और न मरते हैं, अर्ात्श ्अजन्द्मा, अर्ग्नारी्, व्यापक ब्रह्म भर्ग्न आत्माराम के मरम को कैसे जान सकतेहैं। यही उसका मरम है। र्ास्त्ों में इसका प्रमार् आता फक -

चिुयुगि सहस्ाझिण हदिं पिामहं भर्ि्े ्।
वपिामह सहस्ाझिण विकणोश्च घहटका मिा ।।
विकणोद्ादिश लक्षाझण, कलाध िरौरमुच्यिे।

(दैर्ीमीमासां ा भाष्य उत्पत्त्त पादसू-4)

चियुगि सहस्ाझिण ब्रह्मणो हदिमुच्यिे।
वपिामह सहस्ाझिणविकणोरेको घटी मिा ।।

विकणोद्दिश लक्षाझण तिमेषाध ि महेमशिुाः ।
दश कोट्यो महेशिाां श्रीमिु सुहिटरूपकााः।

(र्जक्त रहस्य)

यारों युर् जब एक हजार बार बीततेहैं तब ब्रह्माजी का एक हदन होता है। उसी माप से उनकी रात्रि, मास और र्ष शहोतेहैं। ब्रह्माजी के एक हजार हदन में भर्ान र्ष्णु ुकी एक घडी होती है अर्ाात् ्भारतीय र्मशान समय का चौबीस ममनट। भर्ान र्ष्णु के बारह लाख हदन में भर्ान कांर का आिा पल होता है और भर्ान कांर के हजार पल में त्रिर्ुर्ाजत्मका माया अर्ाात् ्र्जक्त का आिा पल होता है। अपने- अपने हदन के सौ-सौ र्ष श की आयु में इनकी भी मृतूयु हो जाती है, फफर दूसूरे ब्रह्मा, दूसूरे र्ष्णु, दूसूरे कांर की उत्पत्ति होती है।

प्रश्न होता है- ब्रह्मा, र्ष्णु, महेर् होकर 'म'ै को जानेंर्े या 'म'ै होकर 'म'ै को जानेंर्े?

उत्तर है- 'म'ै होकर 'म'ै को जानेंर्े।

बस, यही उसका मरम है। अपने'म'ै को कुछ मानकर व्यजक्त, भर्ान को ढूँढता है या 'म'ै को 'म'ै जानकर ढूँढता है? उत्तर ममलेर्ा 'म'ै को कुछ मानकर ढूँढ़ता है। प्रश्न - ढूँढता फकसको है? उत्तर है 'म'ै को ही और पाता फकसको है? 'म'ै को ही।

अरे! तो यही तो मरम है।

िउ ि जिाहहं ंमरमिुम्हारा ।।

जब 'म'ै को ब्रह्मा मान मलया, र्ष्णु मान मलया, महेर् मान मलया, तब इस मान्यता रूपी झाडी में 'म'ै नछप र्या और इसी में भर्ान आत्मा को ही जानना है। इसका ही दर्नश करना है, परन्द्तु'म'ै रहकर, 'म'ै अमुक हूँ, ऐसा होकर नही,ां 'म'ै रहकर ही 'म'ै जाना जाता है। बस, यही मरम है।

सोई जिाइ जेहह देहु जिाई। जिाि िुम्हहह िुम्हइ होइ जाई ।।

कौन जाने? सो। 'सो' फकसके मलए आया है। उत्तर है- 'सो' अर्ाात् ्'म'ै जो जानेर्ा, क्योंफक 'म'ै अमुक हूँ, यह तो जानेर्ा नही।ां यहद, 'सो' र्दद को जाननेर्ाले के मलए कहोर्े तो अपनेआपको कुछ मानकर जाननेचलेर्ा तो उसे जानने का अधिकार नही ांहै। र्ह नहीांजान सकता। अत:, 'सो' अब आ र्या 'म'ै के मलए अर्ाात् ्'म'ै ही जनाता है और 'म'ै ही जानता है। बस, यही मरम है। ब्रह्मा, र्ष्णुऔर महेर् र्ोचर है। 'र्ो' मानेइजन्द्रय, 'चर' मानेर्र्षय अर्ाात् ्इजन्द्रय के र्र्षय है और भर्ान राम (आत्मा) अर्ोचर है अर्ाात् ्इजन्द्रयों से परे है, तो र्ोचर, अर्ोचर को कैसे जानेर्ा? जब तक फक र्ह भी 'अर्ोचर' न हो जाये। यही राम का मरम है। जानने की इच्छा र्ोचर की होती है और जब जानता है तब अर्ोचर होकर ही जानता है। र्ोचर रहकर नहीांजान सकता। भाई! अर्ोचर को

ही अर्ोचर की प्राजप्त होती है। पुमलस को चोर पकडनेकी इच्छा होती है, मर्र पकडता है, चोर होकर ही, पुमलस रहकर नही।ां पकडतेसमय र्ह यह नहींजाना जा सकता फक यह पुमलस है। र्ह त्रबना ड्रेसे का रहता है। र्ह चोर के सार् ममलकर चोरी भी करता है, जेल जाता है और उसके सार्-सार् मार भी खाता है। तब र्ह बडे से बडे केस को पकड पाता है। इस प्रसर्ां पर हृर्षीकेर् की एक घटना याद आ र्यी।

एक खूनी ग्यारह कत्ल कर चुका र्ा। पुमलस उसे पकड सकनेमें असमर् शरही। यह ग्यारह बार का कानतल र्ेरुर्ा र्स्र् पिहहनकर महात्मा भेर्ष में हृर्षीकेर् में कुटी बनाकर रहने लर्ा र्ा। एक सी. आई.डी. को उस पर सन्देह हो र्या। र्ह उसके पास जजज्ञासु बनकर र्या और उसका सेर्क बनकर उसकी हर तरह सेर्ा करते हुए उसके सार् रहनेलर्ा। एक हदन उस कानतल महात्मा के पास रात को चरस खत्म हो र्या (र्ह चरस र्पया करता र्ा) उसने उस सेर्क को आिी रात को आज्ञा दी फक जाकर र्हर से चरस ले आ, जल्दी ला मुझे उसके त्रबना रहा नही ांजा सकेर्ा। जब उसके कई बार कहने पर भी र्ह मर्ष्य (सेर्क) आिी रात को न जाकर, सुबह ला देनेकी बात कहता रहा और चरस लानेनहीींर्या, तब र्ह बडे िोि में आकर लाल-लाल आँखें हदखाकर उससे कहनेलर्ा फक तू जानता है, म ैंकौन हूँ? अपनेजीर्न में मनैं ेग्यारह खून फकये हैं, तू अभी जल्दी जाकर चरस ला नही ांतो तू बारहर्ाँ कत्ल होर्ा। तुझे जजन्दा नही ांछोडूर्ाां। बस, फफर क्या र्ा। र्ह सेर्क (सी.आई.डी.) र्या और पास के पुमलस स्टेर्न से पुमलस कमचशाररयों को ले आया और तुरन्द्त उसे र्रफ्तार कर मलया। भाई! जजसे पकडना है उसे र्ही रूप होकर पकडोर्े तभी पकड सकोर्े। भले ही तुम चाहे जन्द्म-जन्द्मान्द्तरतक जीर् बनेरहो, मर्र जब भर्र्ान को जानना चाहोर्े तब भर्र्ान ही होकर जान सकोर्े, जीर् रहकर नहीां।

देखो-तुम अपनेघरमें टेरेलीन और र्र्लायती कपडे पहहनते हो, परन्द्तु यहद तुम भोपाल या हदल्ली मिंिी या राष्रपनत से ममलने जाओर्े तो बहढ़या आध्रांप्रदेर् की खादी की िोती, खादी का कुरता, जर्ाहर जाफकट, श्री नाट की बहढ़या खादी की टोपी, जेब में फाउन्द्टेन पेन, कलाई में घडी और हार् में छडी लेकर सज–िजकर जाना पडेर्ा। इस तरह प.ां जर्ाहरलाल नेहरु के छोटे भाई होकर ही राष्रपनत या मिंिी से ममल सकोर्े अन्द्यर्ा नही।ां यह तुम्हारा ननत्य का व्यर्हाररक र्ेदान्द्त है।

जब तक अपने आपको कुछ मान रहे हो देह, जीर्, ब्रह्म, र्ी, आश्रमी, पर्ां, मजहबर्ाला आहद तब राम को कैसे जानोर्े? राम भी जब पर्ां मजहब र्ाला हो, तब तो जान सकते हो, परन्द्तु र्ह तो कोई पांर्, आश्रम, मजहब र्ाला है नही।ां ईसा का कर्न है, "नर्ां ईसा के पास, नर्ां होकर ही आना पडेर्ा।" मान्द्यता रुपी सारे कपडे उतार फेंकना पडेर्ा तब र्े ममल सकेंर्े। यही मरम है। प्रश्न होता है- जानना क्या है और जानकर तुम्ही ांहो जाना क्या है? यहाँ श्रुनत आयी है।

यथा िद्याः स्यन्द्दमािााः समुरेऽस्िंगच्छस्न्द्ि िामरूपे विहाय ।
थिा विद्िान्द्िामरूपाद् विमुक्ताः परात्परं पुरषमुपैति हदव्यम् ।।

(मु.उ.ख.ां - 2, म.ां-8)

जजस तरह नहदयाँ समुर को जाननेचलती हैं तो फकनारे पर पहुँचकर र्े अपनेनाम और रूप का त्यार् कर देती हैं। र्ंर्ा, यमुना, मसन्धुु, निमदशा, कृष्र्ा, कारे्री, र्ोदार्री, महानदी, मर्नार्, तादुंलुा, खारुन आहद ये हुुए नाम और प्रर्ाह हुुआ रूप। समुर में ममलने के पहहले ये अपनेनाम रूप का त्यार् कर देती हैं तो हो र्यी समुर। इसी तरह र्ेद्वान र्ेचारर्ान पुरुर्ष जब नाम रूपात्मक अमुक भार् का त्यार् कर हदया तो रु्दर् स्र्रूप 'म'ैं तत्र् रह र्या। यही परमात्मा की प्राजप्त है।

अगर कुछ मिबिा चाहे, ममटा दे अपिी हस्िी को ।
फक दाि खाक में ममलकर, गुले-गुलजार हािे है ।।

नहदयाँ ँसमुर होकर ही समुर को जान सकती हैं, नदी रहकर नही।ं इसी तरह नाम रूप से अपनेको अलर् फकया, तो रह र्या रु्दिु चेतन आत्मा। जाननेऔर जनानेका भार् तो तभी तक रहेर्ा, जब तक नदी और समुर दो रहेंरे्। नहदयाँ जब समुर में ममल र्यीं, तब फफर र्े दो कहाँ?ँ एक ही, हो र्यीं। इसी तरह भर्र्ान को, भर्र्ान होकर ही जाना जाता है। ब्रह्म ही, ब्रह्म को जानता है। अरे यार! सजातीय, सजातीय का मेल होता है। अतः, भर्र्ान को जानने ेके मलए, तुम्हें भर्र्ान होना पडेर्ा और भैय्या! होना क्या पडेर्ा, भर्र्ान ही हो। अन्द्य कुछ नही,ं यही भर्र्ान राम का मरम है।

इमााः सोम्य िद्यााः पुरस्तात्प्राच्यााः स्यन्द्दन्द्ते पश्चात्प्रतीच्यस्तााः
समुरात्समुरमेिावपयस्न्द्ि समुर एि भिति िा यथा
ति िविदुुरयमहमस्मीति...।।

(छान्द्दोग्य अ. 6, खण्ड 10र्ाँ)

परन्द्तु, बात यह है फक समुर में ममलने के बाद नहदयों को यह याद नही ंरहता फक आज के पहहले में र्ंर्ा, यमुना, मसन्धुु, निमदशा, महानदी, कृष्र्ा, कारे्री, र्ोदार्री आहद र्ी, अब समुर हुुई हूँ और यहद याद है तो फफर अभी ममली ही नही।ं अब जब नदी समुर हो र्यी, नदी न रही, तब समुर भी न रहा, क्योंफक नहदयों ने ही तो उसका 'समुर' नाम रखा र्ा। जब नदी ही न रही, तब समुर कहेर्ा कौन?

अब जो रहा, र्ह न नदी है, न समुर है। उसी में दोनों कजल्पत र्े। इसी तरह यहद यह याद है फक आज के पहहले 'म'ैं जीर् र्ा, अब ब्रह्म हुुआ हूँ तो समझ लो फक अभी र्ह जीर् ही है, क्योंफक जीर् ने ही भर्र्ान नाम रखा र्ा। जब जीर् ही न रहा तो भर्र्ान कहेर्ा कौन? अब जो रहा, र्ह न भक्त है, न भर्र्ान है। उसी में जीर्, ब्रह्म, भर्र्ान कजल्पत है। भैय्या! र्मा-र्म मालपुर्ा खाओ, भाप ननकल रही है, क्या करोर्े न्द्र्ना, र्ेहूँ बोकर।

खीजेदीन्द्हें अमर पद, रीझेदीन्द्हें लंक ।
अंधाधुन्द्ध दरबार है, मजा करो तिश्शंकं ।।

भर्ान राम, रार् से खीझ र्ये अर्ात्श ्बहुत नाराज हुए तो उनने, उन्द्हें देर्ताओं को भी दुलुभश अमर पद प्रदान फकया और र्भीषर् से रीझ र्ये अर्ात्श ्बहुत खुर् हुए तो उन्द्हें लांका का राज्य ही दे हदया। उनके रीझने और खीजने दोनों की सुन्द्दर र्नत है। ऐसा आिािुन्द्दि दरबार है हााँ क्या कमी है? यह दरबार आिािुन्द्दि है, जहााँ तुम बैठे हो हररद्र्ार, हृर्षकेर्, मर्ुरा, अयोध्या, प्रयार्, कार्ी आहद के लोर् इस आनन्द्द से र्ांचत हैं, जजसको तुम लोर् लूट रहे हो। इस अलौफकक ब्रह्म र्द्या को प्राप्त करने ्के मलए हााँके लोर् यहााँ ्ँआ रहे हैं। छत्तीसर्ढ़, दण्डकारण्य है।

ाििा ि्म्हहह, ि्म्हइ होइ जाई ।।

प्रश्ि है - तुमको जानकर, तुम्ही ्ांहो जाता है, इसका क्या प्रमार् है?

इसका यही प्रमार् है फक पा लेनेके बाद र् अपना अनुभर् बता नही ्ांसकता। इससे मसद्ि है फक जानकर र्ही हो र्या।

ब्रह्मावि् ्ब्रह्मैभिवि ।।

ब्रह्म को जानकर ब्रह्म हो जाता है। अरे यार, जानने ्के पहहले भी र् र्ही रहता है। मान्द्यताओांको अपने'म'ै पर आरोर्पत कर स्र्यांउनसे ढाँका र्ा, जब उनका त्यार् कर हदया तो रह र्या 'म'ै आत्माराम ही। इस तरह जाननेर्ाला राम, जनाने ्र्ाला राम और जजसको जाना र् राम। जब जाननेके पहहले भी राम ही है, तब जाना फकसको? फकसी को नही।ां जाना कौन? फकसी ने नहीांऔर जनाया फकसने ? फकसी ने नही।ां न कुछ जाना, न कुछ जनाया, न कुछ जाननेकी चीज रही। यही राम का मरम है। केनोपननर्षद की श्रुनत आयी है -

यस्यामिंस्यि मिं ्मिं ्यस्य ि ि्द साः ।
अविज्ञािंविजिािां विज्ञािमविजिािाम् ्।।

(72/3)

जो कहता है फक मनैं ब्रह्म को जाना है और जो कहता है फक उसे नहीां जानता हूँ तो इन दोनों ने उसे नहीां जाना, क्योंफक ब्रह्म इनसे मभन्द्न कब है, जजससे ये जानेंर्े। जानना दो में होता है, एक में नही।ां जब एक ही है तब कौन फकसको जानेर्ा? यही राम का मरम है।

भले भयो हरर बीसरो, मसर से टली बलाय ।
जैसे थे िैसे रहे, अब कछु कहा ि जाय ।।

महात्मा उग्रानन्द्द जी महाराज मस्ती में आकर ऐसा कहा करते र्े।

ुम्हिररहह कृपााँ ि्म्हहह रघिुन्द्दि। जािहहं ्भगि भगि उर चंदि ॥

महर्र्ष शजी कहते हैं फक हे राम! र्े ही भक्त तुम्हें जान सकते हैं, जजनका हृदय चन्द्न के समान र्ीतल और पर्ीि हो। तुम्हारी कृपा अर्ात्श ्ित्रबना आत्मकृपा के तुम्हारा अर्ात्श ्आत्मा का दर्नश नहीं हो सकता।

ियिमात्मा प्रिचिे लभयो ि मेघया ि बिुिा श्रिेु ।
यमेिैष िृणुिे िे लभय स्िस्यैष आत्मा वििृणुिेिुं स्िाम् ्।।

(मुण्डकोपननर्षद 3/2/3)

भार् यह है फक यह आत्मा प्रर्चन द्र्ारा, श्रर्ण द्र्ारा प्राप्त नही ांहोता। जजज्ञासु का हृदय जब आत्मदर्नश के मलए मछली के समान तडपता है अर्ाि व्याकुल होता है, तब तत्काल ही भर्ान आत्मा सर् शका 'म'ैं अपना स्र्रूप प्रर्ट कर देता है।

ियिमात्मा बलिीिेि लभयो ि च प्रमादात्तपसो िाप्यमलङ्गि् ्।
एिैरुपायैयििे यस्िु विद्िांस्िस्यैष आत्मा विशि ेब्रह्मधाम ॥

(मुण्डकोपननर्षद् 3/2 /)

बलहीन पुरुर्ष को आत्मानुभर् कभी नही ांहोता। बल र्ब्द से यहााँ जजज्ञासा बल समझना चाहहए। आत्म जजज्ञासा को ही आत्म कृपा भी कहते हैं, क्योंफक फकसी और ने बााँिा हो तो कोई खोले, जबफक अपने सकांल्प से स्र्यांही बिांा है, तब अपनेआप ही छूट भी सकता है। न तो इसके मलए सत्य में कोई बन्द्नि है, न मोि।

सिाजिािे सिसंस्थे िृहन्द्िे िस्स्मन्द्हंसो भ्राम्यिे ब्रह्मचक्रे ।
पृथगात्मािं ंप्रेरररिं च मत्िा जुकटस्िस्िेिामृित्िमेति ॥

(श्र्े.उ.1/6)

अर्ात्श ्सर् शके प्रेरक भर्ान को अपनेआपसे मभन्द्न मानकर अनाहदकाल से हांस जीर्, ब्रह्म चि याने ससांार में भ्रमता रहता है और जब भर्ान और अपनेआप 'म'ैं को र्ीर से मभन्द्न करके एकता का अनुभर् करता है, तब र्ह तत्काल ही समस्त बन्द्नों से मुक्त होकर अमृतत्र् पद (कैर्ल्य पद) को प्राप्त हो जाता है। तात्पय श यह फक जजतनी उपाधियााँहैं, माया के ढक्कन में ही हैं। ढक्कन उठाते ही केर्ल 'म'ैं का 'म'ैं ही रह जाता है। श्रुनत के इस कर्न से यही मसद्ि होता है फक जीर् का आर्ागमन इत्याहद भर्ान से अपनेआप 'म'ैं को अलर् मानने ेमें ही है।

मभद्यिेहृदयग्रस्न्द्थस्श्छद्यन्द्िे सिसंशयााः ।
क्षीयन्द्िेचास्य कमाणि िस्स्मन्द्दृकटे परािरे ।।

(मुण्डकोपननर्षद् 8)

उस परार्र ब्रह्म का सिाात्कार कर लेनेपर इस जीर् की हृदय ग्रजन्द्र् छूट जाती है। सारे सर्ांय नष्ट हो जाते हैं। इसके सभी कम शिीर् हो जाते हैं और आर्ार्मन के चि से छूट जाता है। भर्र्ान राम कहते ेहैं फक -

मम दरसि िल परम अिूपा। जीि पाि तिज सहज स्रूपा ।।

इससे मसद्ध होता है फक जीर् का सहज स्रूप जीर् नहीां उसका सहज अर्ात् शस्राभार्क स्रूप भर्र्ान 'आत्मा' ही है। जीर् तो कृत्रिम अर्ाशत् माना हुआ स्रूप है।

श्री मानसकार ने र्र्नय में कहा है फक -

स्जि जबिं हररिं विलगान्द्यो। िबिं देह गेह तिज जान्द्यो ।
मायाबस स्रूप त्रबसरायो। िेहह भ्रमि ेदारि दुःख पायो ।।

(र्ृ.प. 136)

बचपन में र्ुरुजी ने स्कूल में पढ़ाया फक बेटा! देखो पुरुर्ष लीन होतेहैं। अन्द्य पुरुर्ष, मध्यम पुरुर्ष और उत्तम पुरुर्ष।

अन्द्य पुरुर्ष 'र्ह' है, मध्यम पुरुर्ष 'तू' है और उत्तम पुरुर्ष 'मैं' है। 'मैं' उत्तम पुरुर्ष है, इसे भूलना नहीां इस तरह र्ुरुजी ने तो 'मैं' को उत्तम पुरुर्ष बताया और चेला जी ने 'मैं' को अिम पुरुर्ष मान मलया अर्ात्श 'मैं' को देह मान मलया। 'मैं' देह हूँ मान मलया। देह, अिम ही तो है। प्रमार् लो -

तछति जल पािक गगि समीरा। पंच रचचि अति अधम सरीरा ।।

र्रीर अिम है। मल मूि का भाडां है। सदा अपर्र्ि है, यह उत्तम नहीां है, पर क्या करते हो चेला जी ने 'मैं' को अिम मान मलया। उत्तम पुरुर्ष भर्र्ान आत्मा 'मैं' ही है, जजसे र्ुरुजी ने बचपन में पढाया है। अब उत्तम को पुरुर्ष के बाजूमें लर्ा दो, अब हो र्या 'पुरुर्ष उत्तम' अर्ात्श 'पुरुर्षोत्तम' भर्र्ान आत्मा 'राम'।

चचदािंद मय देह िुम्हारी। त्रबगि त्रबकार जाि अचधकारी ।।

भर्र्ान के तीन रूप हैं।

आधिभौनतक, आधिदैर्र्क और आध्याजत्मक। जो भासे (भास) यह भर्र्ान का आधिभौनतक रूप है। जो प्रर्टै (राम, कृष्र्) यह आधिदैर्र्क रूप है और जो न भासै, न प्रर्टै यह आध्याजत्मक रूप है। भर्र्ान का आधिभौनतक रूप ब्रह्मा से लेकर चीटी तक सारा चराचर है। इसमें कमकशाण्डी को ससांार का भ्रम होता है। यह मोह है।

भर्ग्रान का आधिदैर्र्क रूप राम और कृष्र् का लीला र्ग्रह र्रीर है। इसमें उपासक को नर का भ्रम होता है। यह भ्रम कार्भुसुण्डी, र्रुड, ब्रह्मा और सती को हुआ र्ा। यह महामोह है।

महामोह उपजा उर िोरें। ममहटहह ि बेचग कहे खग मोरें ।।

और भर्ग्रान का आध्याजत्मक रूप जो न भासता है, न प्रर्ट होता है 'म'ैं आत्मा है। ज्ञानी को इसमें जीर् का भ्रम होता है। यह आत्म सम्मोह है।

महर्षि शर्ाल्मीफक जी कहते हैं फक भर्न्!् ये जो तुम्हारा लीला र्ग्रह र्रीर है, र्ह धचदानन्द मय है।

सजच्चदानन्द क्यों नहीं कहा? अरे । यही तो मरम है। महर्षि शजी धचदानन्द उस अजस्तत्र् 'है' के मलए कह रहे हैं, जजस 'है' अजस्तत्र् ने उस लीला र्ग्रह र्रीर को, जो उनके समि खडे ैहैं, िारर् फकया है, क्योंफक -

इच्छामय िर िेष सूँिारे। होइहउूँ प्रगट तिकेि िुम्हारे ॥

अरे भाई! चीटी से लेकर ब्रह्मा तक सारा चराचर धचदान्दस्र्रूप है। यह भर्ग्रान भास ही तो है। र्जेन्द्र ने भर्ग्रान भासकी स्तुनत की र्ी।

ॐ िमो भगिगे िस्मैयिएिस्च्चदात्मकम् ्।
पुरषायाहदबीजाय परेशायामभधीमहह ।।

(भार्. स्क.-8 अ.-3, श्लोक-2)

यह जो सारा चराचर जो र्कल्परहहत अर्स्र्ा में भास रहा है, उस भर्ग्रान भास को म ैंनमस्कार करता हूँ। क्या र्िलर् प्रसर्ां है, परन्दतु इसको र्ही समझेर्ा जो -

ुम्हिररहह कृपाूँ िुम्हहह रघिुंदि । जािहहं ंभगि-भगि उर चंदि ।।
चचदािंदमय देह िुम्हारी। त्रबगि त्रबकार जाि अचधकारी ।।

यह लीला र्ग्रह र्रीर भी धचदानन्दमय है। अजस्त, भाँनत, प्रर्य ही तो है। अजस्त माने'है' अजस्तत्र् सत् ् ही तो है, जो महर्षि शजी के सम्मुख खडे ैहैं, जो भास रहे हैं और यहद प्रर्य न हो तो भक्त लोर् आरािना क्यों करें। इसमलए 'धचदानन्द मर् देह तुम्हारी' कहा। जजनके सब र्कार नष्ट हो चुके हैं, र्े ही इसे समझ सकते हैं। देखो - र्कार क्या है? अपनेस्र्रूप भर्ग्रान आत्मा 'म'ैं को 'म'ैं न जानकर, कुछ न कुछ मानना देह मानना, जीर् मानना, ब्रह्म मानना आहद यही र्कार है। देह मानकर स्त्री, पुरुर्ष, र्र्ी, आश्रमी, पन्दर्ी, मजहबी मानना, फफर जीर् मानकर स्र्र्ी, नरकी, पुण्यी, पापी आहद मानना और ब्रह्म मानकर दृष्टा, सािी, व्यापक, अखण्ड, ननरांजन, ननराकार आहद मानना ये ही सब र्कार हैं। ये सब र्कार जजनके नष्ट हो चुके हैं और जो अपनेर्ुद्धि

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 179 स्रूप भर्ग्न आत्मा को 'म'ै का 'म'ै ही जानता है, ई ही तुम्हें जान सकता है, क्योंफक ई भी धचदानन्द् स्रूप
है।

रि िि्ु घरेहु सं सुर काजा । कहहु करहु जस प्राकृि राजा ।।

ऐसे जो आप हैं, रे् ेसन्द्त और देर्ताओां के काय शके मलए इस लीलार्ग्रह र्रीर को आपनेिारर् फकया है और आप लौफकक राजाओां की सी लीला कर रहे हैं। परन्द्तु, ई आप नहीां हैं।

जथा अिेक बेष धरर, िृ्त्य करइ िटकोइ ।
सोइ-सोइ भाि देखािइ आपिु होइ ि सोइ ।।

(उ.का. दो.-72 ख)

राम देझख सुति चररि िु्म्हारे । ज़ मोहहहं ंबुध होहहं ंसुखारे ।
िु्म्हि जो कहहु करहु सबु साचूँा । जस कातछअ िस चाहहअ िाचा ।।

हे राम! तुम्हारे चररि को देखकर जड अर्ात्श ्अर्े्र्की जजन्द्हें स्र्-स्रूप आत्मा का बोि नही ांहै, रे् े मोहहत हो जाते हैं, अर्ात् श ्भ्रम में पड जाते हैं, क्योंफक ससाांर का प्रर्ेर् दो इजन्द्रयों के द्र्ारा हृदय देर् में होता है। देखकर और सुनकर श्रीराम के चररि को साांसार क्यों कहा?

झूठेउ सत्य जाहह त्रबिु जािें। स्जमम भुजंग त्रबिु रजु पहहचािें।
जेहह जािेजग जाइ हेराई । जागे जथा सपि भ्रम जाई ।।

जो तीन काल में न हो, उसे चररि कहते ेहैं। तो फफर भासता क्यों है? अरे! यही तो भर्ग्न राम की लीला है। लीला को देखकर जजनको मोह (भ्रम) होता है, रे् जड हैं, दानर् हैं, मानर् हैं। क्योंफक, मानसकार ने कहा फक -

अमस रघुपति लीला उरगारी। दिुज विमोहति जि सुखकारी ॥

रज्जू (रस्सी) में सप शका भ्रम होर्ा, जब रज्जू का अज्ञान होर्ा और भ्रम फकसको नही ांहुआ? र्रुड को हुआ, सती को हुआ, भुसुन्द्डी को हुआ, ब्रह्मा को हुआ, नारदको हुआ।
र्रुड को भ्रम हुआ -

भि बंधि िे छूटहहं,ं िर जवप जाकर िाम ।
खब ितिसाचर बाधेूँउ, िागपास सोइ राम ।।

(उ.काां.दो. 58)

जजसका नाम जपकर मनुष्य ससांार के बन्द्नि से छूट जाते हैं, उन्द्हींराम को एक तुच्छ रिास ने नार्पार् से बाँि मलया। क्या र्े भर्ग्रान हैं? सती को देखो -

जौ िृप ििय ि ब्रह्म फकमम िारर विरहूँ मति भोरर ।
देझख चररि महहमा सिुि भ्रमति बुद्चध अति मोरर ।।

(बा.का. दो. 108)

जजनका 'म'ै यह चररि देख रही हूँ, क्या र्ह ब्रह्म है?

भुसुन्द्डी को देखो -

प्राकृि मससु इि लीला देझख भयउ मोहह मोह ।
कि चररि करि प्रभु ुचचदािंद सन्दोह ।।

(उ.का. दो. 77 ख)

भाई! बहुत मुजश्कल है। लीला देखो तो राम जाता है और राम देखतेहो तो लीला या चररि जाता है। अब जो चीज पसदां हो चुन लो। अरे! सप शदेखतेहो तो, रज्जू नही ांऔर यहद रज्जू देखतेहो तब सप शनही।ां चररि को देखकर बिु अर्ात्श ्र्र्ेकीजन सुखी होते हैं, क्योंफक र्े जानते हैं फक स्र्-स्र्रूप भर्ग्रान आत्मा में न कुछ हुआ है, न कुछ हो रहा है और न कुछ होने र्ाला है।

टिकृि त्रबकट कपट खगराया। िट सिेकहहं ंि ब्यापइ माया ।
सो िर इन्द्रजाल िहहं ंभूला। जा पर होइ सो िट अिुकूला ।।

बस, इसीमलए बिोर्ान सुखी होतेहैं।

दोहा- पूँछेहु मोहह फक रहौं कहें, म ैंपूछि सकुचाउूँ ।
जहूँ ि होहु िहूँ देहु कहह िुम्हहह देखािों ठाऊँ ||127||

हे राम। तुमने ेमुझसे पर्णशाला बनाकर रहने ेके मलए स्र्ान पूछा है, परन्द्तु भर्र्न्!् म ैंआपसे पूछते सकुचाता हूँ। आप ही बता दो फक जहाँ आप नही ांहो 'म'ै हीं आपको रहने ेके मलए स्र्ान हदखाऊँ।

सुति मुति बचि प्रेेम रस सािे। सकुचच राम मि महुँ मुसकािे ।।

महर्षष र्ाल्मीफक जी के प्रेेमरस से सने हुए इन रूढ र्चनों को सुनकर भर्ग्रान राम सकुचकर मुस्करा हदये, क्योंफक 'म'ै आत्मा राम कहाँ ँनहीांहै, क्या नही ांहै और फकसका नही ांहै?

बालमीफक हूँमस कहहहं ंबहोरी। बािी मधुर अममअ रस बोरी ।।

फफर महर्र्ष शजी हँसकर राम से अमृतृमय मीठी र्ारी में कहने ेलरे् फक भर्र्न्! ् सरकारी आज्ञा हुई है, इसमलए आपके रहनेके मलए म ैंस्र्ान बतलाता हूँ। जहाँ आप ननर्ास कीजजये। मनैं छोटे-बडे ेचौदह प्लाट चुने ेहैं, उनमें बहुत से ऐसे हैं, जो अकेले रहने ेलायक हैं। कुछ ऐसे हैं, जहाँ ँआप और सीता जी दोनों रह सकते हैं और कुछ ऐसे हैं, जहाँ आप सीता और लक्ष्मर् सहहत तीनों रह सकते हैं। तो, पहला स्र्ान सुननये-

स्जन्द्ह के श्रि समुर समािा । कथा िुम्हारर सुभग सरर िाा ।
भरहहं ंतिरंरि होहहं ंि पूरे। तिन्द्ह के हहय िुम्ह कहुँ गृह रूरे ।।

जजनके कान समुर के समान हैं और तुम्हारी कर्ा नहदयों के समान है, जैसे समुर में फकतनी भी नहदयाँ आकर ममलती जाय, ें परन्द्तु समुर अघाता नहीां, उसमें बाढ़ नही ांआती। उसी प्रकार तुम्हारे जन तुम्हारी फकतनी ही कर्ा जीर्न पयन्द्शत ननरन्द्तर सुनते रहें, परन्द्तु रे् अघाते नही ांअर्ात्श ्तृपृत नहीांहोते। उनका र्ह हृदय, आपके ननर्ास के मलए सुन्द्दर घर है। र्हाँआप ननर्ास कीजजये।

लोचि चािक स्जन्द्ह करर राखे । रहहं ंदरस जलघर अमभलाषे ।
तिदरहहं ंसररि मसन्द्धु ुसर भारी । रूप त्रबंदं ुजल होहहं ंसुखारी।
तिन्द्ह के हृदय सदि सुखदायक। बसहु बन्द्धुमसय सह रघुिायक ।।

आपके श्रीमुख के दर्नश के मलए जजनके ने चातक हैं, जो आपके दर्नशरूपी मेघ की ही आर्ा में जीते हैं, जजन्द्हें लोक लोकान्द्तर में मसर्ा आपके फकसी की भी अपेिा नही ांहै, उनके हृदय में आप लक्ष्मर् और सीता सहहत ननर्ास कीजजये। यह बडा प्लाट है।

दोहा - जसु िुम्हार मािस त्रबमल, हंमसति जीहा जासु ।
मुकिाहल गुि गि चुिइ, राम बसहु हहय िासु || 128||

जजनका हृदय मानसरोर्र के समान है, जजह्वा हांमसनन है, तुम्हारा रु्र्ानुर्ाद मोती है, तब जजस हृदय रूपी मानसरोर्र में, जजह्वा रूपी हांमसनी, तुम्हारे रु्र्ानुर्ाद रूपी मोती को चुर्ती रहती है। उसके हृदय में आप ननर्ास कीजजये, यह छोटा प्लाट है। यहाँ आप अकेले रह सकतेहैं।

प्रभु प्रसाद सुचच सुभग सुबासा । सादर जासुलहइ नित िासा ।
तुम्हहह तिबेहदि भोजि करहीं । प्रभु प्रसाद पट भूषि घरहीं ।।

जजसकी नामसका, आपके पर्र्ि और सुर्जन्द्ित सुन्द्दर प्रसाद को ननत्य आदर के सार् ग्रहर् करती है और जो आपके, अपर्श करके भोजन करते हैं और प्रसाद रूप ही र्स्त्राभूषर् िारर् करते हैं।

सीस िहहं ंसुर गुर द्विज देखी। प्रीति सहहि करर त्रबिय त्रबसेषी ।

कर ि‍ति करहहं ‍ राम पद पूजा । राम भरोस हृदय ि‍हह दूजा ॥

जजनके मस्तक देर्ता, र्रुु और ब्राह्मर्ों को देखकर, बडी नम्रता के सार्, प्रेम सहहत झुक जाते हैं। जजनके हार् ननत्य आपके चरर्ों की पूजा करते हैं और जजनके हृदय में आपका ही भरोसा है, दूसूरा नही।ं

चरि राम ि‍ीरथ चमल जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मि माहीं ।।

और जजनके चरर् आपके दर्नश के मलए चलने का पररश्रम करते हैं, हे राम! आप उनके मन में ननर्ास कीजजये।

मंराजुि‍ति जपहहं ‍ ि‍ुम्हारा । पूजहहं ‍ ि‍ुम्हहह सहहि पररिारा ।
रिपि होम करहहं ‍ त्रबचध ि‍ािा । त्रबप्र जेिाइ देहहं ‍ बहु दािा ।
िुम्ह ि‍ें अचधक गुरहह स्जय जािी। सकल भायेंसेिहहं ‍ सिमािी ।।

दोहा- सबु करर मागूँहह एक ि‍लुराम चरि रति होउ ।
तिन्ह के मि मंहदर बसहु मसय रघुंिदि दोउ || 128||

उपरोक्त सम्पूर् शसािनों का फल, जो केर्ल यही चाहते हैं फक भर्र्न! हमारा आपके (राम के) चरर्ों में र्ेमल प्रेम हो, ऐसी भजक्त हमें दीजजये, उनके मन मांहदर में माता सीता सहहत आप ननर्ास कीजजये।

काम कोह मद माि ि‍ मोहा। लोभ ि‍ छोभ ि‍ राग ि‍ रोहा ।
स्जन्ह के कपट दंभ ि‍हहं ‍ माया। तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ।।

काम, ि‍ोि, मद, अमभमान, मोह, लोभ, ि‍ोभ, रार् और द्रेर्ष, दम्भ, कपट और मोह से जजसका हृदय रहहत हो। हे राम ! उनके हृदय में ननर्ास कीजजये। भैय्या! त्रबना आत्मबोि के यह सभंार् नही ंहै।

सब के वप्रय सब के हहिकारी। सुख दुखु सररस प्रसंसा गारी ।
कहहहं ‍ सत्य वप्रय बचि त्रबचारी। जागि सोिि सरि ि‍ुम्हारी ।।
िुम्हहह छाड़ गति दूसूरर ि‍ाहीं। राम बसहु तिन्ह के मि माहूीं ।।

जो सबके प्रय और सबका हहत करने र्ाला है, जजनको सुख-दुःख, प्रर्सां और र्ारी एक समान हैं, जो र्ेचारकर सत्य और प्रय र्चन बोलते हैं और जो जार्ते-सोते सब समय आप ही के र्रर् में हैं। मसर्ा आपके, जजनकी दूसूरी र्नत नही ंहै, हे राम! उनके मन महांदर में आप ननर्ास कीजजये।

ि‍ििी सम जािहहं ‍ परिारी । धिु परा त्रबष ि‍ें त्रबष भारी ।
जेहरषहहं ‍ पर संपति देखी। दुखुखि होहहं ‍ पर विपति विसेषी ।

स्जन्दहहह राम िुम्ह प्रिा वपआरे। तिन्दह के मि सुभ सदि िुम्हारे ।।

जो परायी स्ीि को अपनी माता के समान जानते हैं, दूसूरे के िन को र्ष्ि के समान समझतेहैं, जो दूसूरे की सम्पर्त्त को देखकर हर्षतश होतेऔर र्पर्त्त को देखकर दुरुखत होतेहै, जजन्दहें तुम प्रार्ों से र्प्रय हो, हे राम ! उनका हृदय ही तुम्हारे रहने ेके मलए सुन्दर ननर्ास स्ान है। हाँननर्ास कीजजये।

दोहा- स्ामिम सखा वपुिमिु गुर स्जन्दह के सब िुम्ह िाि ।

मि मंहदर तिन्दह के बसहु सीय सहहि दोउ भ्रिा ।।130।।

हे राम! जजनके स्ामी, सखा, र्पता, माता, रुरु सब कुछ तुम्हींहो, उनके हृदय महांदर में तुम लक्ष्मर् और सीता सहहत ननर्ास करो।

अिगुि िस्ज सबके गुि गहहीं। त्रबप्र धेिु हहि संकट सहहीं ।

िीति तिपुि स्जन्दह कइ जग लीका। घर िुम्हार तिन्दह कर मिु िीका ।।

जो अर्ुरुों को छोडकर, सबके रुर्ों को ही ग्रहर् करते हैं, ब्राह्मर् और र्ौ के मलए जो ननत्य सांकट सहते हैं, नीनत ननपुर्ता में जजनकी जर्त् ्में मयादशा है, उनका सुन्दर मन आपके ननर्ास करने ेका स्ान है।

गुि िुम्हार समुझइ तिज दोसा । जेहह सब भाँति िुम्हार भरोसा ।

राम भगि वप्रय लागहहं ंजेही । िेहह उर बसहु सहहि बैदेही ।।

जो रुर्ों को आपका और दोषों को अपना समझता है, जजसको सब तरह से तुम्हारा ही भरोसा है, जजनको तुम्हारी भजक्त ही र्प्रय है, हे राम ! उनके हृदय महांदर में सीता सहहत आप ननर्ास करें।

जाति पाँति धिु धरमु बड़ाई । वप्रय पररिार सदि सुखदाई ॥

सब िस्ज िुम्हहहं ंरहइ उर लाई। िेहहके हृदय रहहु रघुराई ।।

जानत, पाँनत, िन, िम,श बडाई, र्प्रय पररर्ार और सुख देने र्ाले घर सबको छोडकर, जो केर्ल आपको ही हृदय में िारर् फकये रहता है, हे रघुनार् जी! आप उनके हृदय में ननर्ास कीजजये।

सरगु, िरकु, अपबरगु समािा। जहूँ िहूँ देख घरें धिु बािा।

करम बचि मि राउर चेरा। राम करहु िेहह के उर डेरा ।।

स्र्,श नरक और मोि जजनकी दृजष्ट में समान हैं, क्योंफक र्ह सर्शि आप ही को देखता है और जो मन, र्चन, कम शसे आपका दास है, है राम! उनके हृदय में डेरा कीजजये।

जाहह ि चाहहअ कबहुँ कछु िुम्ह सि सहज सिेहु ।

बसहु तिरन्द्रि ि ासु मि सो राउर तिज गेहु ॥131||

जजसका हृदय सर् शकामनाओं से रहहत है, जजसे मिो की भी कामना नहींहै और जजसका आपके चरर्ों में स्र्भार्क सहज स्नेह है। सहज सनेह उसे कहते हैं, जजसमें बनार्टी न हो, जैसे र्पता-पुि का सनेह, सहज सनेह है, र्हााँपर र्ृधि- ननर्षि नहींरहता। जो मिो को भी ठुकराता है, अरे! मिो है क्या चीज? क्योंफक, बन्द्-मिो तो जीर् देर् की चीजें हैं, अज्ञान देर् के हैं। परन्द्तु, भैय्या! एक बात है, बिो के पश्चात् ही भर्ान राम के प्रनत सहज सनेह होता है। अज्ञानी हृदय कभी ननष्कामी नही ंहोता और भर्ान राम ननष्काम है। कोई ननष्काम को पाकर ही तो ननष्काम होर्ा। ऐसा जजसका हृदय है, भर्न! र्हााँआप ननर्ास कीजजये। इस तरह महर्षि र्ाल्मीफक जी ने भर्ान के रहनेके मलए चौदह स्र्ान बतलाया -

एहह त्रबचध मुतिबर भर्ि देखाए । बचि सप्रेम राम मि भाए ।
कह मुति सुिहु भािुकुलिायक । आश्रम कहउाँ समय सुखदायक ।
चचिकूट चगरर करहु तििासू । िहाँ िुम्हार सब भााँति सुपासू ।
सैलु सुहािि कािि चारू । करर केहरर मृग त्रबहग त्रबहारू ।।

फफर महर्षि र्ाल्मीफक जी ने कहा- हे प्रभो! अब म ैंइस समय जहााँआश्रम बनाकर रहना चाहहए र् स्र्ान आपको बतलाता हूाँ। आप धचिकूट पर्शत पर ननर्ास कीजजये। र्हााँ आपके मलए सब प्रकार की सुर्र्िा है। र् सुहार्ना पर्शत है और सुन्द्दर र्न है, जो हाधर्यों, हहरर्ों एर्ंमसहोंऔर पक्षियों का र्हार स्र्ल है।

िदी पुिीि पुराि बखािी । अत्रिवप्रया तिज िप बल आिी ।
सुरसरर धार िाउाँ मन्द्दाफकिी। जो सब पािक पोिक डाफकिी ।।
अत्रि आहद मुतिबर बहु बसहीं। करहहं जोग जप िप िि कसहहं ।
चलहु सफल श्रम सबकर करहू । राम देहु गौरर चगररबरहू ।।

र्हााँपर्र् नदी है, जजसकी पुरार्ों ने प्रर्ंसा की है और जजसको अत्रि मुनन की पत्नी अनुसूइया जी अपने तपोबल से लायी र्ी, र् र्ंगा की िारा है। उसका नाम मन्द्दाफकनी है, र् सम्पूर् शपापरूपी बालकों को खा डालने के मलए डाइन रूप है।

अत्रि आहद बहुत से श्रेष्ठ मुनन र्हााँननर्ास करते हैं, जो योर्, जप और तप करते हुए र्रीर को कसतेहैं। हे राम ! आप र्हााँजाकर, सबके पररश्रम को सफल कीजजये और धचिकूट को र्ौरर् दीजजये।

दोहा - चचिकूट महहमा अममि कही महामुति गाइ ।
आइ िहाए सररि बर, मसय समेि दोउ भाइ ।। 132।।
बस! यहीं पर िाल्मीफक आश्रम का उपसंहार है।

3. चचिकूट दरबार

आत्म जजज्ञासुओं !

जब भर्ा्न श्रीराम के र्ि्योर् में महाराज दर्रर्ें ने प्रार् त्यार् कर हदया, तब कैकय देर् से महात्मा भरत और रिुघ्न अयोध्या से दूतू भेजकर बुलाये र्ये, भरत ने अयोध्या में आते ही सम्पूर् शजस्र्नतयों का अनुभर् फकया तो उन्द्हें महान दुुःख हुआ। इन असह्य र्ेदनाओं से पीडडत, महात्मा भरत की दर्ा का र्र्नश नहींहो सकता। र्पता की मृतूयु सुनते ही उनकी दर्ा करुर् हो र्यी।

सुिु भरि भए त्रबबस त्रबषादा। जिु सहमेउ करर के हरर िादा ।।

ताि िाि हा िाि पुकारी। परे भूममिल ब्याकुल भारी ।।

इसके बाद जब उनने ने भर्ा्न राम, लक्ष्मर् और माता सीता का र्नर्मन सुना तो-

दोहा- भरिहहं त्रबसरेउ वपिु मरि, सुिि राम बि गौिु ।

हेिु अपिउ जाति स्जय थफकि रहे धरर मौिु ||160||

इसके बाद माताओं, र्ुरुजनों और पररजनों के सहहत भरत र्ोक सार्र में डूबने लर्े, उनकी दयनीय दर्ा का र्र्नश नहीं फकया जा सकता। इस प्रसर्ं में माता कौर्ल्या ने स्नेहपूर्शक उन्द्हें अनेक प्रकार से िीरज बँिाया और राम के र्न से आते तक उन्द्हें राज-काज सांभालने के मलए आग्रह फकया। र्ुरु र्मर्ष्ठ ने भी उन्द्हें अनेक प्रकार से सात्र्ंना देते हुए समझाया फक बेटा भरत -

दोहा - सुिहु भरि भावी प्रबल त्रबलझख कहेउ मुतििाथ ।

हाति लाभु जीविु मरिु जसु अपजसु त्रबचध हाथ ।। 17 1।।

इसमलए माता-र्पता की आज्ञा को स्र्ीकार कर राज्य का कायशभार सभांालो, यही उधचत है, तब महात्मा भरत अत्यतां दुुःख और र्ेदना से भरे हुए कहते हैं।

दोहा - ग्रह ग्रहीि पुति बाि बस िेहह पुति बीछी मार।

ाहिह वपआइअ बारिी कहहु काह उपचार ||180||

जैसे कोई ग्रह पीडा से पीडडत, बात रोर् का रोर्ी हो, उसे त्रबच्छु का डकां लर् जाये, इसके बाद उसे महदरा र्पला दी जाये, तो उसकी जो दर्ा होर्ी, र्ही दर्ा मेरी है।

कैकेई, रूपी ग्रह से म ैंग्रमसत हूँ, र्पता का ननिन हो र्या है यह मुझेबात रोर् है, भर्र्ान राम चौदह र्र्ष श के मलए र्न चले र्ये हैं, यह मुझे ेत्रबच्छु का डकां लर्ा है। इसके बाद भी मुझे ेजो राज मसहांासन पर बैठनेकी सलाह दी जा रही है, यह मुझेमहदरा र्पलाने के समान है। क्योंफक, राजमद महदरा का ही रूप है।

प्रभुिा पाय काह मद िाहीं

अतः, मनैं ेअपनेमन में एक ही ननश्चय फकया है, र्ह यह है फक - -

दोहा- आपति दारि र्दिा कहउूँ सबहह मसर िाइ ।
देखें त्रबिु रघुिाथ पद स्जय के जरति ि जाइ ||182||
आिा उपाउ मोहह िहहं ंसूझा । को स्जय कै रघुबर त्रबिु बूझा।
एकहहं ंआूँक इहइ मि माहीं। प्रािकाल चमलहउूँ प्रभु पाहीं ।
जद्यवप म ैंअिभल अपराधी । भै मोहह कारि सकल उपाधी ।
दिवप सरि सिमुख मोहह देखी। छमम सब कररहहह कृपा त्रबसेषी ।।

भरत के इस ननश्चय को सुनकर सब आनन्द र्र्भोर हो र्ये, सबनेमहात्मा भरत की भूरर-भूरर प्रर्सा की। माताएँ, मिांीजन, र्ुरु और नर्र के प्रजाजन सबों ने मुक्तकांठ से कहा फक महात्मा भरत, राम प्ेरेम की प्रत्यि मूनत शही है। अांत में सबको लेकर महात्मा भरत भर्र्ान राम के पास धचिकूट चले, सार् ही चतुरांधर्नी सेना र्ी, घोडे,े हार्ी, रर् और पैदल जजसमें रहतेहैं, उसको चतुरांधर्नी सेना कहते हैं।

मातृ ृमडांल, मत्रांमिडांल, ब्राह्मर् मडांल, प्रजा मडांल और र्ुरु र्र्ष इन सबके सहहत महात्मा भरत भरद्र्ाज के आश्रम में पहुँचे। महात्मा भरद्र्ाज जी ने जब इन्हें देखा तब र्े सोचने लर्े फक इतनी बडी सेना का फकस तरह स्र्ार्त फकया जाय, र्े ेऐसा सोच ही रहे र्े ेफक इतने में ही सुन्दर-सुन्दर कन्द्याओां के रूप में उनके समि ऋद्धियाँ और मसद्धियाँ प्रर्ट हुई और हार् जोडकर र्र्नयपूर्कश कहनेलर्ी फक महाराज! हम सब सेर्ा में उपजस्त हैं, कृपाकर हमें आज्ञा दीजजये फक हम कौन- कौन सी सेर्ा करें।

अर्र्मा - जो अर्ु के समान छोटा हो जाये।

महहमा - जो चन्द्रलोक तक चला जाये।

र्ररमा- जो पहाड की नाई र्जनीय हो जाये।

लधिमा - जो अत्यन्द्त हल्का हो जाये। प्रकाम्य-जो इच्छा करो, र्ही हो जाये। र्ीत्र् - जजसको चाहे, अपनेर् में कर ले। ईर्ीत्र् - र्ासन करने र्ाला, आहद। इस तरह आठ मसद्धियाँ और नर् ननधियाँ हैं, इन्द्हें अधिक जानकर क्या करोरे्-इन सबको महात्मा भरद्र्ाज जी बोले, इनकी पहुनई करना है, जजतना हो सके इनकी खूब सेर्ा करो। बस, फफर क्या र्ा इनके प्रताप से भरत समाज के प्रत्येक के पास एक-एक कल्पर्ृक्ष, कामिेनु और अमूल्य रत्न धचन्द्तामर्र् आहद सब हो र्ये। बडे–बडे ेमहल बन र्ये, देर्लोक से रम्भा, मेनका, उर्र्शी आहद अप्सराय ेंइनकी सेर्ा में आ-आकर जुट र्यीं और उन्द्हें हर तरह की सुख-सुर्र्िा प्रदान करने ेलर्ीं, परन्द्तु मानसकार यहाँ ँधचि खीचांते हैं फक-

दोहा - संपति चकई भरिु चक मुति आयस खेलिार ।
ेहिह तिमस आश्रम वपंजरााँ राखे भा मभिुसार ।।215||

चकर्ा और चकर्ी रात्रि में अलर्-अलर् रहतेहैं, रात्रि में इनका ममलाप होता ही नहीं, यह ईश्र्रीय र्र्िान है। सम्पर्त्त चकर्ी है, भरत जी चकर्ा हैं और मुनन की आज्ञा ही खेलानेर्ाला है, इन सब ऐश्र्यों का प्रभार् अयोध्या से आये हुए सब पर तो पडा, परन्द्तु भरत इनसे त्रबल्कुल ही अछूते ेरहे।

जैसे, फकसी बहेमलये के द्र्ारा एक ही र्पजांडे ेमें रखे जाने पर भी चकर्ी चकर्ेका रात्रि में सांयोर् नही ां होता, उसी प्रकार भोर् सामग्री चकर्ी और भरत चकर्ा इन दोनों को मुनन ने आश्रम रूपी एक ही र्पजांडा में रात भर रखा, परन्द्तु महात्मा भरत ने मन से ही उनका स्पर् शतक नहीांफकया। रे् ेरात भर भर्र्ान राम के मलए तडपते रहे, उन्द्हें नीदां न आयी और इसी तरह सबेरा हो र्या। सबेरा होनेपर उन्द्होंने समाज सहहत तीर्रशाज में स्नान फकया, फफर मुनन भरद्र्ाज को प्रर्ाम कर उनसे आर्ीर्ार्दश ले, धचिकूट की ओर चले। धचिकूट पहुँचने पर र्हाँ चार सभाएँ हुई। पहहली सभा महात्मा भरत की र्ुरु र्र्मष्ठ की अध्यिता में हुई, दूसूरी सभा भर्र्ान राम की, तीसरी सभा महाराज जनक की और चौर्ी सभा राननयों की हुई। इसे सन्द्त समाज में धचिकूट का दरबार कहते हैं, यहाँ ँ का र्र्षय बडा ही जक्लष्ट है। यहाँ ँज्ञान, र्ैराग्य की िार बहती है, यहाँकौन क्या कह रहा है, इसे हर एक की बुद्धि नही ांसमझ सकती। चलो, अब प्रसर्ां पर आय ें-

दोहा - तिमस ि िींद िहहं ंभूख हदि भरिु त्रबकल सुचच सोच ।
िीचि कीच त्रबच मगि जस मीिहहं ंसमलल सूँकोच ।।252।।

धचिकूट पहुँचकर अयोध्यार्ासी, जजनको जहाँ ँभी जर्ह ममली, रात्रि को र्श्राम करनेलर्े सब सो र्ये, परन्द्तु भरत की दर्ा कुछ और ही र्ी, उन्द्हें रात भर नीदां नहींआयी, उनके मन में अनेक प्रकार के सांकल्प-र्कल्प होतेरहे।

कीस्न्द्ह मिु ममस काल कुचाली । ईति भीति जस पाकि साली ।
केहह त्रबचध होइ राम अमभषेकू । मोहह अिकलि उपाउ ि एकू ।
अिमस फिरहहं ंगुर आयसु मािी। मुति पुति कहब राम रुचच जािी।
मािु कहेहुँ बहुरहहं ंरघुराऊ । राम जिति हठ करत्रब फक काऊ ॥

राम, र्ुरु र्मर्ष्ठ की आज्ञा से अर्श्य अयोध्या लौट सकते हैं, परन्द्तु र्ुरुदेर् भी राम की रुधच जानकर ही कहेंर्े, माता कौर्ल्या के कहनेपर भी र्े यहाँसे लौट सकते हैं, परन्द्तु माता क्यों हठ करने ेलर्ेर्ी।

मोहह अिुचर कर केतिक बाािा। िेहह महूँ कुसमउ बाम त्रबधािा ।
जौं हठ करउूँ ि तिपट कुकरमू। हरचगरर िेगुर सेिक धरमू ।।

म ैंतो और भी कुछ नही ांकह सकता, क्योंफक सेर्क का िम शतो हरधर्र अर्ात्श ्मर्र्जी के कैलास से भी अधिक भारी होता है। सेर्क यहद अपनेस्र्ार् शके मलए स्र्ामी से हठ करता है तो र्ह सेर्क का िम शनहींांहै।

एकउ जुगुति ि मि ठहरािी। सोचि भरिहहं ंरैति त्रबहािी ।

इस तरह सोचते-सोचते रात बीत र्यी, परन्द्तु एक भी राजक्त मन में ननजश्चत न हो सकी। भरत जी प्रातःकाल स्नान करके प्रभु श्रीराम जी को । सर नर्ाकर बैठे ही र्े फक र्ुरु र्मर्ष्ठ जी ने उन्द्हें अपने पास बुलर्ा भेजा -

दोहा - गुर पद कमल प्रिामुकरर बैठे आयसु पाइ ।
त्रबप्र महाजि सचचि सब जुरे सभासद आइ ।।253।।

भरत जी र्ुरु के चरर्ों में प्रर्ाम करके आज्ञा पाकर बैठ र्ये, मत्रांमिडांल ऋर्षयो का मांडल, प्रजा मडांल और महहला मांडल सब आ-आकर र्ुरुदेर् को प्रर्ाम कर आज्ञा पा यर्ा स्र्ान बैठते र्ये। इस सभा के सभापनत भर्र्ान र्मर्ष्ठ हुए, इनकी सभा चातुरी देखो-इन्द्होंने सोचा फक सबसे पहहले मुझेयहाँराम की महहमा बताना चाहहए, क्योंफक यहद यहाँ ँपर कैकई का कोई पिपाती बैठा होर्ा तो र्ह इसे बदाश्शत नहींांकरेर्ा, इस तरह सभा में राम के र्रोधियों का पता लर् जायेर्ा, इस अमभप्राय से उन्द्होंने भर्र्ान राम की महहमा का र्र्नश करना प्रारांभ फकया।

बोले मुतिबरू समय समािा । सुिहु सभासद भरि सुजािा ।

धरम धुरीी भिुकुल भिू । राजा रामुस्बिस भगिू ।
सत्यसंध पालक श्रुति सिू । राम जिमुजग मंगल हिू ू।
गुर वपिु मिु ुबचि अिुसारी। खल दलु दलि दि हहिकारी ।
ीति प्रीति परमारथ स्िस्थिु । कोउ ि राम सम जिा जथारथु ।।

राजनीनत फकसको कहतेहैं, समाज में बडों के सामने फकस प्रकार बोलना चाहहए और अपना मनोभार् (स्र्ार्)श रखकर, फकस प्रकार हँसे अपने को अलर् कर लेना चाहहए, इनको जानना हो तो धचिकूट के चारों दरबार का मनन करना चाहहए।

रुुरुदेर् मर्ष्ठ जी कहते हैं फक हे सभासदर्ों! पहहले म ैंयह बता देना चाहता हूँ फक राम कौन हैं? उन्द्हें पहले समझ लो।

भर्र्ान राम िम शके िुरीर् और सूयर्शर्ां के सूय शहैं, राजा हैं और भर्र्ान हैं।

अब यहाँ ँपर प्रश्न होता है फक राजा तो प्रजा के र् में होता है, स्तिां नही ांहोता तो यहाँ ँस्र्न्र् क्यों कहा? उत्तर है फक भर्र्ान हैं इसमलए स्र्न्र् हैं। अरे भाई! जन जीर् राजा है, तब तो प्रजार् है और जब भर्र्ान

शजा् हैं,तोस्र्न्र्भर्र्ान् ्हैं। श्रीराम सत्य नैजष्ठक हैं, सत्यर्ादी हैं, श्रुनत जो र्ेद है उसका सेतु अर्ात् रिक हैं और सांसार को सुख देनेर्ाले हैं, रुुरु, र्पता-माँ, की आज्ञा के पालक हैं। खल दलों के नार्क हैं, देर्ताओां के हहतकारी हैं और फफर नीनत, प्रीनत, स्र्ार् शऔर परमार् शको राम के समान यर्ार् शरूप में जाननेर्ाला ई्श्र् में कोई दूसूरा नहीांहै। यह हम नही ांकहतेफक कोई जानते ही नही,ां जानते होंर्े, परन्द्तु यर्ार् शरूप से जानने र्ाले ई्श्र् में उनके मसर्ा अन्द्य नही ांहै।

त्रबचध हरर हर समस रत्रब हदमसपाला । माया जिी करम कुमल काला ।
अहहप महहप जहूँ लचग प्रभिुाई । जोग मसद्चध तिगमागम गाई ।
करर त्रबचार स्जयं ांदेखहु िीके । राम रजाइ सीस सबही के ।।

सूय,श चन्द्रमा, हदक्पाल, लोकपाल, ब्रह्मा, र्ष्णिु, महेर् सभी कम,श भूत, भर्ष्य, र्तमशान तीनों काल, माया, जीर्, राजे-महाराजेतर्ा सारे चराचर में राम की आज्ञा मर्रोर्ाय शहै। त्रबना श्रीराम की आज्ञा के एक पत्ता भी नही ांहहलता, परन्द्तु यह कब जान पडेर्ा? इसका अनुभर् उसी को होर्ा, जजसका हृदय नीके होर्ा। **"करर त्रबचार स्जयं ांदेखहु िीके"** यह ममलन हृदय से नही ांदेखा जा सकता, क्योंफक यहद ममलन हृदय को यह अनुभर् हो जाय तो फफर र्ह अनैनतक काय शन करे। यों तो सभी जानते हैं फक त्रबना राम की आज्ञा एक पत्ता भी नही ांहहल सकता, पर लोर् ऐसा कहते ेभर हैं, मानते भर हैं, जानते नही।ां तब जो नीका है, उसी का हृदय नीका होर्ा, तो भैय्या! नीक तो राम के मसर्ा कोई नही,ां जीर् हृदय कभी नीक हो नहीां सकता, यह ननर्र्शाद अटल मसद्धान्द्त है। लोर् कहते जरूर

हैं फक भर्ग्न के मलए ननष्काम कम शकरना चाहहए, परन्द्तु जीर् हृदय कभी ननष्काम नहीं हो सकता। ननष्काम तो केर्ल एक राम ही है।

राम की आज्ञा सारे चराचर को मरीर्ाय शहै, इसका क्या प्रमार् है? इसका प्रमार् तो यही है फक पहहले तुम राम हो जाओ, फफर तो बताना नहीं पडेर्ा, स्र्यां अनुभर् हो जायेर्ा। फकसी के प्रताप, महहमा, स्र्रूप और चररि को यहद यर्ार् शरूप से जानना है तो पहहले र्ही हो जाओ, इसमलए जरूरत इस बात की है फक अपना स्र्रूप जो 'म'ै आत्मा है (र्ीर दृजष्ट को छोडकर) उसे भर्ग्न राम जानो, राम अनुभर् करो, उस समय तुम्हारा हृदय नीक होर्ा और तभी इसका तुम्हें अनुभर् होर्ा फक 'राम रजाइ र्ीस सब ही के है।' हाँ,ँ सुनकर, पढ़कर भले जान लो, परन्द्तु त्रबना अनुभर् के नहीांजान सकते।

जब श्रीराम ऐसे हैं तब - -

दोहा- राखें राम रजाइ रख हम सब कर हहि होइ ।

समुझझ सयािे करहु अब सब मममल संमि सोइ ।।254।।

र्ुरु र्मर्ष्ठ कहतेहैं फक जब सारे चराचर पर राम की आज्ञा मरीर्ाय शहै, तब उनकी आज्ञा का ही पालन करना, हमारा परम कत्तव्शय है। इस तरह पहहले र्े ेसब कुछ कह र्ये, अब पतैंरा बदलते हैं, र्े ेकहते हैं अरे! म ैंयह नही ांकहता फक यही करो, बडे-ेबडे ेबुद्धिमान सयाने, ऋर्षष मांडल, मत्रांमिडांल, प्रजा मांडल, महहला मडांल सब बैठे हो, सबकी राय में जो ठीक ऊँचेर्ही करो। जो र्ास्तर्र्क है, उसे हम कह चुके। यही सभाचातुरी है फक अपनी सम्पूर् श बातें कहकर फफर र्हाँ से अलर् हो र्ये और उन्द्हीांपर छोड हदया। यही राजनीनत है, भाई! सूयकूशल के आचाय शहैं, ऐसे र्ैसे तो है नही।ां कैसे बुढऊ ने सबको बाँि मलया, जजनकी व्यापक दृजष्ट है उन्द्हें और जजनकी र्ीर दृजष्ट है उन्द्हें भी। श्रीराम की आज्ञा सभी पर है, र्र्षय समझो -

जो जजसका अजस्तत्र्, आिार और कारर् होता है, उसके त्रबना र्ह टस से मस नही ांहो सकता, यही आज्ञा है, यही उसके ऊपर उसकी आज्ञा मरीर्ाय शहै। हाँ,ँ जीर् की आज्ञा फकसी पर होती है, फकसी पर नहीं होती, क्योंफक जीर् पररनछन्द्न होता है, परन्द्तु भर्ग्न राम की आज्ञा सारे चराचर तृर् से लेकर ब्रह्मा पयन्द्शत, सबके ऊपर है, क्योंफक र्ह सारे चराचर का अजस्तत्र् है। आिार है, कारर् है, उसमें व्यापक है, र्ही है। जो सबमें रमा हो, जजससे कोई देर्, काल, र्स्तु खाली न हो, उसी का नाम है, राम। र्ह कल्यार् स्र्रूप होने ेसे मर्र् है।

र्ि ािा ि मिसा प्राप्तु शक्यो ि चक्षुषा ।

अस्तीनत ब्रुर्ोऽन्द्यि कथंतदुपलभयिे।।

(कठोपननर्षद (2/12)

जो अस्तीनत 'है' है, र्ही अस्तीनत आत्मा सबमें ननत्य 'म'ैं हूँ, 'म'ैं हूँ कह रहा है, उसे प्राप्त करने ेऔर कहाँ ँ अन्द्यि जाओर्े? फूल है, ब्रह्मा है, जीर् है, ईश्र्र है, जड है, चेतन है, ज्ञान है, अज्ञान है, जर्त् ्है, ब्रह्म है आहद।

 एक तृरू से लेकर ब्रह्मा पयन्द्शत ऐसा कोई है, जो 'है' से खाली हो, जजसमें 'है' न हो। इसी

व्यापक सत्ता का नाम राम

है, यह सत्ता है, अजस्तत्र् है, र्जूद है। तो भाई! जजसके त्रबना जो है ही नही,ां तभी तो उसकी आज्ञा उस पर मरीर्िय श
है, यही सत्ता अजस्तत्र् ही भर्ग्ान राम है, आत्मा है, 'म'ैं है। यह लबालब भरा हुआ है, जो पापी और पुण्यात्मा
सबमें है। एक बार हदल्ली में हमसे एक सज्जन ने पूछा-स्र्ामी जी, जब ईश्र्र सबमें व्यापक है, तब र्ह पापी में
भी होर्ा?

हमनेकहा- भाई! होर्ा नहीां, है।

इस पर र्ह कहने ेलर्ा फक आज तरह-तरह के अनाचार, अत्याचार, दर्ाबाजी ररश्र्तखोरी, ममलार्ट,
चोरी और व्यमभचार आहद बुरे काम सर्िश हो रहे हैं और उन पाप कम शकरने ेर्ालों में जब भर्ग्ान है, तब र्ह
भर्ग्ान इन बुरे काम करने ेर्ालों को रोकता क्यों नही?ां हमनेकहा र्ह रोकता तो है, याररा! पर, र्ह कुकमी
मानता है नही।ां इस पर र्ह कहने लर्ा, कैसे रोकता है? हमनेकहा देखो, झूठ बोलना पाप है, यह बात सत्य है, न।
उसनेउत्तर हदया-जी हाँ!ँ तब हमनेकहा- जो झूठ बोल रहा है, उसको यह ज्ञान है या नहीां फक म ैंजो कुछ बोल रहा हूँ
र्ह झूठ है। उसने उत्तर हदया-जी हाँ,ँ उसे यह ज्ञान है। हमनेकहा-तब, यह ज्ञान फकसका है? ईश्र्र का है या उस
पापी का? उत्तर ममला- ईश्र्र का है। हमने कहा-भैय्या! तो और कैसे रोकेर्ा? क्या लाठी लेकर आयेर्ा, खोपडी
फोडने।

कोई भी र्राबी, जुआरी, दुराचारी, चोर जब इन कामों को करने जाता है, तब भीतर से उसको ज्ञान रहता
है फक म ैंजो काम करने जा रहा हूँ, र्ह पाप है। यह र्ेर्क उसे रहता है। यह र्ेर्क उस पापी का नहीां, ईश्र्र का है।
जो इस र्ेर्क का आदर करता है, र्ह बच जाता है और जो इस र्ेर्क का अनादर करता है, नही ांमानता उसे दण्ड
भोर्ना पडता है। कोई-कोई कहते भी हैं फक क्या करें यार! म ैंइस काम को नहीांकरना चाहता र्ा, मेरे भीतर से कोई कह
रहा र्ा फक तू इस काम को मत कर, परन्द्तु म ैंउसे नही ांमाना और ममत्रों के चक्कर में आकर यह काय शकर
डाला, जजसके कारर् यह र्र्पत्त आयी। भीतरर्ाला ऐसा न्द्यायाधीर् है फक दूध का दूध और पानी का पानी कर
देता है। हाँ ररश्र्तखोरी, पिपात आहद कुछ नहीांचलता यही तो "राम रजाइ र्ीस सबही के" है। तब, जब नीके
हृदय से र्र्चार करता है तब र्ह राम की आज्ञा का पालन करता है और जजसका हृदय नीके नहीां है, र्ह उसकी
आज्ञा को भर्ां करता है और अनेक र्र्पत्तियों में पडता है।

उमा दार जोवषि की ाई, सबहहं ांिचिा राम गोसाईं ।।

कठपुतमलयों का नाच रात में होता है। उन्द्हें नचानेर्ाला पदे के भीतर रहता है, र्ह सबको देखता है,
पुतमलयों को भी और दर्कशों को भी। उसे कोई नही ांदेख पाता। स्र्यां पुतमलयों में नाचनेकी र्जक्त नही ांहै। र्े
नचानेर्ाले के द्र्ारा नचायी जा रही है।

इजन्द्रयाँकठपुतमलयाँ ॅहैं 'म' ॅै आत्मा राम इन्द्हें नचाता है, ई मान्द्यता रूपी पने के भीतर है, ई सबको देखता है, उसे सब अर्ात्श ्मन, बुद्धि, धचत्त, इजन्द्रयाँ आहद कोई नहीांदेख पाता, ये कठपुतमलयाँ, ॅँ अज्ञान के अँिरे में नाच रही हैं, ज्ञान के प्रकार् में इन्द्हें देखो तो रे् न तो नाच रही हैं और न कोई उन्द्हें नचा रहा है। यह जीर् हृदय से नही ांजाना जा सकता, यह तो नीके हहय से ही जाना जा सकेर्ा। अर्ुद्ुधि काल तक तो उसका नाम जीर् है और जब र्ुदि् हो र्या तब ई राम ही है।

अब प्रसर्ां पर आ जाओ -

र्ुरुदेर् मर्ष्ठ जी कहते ेहैं फक भैय्या! सबका सुख इसी में है फक श्रीराम का राज्यामभर्षेक हो जाये, इसमलए ऐसा उपाय करो जजससे श्रीराम धचिकूट से अयोध्यापुरी लौट जायें। र्ुरु मर्ष्ठ के इस कर्न का सभी ने स्र्ार्त फकया, क्योंफक उनके श्रीमुठ से नीनत, परमार् शऔर स्र्ार् शसे सनी हुई र्ार्ी ननकली।

सब सादर सुति मुतिबर बािी। िय परमारथ स्ास्थि सािी ।।

नीनत, परमार् शऔर स्र्ार् शकी र्ार्ी कौन-सी है समझो -

दोहा- राखें राम रजाइ रछ। हम सबकर हहि होइ ।

समुझझ सयािो करहु अब । सब मममल संमि सोइ ।।254।।

यह नीनत की र्ार्ी है।

त्रबचध हरर हर समस रत्रब हदमसपाला से लेकर राम रजाइ सीस सबही के

तक परमार् शकी र्ार्ी है।

सब कहुँ सुखद राम अमभषेकू । मंगल मोद मूल मग एकू ।।

केहह त्रबचध अिध चलहहं ंरघुराऊ। कहहु समुझझ सोई कररअ उपाऊ ।।

ये स्र्ार् शसे सनी हुई र्ार्ी है।

धरम, धुरीि, भािुकुल भािू से लेकर कोउ ि राम सम जाि यथारथु

तक राजाराम की महहमा है।

त्रबचध हरर हर समस रत्रब हदमसपाला से लेकर जोग मसद्चध तिगमागम गाई ।।

तक भर्ान राम की महहमा है।

उिर ि आ लोग भए भोरे। िब मसर िाइ भरि कर जोरे ।।

रुुरु मर्ष्ठ की इस र्ारी को सुनकर सारी सभा र्ातां हो र्यी, सब चुपचाप बैठे रहे। फकसी को कोई उत्तर नही ांसूझा तब महात्मा भरत बडे र्ेनीत भार् से नम्रतापूर्कश रुुरुदेर् के सामने हार् जोडकर खडे ेहुए और मसर नर्ाकर बोले। र्े ेकहने लर्े- रुुरुदेर्!

भिुबंस भए भूप घिेरे। अचधक एक िे ेएक बड़े ।।
जिम हिेु सब कहूँ वपिु मािा। करम सुभासुभ देइ त्रबधािा ।।

हमारे इस सूयकुशल में एक से एक बडे-बडे ेराजा हुए, जो योद्िा, तपस्र्ी, ऊध्र्रेशता, र्ीश्र् र्ीजेता, आत्म नैजष्ठक हुए। जन्म के कारर् तो माता-र्पता हैं, परन्द्तुशुभाशुभ कमों के फल का देनेर्ाला तो र्ीिाता ही है।

दमल दुखु सजइ सकल कल्यािा। अस असीस राउरर जगु जािा ।
सो गोसाइूँ त्रबचध गति जेहहं ंछेकी। सकइ को टारर टेक जो टेकी ॥

इस र्ांर् पर सदैर् आपकी दया और कृपा की छिछाया रही, आपकी आर्ीर्ष ही एक ऐसी है, जो सम्पूर् श क्लेर्ों को नष्ट करके हर तरह के कल्यार्ों से सजा देनेर्ाली है। आपकी महहमा के प्रताप को तर्ा चमत्कार को सारा र्ीश्र् जानता है, आप र्ीिाता की र्नत को भी छेकनेर्ाले हैं, उनकी रेख में मेख मारनेर्ाले हैं, आपने जो टेक, टेक दी, जो ननश्चय कर मलया उसे टाल सकनेकी र्जक्त ससांार में फकसी की नहीां है।

दोहा- बूझझअ मोहह उपाउ अब सो सब मोर अभागु ।
सुति सिेहमय बचि गुर उर उमगा अिुरागु।।255।।

ऐसे रुुरुदेर् सब प्रकार से समर् शहोतेहुए मुझसे जो उपाय पूछ रहे हैं तो भरत इसे अपना दुभाुग्शय ही समझता है। इस तरह जब महात्मा भरत ने हजारों र्ष शपहहले के इनतहास की याद हदलायी तो भरत की इस रुुरु ननष्ठा को देखकर रुुरुदेर् के हृदय में अनुरार् उमड पडा, र्े ेर्द्र्द हो र्ये और बोले-फक बेटा भरत! तुमने ेजो कहा, सब सत्य है। रुुरुदेर् मर्ष्ठ ने र्ीिाता की र्नत को कहाँ ँपर छेका र्ा, उस इनतहास को सुनो -

सूयर्शर्ां में दर्रर् के पहहले स्र्यभूां मनु से लेकर इक्ष्र्ाकु तक जजतनेराजा हुए उन सबके एक-एक पिु र्े,े दर्रर् के ही चार पिु हुए। इसी कुल में हदलीप हुआ है।

मर्ष्ठ जी ब्रह्माजी के मानस पिु में से हैं, उन्द्होंने ेअपनेर्पता ब्रह्माजी से पूछा फक मेरे मलए क्या आज्ञा है। मुझे ेससांार में कौन-सा काम करना है? तब ब्रह्मा जी ने उनसे कहा र्ा फक तुम अयोध्या में जाकर सूयर्शर्ां में पुरोहहताई करो, क्योंफक आर्े चलकर इस र्ांर् में भर्र्ान राम का जन्म होने ेर्ाला है। हाँतुम उनके कुलरुुरु

होकर ससाांर में पूजनीय होरे्। र्पता ब्रह्मा की आज्ञा को मर्रोर्ाय शकर, रे् अयोध्या में आकर पुरोहहताई करने ेलरे् रे्।

इसी कुल में राजकुमार हदलीप का जो अपनेर्पता का इकलौता पुि र्ा, र्र्ाह हो रहा र्ा। जब र्र्ाह मण्डप में भाँर्रें पड रही र्ीांतब राजकुमार हदलीप जो र्र के रूप में र्र्ाह मडांप में बैठे रे्,े एक भयानक मूनत शको अपनेसामने खडे ेदेखकर घबराकर र्ुरुदेर् र्मर्ष्ठ (जो र्हाँ उपजस्र्त रे्)े से कहनेलरे्, र्ुरुदेर्! यह कौन भयानक मूनत शकाल के सदृश्य सामने खडी है। मुझेउसे देखकर भय लर् रहा है। र्मर्ष्ठ ने योर्बल से उसे देखा। र्ह सचमुच यमराज र्ा, जो हदलीप के प्रार् ले जाने के मलए र्हाँ उपजस्र्त हुआ र्ा। र्मर्ष्ठ जी ने तुरन्द्त यमराज के सामने ब्रह्म रेखा खीचां दी और मडांप में र्र्ाह काय शकरानेर्ाले पुरोहहत को कहा फक अभी कुछ देर के मलए भाँर्र का काय शरोककर र्ेर्ष काय शआप सम्पन्द्न कराइये। म ैंर्ोडी देर में आता हूँ. मेरे र्ापस आने ेपर र्ह काय शपूरा फकया जायेर्ा। ऐसा कहकर, र्े तुरन्द्त योर्बल से ब्रह्माजी के पास ब्रह्मलोक पहुँच र्ये और ब्रह्माजी से कहने लर्े-आपने मुझसे कहा र्ा फक उस कुल में भर्र्ान राम का जन्द्म होने र्ाला है, परन्द्तु उस र्ांर् का इकलौता राजकुमार हदलीप जजसका र्र्ाह हो रहा है, उसकी मृतूयु होनेर्ाली है। उसके प्रार् लेनेयमराज सामने खडा है।

इसकी मृतूयु के बाद र्ह कुल समाप्त हो जानेर्ाला है, यह क्या बात है? और आपने ब्रह्मा होकर ऐसा असत्य भार्षर् क्यों फकया ? इस पर ब्रह्मा जी ने देखा तो उन्द्हें ज्ञात हुआ फक सचमुच सातर्ें भाँर्र पडते ही र्र्ाह मडांप में ही हदलीप की मृतूयु मलखी हुई है, तब उन्द्होंने र्मर्ष्ठ से कहा फक जो कुछ हो रहा है, र्ह मेरे लेख के अनुसार ही हो रहा है। तब र्मर्ष्ठ कहने लर्े फक जब ऐसा ही र्ा तब आपनेमुझे ेर्हाँक्यों भेजा? आज जब र्ह र्ांर् समाप्त हो जायेर्ा तब र्हाँभर्र्ान राम का जन्द्म फकस तरह होर्ा? म ैंऐसा नहीां होने ेदूँर्ा। आप अपने उस लेख को काहटये। इस पर ब्रह्माजी ने कहा फक भाई मेरा मलखा अममट होता है। र्ह मलख जाने के बाद न तो स्र्यां मुझसे ही काटा जा सकता है और न भर्र्ान में ही ऐसी सामथ्य शहै फक उसे र्ह काट दे, र्हाँ ेँतुम सतां हो, र्ुरु हो। सतां और र्ुरु र्र्धाता और भर्र्ान से भी बडा होता है, तुम चाहो तो उस लेख को काट सकते हो। तुममें र्ह र्जक्त र्ुरु और सतां होने ेके नाते है। ब्रह्माजी की बात सुनकर र्मर्ष्ठ जी ने तुरन्द्त ब्रह्मा जी के उस लेख पर स्याही फेर दी अर्ा्त्श ्उसे काट हदया और फफर र्र्ाह मडांप में उपजस्र्त होकर र्ेर्ष काय शपूरा कराया।

इस तरह उनने अपनेमर्ष्य को ब्रह्मा के लेख को काटकर काल के र्ाल से बचा मलया और यमराज को र्हाँसे खाली हार् लौटना पडा। ब्रह्मा, र्र्ष्र्ुऔर महेर् तो कानून के दायरे में रहतेहैं, परन्द्तु सतां महापुरुर्षों के मलए कोई कानून की पाबदांी नहीांहोती। इसी राजा हदलीप को अपनी रानी समेत पुि प्राजप्त की कामना से, इन्द्हीांके (र्मर्ष्ठ) आश्रम में जाकर इनकी र्ाय कामर्ेनु की पुिी नजन्द्दनी की 21 हदनों तक सेर्ा करनी पडी र्ी, जजसके र्रदान के फलस्र्रूप उस कुल में राजा रघु का जन्द्म हुआ र्ा। राजा दर्रर् को भी पुि प्राजप्त की इच्छा से र्ुरु र्मर्ष्ठ की ही र्रर् लेनी पडी र्ी।

इन्द्हीां सब बातों को बताकर महात्मा भरत र्ुरुदेर् की र्जक्त और इस कुल पर उनकी सदैर् कृपा दृजष्ट रहने ेका धचि खीचां रहे हैं। भरत की र्ुरु भजक्तपूर् शबातें सुनकर र्ुरुदेर् ने कहा -

ििि बिा िुरर राम कृपाहीं । राम त्रबमुख मसचध सपिेहुँ िाहीं ॥

बेटा भरत! तुमने ेजो कुछ कहा सब सत्य है - राम से र्ुमुख होने ेपर स्वप्न में भी फकसी की मसद्धि नही ां हो सकती।

प्रश्न होता है फक राम के सन्मुख (सम्मुख) होना और र्ुमुख होना क्या है?

उत्तर है - मानना र्ुमुख होना है और जानना सन्मुख (सम्मुख) होना है।

लकडी यहद अपनेको डण्डा मानती है तो यही उसका लकडी से र्ुमुख होना है और यहद अपनेको लकडी जानती है, तो यही उसका सन्मुख (सम्मुख) होना है। इसी तरह अपने'म'ैं आत्मा को कुछ भी मानना यही भर्ान आत्मा 'म'ैं से र्ुमुख होना है और जब मानना छोड हदया, सर् शमान्यताओां का त्यार् कर हदया तो 'म'ैं का 'म'ैं रह र्या। यह मुझ आत्मा राम के सन्मुख होना है।

सिमुख होइ जिी मोहह जबहीं। जन्म कोहट अघ िासहहं ंिबहीं ।।

अनन्द्त जन्मों की अनन्द्त मान्यताएँ हैं। अतः, अनन्द्त पाप हैं। भर्ान इन सब पापों के तत्काल नार् का फकतना सरल और सुर्म उपाय बता रहे हैं फक जीर् ज्यों ही सन्मुख हुआ फक तुरन्द्त उसके सब पाप नष्ट हो र्ये? यह सरकारी र्ानि है, जो अटल है। र्ीता में भर्ान कृष्र् कहते हैं फक –

सि िधमान्द्पिररत्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।

अहं त्ािसिपािपेभयो मोक्षतयकयामम मा शुचाः ॥

(र्ीता अ.-18, श्लोक-66)

सर् शिमों का पररत्यार् करके मेरी र्र् में आ जा, फफर म ैंसर् शपापों से तुझे ेछुडा लूर्ां।

मम दरसि िल परम अिूपा। जिी पाि तिज सहज सरूपा ।।

मुझ आत्मा भर्ान के दर्नश का यही अनुपम फल है फक जीर् अपनेसहज स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। अमुक भार् जीर् का कृत्रिम स्वरूप है और 'म'ैं आमा हूँ, यह उसका सहज स्वरूप है। डण्डा, लकडी का कृत्रिम स्वरूप है और लकडी इसका सहज स्वरूप है। र्ुरुदेर् कहते हैं -

सकुचउँ ताि कहि एक बािा । अरघ िजहहं ंबुध सरबस जािा ॥

हे तात, म ैंएक बात बडे ेसकोच के सार् कह रहा हूँ। र् यह फक बुद्धिमान लोर् सर्स्र् जाता देखकर, आिा छोड हदया करते हैं। र्ुश्र् की आत्मा राम सर्स्र् हैं, जो सर् शका सर् शहै, सुख का सुख है। जजसके त्रबना

श ्रिक है,
जजसका अजस्तत्र् ही न रहे, र्ही उसका सर्स्र्र् होता है। लकडी डण्डे ेका सर्स्र्र् है। यह र्पता अर्ात्
माता अर्ात्श ्जन्द्म देने र्ाली है। आिार है, कारर् है, उसमें व्यापक है। इसी तरह भर्ान राम र्ेश्र् के सर्स्र्र् हैं।
देखो - भर्ान राम के जन्द्म के बाद महाराज दर्रर् के आाँर्न में दर्कशों की भीड लर् र्यी। उन दर्कशों
में नर्र के नर-नारी, बडे–बडे ेऋर्र्, मुनन तर्ा देर्ता भी सजम्ममलत र्े। महाराज दर्रर् के पुि राम को जो देखता
र्ा उन्द्हें अपनी र्ोद में लेकर देखा और दूसूरे की र्ोद में दर्नश करने दे हदया। दूसूरे ने उन्द्हें देखा, फफर अपनेपडोस
में खडे ेतीसरे को दर्नश करने दे हदया। जो भी उन्द्हें पातेर्,े र्ोडी देर दर्नश फकया, फफर र्े उन्द्हें अपनेपास नहीं
रखते र्,े दूसूरों को दे हदया करते र्े। यही हालत उस हदन, हदन भर रही।

सबसि दिा दीन्द्ह सब काहू। जेहहं ंपिाा राखा िहहं ंिाहू ।।

भर्ान राम सर् शके सर्स्र्र् है। इनको जो भी पातेर्े, र्ेउन्द्हें अपने पास नही ंरख सके, अन्द्य को देते
र्े, यही सर्सश दान है। र्ुरु र्र्ष्ठ जी कहतेहैं फक भैय्या भरत! राम सर् शके सर्स्र्र् हैं। यहद सर्स्र्र् की रिा के
मलए आिा का त्यार् फकया जाता है, तो बुद्धिमान जन इसे अनुधचत नही ंमानते। अतः, तुम र्िुघ्न के सहहत
जर्ंल में रहो तर्ा राम, सीता और लक्ष्मर् अयोध्या लौट जायाँ, यही उधचत हदखता है।

ुम्हि िकिा गििहु दोउ भाई। िररअहहं ंलखि सीय रघुराई ।।
सुति सुबचि हरषे दोउ भ्रािा । भे प्रमोद पररपूरि गिाा ।।

र्ुरुदेर् की इस र्ार्ी को सुनकर भरत और र्िुघुन हर्षतश हो र्ये, उनका हृदय आनन्द्द से भर र्या।

कहहहं ंभरिु मुति कहा सो कीन्द्हें। िलु जग जीिन्द्ह अमभमि दीन्द्हें ।
िकिा करउूँ जिम भरर बासू । एहह िें अचधक ि मोर सुपासू ।।
दोहा - अंिरजामी रामुमसय िुम्ह सरबग्य सुजिा ।
जौं िुर कहहु ि ािथ तिज कीस्जअ बचुिप्रिा ।।256||

महात्मा भरत कहते हैं फक हे नार्! भर्ान राम से मेरे हृदय की बात नछपी नहीं है। र्े ेतो अन्द्तयामशी हैं
और आप तो सर्जश हैं। म ैंछलरहहत र्ेनयपूर्कश कहता हूँ फक म ैंजीर्न भर जर्ंल में रहना पसदां कर लूँर्ा। यहद
आप जो कह रहे हैं, र्ह सत्य है तो, हे नार्! आप अपनी इस बात को र्ापस न लीजजये। इसे प्रमार्र्त करके
हदखाइये।

भरि बचि सुति देझख सिेहू । सभा सहहि मुति भए त्रबदेहू ।।
भरि महा महहमा जलरासी । मुति मति ठाहढ़ िीर अबला सी ॥

भरत के इन र्चनों को सुनकर रुरु समेत सबके सब र्देह हो र्ये। महात्मा भरत के हृदय में राम और रुरु के प्रनत जो प्रर्ाढ़ भजक्त है, र्ह ननष्ठा ही अर्ाह सार्र है और रुरुदेर् की बुद्धि अबला स्त्री के समान है, जो इस पार खडी है र्ह उस पार जाना तो चाहती है, पर कोई सािन दृजष्टर्ोचर नही ां होता। इसका भार् यह है फक रुरु मर्ष्ठ सोचते हैं फक म ैंयह क्या जानता र्ा फक भरत इस तरह कमर कसकर तैयार ही हो जायरें, यही अर्ाि जलरामर् (सार्र) है। अब इस उलझन को म ैंकैसे सुलझाऊँ। यही बुद्धि का अबलारूप है, क्योंफक र्ह तो र्चन को प्रमार्र्त करने के मलए कह रहा है।

भरि ुमुतिहह मि भिीर भाए । सहहि समाज राम पहहं ंआए ।।

मुनन मर्ष्ठ जी की अन्द्तरात्मा को भरत बडे ेप्रिय लर्े। अब इसी जरूनत में रुरुदेर् सबको लेकर भर्र्ान राम के पास पहुँचते हैं। यही ांपर पहली सभा महात्मा भरत की समाप्त होती है। अब यहाँ ँसे आर्े राम दरबार प्रारांभ होता है।

प्रभु प्रिामुकरर दीन्द्ह सुआसिु । बैठे सब सुति मुति अिुसासिु।।

भर्र्ान राम ने रुरु के चरर्ों की र्न्द्दना की और उन्द्हें सुन्द्दर आसन पर बैठाया। मर्ष्ठ जी देर्, काल और पररजस्र्नत का र्र्चार कर कहते हैं फक हे राम ! तुम िम,श नीनत और ज्ञान के सर्ज्ञश हो।

दोहा- सबके उर अन्द्िर बसहु जािहु भाउ कुभाउ ।
पुरजि जििी भरि हहि होइ सो कहहअ उपाउ ।।257।।

रुरुदेर् मर्ष्ठ कहते ेहैं फक हे राम ! तुम 'म'ै नाम से सबके हृदय में जस्र्त हो और हर एक के हृदय के भार् और कुभार् को जानते हो, इसमलए इस राम दरबार में पुरजन, जननी और भरत इन सबका हहत हो ऐसा ननर्यश दीजजये।

भाई! यह राम दरबार है। इसमें न फकसी की हार होती है, न फकसी की जीत और न यहाँ ँके फैसले में फकसी का अहहत होता है। यह ससांारी अदालत नहीांहै, जहाँएक की जीत और दूसरे की हार हो। एक सुखी होता हो, तो दूसरा दु:खी। ऐसा न्द्याय जीर् दरबार में कहाँ ँहो सकेर्ा। जीर् देर्में हार-जीत होती है, परन्द्तु राम देर् में, नारायर् देर् में, अध्यात्म देर् में न फकसी की हार होती है, न फकसी की जीत। त्रबना हार- जीत का फैसला र्ही कर सकता है, जो सारे चराचर का एक होर्ा, क्योंफक हार- जीत, रार्-द्रेर्, झर्डा-लडाई दो में होती है, मर्र भर्र्ान आत्माराम सारे चराचर में एक हैं तो एक में ये सब कहाँ? जहाँएक है, र्हाँ सर् शका अभार् है।

जासु िाम सुममरि इक बारा उिरहह िर भि मसन्द्िु अपारा ।
जिामु ुलि भि मसंिुं सुखाहीं करहु त्रबचार सुजि मि माहीं ।।

र्ंचार करो फक 'म' ै कौन हूँ, भर्मसन्दु क्या है? इस तरह र्ंचार करना ही नाम लेना है, र्ंचारों का जहाँ अन्दत हो जायेर्ा। बस, भर्मसन्दु ि सूख र्या। रार्् ने जीर्न में केर्ल एक ही बार राम का नाम मलया र्ा, "कहाँ राम रन हतौं पचारी" और फफर र्ह ससांार में लौटकर नहींआया। र्ह हमेर्ा राम को तपसी, र्स्त्रिबरही, राजकुमार आहद ही कहा करता र्ा। रार्् बडा र्द्र्ान और मर्् का भक्त र्ा।

उत्तम कुल पुलस्त्् किर िाी। मसि त्रबरंचच पूजेहु बहु भातूँी।।

भर्र्ान राम ने समुर के फकनारे जब मर्मलर्ां की स्र्ापना की तब उनने ेलक्ष्मर् को आज्ञा दी फक भाई! इस समय रार्् के समान महान र्द्र्ान और पडांडत र्श्र् में कोई नही ांहै। अतः, तुम लकांा में जाकर उन्दहें नम्रतापूर्कश प्रर्ाम कर हमारा सदेंर् कहो और उन्दहें यहाँमलर्ा लाओ, मर्जी का र्ह बडा भक्त है, हम मर्् मलर्ां की स्र्ापना उन्दहीं के द्र्ारा करायेंर्े।

तद्नुसार, लक्ष्मर् रामाज्ञा से र्हाँर्े और नम्रतापूर्कश उन्दहें प्रर्ाम कर राम का सदेंर् सुनाकर ले आये। भर्र्ान राम ने उन्दहें उनके चरर् छूकर प्रर्ाम फकया, जो फक ित्रिय यजमान का व्यर्हार है। पश्चात् ्उनके द्र्ारा मर्् मलर्ां की स्र्ापना हुई, अन्दत में सब काय शसम्पन्दन हो चुकने पर भर्र्ान राम ने उन्दहें पुनः प्रर्ाम फकया तब रार्् राम को युद् में र्जयी होने ेका आर्ीर्ादश देकर लकांा लौट आये। लकांा में आने ेपर उनके मत्रांमिडांल ने उन्दहें बहुत प्रकार से उलाहना देते हुए कहा फक र्हाँजाकर यह आपनेक्या फकया, आपही से तो उनका युद् होना है और आपने ही उन्दहें युद् में र्जय प्राप्त करने ेका आर्ीर्ादश हदया है। आपनेयह अच्छा नहीं फकया। इस पर रार्् ने कहा भाई! तुम लोर् इस बात को नहींसमझ सकते। अरे, पुरोहहत रार्् ने यजमान राम को आर्ीर्ादश हदया है, न फक राजा रार्् ने। पुरोहहत का कत्तव्शय होता है फक र्ह अन्दतःकरर् से यजमान का हहत चाहे। अतः, र्हाँमेरा र्ही कत्तव्शय र्ा और युद् तो राजाराम और राजा रार्् से होना है। अतः, राजा रार्् युद् करेर्ा। अस्तु, र्ुरु मर्ष्ठ फफर सोचते हैं फक म ैंस्र्ार्शर् कुछ का कुछ तो नही ांकह डाला, इस भार्ना से प्रेररत होकर र्े फफर कहते ेहैं-

आरि कहहहं ंत्रबचारर ि काऊ । सूझ जुआररहह आपि दाऊ ।।

ऐसा कहकर अपनेमसर का सारा भार उननेराम पर डाल हदया और समझने ेलर्े फक चलो अब भार हलका हुआ, तब राम कहते हैं -

सुति मुति बचि कहि रघुराऊ। िाथ िुम्हारेहह हाथ उपाऊ ।।

इस तरह ऐसा कहकर भर्र्ान राम ने रामार्तार का सम्पूर्् शभार र्ुरु महाराज के मसर पर रख हदया। राम उस भार को एक ममनट के मलए भी तो अपनेऊपर रखते, र्े ेकहतेहैं फक हे र्ुरुदेर्! उपाय तो आपही के हार्ों में है, मुझे आदेर् दीजजये मेरे मलए क्या आज्ञा है।

सब कर हहि रख राउरर राखे । आयसु फकएूँ मुहदि िुर भाषे।।

हे रुुरुदेर्! तुम्हारा रुख देखकर काम करनेमें ही हम सबका कल्यार् है।

प्रथम जो आयसुमो कहुँ होई । माथेमाति करौं मसख सोई ।।

हे नार्! सबसे पहहले मुझेआज्ञा होनी चाहहए, बाद में फफर सबके मलए हो।

कह मुति राम सत्य ि्म्ह भाषा । भरि सिहैं त्रबचार ि राखा ।।

रुुरुदेर् कहतेहैं, भैय्याराम! तुम जो कहते ेहो सब सत्य है, परन्द्तु भरत की रुुरु भजक्त ने मुझमें र्ेचार की रुुजांाइर् नहीांरखी।

िहह ि कहउूँ बहोरर बहोरी । भरि भगति बस भइ मति मोरी ।
मोरे जाि भरि रचच राखी । जो कीस्जअ सो सुभ मसि साखी ।।

हे राम ! भरत की रुुरु भजक्त ने मेरी बुद्धि को भोरी कर हदया है, इसमलए म ैंबार- बार यही कहता हूँ फक भरत के र्ेनय को आदर हदया जाये, फफर र्ेचार फकया जाये और ऐसा न्द्याय हदया जाये फक जजसको सिु, लोक और राजनीनत सबका समर्नश ममले, जो श्रुनत और मसद्ान्द्त का सार हो, ननचोड हो।

दोहा - भरि त्रबिय सादर सुतिअ कररअ त्रबचार बहोरर ।
करब साधुमि लोकमि ि्पिय तिगम तिचोरर ।।258।।

ऐसा कहकर भरत की पूरी-पूरी जजम्मेदारी रुुरुदेर् अपने मसर पर ले लेते हैं।

जीर् की अदालत साढ़े तीन हार् की होती है, क्योंफक र्ह साढे तीन हार् की देह को ही अपना स्र्रूप मानता है। तब जजसकी जजतनी बडी मान्द्यता, उतनी ही बडी उसकी बुद्धि, पर यहाँ तो व्यापक, असीममत राम के दरबार का फैसला होना है, जो व्यापक फैसला होर्ा। अब इस भार को कोई भी एक ममनट के मलए भी अपनेमसर पर नही ांरखना चाहता, क्योंफक यह भार सारे रामार्तार का भार है। अतः, यह सािारर् भार तो है नहीं। भरत रुुरु के मसर पर, रुुरु राम के मसर पर और राम फफर रुुरुदेर् के मसर पर इस तरह बोझ यहाँ से हाँफेंका जा रहा है।

गुर अिुरागु भरि पर देखी । राम हृदय आिंदु ुत्रबसेषी ।
भरिहहं ंधरम धुरंधर जािी। तिज सिेक ति मिास बािी ।।
बोले गुर आयस अिुकूला । बचि मंजु मृदु ुमंगल मूला ।
िाथि सपथ वपिु चरि दोहाई। भयउ ि भुअि भरि सम भाई ।।

जब रुरु ने भरत की सारी जजम्मेदारी अपने ऊपर ले ली और इसको राम ने देखा फक रुरुदेर् का अनुरार्
भरत पर है, तब भर्रान राम ने भरत को मन, र्चन और कम शसे अपना भक्त जाना और रे् आनन्द र्भोर हो
कहने ेलरे् फक हे रुरुदेर्! म ैंआपकी और र्पता के चररों की र्र् खाकर कहता हूँ फक भरत के समान भाग्यराली
र्श्र् में कोई नही ांहै। जजस पर रुरु का प्रेम हो उससे बढ़कर ससाांर में कौन भाग्यराली होरा?

जेगुरपद अंबुज अिुरागी। ि लोकहुँ बेदहुँ ब्र भागी।
राउर जापर अस अिुरागू। को कहह सकइ भरि कर भागू ।।

मर्ष्य में रुरु के प्रनत नारायर् भार् नही ांहो पाता, ई इसमलए फक ई रुरु को अपनेही समान फिया और
व्यर्हार करते देखता है। अतः, मर्ष्य के हृदय में उनके प्रनत नरभार् ही होता है और रुरु में त्रबना नारायर् भार्
आये मर्ष्य का कल्यार् नही ांहो सकता, क्योंफक कल्यार् तो नारायर् से ही होता है, नर से नही।ां

भर्रान कांराचाय शके आश्रम में कुछ र्द्रान मर्ष्यमांडली रे्दान्द्त पढ़ा करते रे्। उनमें उनका एक
अपढ़ मर्ष्य िोटक नाम का भी रा्, जो पढ़ा तो नही ांरा्, परन्द्तु उसके हृदय में प्रराढ़् रुरु ननष्ठा री् ई मन, र्चन
और कम शतीनों से ननत्य श्रद्िापूर्कश रुरु की हर तरह की सेरा् फकया करता रा् और ननत्य इन र्द्याधर्यशों के
समूह में बैठकर रुरुदेर् के श्रीमुख से रे्दान्द्त सुना करता रा्। एक हदन ननयत समय पर भर्रान कांराचाय शके
पास मर्ष्य मांडली रे्दान्द्त पढने ेआ पहुँची। उस समय िोटक रुरुदेर् के सब कपडों को िोनेके मलए नदी में र्या
हुआ रा्। उन र्द्याधर्यशों के समूह में िोटक को न देखकर रुरुदेर् उसकी प्रतीिा में मर्ष्यों को पाठ प्रारांभ न कर
चुपचाप बैठे रहे। जब मर्ष्यों ने बडी देर तक उन्द्हें चुपचाप बैठे देखा तो उन्द्होंने पाठ प्रारांभ करने के मलए रुरुदेर् से
र्नयपूर्कश आग्रह फकया। इस पर भर्रान कांराचाय शने कहा फक िोटक कहाँ ँहै उसे भी आ जाने दो, फफर पाठ
प्रारांभ हो। इस पर सब मर्ष्यों ने एक सार् कहा भर्न्! ्िोटक जो अपढ और मूख शहै, उसकी बुद्धि रे्दान्द्त ऐसे
सूक्ष्म र्र्षय को समझ सकनेमें समर् शनही ांहै। अतः, उसके कारर् हमारा समय नष्ट न कीजजये और कृपाकर
पाठ आरांभ कीजजये। मर्ष्यों के इस अनुरोि पर भर्रान कांराचाय शपाठ आरांभ करने राले ही रे् फक सामने से
िोटक रुरुदेर् के कपडों को िोकर नदी से आता हुआ दीख पडा। रुरुदेर् ने कहा, ई देखो िोटक आ रहा है, उसे आ
जानेदो। ई आया और िुले हुए सब कपडों को सूखने डालकर तुरन्द्त रुरुदेर् के सम्मुख उपजस्त हो उनके
श्रीचररों की र्न्द्दना कर, इन मर्ष्यों के एक ओर चुपचाप बैठ र्या, तब रुरुदेर् ने उसे अपनेपास बुलाकर उससे
कहा बेटा िोटक ! तुम्हारे ये सहपाठी तुम्हें अपढ़ और मूख शकहतेहैं। अतः, तुम अपनी मूखतशा का कुछ पररचय तो
इन्द्हें दे दो। ऐसा कहकर रुरुदेर् ने उसके मसर पर हार् फेरा। बस, फफर क्या रा् ई अपढ और मूख शिोटक रे्दान्द्त
के रूढ़ से रूढ तत्त्रों को रे्दरारी् (ससांकृत) में ही िारा प्रराह बोलने लरा् और घण्टों बोलता रहा, जजससे देखकर
अन्द्य मर्ष्य र् शके आश्चय शका हठकाना न रहा।

यही िोटक आरे् चलकर भर्रान कांराचाय शके चार प्रिान मर्ष्यों में से एक हुआ और इनका नाम
िोटकाचाय शहुआ।

भैय्या! यह रुरु पर नारायर् दृजष्ट रखने के इनतहास का ज्वलन्द्त प्रमार् है। भर्ान ब्रह्मा यहद फकसी पर प्रसन्द्न होते हैं तो उसको रे् सब कुछ दे देते हैं, परन्द्तु अपना ब्रह्मपद अर्ात् श ्ससाांर की उत्पत्त्त करनेकी जक्त नही ांदेते। भर्ान र्ष्र्ु यहद फकसी पर प्रसन्द्न होतेहैं तो अपने भक्त को सब कुछ दे डालते हैं, परन्द्तु अपना

र्ष्र्ु प्पद्स यानारर्त्के पालन करने ेकी जक्त फकसी को नही ांदेते। ऐसे ही भर्ान कांर अपनेभक्त को सब कुछ भले दे दें, परन्द्तु अपना कांर पद याने सृजृष्ट के सहांार करने की जक्त फकसी को भी नहीांदेते। परन्द्तु, रुरु तो जजस पर रे् प्रसन्द्न होतेहैं, उसे अपना स्र्रूप ही बना लेते हैं। एक हदया जलाया, फफर उस हदये से दूसूरा हदया जलाया, उस दूसूरे से तीसरा, तीसरे से चौर्ा और चौरे्से पाँचर्ाँ हदया जलाया र्या। इस तरह परम्परा चल पडी। इसी तरह रुरु ने एक मर्ष्य को अपना स्र्रूप बना मलया तो फफर र्ह दूसूरे को, दूसूरा तीसरे को, तीसरा चौरे्को, चौर्ा पाँचर्ें को, आत्मज्ञान देते (अपना स्र्रूप बनाते) चला जाता है। यह परम्परा चल पडती है।

लझख लघु बंधु बुद्धध सकुचाई। करि बदि पर भरि बाड़ई ।
भरि कहहहं ंसोइ फकएूँ भलाई। अस कहह राम रहे अरगाई ।।

राम कहते हैं फक छोटा भाई जानकर भरत के मुँह पर उसकी बडाई करने में मेरी बुद्धि सकुचाती है। फफर भी म ैंतो यही कहूँर्ा फक भरत जो कुछ कहे र्ही करने में भलाई है। छुर हृदय अपनी प्रर्ांसा सुनकर प्रसन्द्न होता है और सन्द्त हृदय अपनी प्रर्ांसा सुनकर मसकुड जाता है।

ोच को त्यार्कर राम ने सारा भार भरतजी पर डालकर कहा फक भाई भरत ! प्रसन्द्न मन से सकां साफ-साफ कहो फक तुम क्या चाहते हो। म ैंर्ही करने को तैयार हूँ। तब इस प्रसर्ां पर अयोध्यार्ामसयों का हृदय कमल तो र्खल उठा, परन्द्तु देर्तार् धचन्द्ता और र्ोक में डूब र्ये फक ऐसा न हो फक भरत प्ेरेमर् राम को अयोध्या न लौटा ले जाय,ें जजससे देर्ताओां का अहहत हो जाये। देखो, अब र्ीता क्या रांर् लाते हैं। भरत कहते हैं फक हे नार्! सबका स्र्ार् शतो इसी में है फक भर्ान अयोध्या चलें और इससे करोड रुना स्र्ार् शतो इसमें है फक आपकी आज्ञा को मसर पर िारर् कर स्र्ीकार फकया जाय। भर्ान, जैसा उधचत समझें, र्ही हमारे कल्यार् का कारर् होर्ा।

भर्न्!् म ैंनतलक का सब साज सजा लाया हूँ, भर्ान की जैसी इच्छा हो हमें र्ही करना है। हमें यही करना है, ऐसा हम नहीां कह सकते।

प्रर्म बात तो यह है फक सरकार मुझे ेऔर र्िुघ्न को र्न भेज दें और आप सब अयोध्या चले। दूसूरा, यह फक लक्ष्मर् की जर्ह म ैंआपकी सेर्ा में रहूँ और लक्ष्मर्, र्िुघ्न के सार् अयोध्या लौट जायँऔर तीसरी, र्नय यह है फक हम तीनों भाई र्न में जायें और माता सीता के सार् आप अयोध्या लौट चलें। ये तीन प्रस्तार् महात्मा भरत ने भर्ान राम के समि रखा अन्द्यर्ा सरकार की जैसी इच्छा, जो सब प्रकार से कल्यार्प्रद ही होर्ा। इसमलए -

जेहह त्रबचध प्रभु प्रसन्द्मि होई। करि सागर कीस्जअ सोई ।।

भरत ऐसे कैसे कह सकतेर् फक भर्र्ान! आप अयोध्या ही चलें, क्योंफक क्या र्े नहीं जानते र्े फक रामार्तार दुष्ुटों के र्र्नार् के मलए, पृथ्र्ी का भार उतारनेऔर भक्तों की रि के मलए ही हुआ है। इसमलए, ऐसा साफ-साफ नहीं कह सकतेर् क्योंफक -

भरिहहं ंजाति राम पररछाहीं ।।

अन्द्त में र्े कहते हैं फक हे नार्!

जेहह त्रबचध प्रभु प्रसन्द्मि होई। करि सागर कीस्जअ सोई ॥

इस तरह भरत ने अपनी इच्छा भर्र्ान राम के सन्द्मुख साफ-साफ रख हदया और फफर भर्र्ान की इच्छा को ही प्रिान बताकर हाँसे अलर् हो र्ये, यही सभा चातुरी है फक सब कुछ कहकर अपनेको हाँ से अलर् कर मलया, महात्मा भरत अन्द्त में फफर कहते हैं फक हे नार्!

दिं दीन्द्ह सबु मोंहह अभारू । मोरें िीति ि घरम त्रबचारू ।
कहउँ बचि सब स्िास्थ हहि । रहि ि आरि के चचि चिू ॥
उिर देइ सुति स्िमिम रजाई । सो सेिकु लझख लाज लजाई ।
अस म ैंअिगुि उदचध अगाधू । स्िमिम सिेहँ सराहि साधू ू॥
अब कृपाल मोहह सो मि भािा। सकुच स्िमिम मि जाइँ ि पािा।
प्रभु पद शपथ कहउँ सति भाऊ । जग मंगल हहि एक उपाऊ ॥
दोहा- प्रभु प्रसन्द्मि सकुच िस्ज जो जेहह आयसु देब ।
सो मसर घरर-घरर करहहं ंसबु ुममहटहहं ंअिट अिरेब ||269||

महात्मा भरत की इस र्ार्ी को सुनकर देर्ता हर्षषतश हुए और सािु-सािु की सराहना करते हुए उन्द्होंने पुष्पर्ृजष्ट की, अयोध्या ननर्ासी असमजांस में पड र्ये फक देखें अब श्रीराम क्या कहतेहैं? तपस्र्ी तर्ा र्नर्ासी लोर् भर्र्ान के र्न में रहने की ही आर्ा से मन में परम आनजन्द्त हुए। अभी ननर्यश कुछ नहीं हो पाया र्ा, सकोची श्रीराम चुप ही र्े ेफक इतने ेमें ही -

जिक दिू िेहह अिसर आए। मुति बमसकठ सुति बेचग बोलाए ।।

ठीक, उसी समय महाराज जनक के दूत सभा में आये, मर्षाचार के बाद दूत राम का देर् देखकर बडे े दुःखी हुए, जब उनसे जनकपुरी की कुर्लता पूछी र्ी तब र्े कहने ेलर्े, महाराज! हाँकी कुर्लता तो महाराज दर्रर् के सार् ही चली ई।

महाराज दर्रर् की मृतूयु का समाचार पातेही महाराज जैसा फक उनका नाम र्देह है, र्देह हो र्ये।
इसके बाद अयोध्या में र्ुप्तचर भेजकर उन्द्होंने हाँका समाचार जाना, तब उन्द्हें मालूम हुआ फक ब्राह्मर् मडांल, प्रजा मडांल, मत्रांमिडांल, ऋर्षि मडांल और राननयों के मडांल राम के पास धचिकूट चले र्ये हैं और अयोध्या सूनी पडी है, तब र्े अपने मत्रांमिडांल और र्द्रान मडांल से सलाह करके इस ननर्यश में पहुँचे फक धचिकूट ही चला जाये, तब र्े तुरन्द्त हाँसे दुघुडडया मुहूत शसािकर धचिकूट के मलए खाना हो र्ये। र्े ेपास में आ ही चुके हैं। हम इसकी सूचना देने ही यहाँ ाँआये हैं। महाराज जनक के आर्मन को सुनकर अयोध्यार्ासी बडे ेप्रसन्द्न हुए। र्े सोचनेलर्े फक र्पता और ससुर का दजाश एक ही है, अब भर्ान राम को अर्श्य र्े अयोध्या लौटनेका सांकेत करेंर्े, जजससे हमारे दु:खों का अन्द्त हो जायर्ा।

महाराज जनक र्ोडी दूरू स्फहटक मर्ला के पास आकर दण्डर्त् ्करके पैदल चलने लर्े और श्रीराम, भाई, मिाी, र्ुरु और पुरर्ामसयों को सार् लेकर जनक की अर्ुर्ानी करनेचले।

श्रीराम के दर्नश की लालसा और उत्साह के कारर् फकसी को भी रास्तेकी कर्ाट और क्लेर् जरा भी नही ांहै, क्योंफक मन तो श्रीराम और जानकी के पास है और त्रबना मन के र्रीर के दु:ख-सुख का अनुभर् कौन करेर्ा? जनक जी इस प्रकार चले आ रहे हैं, समाज समेत उनकी बुद्धि पे्रम में मतर्ाली हो रही है। दोनों दल जब पास में आये तो सब के सब पे्रम रस में डूब र्ये। फफर आदरपूर्कश आपस में ममलने लर्े।

जनक जी ने र्मष्ठ आहद अयोध्यार्ासी मुननयों के चरर्ों की र्न्द्दना की और श्रीरामचन्द्र जी ने जनकपुर से आये हुए ऋर्षियों, र्ातनन्द्द आहद को प्रर्ाम फकया, फफर भाइयों सहहत श्रीराम, राजा जनक जी से ममलकर उन्द्हें समाज सहहत अपनेआश्रम को मलर्ा चले, मानसकार उस समय धचि खीचांते हैं, यहाँ से जनक दरबार प्रारांभ होता है।

दोहा- आश्रम सागर सांत रस पूरि पािि पाथ ।
सेि मिहुँ करित सरित, मलएँ जाहहं ारघुिाथु ।।275।।

भर्ान राम जहाँ ाँननर्ास करते हैं, र्ह आश्रम सार्र के समान है, हाँ र्ाांत रस का जल भरा हुआ है। र्ह पूर् शभरा हुआ है, लबालब है, जो पार्न है, अर्ात्श ्पर्र् है, पार् का अर् शभी समुर ही होता है। महाराज जनक की सेना, सररत अर्ात्श ्नदी के समान है, जहाँकरुर्ा का जल भरा हुआ है। इस करुर्ा नदी को श्रीराम भर्ीरर् के समान आर्े-आर्े चलते हुए अपनेननर्ास आश्रम सार्र में ममलानेले जा रहे हैं। अब भार् समझो -

यह आश्रम धचिकूट है, कूट का अर् शरव्य होता है, जहाँ ाँपर अनेक प्रकार के धचि हों, उसे धचिकूट कहते हैं, इस धचत्त के अन्द्दर अनन्द्त धचि हैं, इसमलये धचत्त ही धचिकूट है।

दोहा- रामकथा मंदाफकिी चचिकूट चचि चार ।
िुलसी सुभग सिेह बि मसय रघुबीर त्रबहारू ।।31।।

इस धचिकूट में श्रीराम आत्मा और र्ानांत सीता त्रबहार करते हैं, जहाँपर श्रीराम हों हाँपर अर्ाांनत का क्या काम?
अब अनुभर् जर्त् ्में आओ

सकल दृश्य तिज उदर मेमल

इस सम्पूर् शदृश्य जर्त् ्को ननज उदर अर्ाशत् ्ननज स्रूप भर्ान आत्मा में र्लीन करो-ननश्चय करो फक- **स एिाधस्ािि उपररकटात्स-पश्चात्स पुरस्ात्सि दक्षक्षणिाः स उत्तरिाः स एिेदं सिमिमति । अहमेिाघस्ादिहमुपेररकठादहं पश्चादहं दक्षक्षणिाोऽहमुत्तरिोऽहमेिदं सिमिमति ।** अर्ात्श ्आत्मदेर् आत्मै र्ास्तादात्मो पररष्टादात्मा पश्चादात्मा पुरस्तादात्मा दक्षिर्त आत्मोत्तरत आत्मैर्ेद सर्मशमनत । र्ह ही नीचे है, र्ह ही ऊपर है, र्ह ही पजश्चम है, र्ह ही पूर् शहै, र्ह ही दक्षिर् है, र्ह ही उत्तर है, र्ह ही सब कुछ है।

'म'ै ही नीचे, 'म'ै ही ऊपर, 'म'ै ही पजश्चम, 'म'ै ही पूर्,श 'म'ै ही दक्षिर्, 'म'ै ही उत्तर आत्मा ही सब कुछ है।

पूि िसमाधेरझखलं त्रबचचन्द्यैदोङ्कारमिां सचराचरं जगि् ्।
ििदािच्यं ्प्रणिो हह बाचको विभाव्यैऽज्ञिाशान्द्बोधिाः ॥

(अ.रा. उत्तर काां. 5 सर् श48)

इस जस्नत में अब जो प्रपचांाभार् का अनुभर् हो रहा है, र्ही र्ानांत रूपी जल से पूर् शसार है। इसका अनुभर् धचत्त में हो रहा है, यही धचिकूट है, इसका जो अनुभर् कर रहा है र्ह है राम, जो हाँननर्ास करते हैं। अब इस प्रपचांाभार् में र्ानांत का अनुभर् करो, क्योंफक अर्ानांत तो प्रपचां में है, अब जब इसका अभार् हो र्या तो र्ानांत रस भरपूर हो र्या यही श्रीराम का आश्रम है।

कोई भी र्कल्प उठे, स्फुरर्ा उठे, र्दद, स्पर्,श रूप, रस, र्ां कुछ भी हो, 'अहमेर्' 'अहमेर्' 'म'ै ही हैं, 'म'ै ही हूँ यही स्मरर् करो, फफर तो इस र्ानांतरस से भरपूर, आश्रम का न आहद है, न मध्य है, न अन्द्त है, न इस पार है, न उस पार है।

अत्यन्द्त र्ैराग्य की फलानुभूनत ही र्ानांतरस से पूर् शसार है यही भर्ान राम का आश्रम है। भर्ान भाष्यकार आहद र्ुरु र्कांराचाय शकहतेहैं फक अत्यन्द्त र्ैराग्य का फल है ननर्र्कशल्प समाधि और अत्यन्द्त र्ैराग्य उसे कहते हैं फक भर्ान आत्मा के मसर्ा फकसी के भी अजस्तत्र् को स्ीकार न करना इसका फल है ननर्र्कशल्प समाधि और इस ननर्र्कशल्प समाधि का फल है दृढ़बोि और इसका फल है ननत्य सुख की प्राजप्त तर्ा समस्त बन्द्िनों से छुटकारा।

पूि िसमाधेरझखलं त्रबचचन्द्यैि, दोंकार मिां ्सचराचरं जगि् ्।

ि्दि बाच्यंप्रणिो हह ि ाचको, विभाव्यैि ि्ञिाशान्द् बोधिाः ।।

(राम र्ीता अध्यात्म रामा.)

समाधि के पहले यह अनुभर् करें फक 'अहमेर्' 'अहमेर्' 'म' ैं ही हैं, 'म' ैं ही हूँ, यही अत्यन्द्त र्ैराग्य है, परम

र्ैराग्य है।

कहहअ ि ा सो परम त्रबरागी। ि ृ सम मसद्चध ि ीति गिु त्यागी ।।

अत्यन्द्त र्ैराग्यर्ान को ही ननर्वकशल्प समाधि मसद्धि होती है, अब यहाँ ँर्ाांनत ही र्ानांत है। अरे! जब प्रपचां ही न रहा, तब र्ानांत ही तो रह र्यी। अत्यन्द्त र्ैराग्य का फल प्रपचां का नार् नही,ां प्रपांच का बाि है। डण्डे ेका नार् नही,ां डण्डा लकडी ही है, यह डण्डे ेका बाि है, इसी तरह आत्मबोि के त्रबना भी यह ऐसे ही हदखता है और बोि के बाद भी ऐसे ही हदखता है, मर्र बोिर्ान की दृजष्ट में प्रपचां का बाि है और अबोिर्ान की दृजष्टमें प्रपचां ससांार है।

जब तक जर्त् ्प्रपचां हदखाई दे रहा है, तब तक 'अहां' के सार् 'एर्' लर्ा दो और जब प्रपचां न भासै तब एर् कहोर्े फकसको? 'अहां' ही रह र्या। मुजक्त रूपी अट्टामलका पर पहुँचने ेके मलए मुमिु ुरूपी पिी के दो पांख होना चाहहए, एक र्ैराग्य और दूसूरा ज्ञान। र्रीर नहीां'म' ैं आत्मा हूँ, इसमें जीर्भार् का अभार् हो र्या और 'अहमेर्' इसमें जर्त् ्भार् का अभार् हो र्या। अब आ जाओ प्रसांर् पर-तो भैय्या! अत्यन्द्त र्ैराग्य की फलानुभूनत की अनुभूनत, र्ातांरस का अनुभर् कौन कर रहा है? उत्तर है 'म' ैं भर्र्ान आत्मा कर रहा हूँ और अर्ान्द्त रस की अनुभूनत ? उसे भी 'म' ैं आत्मा ही करता हूँ। यहाँ न धचत्त, न र्र्षय, अहमेर्। जो 'में' आत्मा ननर्वकशल्पता का अनुभर् करता हूँ, र्ही 'म' ैं आत्मा सर्वकल्पता का भी अनुभर् करता हूँ, तर्ा इस ननर्वकशल्पता और सर्वकल्पता दोनों से परे 'म' ैं आत्मा हूँ। यही राम का आश्रम है।
अब राम का अनुभर् करो-

जहाँ ँहो, जैसे हो, जो हो, सोई रहो। न आँख मूदाो, न खोलो। अरे! जब आँख ही नहीां'अहमेर्' तब क्या मूदाोर्े और खोलोर्े। न देह है, न इजन्द्रय है और न ससांार है। बस, यहाँ ँपर इनडायरेक्ट 'अहमेर्' इसके बाद राम का दर्नश होता है। 'अहमेर्' समाधि में ननर्वकशल्पता आ ई। अब, एर्-फेर् सब ननकल र्या, इनडायरेक्ट सािन पर ननहहत है और डायरेक्ट सन्द्त कृपा पर ननभरश है। प्रपचां हदखता है, तब अहमेर् और जब अहां को देखा, तो प्रपचां कहाँ ँरहा? श्रीराम कहते हैं फक -

अत्यंि सूक्ष्मंपरमाथ ि त्त्ि ि स्थूल दृकटया प्रतिपत्तु ुमहिति ।
समाचधिात्यन्द्त्यसु सूक्ष्मिृत्तया रकटाव्यमायै रतिशुद्चधबुद्चधमभाः ।।

समाधिननष्ठ पुरुर्ष को ही आत्मदर्नश हो सकता है और आत्मानुभूनत में प्रपचांानुभूनत की अभार्ानुभूनत है। अर्ात्श,् मुझ आत्मदेर् में प्रपचां नाम की चीज ही नही ांहै। अब इस अर्स्र्ा में न तो ननर्वकशल्पानुभूनत है और न

सर्र्कल्पानुभूनत है। मसफश अनुभूनत ही अनुभूनत है। यही श्रीराम का दर्नश है। इस सिान में जो ननर्र्कशल्पता आ र्यी इस ननरपेि ननर्र्कशल्पता का जो अनुभर् कर रहा है, र्ही भर्र्ान राम है। यहाँ ँजो र्ानांत व्याप्त हो र्यी यह सीता है। यह ननर्र्कशल्पता है, यह सर्र्कल्पता है, ऐसी र्र्ेकनी जो बुद्धि है, र्ही लक्ष्मर् है। धचत्त जो जरूर हो र्या यही धचिकूट है। यह जो कर्ा हो रही है, र्ही मदांाफकनी र्ंा है। यह जो परम तत्र् है, इसके प्रनत जो ननष्ठा है, र्ही धचिकूट पर्तश है और उसी में सीताराम त्रबहार करते हैं। इस उत्तम सत्यानुभूनत के बाद चलो अब र्ोडा चाल-चलन बनारें।

बोरनत ग्यिा त्रबराग करारे। बचि ससोक ममलि िद िारे ।
सोच उसास समीर िरंगा । धीरज िट िरबर कर भंगा ।।

अब र्ह जनक की सेना रूपी करुर्ा नदी, आश्रम रुपी सार्र में ममलने चली तो यह करुर्ा नदी ज्ञान और र्ैराग्य रूपी दोनों कर्ारों को डूबातेचली जा रही है। ममधर्लापुरर्ामसयों के र्ोक भरे र्चन फक अयोध्यापनत का ननिन हो र्या है, अयोध्या सूनी है, श्रीराम र्न आ र्ये हैं, राजमसहांासन खाली पडा हुआ है। इस जरूनत में कोई रिुराजा हाँ चढ़ाई न करदे। हा र्ीिाता ! क्या होने र्ाला है अर्ा कैसा होर्ा, यही नदी और नाले इस करुर्ा नदी में आ-आकर ममल रहे हैं। उनके मुख से धचन्द्ता और र्ोक में डूबे हुए जो लम्बी-लम्बी सासें ननकल रही हैं, यही उस बढ़ी हुई नदी की तरांरें हैं, जो फकनारे के िीरज रूपी र्ृिों को उखाड-उखाडकर फेंकने र्ाली हैं।

विषम विषाद िोरनत धारा। भय भ्रम भर्ैर अबि िअपारा ।
केर्ट बुध विद्या बड़ िाा। सकहहं ंि खेइ ऐक िहहं ंअिा ।।

भयानक र्ोक ही उस नदी की तेज िार है, उसके मन में जो तरह-तरह के तकश और भय हो रहा है, यही उस नदी के असख्यांय भँर हैं। बडे-बडे र्र्द्ान, ऋर्ष, मुनन इस भयांकर बढ़ी हुई नदी से पार करने र्ाले केर्ट के समान हैं। उनकी बुद्धि ही नार् है। इस नार् पर चढ़कर पार हो जाने की फकसी की हहम्मत नही ांहो रही है।

बिचर कोल फकररा त्रबचारे । थके त्रबलोफक पचथक हहयूँ हारे ।
आश्रम उदचध ममली जब जाई। मिहूँ उठेउ अंबुचध अकुलाई ।।

र्न में र्र्चरने र्ाले र्र्चारे कोल फकरात ही यािी हैं, जो उस नदी को देखकर हृदय में हार मानकर र्क र्ये हैं, यह करुर्ा नदी जब आश्रम सार्र में जाकर ममली तो मानों र्ह समुर अकुला उठा।

सोक त्रबकल दोउ राज समाजा। रहा ि ग्यिाु ि धीरजु लाजा ।
भूप रूप गिु सील सराहीं । रोिहहं ंसोक मसन्द्धु अिगाहीं।।

दोनों राज समाज र्ोक में व्याकुल हैं। फकसी को न ज्ञान रहा, न िीरज और नत लाज ही रही। राजा दर्रर् के रूप, र्ुर् और र्ील की सराहना करते हुए सब रो रहे आज हैं और र्ोक सार्र में डूब रहे हैं।

सोरठा -

फकए अममि उपदेस जहूँ िहूँ लोगन्दह मुतिबरन्दह ।
धीरजु घररअ िरेस कहेउ बमसकठ त्रबदेह सि ।।

(सो. 276)

मुननयों ने लोरों को अनेक प्रकार से उपदेर् हदये और र्मष्ठ जी ने र्देहराज जनक जी से कहा फक हे राजन! आप िैय शिरर् कीजजये।

जासु ग्यािु रत्रब भि तिमस िासा । बचि फकरि मुति कमल त्रबकासा।
तेहह फक मोह ममिा तिअराई। यह मसय राम सिेह बड़ाई ।।

महाराज जनक का ज्ञान सूयशर्त् ्प्रचण्ड प्रकार्ीन है। उनके र्चनरूपी फकररों के द्वारा बडे–बडे ेऋर्ष, मुननयों का भी हृदय कमल खर्ल उठता है। ऐसा जजनका हो ज्ञान प्रकार् है, ऐसे र्देहराज आत्मननष्ठ राजा जनक र्देहमुक्त को क्या मोह ममता हो सकती है, जो रो रहे हैं? नहीीं! अरे! यह तो मसयाराम के र्ुद्ि प्रेम की महहमा है। मनुष्य को ज्ञान मसखाना पडता है, परन्दतु परु–पिी को ज्ञान नही ांहदया जाता फफर भी रे् ेज्ञानी हो जाते हैं, कारर् यह है फक जहााँपर एक भी ब्रह्मननष्ठ रह जाता है, हााँके र्ायुमडांल में सन्दत भार्ना के परमारु् उसके आसपास ननत्य व्याप्त रहते हैं। र्ौतम बुद्ि ने जजस स्र्ल पर अहहसाां का तप फकया र्ा, हााँ के रहनेर्ाले सभी हहसांक परु् सतां भार्ना से पररपूर,श रार्-द्रेर्ष से रहहत हो, र्न में र्चरते रहते रे्। कार्भुसुण्डी के आश्रम में योजन भर तक काम, िोि, लोभ, मोह का नामोननर्ान तक नही ांर्ा। प्राचीन और अर्ाचशीन सन्दत महात्माओांके आश्रम में रहने र्ाले कीट-पतांर् तक आपस में रार्-द्रेर्ष को भूलकर सब एक सार् एक रूप में रहते हैं। इसी प्रकार महाराज जनक इतने ेर्देहमुक्त रे् ेफक इनके सम्पकश में रहने ेर्ाले कीट, पतर्ां, परु्,ु पिी सभी ज्ञानी रे्। उनके यहााँ ेतोता, मैना भी ज्ञानी रे्,े जजनके पास ज्ञान प्राप्त करने के मलए महात्मा व्यास के पिु महार्रक्त र्ुकदेर् को भी जाना पडा र्ा। इसी तरह बडे– बडे ेयोरी, ज्ञानी उनके पास आत्म सािात्कार के मलए जाया करते रे्,े ऐसे ज्ञानी जनक की आाँखों से राम और सीता को मुननर्ेर् में देखकर अश्रुपात होने लर्े, तो यह मोह जननत कम शनहीीं है, रे् े सीता-राम के र्ुद्िु प्रेम में रो रहे हैं, न फक मोह ममता में। यहद ज्ञानी को भी मोह हो र्या तो -

ररति शोकमात्मत्रवि् ्विद्रीि शोक मोहोजहाति ।।

यह श्रुनत फकसकी र्र् में जायेर्ी? राम के र्नर्ास को सुनकर जब भरत अत्यन्दत व्याकुल और दु:खी हुए, तब कौर्ल्या उन्दहें िीरज देते हुए कहती है फक-

त्रबधुत्रबष चिुि हहमु आगी। होइ बाररचर बारर त्रबरागी ।।
भएँ ग्यािु बर ममटै ि मोहू। िुम्ह रामहहं ांप्रतिकूल ि होहू।

इससे यही मसद्ध होता है फक ज्ञानर्ान को स्प्न में भी मोहनहीं हो सकता।

ससांर, स्र्ी, पुि, िन, पररर्ार के मलए रोता है, परन्द्तु भर्र्ान राम के मलए उनके पे्रम में रोना ही, सचा रोना है क्योंफक -

रामहहं ंकेिल पे्रम वपयारा, जानि लेहु जो जानिहारा ।।

परन्द्तु, पे्रम तो बाहर की चीज नही ंहै, यह तो भीतर की चीज है, जैसे कछुआ अपने अण्डे ेका भीतर से मन ही मन धचन्द्तन करते रहता है, उसी प्रकार जब धचन्द्तन होनेलर्े, तब समझना फक यह राम पे्रम है।

जाहह ि चाहहअ कबहुँ कछु, िुम्ह सि सहज सिेहु ।।

जजस स्नेह में र्ृधि ननर्षि हो र्ह बनार्टी स्नेह है और जजसमें र्ृधि ननर्षि का अभार् हो, र्ह सहज रनेह है, जैसे पुि के प्रनत र्पता का, पनत के प्रनत पत्नी का सहज स्नेह होता है। ये आपस में समयानुसार लडते झर्डतेहैं, फफर भी भीतर स्नेह ज्यों का त्यों बना रहता है।

शमांके रूबरू आकर, शमांमें जलिे परिरो ।
मुहव्िि अंदरूिी में, शमांजिोया परिरो ॥

भैय्या! सहज स्नेह का यह एक नमूना है। र्र्षई सािक मसद्धसियाने। त्रत्रबि जीर् जर् बेद बखाने ।
राम सनेह सरस मन जासू। सािु सभाँ बड आदर तासू ।।

देखो तीन प्रकार के जीर् होते हैं, र्र्षयी अर्ाित ्कमकशाण्डी, सािक अर्ाित ्उपासक और मसद्धसियाने अर्ाित् श ्ज्ञानी। ज्ञानी भी जीर् ही है, क्योंफक र्ह भी अपने म ैंको देह, जीर् न मानकर ब्रह्म मान रहा है, तो कुछ न कुछ मानते रहना यह जीर् भार् ही है। इसमलए मानसकार ने तीनों को जीर् ही कहा, इन तीनों में से फकसी का भी मन राम स्नेहमें डूब र्या तो सन्द्त समाज में उसका बडा आदर होता है। जब हम महांदर में जाते हैं, तब यद्यर्प र्ह मूनत शपत्र ही है, परन्द्तु उसमें हम भर्र्ान की भार्ना करते हैं और जजतनी देर तक हम उस मूनत शभर्र्ान के सामने

सोह ि राम पेम त्रबिु ग्यािु। करिधार त्रबिु स्जमम जलजािू॥

खडे ेरहतेहैं तब तक हमारे धचत्त में इस प्रकार ननर्र्कशल्पता आ जाती है फक उतनी देर तक हम सारे द्वद्ांर्ों से मुक्त रहतेहैं। एक स्र्ान में ही र्ोडी देर तक भर्र्ान की भार्ना होने ेका तो यह फल है तब जो ननत्य सारे चराचर को अपना आप भर्र्ान आत्मा जानता है, जजसकी दृजष्ट में सर् शर्ासुदेर् है, आप सहहत सारा र्श्र् भर्र्ान राम है और चौबीस घांटे जजसका मन उसी में डूबा रहता है तो भला उसकी क्या दर्ा होती होर्ी, इस प्रकार

भर्ा्न राम में जजसका मन डूबा रहे, र्ल जाये, यही राम प्ेर्म है। जलयान जो नार् है, ई त्रबना केंर्ट के भला
कैसे पार लर्ेर्ी, इसी प्रकार ज्ञान नार् है और राम प्ेर्म जो है, ई इस नार् का खेने र्ाला कर्िशार केंर्ट है।

'अहां ब्रह्माजस्म' यह है ज्ञान। प्रश्न होता है फक यह मानना है या मसद्न्द्ित है? उत्तर है- यह मानना है, भार्ना है।

'म'ै ब्रह्म हूँ, इसको अनुसिांन कहते हैं, यह आर्खरी मजांजल नहीांहै। म ैआत्मा यहद न होऊँ, तो ब्रह्म
भार् फकस पर आरोर्पत होर्ा, यह फकस पर आिाररत होर्ा? 'अहां ब्रह्माजस्म' यह जो भार्नात्मक ज्ञान,
र्ृर्त्तजन्द्य ज्ञान, िर्ेक ज्ञान अननत्य ज्ञान, फकसी महापुरुर्ष की र्र् में जाकर श्रर्, ननहदध्यासन द्र्ारा
र्ृर्त्तम जो पैदा हुआ ज्ञान है, उसमें अभी पूर् शरूप से बिो नही ांहुआ तो नार् डर्मर्ाती ही रहेर्ी। अरे, ज्ञानी तो
जीर् ही है। र्रीब को ही अमीर बननेकी इच्छा होती है। ब्रह्म को क्या जरूरत है फक 'म'ै ब्रह्म हूँ कहे। तब यह तो
आत्मतत्र् है, यह है कर्िशार जब इसका बिो न हुआ, तब जैसे आज ब्रह्म माना है, र्ैसे ही कल फफर जीर् मान
लेर्ा, क्योंफक ननत्य अज्ञानी जीर्ाहदयों के ही ससांर् शमें रहना है, तो सर्ा दोर्ष का प्रभार् होना ही है। परन्द्तु 'म'ै हूँ
यह भी क्या अनुसिांन है? बस, यही जलयान है। इस नार् पर चढ़कर ही पार हुआ जा सकता है। ब्रह्म भार् में
र्ोक, मोह, दुुःख-सुब धचताां सभी है। 'यार्नाहां "म'ै जैसा हूँ, यह रह जाय, यही राम प्ेर्म है। आत्मतत्र् के बिो का
यही स्र्रूप है फक आज के पहहले 'म'ै क्या र्ा, अभी क्या हूँ, आर्े क्या रहूँर्ा, इसकी स्मृनत का अत्यन्द्ताभार् हो
जाय यही पूर् शबिो है। जजस प्रकार नहदय को समुर में ममलने के बाद यह स्मृनत नहीां रहती फक आज के पहहले म ै
अमुक र्ी। यहाँ ज्ञान और अज्ञान दोनों नहीांरहते, इसी पद को र्ेदों के र्दों में 'भर्रर्भनन कहा है।

जेग्यिा मिा त्रबमत्त ि भि हरति भस्क्ि आदरी ।
ि ैपाइ सुर दुलुभि पदादवप पिि हम देखि हरी ।।

यह र्ेद स्तुनत है। इसका भार् यह है फक मानेहुए ज्ञान में उन्द्मत होकर तुम्हा 'भर्रर् भजक्त' याने े
ससाांर से तारने र्ाली भजक्त का जो आदर नही ांकरता भर्न्! ् उसे हम पतन होते देखते हैं। राम प्ेर्म ही भर्रर्
भजक्त है, राम प्ेर्म स्र्रूप है, प्ेर्म ही राम है, प्ेर्म ही आत्मा है, प्ेर्म का स्र्रूप अननर्चशनीय है, इस का स्र्ाद सबके
अन्द्तःकरर् में प्रदमर्तश नही ांहोता यह तो त्रबरले ही र्ुरु नैहहक भाग्यर्ाली को ही प्रतीत होता है। 'म'ै पद की
जस्नत (जो अमानी पद है) में प्रमाद का अत्यन्द्ताभार् है।

भर्ा्न ने ज्ञानी को प्रौढ तनय कहा है और अमानी भक्त को जो अपने 'म'ै को कुछ नहीांमानता, 'म'ै का
'म'ै ही जानता है, उनके अन्द्तःकरर् में जर्त् ्प्रपचां 'म'ै आत्मा ही अनुभर् होता है, ऐसा अमानी भक्त, मेरा छोटा
मर्ु ुहै, जजसकी रखर्ाली मुझे ेननत्य माता के समान करनी पडती है।

रामहह किल प्ेर्म वपयारा, जाि लेहु जो जािनहारा ।।

"मान लेहु जो मानन हारा" नहीांकहा, "जानलेहु जो जानन हारा" कहा र्या। बस, यहीां पर जनक सभा का अन्द्त होता है। अब राननयों की सभा प्राांभ होती है-

महाराज जनक की महारानी सुनयना ने महारानी कौर्ल्या के पास अपनी दासी भेजकर उनसे ममलने के मलए आज्ञा मार्ी और उनके द्वारा जब आज्ञा ममल र्यी, तब रे् ेअन्द्य राननयों को लेकर राजा दर्रर् की राननयों के समाज में जाकर ममली।ां यहाँ ँमहाराज दर्रर् की तीन राननयों का प्रसर्ां है, जो प्रमुख र्ीां, यद्यर्प उनकी और बहुत-सी राननयाँर्ी।ां इसी प्रकार जनक की भी बहुत-सी राननयाँर्ी।ां दोनों समाज की सब राननयों ने ममलकर र्ोकसभा मनायी, दोनों ओर की राननयों के र्ील और प्ेरेम को देखकर तर्ा सुनकर कठोर र्ज भी र्पघल जाते हैं। सबके र्रीर पुलफकत और मर्धर्ल हैं और र्नेों में र्ोक और प्ेरेम के आँसू हैं। सबके सब अपने पैरों के नखों से जमीन कुरेद रही हैं और र्ोक सार्र में डूबी हुई हैं, सभी श्री सीता और राम के प्ेरेम की मूनत शही हैं, रे् इस समय ऐसा जान पडती हैं मानो स्र्यांकरुर्ा ही अनेक रूप ि्रर् करके दःुख से त्रबसूर रही हो, इस प्रसर्ां पर सीता जी की माता सुनयना कहती हैं-

सीय मि्ु कह त्रबचध बुचध बीकूँजो पय ि्ु ि्ोर पत्रब टूँकी ।।

पर्र् कहते हैं, हीरा को। असली हीरा र्ही है, जो हर्ौडा के सैकडों चोट लर्ने पर भी न फूटे, परन्द्तु उसी हीरे पर यहद दि्ू के फेन रखकर जरा-सा मार दो तो र्ह तुरन्द्त दो टुकडा हो जाता है। माता सुनयना की सभा चातुरी देखो रे् कहती हैं फक हाय रे र्ि्ाता! श्रीराम राज्यामभर्षेक रूपी र्ज्र को फोड सकनेकी र्श्र्् में फकसी की ताकत नहीां र्ी, परन्द्तु इस राम राज्यामभर्षेक रूपी र्ज में कैकई के दो र्रदान रूपी दि्ू के फेन को रखकर मन्द्र्रा रूपी हर्ौडे ेसे तूने ेफोड हदया, तेरी बुद्धि बडी टेढ़ी है। र्ह इस प्रकार कह रही है फक इसका भार्् समझने र्ाला ही समझे।े

दोहा - सुतिअ सुधा देझखअहहं ंगरल, सब करूिति कराल ।
जहूँ ि्हूँ काक, उलूक, बक, मिास सकि् मराल !!281।।

सुनयना कहती हैं फक ससांार में सुनने ेमें तो आता है अमृत, परन्द्तु आज तक फकसी ने अमृत देखा नही।ां सबको र्र्ष ही दीख पडता है। सुनते ेहैं फक मानसरोर्र में हांस है, परन्द्तु आज तक उन्द्हें फकसी ने देखा नही,ां केर्ल कौर्े, उल्लू और बर्ुले ही दीख पडते हैं। कभी-कभी म ैंअपने महाराज र्र्देहराज से पूछती र्ी फक महाराज! अयोध्या नरेर्् कैकई पर इतना प्ेरेम क्यों करते हैं? तो इसके उत्तर में रे् कहते ेर्े, फक कैकई के कण्ठ में अमृत है, र्ह अत्यन्द्त मि्ुर भार्षर्ी है, इसीमलए महाराज उस पर अधिक प्ेरेम करते हैं, तब जजस कण्ठ में अमृत का र्ास हो र्हीांसे राम बनर्ास रूपी र्र्ष ननकला, मि्ुर भार्षर्ी का क्या यही अर्् शहै फक र्हाँसे बनर्ास रूपी कठोर र्दद ननकले। कैकई काक र्ृत्त र्ाली है, कौर्ा फकसी पर र्श्र्ास नही ांकरता। अयोध्या नरेर्् ने उन्द्हें कई तरह से र्चन हदया, र्पर्् खाया, 'नाहहनां राम राजकर भूखे आहद। परन्द्तु, इस कौर्े रूपी कैकई को र्श्र्ास नही ांहुआ। सूयर्शर्ां का सूय शअयोध्या नरेर्् का ननिन हो र्या। अयोध्या में सर्श्र र्ोक, अन्द्िकार छाया हुआ है, उसमे यह कैकई

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 211 उल्लू की तरह जीर्त है। यह बरुला है, जो अयोध्यापनत के प्रार् रूपी मछली को ननर्ल र्यी। इस तरह सुनयना

को र्ोकर् आपे से बाहर उते्तेजजत और र्र्ुदि हुए देखकर सुममिा, उसे ि्य शबाँनि ेऔर र्ातां करने ेके मलए, र्ोक के सार् कहती है-

सुति ससोच कह देत्रब सुममिा । त्रबचध गति बड़ त्रबपरीि त्रबचचिा ।

जो सृसूज पालइ हरइ बहोरी। बाल केमल सम त्रबचध मति भोरी ॥

हे बहहन! र्र्ािा की बुद्धि बच्चों की बुद्धि जैसी है, जो स्र्यांबनाता है, फफर उसका पालन करता है और फफर स्र्यां नष्ट कर देता है।

इसके बाद माता कौर्ल्या कहती है फक -

कौसल्या कह दोसु ि काहु । करम त्रबबस दुखु सुख छति लाहू।

कहठि करम गति जाि बिधािा। जो सुभ असुभ सकल िल दािा ॥

ईस रजाइ सीस सबही के । उिपति चथति लय विषहु अमीके ।

देत्रब मोह बस सोचचअ बादी । त्रबचध प्रपंचु अस अचल अिादी ॥

इसमलए हे देर्र्! इसमें फकसी का दोर्ष नही ांहै, दु:ख-सुख, हानन-लाभ, सब कम शके अिीन हैं, कमों की र्नत बडी कहठन है, उसे र्र्ािा ही जानता है, जो र्ुभ और अर्ुभ सभी फलों का देनेर्ाला है। इसमलए, मोहर्र् सोच करना व्यर् शहै. क्योंफक र्र्ािा का यह प्रपचां, अचल और अनाहद है।

र्र्ािा के इस प्रपचां को माता कौर्ल्या ने अचल और अनाहद कहा, र्र्षय समझो फक यह प्रपचां अचल और अनाहद फकस तरह है -

अचल का अर् शहै जो चलायमान न हो और अनाहद का अर् शहै जजसका आहद न हो, अर्ात्श ्यह कब से है इसके र्ुरुआत का पता न हो। यहद इसे कोई पैदा फकया होता तब अनाहद न कहा जाता। अनाहद कहनेसे इसका पैदा होना मसद्निहीं होता, परन्द्तु यह प्रपचां आज कुछ है और कल कुछ और है। आज उत्पत्त्त है तो कल पालन है, फफर सहांार है तो यह अचल कैसा हुआ?

तो इसका उत्तर यह है फक इसका जो चलपना है र्ह तो अचल है, यह जो पररर्तनशपना है र्ह तो अचल है, इसको तो कोई टाल नही ांसकता। इसमलए यह प्रपचां अचल है और चलपना पररर्तनशपना, कब से है, इसके र्ुरुआत का भी कुछ पता नहीं है। इसमलए अनाहद भी है, यह तो चलपने का प्रर्ाह है, र्ह भी अचल है। यह चल इसमलए अचल है फक यह अनाहद है, अर्ाशत् ्चल कब से इसका कोई जन्द्म सम्र्त् ्नही,ां जहाँससांार प्रपचां को अनाहद कहा फक इसका अचलपना स्र्यांमसद्हो जाता है।

स्र्ीि ि परिो िावप ि फकंचचद्सि्ु जायिे ।
सदसत्सदसद्विप ि फकंचचद्सि्ु जायिे ॥

(र्ौ. काररि.अ.र्ा.प्र.-22)

अर्ात्श ्न सत की उत्पर्त्त होती है, न असत ही उत्पन्द्न होता है और न सत्– असत दोनों की उत्पर्त्त होती है। यहद सत् ्पदार् शकी उत्पर्त्त मानोरे् तो उत्पन्द्न हुआ पदार् शनार्र्ान होता है, तब इसे सत् ्कैसे कहेंरे्? क्योंफक, सत् ्र्स्तुतो त्रिकाला बाघ होती है और यहद असत् ्की उत्पर्त्त मानोरे् तो असत् ्बन्द्ध्यापिु र्त् ्होता है। यानेजो है ही नहीांई पैदा क्या होर्ा? तात्पय,श यह है फक फकसी प्रकार से भी, फकसी भी देर्, काल, र्स्तु का उत्पन्द्न होना मसद्धि नहीां होता। यहद, जर्त् ्प्रपचां को ईश्र्र में पैदा फकया मानों तो र्ह ईश्र्र जजसनेइसे पैदा फकया जन्द्मा है या अजन्द्मा ? माही। क्योंफक, ईश्र्र तो अर्र्नार्ी है, जन्द्म-मरर् से रहहत है। यहद कहो अजन्द्मा है तो कहा जन्द्मा है तो यह मेराहा, अश्या फक जो जन्द्म लेता है र्ह मरता है तो र्ह ईश्र्र सूतो अजन्द्मा से क्या पैदा होर्ा? जो स्र्यां पैदा नहीां हुआ उसे दूसूरे को पैदा करने की क्या तमीज? इसमलए, प्रपचां पैदा हुआ ही नहीांा यही उत्तम सत्य है, इसी को र्ेदान्द्त में 'अजातर्ाद' कहते हैं।

प्रपचां देर् से प्रपचां चल है और अचल देर् से प्रपचां चल, अचल है तो चल है, र्ह अचल ही तो है और अचल भर्र्ान आत्मा ही तो है। इस जस्र्नत में प्रपांच का र्र्कल्प ही कहाँ? अचल देर् से देखो तो प्रपचां की र्ुजांाइर् ही नहीांा एक बार भर्र्ान राम ने र्ुरुदेर् र्मर्ष्ठ से पूछा भर्र्न! आप तो बहुत बडी आयु र्ाले हैं, यह प्रपचां कब से बना, इसे आप जानते हैं, दयाकर बताइये फक यह ससांार कब बना?

तब र्ुरुदेर् कहने ेलरे् राम! मुझे ेअपनी उम्र का ठीक-ठीक पता तो नहीां है, परन्द्तु मनैं ेअपनी आँखों से बहत्तर िेतायुर् देखा है, पर म ैंइसे ऐसा ही देख रहा हूँ। मुझसे ज्यादा सयाना भुर्ुण्डी है, एक बार उनसे भी मनैं े यही प्रश्न पूछा र्ा, तब उनने कहा फक यह प्रपचां कब से है, यह तो म ैंनही ांजानता। मनैं आठ र्मर्ष्ठ देखा है और ग्यारह ब्रह्मा मेरे सामने मरे हैं। चारों युर् जब एक हजार बार बीत जाते हैं, तब ब्रह्मा का एक हदन होता है, ब्रह्मा अपनेहदन से सौ र्र्ष शकी आयु में मर जाता है। सिह बार मनैं ेरामार्तार देखा है, कभी नारी-नारी की सृजृष्ट देखा, तो कभी नर-नर की। कभी राख ही राख देखा है, तो कभी जल ही जल देखा, परन्द्तु मुझेभी यह नहीांमालूम फक यह कब से बना, भुर्ुण्डी ने कहा, फक हमारे र्ुरुदेर् लोमर् हैं, ब्रह्मा का सौ र्र्ष शहमारे र्ुरुदेर् का एक हदन है, उनके एक हदन में रोज एक ब्रह्मा मरता है, इस तरह उन्द्हें रोज सूतक लर् जाता है तो र्े रोज कहाँ तक बाल बनर्ाते रहें, र्े अपनी जटा से रोज एक बाल उखाडकर फेंक देते हैं। उन्द्हें भी यह नहीां मालूम फक यह कब से बना। इस तरह यह प्रपचां अनाहद और अचल है।

प्रश्न होता है फक जब प्रपचां अचल और अनाहद है और इसका कत्ताश कोई नहीां है, तब फफर र्ह क्या है? उत्तर है-र्ह इस र्र्कल्प के अभार् का भार् है। प्रपचां का अचलत्र्, प्रपचां नहीां है अचल है, प्रपचां का अनाहदत्र् प्रपांच नही ांहै अनाहद है। इस तरह यह प्रपचां, प्रपचां नहीांआत्म सत्ता है, अजस्तत्र् ? ज्यों ही भर्र्ान

 आत्मा अजस्तत्र् को ससांार माना फक इसके मलए चार र्कल्प आकर सामने खडे ेहो र्ये। देर्, काल, र्स्तु और
कत्र्ता। कहाँ बना, कब बना, फकससे बना और फकसने बनाया। इन र्कल्पों के होतेही ब्रह्मा, र्ष्रु और महेर्
सामने आ र्ये। अजस्तत्र् को र्खसका लो तो ससांार ही नही ांऔर जब ससांार ही नही ांतो फफर इसके सृष्टा, भताश
और हताश, ब्रह्मा, र्ष्रुऔर महेर् भी नही।ां इस तरह न कोई ससांार, न कोई इसके उत्पत्त्त, पालन और
सहांारकता।श रह र्या 'म'ैं र्र्दु् तित्र् भर्ान आत्मा।

पुरार्ों में अलकांाररक कर्ाएं हैं, परन्द्तु ुआजकल क्या होता है फक जजस प्रकार छोटे-छोटे बच्चों को झूठ
बोलनेके पररर्ाम बतानेके मलए कोई मनर्ढन्द्त कहानी सुनायी जाती है, मर्र बच्चा कहानी को ही ग्रहर् कर
लेता है और अधिक झूठ बोलना सीख लेता है। उस कहानी के तात्पय शअर्ा सारार्ां को छोड देता है, जजसके मलए
उसे कहानी बतायी र्यी र्ी। इसी प्रकार सांसारी जीर् पुरार्ों, र्ास्र्ों में बताये र्ये कर्ा भार् को ही पकड लेते हैं
और सारार्ां अर्ा तात्पय शको छोड देते हैं। इस तरह उनसे सत्य र्स्तु तो छूट जाती है और मनर्ढन्द्त, असत्य,
कल्पना ही उनके हार् लर्ती है। इस पर एक दृष्टान्द्त सुनो-

फकसी जर्ांल में एक कैर् के पेड के नीचेएक खरर्ोर् का त्रबल र्ा, जजसमें र्ह रहा करता र्ा। एक हदन
त्रबल में पडे–पडे ेउसके मन में कल्पना उठी फक यहद िरती उलट र्यी तो कैसा होर्ा? इस जर्ांल का क्या होर्ा?
यहाँ ँके पेड, पिौ तर्ा यहाँ ँरहने ेर्ाले पर्ु,ु पिी कैसे करेंर्े? बस, इस असत्य कल्पना ने उसे बेचैन कर हदया। र्ह
रात भर यही सोचता रहा और पररर्ाम से घबराता रहा। ननदान, सुबह होते ही र्ह जर्ांल में भोजन की तलार् में
चल पडा। र्ह र्ाम को जब अपनेत्रबल में आता तब ननत्य उसके मजस्तष्क में यह र्कल्प उसी ताजर्ी से उठता
फक यहद िरती उलट र्यी तो कैसा होर्ा? और ननत्य उसे इसी धचतांा में रात त्रबतानी पडती। एक हदन र्ह इसी
कल्पना से धचनांतत अपने त्रबल में पडा र्ा फक जोर की हर्ा चलने से कैर् का बडा फल उसके त्रबल के दरर्ाजेपर
मिाक से धर्रा। बस, फफर क्या र्ा, र्ह समझ र्या फक अब िरती उलट रही है और झटपटाकर, उठकर जर्ांल में
एक ओर यह कहते ेहुए जोर से भार्ा फक "भार्ो रे, िरती उलट रही है, भार्ो रे, िरती उलट रही है।" जांर्ल के जो
भी जानर्र खरर्ोर् की इस घबराहट भरी आर्ाज को सुनते ेर्ये, सब उसी ओर जजिर फक खरर्ोर् भार् रहा र्ा
यही कहते हुए भार्ने लर्े फक- "भार्ो रे िरती उलट रही है।" ननदान, जांर्ल में जर्ांली जानर्रों के भार्-दौड की
िूमिमच र्यी। मसयारों, भेडडयों, हहरर्ों, हाधर्यों, धचतों आहद सम्पूर् शजर्ांली जानर्र दल के दल जोर से यही
कहते ेहुए भार्नेलर्े। इनकी भार्-दौड में जांर्ल का राजा मसहां जो अपनी र्ुफा में सुख की नीदां सो रहा र्ा, जार्
उठा।

र्ह अपनी र्ुफा से बाहर आया और उसने जांर्ल में इन जानर्रों को घबराये हुए एक ओर जोरों से भार्ते
हुए देखा। तब उस मसहां ने ललकार कर उन सबको तुरन्द्त र्हीरुंक जाने को कहा। उसकी एक ही ललकार में सबके
सब जो जहाँर्े, र्हींखडे ेहो र्ये। तब उस मसहां ने सामने खडे ेहुए जानर्रों से पूछा, तुम लोर् क्यों भार् रहे हो?
तब सामने खडे ेहुए जानर्रों ने उन्द्हें उत्तर हदया- हुजूर! िरती उलट रही है। इस पर मसहां ने पूछा फक िरती फकिर
से उलट रही है। तब उन जानर्रों ने कहा- सरकार! यह तो हम नहीं जानते। आर्े भार्ने र्ाले बतायर्े जजनसे

 सुनकर हम भार् रहे हैं। तब मसहां ने उनके आरे् र्ाले जानर्रों से पूछा-उत्तर हदया महाराज! यह हम भी नहीांजानते

फक फकिर से िरती उलट रही है। यह तो हमने अपनेआरे् भार्ने र्ाले जानर्रों से सुना है, आरे् र्ाले ही जानेंरे्। ननदान, इस तरह घण्टों पूछते–पूछतेअतां में खरर्ोर् की पारी आयी। जब मसहां ने उससे भी र्ही प्रश्न फकया तब खरर्ोर् हार् जोडकर कहने लर्ा फक हुजूर! िरती मेरे त्रबल के पास उलट रही है। ऐसा कह उसने मसहां को ले जाकर अपनेत्रबल के दरर्ाजेपर खडा कर हदया। तब उसनेदेखा फक त्रबल के दरर्ाजे पर कैर् का एक बडा फल झाड से धर्रा र्ा और उसी की आर्ाज से इस खरर्ोर् ने अपनेद्र्ारा ही फकये र्ये असत्य कल्पना से भयभीत होकर यह आदांोलन रु्रू फकया र्ा। इसी प्रकार आजकल के कर्ार्ाचक, श्रोता लोर् खरर्ोर् के समान हैं। कर्ार्ाचक कहते हैं फक ! भर्सार्र से पार होओ, ससांार-सार्र से तरो। उनका यह आदांोलन चल पडा है। बस, सब श्रोता इसे सुनकर इसी की रट लर्ाते हुए घबराहट और धचतांा से ग्रमसत हैं। जब कोई सन्द्त, महात्मा जन मसहां के समान सामने आकर उनसे पूछतेहैं फक कहाँ है भर्सार्र जजसे तरने कह रहे हो? कहाँहै ससांार-सार्र जजसे पार होना है? तब र्े उन जानर्रों के समान कुछ नहीांबता सकते, बताएँ कहाँ ँसे भर्सार्र हो तब तो उसे हदखाएँ, ससांार हो तब तो र्ह हदखाया जाए, यही असत्य कल्पना से भय है। इसीमलए कौल्र्ा ने र्ंधि प्रपचां को अचल और अनाहद कहा। अजस्तत्र् भर्र्ान आत्मा भास को ही ससांार मान मलया। भर्र्ान पर ही ससांार की असत्य कल्पना कर ली र्यी और इसी अपने द्र्ारा की र्यी असत्य कल्पना में ही सब घबराहट और धचतांा है।

जब भर्र्ान आत्मा 'म'ैं का बोि हो जाता है, तब सर् शदु:खों से िर् मि में छुटकारा ममल जाता है तर्ा सर्दशा के मलए परम र्ाांनत की प्राजप्त हो जाती है। प्रश्न होता है फक श्रुनत भी जर्त्् की उत्पत्त्त बताती है भाई! जर्त्् की उत्पत्त्त तो बताती है, फफर अपर्ाद भी तो कर देती है, फकस प्रकार देखो -

अध्यारोपापिादाभयां .... अझखलं प्रपंच्यै ।।

जो परमात्मा ब्रह्म, सृजृष्ट के आहदकाल में ब्रह्मा को समाधि अर्स्र्ा में र्ेद सुनाया, जजनकी कृपा से र्ेद प्रकट हुए उनकी र्रर् में म ैंहूँ। इससे मालूम होता है फक ससांार पैदा हुआ है, लेफकन आरे् चलकर श्रुनत यह भी तो कहती है फक -

एकमेमाद्वितीयो .... िेहिास्स्त् फकंचि ।।

एक ही चेतन परमात्मा है इसके मसर्ा कुछ भी नही,ां कुछ भी नही।ां श्रुनत के र्ाक्य में इतना र्र्ोभास। तो कहते ेहैं, यहाँर्र्ोभास नही ांहै पूर्ाशपर र्र्ो नहीं है, र्ह अध्यारोप है और यह अपर्ाद है। श्रीमद् भार्र्त के दर्म स्कन्द्ि के एकसठर्ें अध्याय का पहला श्लोक में कहते ेहैं -

एकैकशस्िाः कृकणस्य िपुि् ्दश दशाबलााः ।
अजीजिन्द्िमिमास्न्द्पुिाः सिात्मिसम्पदा ।।

(श्रीमद् भार्र्त 10-61-1)

श्रीकृष्र् महाराज की सोलह हजार एक सौ आठ राननयों से एक-एक से दस-दस पिु हुए। फफर, उसी के नीचेके चौरे् श्लोक में श्री रु्कदेर् जी कहतेहैं -

स्मायिालोकलिदमशिभिाहारर भ्रूमण्डल प्रहहि सौरिमन्द्शिौण्डोः ।.
पत्यिस्ु षौडशसहस्मिगङ्गबाणैयस्यिेस्न्द्रयं विमचथिुं ंकरणिे िशेकुेाः ।।
(श्रीमद् भार्त 10-61-4)

तो क्या पिु आसमान से आये? कहाँसे आये? सोलह हजार एक सौ आठ राननयों के मध्य में रहते हुए भी कामदेर् भर्ान श्रीकृष्र् के काम प्रदीप करने ेमें समर् शनही ंहुए। त्रबल्कुल उलट र्या। यह क्या है? तो यह अध्यारोप और अपर्ाद है। त्रबना आत्मबिो हुए यह बात र्ीघ्र समझ में नहीांआती। इसमें हर एक राननयों के दस-दस पिु हुए यह अध्यारोप है और भर्ान श्रीकृष्र् आप्तकाम हैं। उन पर काम का कोई प्रभार् नहीां है, कुछ नही ां हुआ, यह अपर्ाद है।

ब्याल पास बस भए खरारी। स्बिस र्अि एक अत्रबकारी ।।

ऊपर का र्आिा चरर् बताता है फक भर्ान नार्फाँस में बिां र्ये, यह अध्यारोप है और दूसरा चरर् कहता है फक रे् ेनही ांफँसे, क्योंफक रे् रु्स्र् हैं, अनन्द्त हैं, एक हैं और अर्कारी हैं, यह अपर्ाद है। प्रश्न होता है फक श्रुनत यहाँ ऐसा और र्हाँ र्ैसा क्यों कही? देखो -

र्पता-पिु कही ांजा रहे रे्,े उननेदोपहर में र्स्तृत सपाट मैदान में मृर्जल देखा। पिु छोटा बालक र्ा। मृर्जल को देखकर उसनेर्पता से पूछा र्पताजी! सामने यह जो नदी बह रही है र्ह कहाँसे ननकली है? र्पता ने सोचा फक यहद इसे सच-सच बताया जाय तो यह समझेर्ा नही,ां क्योंफक यह अभी अबिो है। नदी, पानी आहद कुछ नही ांहै ऐसा कहने ेपर यह नहीांमानेर्ा, ऐसा सोच र्पता ने कहा- बेटा र्न्द्ध्याचल पर्तश पर बन्द्ध्या का एक पिु रहता है, उसनेएक तालाब खुदर्ाया है, जजसमें असत्य का जल भरा है, र्हीं से यह नदी ननकली है। पिु छोटा बच्चा र्ा, र्पता की यह बात मान र्या।

कुछ र्ष शबीतने पर जब पिु बडा हो र्या तब एक बार फफर अपनेर्पता के सार् जाते हुए फफर मृर्जल देखा, तब उसनेफफर र्पता से र्ही प्रश्न पूछा-तब र्पता ने सोचा फक अब यहद र्ह पुरानी बात इससे कही जायर्ी, तब यह उसे मानेर्ा नही,ां क्योंफक इसकी बुद्धि अब समझने लर् र्यी है, इसमलए र्पता ने कहा-बेटा! एक बार तुमने ेफफर यही प्रश्न फकया र्ा, तब हमनेतुम्हें बताया र्ा फक र्न्द्ध्याचल पर्तश पर न्द्ध्र्या का एक पिु रहता है। उसनेएक तालाब खुदर्ाया है, जजसमें असत्य का जल भरा है र्हीं से यह नदी ननकली है। इस पर पिु कहने लर्ा फक र्ाह र्पताजी! आप भी क्या र्प्प हाँकते हो, क्या बन्द्ध्या का भी कहीांपिु होता है? तब र्पता ने कहा नहीां। असत्य का भी कही ांजल होता है? र्पता ने कहा नही।ां पिु ने कहा तब तालाब फकसने ेखुदर्ाया? फकसी ने नही।ां तब नदी कहाँ से ननकली ? कहीांसे नही।ां तब यह क्या हदख रहा है? कुछ भी नही।ां ऐसा कहकर र्पता ने पिु को हाँले

 216 जाकर खडा कर हदया और कहा-बेटा! जूते उतार दो। पुि ने जूतेउतार हदये, तब उसका पैर तपी हुई भूमम पर जलने

लर् र्या, छाले आ र्ये। पानी कहीांनहीां ममला। तब र्पता ने सूय शकी ओर हदखाकर कहा फक यह सूय शभर्र्ान का चमत्कार है। रेत में सूय शकी फकरर्ें पडने से ऐसा भास हो रहा है। पर, है कुछ भी नही।ां अभार् में भार् बताकर, सूय श को अधिष्ठान बताकर, असत्य जल का अभार् समझाया। नदी का प्रर्ाह है ही नहीांबताया। जो फक र्ास्तर्र्क र्ा। पहहले जल का अभार् र्ा, हाँ जल का भार् अर्ात्श ्होना बताया र्या। इसे अध्यारोप कहते ेहैं और बाद में उसके कारर् (अधिष्ठान) सूय शको बताकर जल के भार् का अभार् कर हदया र्या अर्ात्श ्फकये र्ये अध्यारोप का खण्डन कर हदया र्या। इसको अपर्ाद कहते हैं। इसी प्रकार अज्ञानी जीर्ों को समझानेके मलए सन्द्त महात्माजन तर्ा र्ेद, र्ास्ि निनष्प्रपचां ब्रह्म में जर्त् ्प्रपचां का अध्यारोप करते हैं और आर्े चलकर स्र्-स्रूप भर्र्ान आत्मा अधिष्ठान का ज्ञान कराकर फकये र्ये अध्यारोप का खण्डन कर देते हैं। प्रपचां के अजातर्ाद से ईश्र्र के कत्तश्र्य का अभार् है। अजातर्ाद का अर् शहै, जो तीनों काल में हुआ ही नही।ां सांसार प्रपचां न कभी है, न हुआ है और न होर्ा।

सर्व्शम नारायर् तत्र् भर्र्ान आत्मा में पहले जर्त् ्की कल्पना हुई। इसके बाद उसके उत्पर्त्त, पालन, सहांार, ब्रह्मा, र्ष्र्ु, महेर् की कल्पना हुई। इसके बाद र्र्षयों की कल्पना होते र्यी। इस तरह ससांार खडा हो र्या।

त्रबना उपकरर् के जो देखता है, उसको करते हैं उपरष्टा। अनुमान करने ेर्ाले का नाम अनुमन्द्ता है। सर् श का भरर्-पोर्षर् करता है, र्ह भताश है, र्ही जीर् रूप से भोक्ता है। र्ही सर् शकी आत्मा होने से परमात्मा है और र्रीर के अन्द्दर उसी आत्मा को पुरुर्ष कहते हैं। इस तरह 'म'ैं आत्मा ही यह सब हुआ। अतः, 'म'ैं ही स्र्यां जर्त प्रपचां हूँ। इसमलए माता कौर्ल्या कहती हैं फक -

देत्रब मोहबस सोचचअ बादी । त्रबचध प्रपंचु अस अचल अिोदी ।
भूपति स्जअब मरब उर आिी । सोचचअ सझख लझख तिज हहि हािी ।
सीय माि कह सत्य सुबािी । सुकृिी अिचध अिधपति रािी ।।

महाराज के मरनेऔर जीनेकी बात को हृदय में याद करके जो धचतांा करती हैं, र्ह तो हे सखी! हम अपने हहत की हानन देखकर (स्र्ार्शर्) करती हैं। सीता जी की माता नेकहा-आपका कर्न उत्तम और सत्य है। आप पुण्यात्माओां की सीमा रूप अर्पनत (महाराज दर्रर् जी) की ही तो रानी हैं। (फफर भला, ऐसा क्यों न कहेंर्ी)

दोहा- लखिु रामु मसय जाहुँ बि भल पररिाम ि पोचु ।
गहबरर हहय ूँकह कौमसला मोहह भरि कर सोचु ।।

(अ.का. दो. 282)

कौर्ल्या जी ने दु:ख भरे हृदय से कहा- श्रीराम, लक्ष्मर् और सीता र्न में जाय,ें इसका परररर्ाम तो अच्छा ही होर्ा, बुरा नही।ां मुझे ेतो भरत की धचताां है।

ईस प्रसाद असीस ि्ुम्हारी । सिु सुिबधूदेिसरर बारी ।
राम सपथ म ैंकीस्न्द्ह ि काऊ। सो करर कहऊँ सखी सतिभाऊ ॥

ईश्र्र के अनुग्रह और आपके आर्ीर्ादश से मेरे (चारों) पुि और (चारों) बहुएँ र्ंर्ाजी के जल के समान पर्र्ि हैं। हे सखी! मनैं ेकभी श्रीराम की सौर्न्द् निहीांकी, सो आज श्रीराम की र्पर् करके सत्य भार् से कहती हूँ।

भरि सील गुि त्रबिय बड़ाई । भायप भगति भरोस भलाई ।
कहि सारदहु कर मति हीचे। सागर सीप के जाहहं ंउलीचे ॥

भरत के र्ील, र्ुर्, नम्रता, बडप्पन, भाईपन, भजक्त, भरोसे और अच्छेपन का र्र्नश करने ेमें सरस्र्तीजी की बुद्धि भी हहचकती है। सीप में कहीांसमुर उलीचा जा सकता है।

जािउँ सदा भरि कुलदीपा । बार बार मोहह कहेउ महीपा ।।
कस ेंकिकु मति पाररझख पाएँ । पुरष पररझखअहहं ंसमयं ंसुभाएँ ।।

म ैंभरत को सदा कुल दीपक जानती हूँ। महाराज ने भी बार-बार मुझे ेयही कहा र्ा। सोना कसौटी पर कसे जानेपर और रत्न पारखी (जौहरी) से ममलने पर ही पहचाना जाता है। र्ैसे ही पुरुर्ष की परीिा समय पडने पर उसके स्र्भार् से ही (उसका धचि देखकर) हो जाती है।

अिुधचि आजु कहब अस मोरा । सोक सिेहँ सयािप थोरा ।
सुति सुरसरर सम पाविि बािी। भई सिेह त्रबकल सब रािी ।।

फकन्द्तु, आज मेरा ऐसा कहना भी अनुधचत है। र्ोक और स्नेह में सयानापन (र्र्र्ेक) कम हो जाता है। (लोर् कहेंर्े फक म ैंस्नेहर्र् भरत की बडाई कर रही हूँ) कौर्ल्या जी की र्ंर्ा जी के समान पर्र् करनेर्ाली र्ार्ी सुनकर सब राननयाँस्नेह के मारे त्रबकल हो उठी।ां

दोहा- कौसल्या कह धीर धरर सुिहु देत्रब ममचथलेमस ।
को त्रबबेकतिचध बल्लभहहं ंि्ुम्हहह सकइ उपदेमस ।।

(अ.का.दो. 283)

कौर्ल्या जी ने फफर धीरज धर कर कहा- हे देर्ी ममधर्लेश्र्री! सुननये, ज्ञान के भण्डार श्री जनक जी की वप्रया आपको कौन उपदेर् दे सकता है?

राति राय सि अिसरू पाई I अपिी भातूँ किहब समुझाई I
रझखअहहं ंलखिु भरिु गिेहहं ंबि। जौं यह मि मिौमहीप मि I

हे रानी! मौका पाकर आप राजा को अपनी ओर से जहाँ तक हो सके समझाकर कहहयेर्ा फक लक्ष्मर् को घर रख मलया जाय और भरत र्न को जायँ। यहद, यह राय राजा के मन में (ठीक) जँच जाये।

ति भिल ग्जिु करब सुत्रबचारी I मोरें सोचु भरि कर भारी ।।
गूढ़ सिेह भरि मि माहीं। रहें िीक मोहह लागि िाहीं॥

तो भली-भाँनत खूब र्ंचारकर ऐसा यत्न करें। मुझे ेभरत का अत्यधिक सोच है। भरत के मन में रूढ़ प्रे्म है। उसके घर रहने ेमें मुझे ेभलाई नहीं जान पडती। सोच है। लर्ता है फक उसके प्रार्ों को कोई भय न हो जाये।)

लझख सुभाउ सुति सरल सुबािी। सब भइ मगि करि रस रािी।
भि प्रसूि झरर धन्द्य-धन्द्य धुति I मसचथल सिेहैं मसद्ध जोगी मुति ।।

कौर्ल्या जी का स्र्भार् देखकर और उनकी सरल और उत्तम र्ार्ी को सुनकर सब राननयाँकरुर् रस में ननमग्न हो र्यीं।ां आकार् से पुष्प र्ंषाशकी झडी लर् र्यी और िन्द्यि–न्द्य की ध्रनन होनेलर्ी। मसद्, योर्ी और मुनन स्नेह से मर्धर्ल हो र्ये।

सबु रनििासु त्रबथफक लझख रहेऊ I िब घरर धीर सुममिों कहेऊ I
देत्रब दंड जुग जाममति बािी I राम मािु सुति उठी सप्रीिी ॥

सारा रननर्ास देखकर चफकत (ननःस्तदि) रह र्यी। तब सुममि जी ने िीरज िरके कहा फक हे देर्ी! दो घडी रात बीत र्यी है। यह सुनकर श्रीराम जी की माता कौर्ल्या जी प्रे्मपूर्कश उठी।ां

दोहा- बेचग पाउ घाररअ थलहह कह सिेहैं सतिभाय I
हमरे िौ अब ईस गति कै ममचथलेस सहाय ।।284||

हमरें तौ अब ईश्र्र की र्नत है अर्र्ा ममधर्लेश्र्र जनक जी सहायक हैं।

लझख सिेह सुति बचि त्रबिीिा I जिकवप्रया गह पाय पुिीिा I
देत्रब उचचि अमस त्रबिय िुम्हारी I दशरथ घररति राम महिारी ।।

कौर्ल्या जी के प्रे्म को देखकर और उनके र्ंनम्र र्चनों को सुनकर जनक जी के प्रर्य पत्नी ने उनके पर्र् चिरर् पकड मलये और कहा- हे देर्ी! आप राजा दर्रर् की रानी और श्रीरामजी की माता हैं। आपकी ऐसी नम्रता उधचत ही है।

प्रभु अपिपीचहु आदरहीं। अचगति घूम चगरर मसर पिितु घरहीं।
सिेकु राउ करम मि बािी । सदा सहाय महेसु ुभिािी ॥

प्रभुअपने नीच जनों का भी आदर करते हैं। अजग्न ि्ुएँ को और पर्तश तृर् (घास को अपने मसर पर ि ारर् करते हैं। हमारे राजा तो कम,श मन और र्ारी से आपके सेर्क हैं और सदा सहायक तो श्री महादेर् पार्तशी जी हैं।

रउरे अंग जोगु जग को है। दीप सहाय फक हदिकर सोहै।
रामु ुजाइ बिु करर सुर काजू । अचल अिधपुर कररहहहं ंराजू ।।

आपका सहायक होने योग्य जर्त् ्में कौन है? दीपक सूय शकी सहायता कर जाकर कही ां र्ोभा पा सकता है?

श्रीरामचन्द्र जी र्न में जाकर देर्ताओं का काय शकरके अरि्पुरी में अचल राज्य करेंर्े।

अमर िाग िर राम बाहुबल । सुख बमसहहहं ंअपिे-अपिे थल।
यह सब जागबमलक कहह राखा । देत्रब ि होई मुधा मुति भाषा ॥

देर्ता, नार् और मनुष्य तब श्रीरामचन्द्रजी की भुजाओं के बल पर अपने- अपने स्र्लों (लोकों) में सुखपूर्कश बसर्ें। यह सब याज्ञल्क्य मुनन ने पहले ही से कह रखा है। हे देर्ी! मुनन का कर्न व्यर् श(झूठा) नही ां हो सकता।

दोहा- अस कहह पग परर पेम अति मसय हहि त्रबिय सुिाइ ।
मसय समिे मसय मिािु बचली सुआयसुपाइ !!285||

ऐसा कहकर बडे ेप्रेम से पैरों पड कर सीता जी (के सार् भेजने) के मलए र्नती करके और सुन्दर आज्ञा पाकर तब सीता जी समेत सीता जी की माता डेरे को चली। बस, यहीं पर राननयों की सभा एर्ां धचिकूट दरबार की पररसमाजप्त है और यही राम दर्नश द्र्तीय भार् का उपसांहार है।

राम अममि गिु सागर, थाह फक पािैकोय ।
संतिि सि जस कछु सुिेंउँ, िुमहहं ंसुिायउँ सोय ।।

तृतीय खण्ड

1. दर्ािंना एर्ािंनाम महहमा
2. राम र्ीता पृषूठ

3.र्भीर्षर्-र्रार्नत

4. रेद स्तुनत पृषूठ

5. राम राज्य की व्याख्या

6. ज्ञान भजक्त ननरुपर्

7.भर्ान कांर और माता पार्तशी सर्ांद

1. ामि महहमा

।। श्री र्र्ाय नमः ।।

।। श्री रुुरे ेनमः ।।

ारियणोपतिषि् ्

ॐ अर् पुरुर्षो ह रै ्ैनारार्ोऽकामयत प्रजाः सृजेयेनत। नारायर्ात्प्रार्ो जायते मनः सर्ेजन्द्रयार्् च। ख ां र्ायुज्योंनतरापः पृथृर्ी र्श्र्स्य ािररर्ी। नारायर्ाद्ब्रह्म जायते। नारायर्ाररदो जायते। नारायर्ाहदन्द्रो जायते। नारायर्ाव्प्रजापनतः प्रजायते। नारायर्ाद्रादर्ाहदत्या रुरा र्र्ः सर्ार्शर् छन्द्दामांस नारायर्ादेर् समुत्पद्यन्द्तेनारायर्ात्प्रर्तन्द्शते। नारायरे् प्रलीयन्द्ते। अर् शननत्यो नारायर्ः। ब्रह्मा नारायर्ः। मर्श्र्श्च नारायर्ः। र्र्श्च नारायर्ः। कालश्च नारायर्ः। हदर्श्च नारायर्ः र्हदश्च नारायर्ः। ऊध्र् ंच नारायर्ः। अिश्च नारायर्ः। अन्द्तबहशहश्च नारायर्ः। नारायर् एर्ेदां सर् ंयद्भूतां यच्च भव्यम्।् ननष्कलांको ननरांजनो,

ननर्र्कशल्पो ननराख्यातः र्ुद्धिो देर् एको नारायर्ो न द्र्र्तीयोऽजस्त कजश्चत्।् य एर् ंर्ेद स र्ष्र्ुरेर् भर्नत स र्ष्र्ुदेर् भर्नत।

ॐ शास्न्द्ताः शास्न्द्ताः शास्न्द्ताः

रामाय राम भराय, रामचन्द्राय िधसे।

रघुिाथाय िाथाय, सीीायााः पिये िमाः ।।

यन्द्मायािशिति िविश्मिझखलं ब्रह्माहद दिासुरा ।

यत्सत्त्िादिममृषैि भाति सकलं रज्जौ यथाहेभ्रमाः ।।

यत्पादप्लिमेकमेि हह भिाम्भोधेस्तिीिीर्षािां ।

न्द्दिेऽहं िमशेषे कारणपरं रामाख्यमीशंहररम् ्।।

अनन्द्त नाम रूपों में अमभव्यक्त अहमत्रेन प्रस्फुररत, महामहहम, स्र्ात्मस्र्रूप सकल चराचर रूर्द् एर् ंसमुपजस्त आत्म जजज्ञासु र् 'उर्त्ष्ठत् ्जाग्रत प्राप्य र्रजन्द्नबोत् ्।

अनाहदकाल से अर्र्द्या की घोर ननरा में सोनेर्ाले भव्य जीर्ो ! उठो ! स्र्- स्र्रूप भर्र्न आत्मा में जार्ो और फकसी श्रेष्ठ महापुरुर्ष की र्रर् में जाकर अपना आत्म कल्यार् करो। मानर् जीर्न का यही चरम लक्ष्य है। यहााँपर आध्याजत्मक प्रर्चन श्री रामचररत मानस के आिार पर हो रहा है।

अनन्द्त जजज्ञासुओं !

अनन्द्त जीर्ों के पूर्ाजशजतश पुण्य उदय होने पर एर् ंभर्र्न सजच्चदानन्द्द र्श्र्ात्मा राम की असीम कृपा से ऐसा स्र् शअर्सर श्री रामचररत मानस सुननेको ममलता है।

यह रामचररत मानस भारत र्र्ष शकी अनुपम र्भूनत है। समस्त जीर् मात्र के मलए ससांर सार्र से तरने के मलए यह परम नौका है। श्रद्िालु भक्तजन इसका ननत्य पाट करते हैं। इसका र्चार करते हैं, क्योंफक रामायर् समस्त ज्ञान, र्ज्ञान और भजक्त का भडांर है। िाममकश, राजनैनतक एर् ंसामाजजक सभी र्र्षयों का इसमें ऐसे सुन्द्दर प्रसर्ां हैं फक त्रबना सन्द्तों की कृपा के ये समझ में नहीांआते। इसीमलए, तो मानसकार ने कहा है फक -

दोहा - श्रोिा बकिा ग्यानिचध कथा राम कै गूढ़ ।

फकमम समुझौं म ैंजिी ज़ कमल मल ग्रमसि त्रबमूढ़ ।।

(बा.का.दो 30-ख).

जब राम ही रूढ़ है, तब उनका चररत्र अर्ात् श ्कर्ा तो रूढ़ होर्ी ही। जब तक जीर् भार् का अभार् नही ांहो जाता, तब तक यह समझ में नही ांआता, इसीमलए ज्ञान ननधि कहा र्या।

अभी का प्रसर्ां है बालकाण्ड के अन्द्तर्तश "नाम महहमा" र्ोरखपुरी रामायर् दोहा नां. 18र्ांसे।

दोहा- चगरा अरथ जल बीचच सम कहहअि मभन्द्ि मभन्द्।
बंदउूँ सिीा राम पद स्जन्द्हहह परम वप्रय झखन्द्॥18॥

धर्रा कहते ेहैं र्ारी् को, अर् शकहते ेहैं उस र्ारी् के मतलब को, बीधच कहते ेहै लहर को। र्ारी् का अर्,श श्लोक का अर्,श र्दद का अर् शअर्ाात्श ्र्ारी् अलर् है और उसका अर् शअलर् है। श्लोक अलर् है और उसका अर् श अलर् है, र्दद अलर् है आ उसका अर् शअलर् है, इस तरह ये अलर्-अलर् हैं, मभन्द्न-मभन्द्न हैं, दो हैं, कहने। तो दो की प्रतीनत होती है 'कहहयत मभन्द्न' परन्द्तु 'न मभन्द्न' अर्ाशत् ्रे् मभन्द्न-मभन्द्न ना है, र्ारी् ही अर् शहै, र्दद ही अर् श है, जैसे 'जल बीधच सम'।

पानी की लहर कहने ेमें पानी और लहर अलर्-अलर् जान पडतेहैं, परन्द्तु 'न मभन्द्न'। अरे भाई! जल ही लहर है, लहर का आिार जल है, त्रबना जल के लहरों न फकस पर? फकसको लहर कहोर्े? ऐसे ही र्ारी् का आिार अर् शहै, क्योंफक जसरी जजसकी मसद्धि होती है र्ह उससे मभन्द्न नहीांहोता। सूत का र्ि, सोनेका आभूर्षर्, लकडी का डण्डा, ये सब 'कहहयत मभन्द्न' कहने ेमें मभन्द्न-मभन्द्न है, ऐसा लर्ता है, परन्द्तु र्ेचार कर देखो तो न मभन्द्न, अरे! सूत ही र्ि है, सोना ही आभूर्षर् है, लकडी ही डण्डा है।

इसी तरह 'बन्द्दौ सीता राम पद' सीता राम, कहने में दो की प्रतीनत होती है सीता और राम, परन्द्तु 'न मभन्द्न' रे् अलर्-अलर् नही ांहैं। सीता, राम है और राम ही सीता है कहतेहैं। परन्द्तु, र्ेचारने से 'न मभन्द्न' माया ही ब्रह्म है, ब्रह्म ही माया है। यहद माया की मभन्द्न सत्ता हो, त्रबना ब्रह्म के माया मसद्ि हो जाय, तब तो माया और ब्रह्म मभन्द्न-मभन्द्न हैं, दो हैं और यहद त्रबना ब्रह्म के माया मसद्ि नहीां होती तो ब्रह्म ही माया है, माया ही ब्रह्म है। राम और सीता, ब्रह्म और माया, पुरुर्ष और प्रकृनत। प्रकृनत कहते ेहैं स्र्भार् को। स्र्भार्, स्र्भार्ी से मभन्द्न नही ां होता। जैसे-देखना आँख का स्र्भार् है, आँख है स्र्भार्ी और देखना है स्र्भार्। तब यहद देखना न होर्ा तो आँख कहोर्े फकसको?

जजसका अर् शनही ांहोता उसे कहते ेहो, अरे! यह ननरर्कश है। पुरुर्ष और प्रकृनत अर्ाात्श ्पुरुर्ष ही प्रकृनत है, प्रकृनत ही पुरुर्ष है। व्यर्हाररक जर्त् ्में कहा जाता है फक अरे भाई! छोडो, जानेदो, इनकी ऐसी प्रकृनत ही है, आदत छूट सकती है, परन्द्तु प्रकृनत यानेस्र्भार् बदला नही ांजा सकता, क्योंफक स्र्भार्ी से स्र्भार् मभन्द्न हो तब तो र्ह बदल जाये, परन्द्तु जब स्र्भार्ी ही स्र्भार् है, तब उसे बदल कैसे सकते हो? इसमलए प्रकृनत जो है र्ह पुरुर्ष का स्र्भार् है। ब्रह्म, जर्त्,् जीर्, ईश्र्र, राम- सीता, भर्र्ान और माया इनको स्र्भार् और स्र्भार्ी जानो, ये दो नही,ां एक ही है।

प्रश्न होता है-तब मसया राम, दो र्दद क्यों कहा र्या?

उत्तर है- जहाँ ँतक र्ारी् का र्र्षय है र्ह तो सीता और जजस आिार पर मन का र्र्षय है र्ह है राम।

ञ्र्षय समझो देखो ससांार के प्रत्येक पदार् शमें पाँच अ ांर् होते हैं- अजस्त, भानत, प्रय, नाम और रूप।

देखो-यह फूल है, इसको कुछ मत मानो, फफर देखो, जैसे मर्ुअर्ात्श ्रोद का बच्चा (तीन-चार महीनेकी अर्स्ा) देखता है, उस स्तर से देखने पर यह फूल नहीां है, र्ह बालक यह नही ांजानता फक यह फूल है, परन्द्तु उसे यह कुछ प्रतीनत तो हो रहा है, उसे कुछ भान तो हो रहा है उसकी दृजष्ट में कुछ 'है'। तो, बस! यह जो है की प्रतीनत हो रही है, र्ही अजस्त है, अजस्तत्र् है, 'है' है, यह जो अजस्तत्र् है र्ही सत् ्है, जो भास रहा है, उसकी प्रतीनत होना भासना, यही धचत् ्है, अर्ात्श ्चेतन है और जो भास रहा है (चेतन) र्ही प्रय है अर्ात्श ्आनन्द्द स्र्रूप है। इस तरह जजसे तुम फूल कह रहे हो, र्ह अजस्त, भानत, प्रय अर्ात्श ्आनन्द्द स्र्रूप है। इस तरह जजसे तुम फूल कह रहे हो, र्ह अजस्त, भानत, प्रय अर्ात्श ्सत्, ् धचत्, ् आनन्द्द अर्ात्श ्सजच्चदानन्द्द राम हुआ यही तीन अर्ां राम है, अब इस अजस्त, भानत, प्रय (सत, धचत्, ् आनन्द्द) (सजच्चदानन्द्द) राम पर फूल की कल्पना की र्यी, फूल का र्र्कल्प हुआ, फूल माना र्या, तब फूल यह नाम और इसका यह रूप जो हदखाई दे रहा है ये दो अ ांर् (नाम और रूप) माया है, अर्ात्श ्सीता है, क्योंफक मानना ही माया है। यहद, अजस्त, भानत, प्रय यह आिार न हो, इसे यहद अलर् कर लो तो फूल मानोर्े फकसको? फूल का नाम और यह रूप, फकसके आिार पर रहेर्ा? र्ोद का बच्चा आर्े चलकर उसी अजस्त, भानत, प्रय को ही कहता है फूल है, अब उस फूल की मान्द्यता हुई, फूल का र्र्कल्प हुआ, जो मान्द्यता ही सीता है। अब दृजष्ट पसार कर देखो इस अजस्त, भानत, प्रय, नाम और रूप से कोई खाली है? इस तरह जो भी दृजष्ट र्ोचर हो रहा है र्ह सब राम और सीता ही तो है, इसी स्र्ल पर मानसकार अपनेअनुभर् रख रहे हैं फक -

आकर चारर लाख चौरासी । जानत जीर् जल थल नभ बासी।
सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरर जुग पानी ॥

चौरासी लाख योननयों में चार प्रकार के जीर् (स्र्ेदज, अण्डज, उद्मभज, जरायुज) जल, र्ल और आकार् में रहतेहैं, उन सबसे पूर् श(भरे हुए) इस सारे जर्त् ्को श्री सीता राम जानकर म ैंदोनों हार् जोडकर प्रर्ाम करता हूँ।

इस तरह सारा चराचर राम और सीता ही है, उससे एक तृर् भी खाली नही ांहै।

बंदउँ सीता राम पद, स्जन्द्हहह परम वप्रय झखन्द्न

ये र्ार्ी भी तो अजस्त, भानत, प्रय पर ही अर्लजम्बत है, आिाररत है। इल अनुभूनत में अब कहाँ र्र्ा ससांार? फकसको तुम ससांार कहतेहो?

ये राम और सीता, जल और तरांर् र्त् ्एक-दूसूरे से मभन्द्न नहीांहै, जैसे जल से तरांर् अलर् नही ांफकया जा सकता। ऐसे ही अजस्त, भानत, प्रय से, नाम और रूप अलर् नही ांफकया जा सकता। भर्र्ान (राम) से माया (सीता) को अलर् मानना यही दु:ख का कारर् है। माया तो भर्र्ान का रिक है, राम बल्लभ है, सीता बल्लभा है, जो इनमें भेद डालता है, उन्द्हें अलर्-अलर् मानता है उसकी खैररयत कहाँ है? भाई! इसी में दुननया र्ंसी जा रही है,

जो भर्र्ान और माया को मभन्द्न-मभन्द्न मानती है। माया बेचारी फकतनी रिक है, जो भर्र्ान को ढाँक-मूँदकर रखती है, ई अधिकारी को तो देखने देती है और अनधिकारी से नछपा लेती है उसे दर्नश नहीां कराती।

अधिकारी कौन? जो माया को राम ही जानता है, जजनकी दृजष्ट में माया और भर्र्ान दो नही ांहैं, एक ही है।

भर्र्ान, माया से परे है, 'माया से परे है' कहने ेका तात्पय शयह है फक भर्र्ान देर् में माया है ही नही।ां दुनुनया माया से र्र्ाि करती है, इसमलए दुुःख पाती है।

तिज भ्रम िहहं ांसमुझहहं ांअग्यािी। प्रभु पर मोह घरहहं ांज़ ग्रािी ।
जथा गगि घि पटल तिहारी । झापेँउ भािु कहहहं ांकुत्रबचारी ।।
चगचि जो लोचि अंगुमल लाएँ। प्रगट जुगल समस िेहह के भाएँ।
उमा राम विषइक अस मोहा । िभ िम घूम घूरर स्जमम सोहा ।।

(बा.का., मर्.र्ी.)

ससांार के जजतनेजीर्र्ादी हैं और यहद र्े ेयहाँबैठे हों तो उन्द्हें कहना है फक भाई! माया से यहद तरना चाहो

तो माया से भर्र्ान को मभन्द्न मत मानो, एक ही जानो।

यही र्ीता, रामायर्, भार्र्त, उपननर्षद्, र्ास्त्रों एर्ं ांसन्द्त महात्माओांका तर्ा स्र्यांहमारा अनुभर् है।
यहद फँसना है तो भर्र्ान को माया मानो और यहद उससे छूटना है, ननकलना है तो माया को भर्र्ान जानो ।
भर्र्ान कृष्र् कहते ेहैं -

दैर्ी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरुत्यया ।
मामेि ये प्रपद्यन्द्तेमायामेतां िरस्न्द्ि िे ।

(र्ीता अ. 7, श्लोक 14)

आर्े मानसकार अब केर्ल राम की र्न्द्दना करते हैं.

बंदउँ िाम राम रघुबर को। हेिु कृसािु भािुहहमकर को ।।

सन्द्त तुलसीदास कहतेहैं फक भर्र्ान रघुनार् का जो श्रेष्ठ नाम राम है, उसकी म ैंर्न्द्दना करता हूँ, ई नाम कैसा है? तो कहतेहैं-हेतु कृर्ानु कृर्ानु अर्ात्श ्अजग्न, भानुअर्ात्श ्सूय शऔर हहमकर अर्ात्श ्चन्द्रमा। हहमकर को

अजग्नर्ां्र् में परर्ुराम का अर्तार हुआ, सूयर्श्ां में रामार्तार और चन्द्रर्ांबिलरामार्तार हुआ, अतः तीनों र्ां के राम हेतु हैं, कारर् है-

स्ांसिा से सोहं हुआ, सोहं से ओंकार ।
ओंकार से ररिाहुआ, साधू करौ विचार ।।

जो कुछ र्ा, जो कुछ है, जो कुछ होर्ा, र्े ्सब ओकांार ही है भाई! जजसको कु र्ीर कहतेहो र्ह सािात् ् भर्ान ओकांार है, जजसका उच्चारर् नही ंहो सकता र्ही तुम हो, अद्शिमिाा का क्या उच्चारर् होर्ा? र्ह ननत्य है। इसमलए,

बंदरूँ िाम राम रघुबर को। हिे कृशिु भिािुहमकर को ॥
त्रबचध हररहर मय बेद प्रिा सो। अगिु अिूपम गिु तिधिा सो ॥

र्ह ब्रह्मा, र्ष्िु और मर्् अर्ात्श ्कल्यार् स्र्रूप हैं, र्े र्ेदों के प्रार् हैं, के उसकी ही व्याख्या करते हैं, र्ह अर्ुर् हैं अर्ात् श ्तीनों र्ुर्ों से रहहत हैं, अजस्त भ्रानत, प्रर्य, रूप राम में हटको तो 'अर्ुर्' अर्ात् श ्तीनों र्ुर्ों से परे हो र्या, हर्ुर्ों का क्या काम? र्ह तो र्ुर्ातीत पद है, र्ह अनुपम है, उसके समान दूसूर नहीं, जब दूसरा हो तब उपमा दी जाय। र्ह सर्ुर्ों का भण्डार है। सर् र्ुर् उसे पर ओिाररत है।

महामंजोइ जपि महेसू। कासी मुकुति हिेु उपदेसू ॥

भर्ान र्ांकर 'राम' इस महामिां का हदन-रात जप करते रहतेहैं। कहा जात है फक जो कार्ी में मरते हैं उनकी मुजक्त हो जाती है, ऐसी कहार्त है, इसका तात्प यह है फक "कार्: ब्रह्म प्रकार्: यस्यां अर्स्र्ायां सा कार्ी" र्ही काय मरर्ान्द्मुजक्त। अर्ात्श ्जजस अर्स्र्ा में हृदय में ब्रह्म का प्रकार् हो जाये र्ही कार्ी। और उसी कार्ी में मरने से मुजक्त होती है।

महहमा जासु जिा गिराऊ । प्रथम पूस्जअि िाम प्रभाऊ ॥

जजस राम नाम की महहमा को र्र्ाऊ र्ेर् जी जानते हैं, जो इस राम नाम के प्रभार् से ही सबसे पहहले पूजेजाते हैं, जजसकी कर्ा तो जानते ही हो, अरे! जो सबका ईर् हो उसे कहतेहैं "र्ेर्"।

गणिाां ईशाः गणेशाः, दिशाां ईशाः दिशाः ।
जिा आहदकत्रब िाम प्रिापू । भयउ सुद्ध करर उलटा जापू ।।

आहद कर्् श्री र्ाल्मीफक जी राम नाम के प्रताप को जानते हैं, जो उलटा नाम जपकर पर्ी हो र्ये, तो भाई! उलटोर्े तब तो र्ुद्ि होर्े, उलटना क्या?

जग से छत्तीस रह, राम चरण छाः िि ।।

ससांर की ओर से उलटकर, राम की ओर मुँह कर लो।

सहस िाम सम सुति मसिबिाी। जवप जेई वपय संग भ्िाी ।।

माता पार्तशी जी मर्ज् जी के इस र्चन को सुनकर फक एक राम नाम सहस्निाम के समान है, रे् सदा

अपनेपनत भर्ग्न कां र के सार् राम नाम का जप करती रहती हैं -

राम रामेति रामेति रमे रामे मोिरमे ।
सहस्रिामि ित्तुल्युं ंराम िाम िरिे ।।
हरषेहिु हेरर हर ही को। फकय भूषि तिय भूषि िी को ।
िामि प्रभाउ जािा मसि िीको । कालकूट िलुदीन्दह अमी को ।।

नाम के प्रनत पार्तशी जी के हृदय की ऐसी प्रीनत देखकर मर्ज्जी हर्षतश हो र्ये और उन्दहोंने जस्त्रयों में भूर्षर् रूप पनतव्रताओां में मर्ोमर्र् पार्तशी जी को अपना भूर्षर् बना मलया अर्ातश ्उन्दहें अपनेअर्ां में िारर् कर अिांधर्नी बना मलया। नाम के प्रभार् को मर्ज्जी भली-भाँनत जानते हैं, जजस प्रभार् के कारर् कालकूट जहर ने उन्दहें अमृत् का फल हदया।

दोहा - बरषा ररि रघुपति भगति िुलसी सामल सुदास ।
राम िाम बर बरि जुग िािा भादि मास ।।

(बा.कां. दो. 19)

भर्ग्न राम की भर्नत र्षाशऋतु है, जजतनेभक्तर् हैं, रे् िान के फसल हैं, और 'र' और 'म' ये दोनों

अिर सार्न भादों के महीनेहैं।

आखर मधुर मिोहर दोऊ। बरि त्रबलोचि जि स्जय जोऊ।
सुममरि सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक तिबाहू ।।

दोनों अिर मिुर और मनोहर हैं, जो र्मशाला रूपी र्ीर के ने हैं तर्ा स्मरर् करने ेमें सबके मलए सुलभ और सुख देनेर्ाले हैं, ये मिुर नाम लोक और परलोक दोनों को सम्भालने र्ाले हैं।

कहि िासु सुममरि सुहठ िीके । राम लखि सम वप्रय िुलसी के ।
बािरि बरि प्रीति त्रबलगिाी। ब्रह्म जिी सम सहज संघािी ॥

ये कहनेसुनने ेऔर स्मरर् करनेमें बहुत ही सुन्दर और मिुर हैं, तुलसीदास को 'र' और 'म' ये दोनो राम और लक्ष्मर् के समान अत्यन्द्त प्यारे हैं, इनके अर् शऔर फल में जरा भी मभन्द्नता नहींहै। ये जीर् और ब्रह्म के समान रुभार् से ही सदा एक रस और एक रूप हैं। इससे स्पष्ट है फक जीर् और ब्रह्म दोनों अलर्-अलर् नहीं, र्रन रुभार् से ही एक ही हैं।

रि िारायि सररस सुभ्रािा । जग पालक त्रबसेवष जि िािा ।
भगति सुतिय कल करि विभूषि । जग हहि हिु त्रबमल त्रबधु पूषि ।।

ये दोनों अिर 'रा' और 'म' नर-नारायर् के समान सुन्द्दर भाई हैं, ये जर्त् ्का पालन और र्र्ेष रूप से भक्तों की रिा करने ेर्ाले हैं। भजक्त रूर्पर्ी सुन्द्दर स्त्री के कानों के आभूषर् सुन्द्दर कर्णूशल हैं और जर्त् ्के हहत के मलए ननमलश चन्द्रमा और सूय शहैं।

स्िाद िोष सम सुगति सुधा के । कमठ सेष सम घर बसुधा के ।
जि मि मंजुकंज मधुकर से। जीह जसोमति हरर हलधर से ।।

इनमें मिो रूपी अमृत का स्र्ाद भरा है, ये कच्छप और र्ेर्ेष जी के समान पृथ्र्ी के िारर् करने ेर्ाले हैं। ये भक्तों के मन रूपी सुन्द्दर कमल में त्रबहार करने र्ाले भौरों के समान हैं और जीभ रूपी यर्ोदाजी के मलए श्रीकृष्र् और बलराम के समान आनन्द्द देनेर्ाले हैं।

दोहा - एकु छि एकु मुकुटमति, सब बरिति पर जोउ।
िुलसी रघुबर िाम के, बरि त्रबराजि दोउ ||20।।

तुलसीदास जी कहते ेहैं फक श्री रघुनार् जी के नाम के दोनों अिर बडी र्ोभा देते हैं, जजनमें से एक "रकार" छिरूप रेफ से और दूसूरा मकार मुकुट मर्् अनुस्र्ार रूप से सब अिरों के ऊपर है।

समुझि सररस िाम अर िामी । प्रीति परसपर प्रभु ुअिुगामी ।
िामि रूप दुइ ईस उपाधी । अकथ अिाहद सुसामुझझ साधी ॥

समझने ेमें नाम और नामी दोनों एक से हैं, फकन्द्तुदोनों में परस्पर स्र्ामी और सेर्क के समान प्रीनत है, नाम और नामी दोनों एक-दूसूरे से अमभन्द्न हैं, दोनों में ऐसी एकता है फक नाम के पीछे नामी चला करता है। नाम और रूप दोनों ईश्र्र की उपाधि हैं, ये दोनों अननर्चशनीय हैं, अनाहद हैं, परन्द्तु भैय्या! जजसकी ननमलश भजक्त परर पूररत पर्ी बुद्धि होर्ी, उस बुद्धि से ही, इसका हदव्य अर्र्नार्ी स्र्रूप जानने ेमें आता है। अजस्त, भानत, प्र्य, भर्र्ान राम है और नाम रूप, भर्र्ान राम की उपाधि है। र्ास्तर्र्कता पर जो पदाश डाले उसे उपाधि कहते हैं।

भर्ग्न के नछपने की झाडी माया है। नाम रूप ही माया है। परन्द्तु, जब मायापनत अकर् है, तब माया भी अकर् ही है। अधिष्ठान में कजल्पत ाितु, अधिष्ठान से मभन्द्न नहीां होती त्रबना अधिष्ठान, परम तत्र् भर्ग्न आत्मा के नाम रूप (माया) फकसके आिार पर रहेंर्े? जैसे, लकडी से डण्डा मभन्द्न नहीां, ममट्टी से घडा मभन्द्न नही,ां सूत से र्स्त्र मभन्द्न नही,ां जब यह अटल ननयम है फक अधिष्ठान से मभन्द्न उसमें कजल्पत र्स्तु नहीांहोती, तब मुझ आत्मा राम में नाम रूप जो कजल्पत है र्ह उससे मभन्द्न कैसे हो सकती है। इसमलए, माया भी अकर्नीय है, अनाहद है, परन्द्तुअनन्द्त नहीांहै, माया के अजस्तत्र् के अज्ञान से ही माया है, इसमलए अधिष्ठान के ज्ञान हो जाने पर माया र्ातां हो जाती है। जब तक अधिष्ठान को नही ांजाना, तभी तक माया है, जब अधिष्टान का ज्ञान हो र्या, अनुभर् हो र्या, दर्नश हो र्या, तब माया न रही, अधिष्ठान का अधिष्ठान ही रह र्या, लकडी के बोि हो जानेपर उस पर कजल्पत डण्डा न रहा, लकडी ही रह र्यी। ऐसे ही भर्ग्न 'म'ैं राम अधिष्ठान पर जर्त् ्प्रपचां, माया, जो कजल्पत है, र्ह 'म'ैं आत्मा के बोि हो जाने पर र्ातां हो जाती है। मतलब यह है फक 'म'ैं आत्मा राम ही हूँ, जजसका नाम माया है।

को ब़ छोट कहि अपराधू । सुनि गुि भेदु ुसमुझझहहहं ंसाधू ।
देझखअहहं ंरूप िाम आधीिा। रप ग्यािा िहहं ंिाम त्रबहीिा ।।

इसमें से फकसी को छोटा और फकसी को बडा कह कर कौन अपराि मोल ले "नाम रूप र्नत अकर् कहानी" इसकी र्नत अकर् है, मान्द्यता ही माया है, मानता कौन है? फकसको मानता है? ये सब समझने की चीज है, बखान करने की नही।ां

जीिंकल्पयिे पूिं ंततो भािान्द्पृथग्विधिान ्।
बाह्यािाध्यात्मकांश्चिै यथाविद्यस्तथास्मृततः ॥

(माडूां उ.र्ै.प्र.मां-16)

सबसे पहहले परमात्मा ने अपनेआप को ही माना फक 'म'ैं ससांारी जीर् हूँ। अब र्र्चार करो फक 'म'ैं जीर् हूँ, इस र्ाक्य में हूँ फिया फकसकी है, 'म'ैं की या जीर् की? अर्र हूँ फिया जीर् की है, तब तो म ैंजीर् हूँ और यहद हूँ फिया 'म'ैं की है, तो 'म'ैं जीर् नही ांहूँ, भर्ग्न ही हूँ। यह अकुांहठत मसद्िान्द्त है, सारे र्र्श्र् के जीर्ोंहृदयों के मलए यह चुनौती है, चाहे ब्रह्मा ही क्यों न हो, देर् हों या दैत्य हों, कोई भी हों, अर्खल ब्रह्माण्ड के जीर् र्ाहदयों का कहना है फक 'हूँ' फिया 'म'ैं की है, जीर् की नही।ां

अगुि सगुि त्रबच िाम सुसाखी । उभय प्रबोधक चिुर दुभाषी ।।

र्ुर्ातीत ब्रह्म और साकार ब्रह्म, ननर्ुर्श और सर्ुर् दोनों का यह सुसाखी है अर्ातश ्चतुर दुभार्षया है (दो भार्षाओां के जानने र्ाले को दुभार्षया कहते ेहैं) यह राम नाम जो है र्ह सर्ुर् है और ननर्ुर्श दोनों का ज्ञान कराता है।

दोहा - राम ाम मति दीप धर जीह देहरीं द्वारि।
ुलिसी भीिर बाहेरहुँ जौं चाहमस उस्जआर ||21||

भाई! अर्र बाहर और भीतर दोनों जर्ह उजाला चाहते हो तो राम नाम रूपी मर्र् को जजह्वा रूपी देहरी द्वार पर रखो। बाहर अन्द्धकार है, जजसके कारर् रामसीय मय सारा चराचर भर्ान भास, ससाांर हदखाई दे रहा है और भीतर के अांधकार के कारर् भर्ान आत्मा 'म'ैं जीर् हदखाई दे रहा है। हदन-रात, तबला मजीरा के सार् र्ा रहे हो फक -

सीय राम मय सब जग जािी।
ज़ िंचे जग जािी जि सकल राम मय जाति ॥

परन्द्तु हृदय में र्ैसी ारर्ा क्यों नही ांहो जाती, क्योंफक तुम्हारा र्ाना बजाना भी अांधेरे में ही हो रहा है, बाहर-भीतर दोनों जर्ह अांधकार छाया हुआ है। इस अांधकार के कारर् ही सत को असत्, ् जड को चेतन, अांधकार को प्रकार् दुनुनया मानतेचली आ रही है। अब प्रश्न होता है फक हम तो रोज हजारों माला सरका-सरका कर जीभ से राम नाम का जप कर रहे हैं, तब भी एक भी जर्ह प्रकार् नहीांहो पाया, जैसे पहले र्े, र्ही अभी भी बनेहुए हैं, इसका क्या कारर् है? बाहर, भीतर अांधकार ही छाया हुआ है, प्रकार् न हो पाया।

इसका कारर् यह है फक राम नाम मर्र् जीह देहरी द्वार पर नही ांरखा र्या। मानसकार का भार् जजस देहरी द्वार से है उसे तो सन्द्त ही अनुभर्ी महान पुरुर्ष ही उसे लखाते हैं। जानते हैं और सन्द्त

'भाई! र्र्षय समझो -मानसकार का तात्पय शजजसे तुम जीभ समझे ेहुए हो उस जीभ से नहीां, इस जीभ की जड में जहाँ से फक यह रस लेनेर्ाली जीभ रुरू होता है र्हाँ ही इस जीभ के ऊपर एक छोटी जीभ है, जजसे जीभी या काकल जजरुरू होती है। उस जीभ का अनुभर् करो और उसी अन्द्तजजह्शर्ा से राम नाम जपो, जप करत हम ीमी र्नत से हो, आराम से जरूरतापूर्कश, ननष्ठा और लर्न के सार्, इस तरह काम जप करनेसे र्ोडे ेही काल में उस अननर्चशनीय आनन्द्द की अनुभूनत होती है या नहीां इसका अनुभर् करो, यही अन्द्तजजह्शर्ा ही देहरी द्वार है जहाँ पर राम नाम मर्र् रखनेसे दोनों जर्ह बाहर और भीतर प्रकामर्त होता है। यह र्ोपनीय रहस्य है, जजसे अधिकारी को ही बताया जा सकता है, परन्द्तु हमारी दृजष्ट में सारा प्रार्र् मिा ही जब अधिकारी है (क्योंफक सब की तलार् उसी ननत्यानन्द्द की है) तब दुरुार् की रुजांाइर् कहाँ ँहै? दूसूरी बात यह है फक कैसा भी र्ोपनीय रहस्य हो तुम लाखों लोर्ों के समि प्रर्ट कर दो, परन्द्तु भैय्या! जो अधिकारी होता है, र्ही इसे पकड पाता है, सुनते ेसब हैं।

अब प्रसर्ां पर आ जाओ-प्रपांच को ननष्प्रपांच करनेके मलए, इस जीभ से जप करनेपर मन अपने आप ननर्र्कशल्प हो जाता है, फफर बाहर और भीतर दोनों प्रकामर्त हो जाता है। बाहर जब प्रकामर्त होता है तब जजसे तुम ससाांर कहते हो, जो तुम्हें ससाांर हदख रहा है र्ह भर्ान हदखने लर्ता है, उस पर से जर्त् ्भार् चला जाता है और भीतर जब प्रकामर्त होता है तब 'म'ैं पर अनाहदकाल से देहभार्, जीर्भार् आहद जो अमुक भार् है उसका

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 231 सर्र्शा अभार् हो जाता है और र्ुद्तित्र् भर्ान आत्मा 'म' ँ का अनुभर् होता है। यह एक ऐसा दीपक है फक जो

स्र्ाभार्क है, इसीमलए इसे मर् की उपमा दी ई र्ी। अज्ञान अिंकार के ममटते ही, ननर्कशल्पता की जस्नत में जत्र्भार् और जीर्भार् के अभार् होते ही सर्भशार्ों का सर्र्शा अभार् हो जाता है, तब इस जस्नत में जबफक देहभार्, जीर्भार्, ब्रह्मभार्, जर्तभार्, पुरुर्षभार्, प्रकृनत भार्, सर्ुभार्, ननर्ुर्शभार् आहद कुछ भार् न रहा तब जो र्ेर्ष रह जाता है, र्ह अननर्चशनीय आनन्द (ब्रह्म सुख) अनुभर् का र्र्षय है उसे तो अनुभर् करके ही जानोर्े, र्ह कहने सुनने की चीज नहीं बजल्क अनुभर् की र्स्तु है।

ाामि जीहूँ जवप जागहहं जोगी । त्रबरति त्रबरंचच प्रपंच त्रबयोगी ।
ब्रह्मसुखहहं अिुभिहहं अिूपा। अकथ अिामय िाम ि रूपा ।।

इस र्धि से नाम का जप करके योर्ी जार्ते हैं, कैसे योर्ी? अरे! जजसे ब्रह्मा के बनाये हुए इस प्रपचां से भली प्रकार से र्ैराग्य हो र्या है ऐसे योर्ी, फफर र्े ही इस ब्रह्म सुख का अनुभर् करते हैं। र्ह ब्रह्म सुख कैसा है? तो मानसकार कहते हैं फक 'अनूपा' और फफर 'अकर्' 'अनामय' फफर 'नाम न रूपा'। उस सुख की उपमा र्श्र् के फकसी सुख से नही ांदी जा सकती, र्ह अकर् है, र्ह ब्रह्म सुख अपने से मभन्द्न हो तब तो र्ार्ी उसे व्यक्त करे, क्योंफक अमुक भार् ही र्ार्ी, बुद्धि, धचत्त, इजन्द्दयाँ आहद का र्र्षय है, परन्द्तुजब सर् शअमुक भार् का ही अभार् हो र्या तब मन, बुद्धि, धचत्त इजन्द्रयाँ र्ार्ी आहद कहाँ रही, क्योंफक ये भी तो सब अमुक भार् ही है, तब फफर बतार् ँकौन फक र्ह ब्रह्म सुख कैसा है? इसमलए अकर्।

श मलर्हत-आनन्द अर्ाशत् अमुक भार् हो तो मल है, जजसका हाँसर्र्शा अभार् है। फफर उस अननर्चशनीय आनन्द का न कोई नाम है और न रूप है र्ह केर्ल अनुभर् र्म्य है। इस जन्द्म में जपा और र्ह ब्रह्म सुख अर्ले जन्द्म में प्राप्त होर्ा। भैय्या, ऐसी बात नहींहै, तत्काल अनुभर् करो, हार् कांर्न को आरसी क्या? यह तो नेर्नल बकैं का चेक है, जहाँ चाहे हाँभुना लो।

एहह जग जाममति जागहहं जोगी । परमारथी प्रपंच त्रबयोगी ।।

अज्ञान अिंकार में सोया र्ा यही रात्रि र्ी, जब ज्ञान का प्रकार् हुआ, तब अज्ञान रात्रि का अतां हो र्या। तब सोना कहाँ? जार्ना ही जार्ना है।

जािा चहहहं गूढ़ गति जेऊ । िाम जीहूँ जवप जािहहं तेऊ ॥

यहद नाम की रूढ़ र्नत को जानना हो तो इसी जीभ से नाम जपकर जाना जा सकता है, इस जीभ से जप करने पर जब ननर्कशल्पता आ र्यी तब सांसार ही न रहा, सब बह र्या, केर्ल अपना आप ही रह र्या। अरे, यही तो नाम की रूढ़ र्नत है और यही भर् सार् से तरना है।

जासु िाम सुममरि इकबारा । उत्तरहहं िर भि मसन्द्धु अपारा ॥

बहुबारा नही,ां एक ही बार कहा र्या, परन्द्तु इसी प्रकार सुममरन करने कहा र्या।

प्रश्न होता है-र्ूढ़ र्नत क्या है?

उत्तर है-अन्द्तजजह्शर्ा से जप करने ेसे, जजसका लिर् र्ूढ़ है, जजसका अनुभर् र्ूढ़ है, जप र्ूढ़ है, जो हर एक के र्् की बात नहीं है, क्योंफक 'अकर्, अनामय, नाम न रूपा' है, तब र्ह र्ूढ़ नहींतो क्या है? जो सर् शमें, सर्रूशप से, सर् शहोकर, सर् शका सब कुछ होकर है। इसमलए, र्ह र्ूढ़ नहींतो क्या है? उसको जानना, अनुभर् करना, समझना सभी र्ूढ़ है, त्रबना सन्द्त र्र् के उसकी र्ूढ़ता कोई जान नही ांसकता। इसे तो र्ही जान पाता है, जजस पर सन्द्त भर्र्ान की कृपा हो जाती है, जजसे सन्द्त र्र् की उपलजदि हो जाती है।

भर्र्ान आत्मा 'म'ें प्रर्ट होतेहुए र्ुप्त है और कहठन होते हुए सरल है, र्ुप्त होतेहुए प्रर्ट है और सरल होतेहुए कहठन है, यही भर्र्ान आत्मा की र्ूढ़ता है। श्रुनतयों, स्मृनतयों, र्ेद, र्ास्त्रि और सन्द्त महात्माओां का कहना है फक र्ह भर्र्ान आत्मा, मनर्ार्ी का र्र्षय नही ांहै। प्रश्न होता है-क्यों?

उत्तर है अरे! जो मन का मन है, बुद्धि की बुद्धि है, धचत्त का धचत्त है, र्ार्ी की र्ार्ी है, इजन्द्रयों की इजन्द्रयाँहैं तो फफर ये उसे क्या जान सकतेहैं, अर्र इनसे मभन्द्न हों, तब तो देखें, जानेऔर जब सर् शमें सर्रूशप से, सर् शहोकर सर् शका सब कुछ होकर है तो फकसकी ताकत है फक उसे ढूँढ़कर ननकाल ले, र्ह सामान्द्य रूप से सबमें घुला-ममला है तब फफर र्ह जाना कैसे जा सकता है? यही उसकी र्ूढ़ता है, यही र्ूढ़र्नत है, जजसका जानना, समझना, प्राप्त करना सब कुछ सन्द्त र्र् की देन है, फफर तो र्ह र्ुप्त होतेहुए प्रर्ट और कहठन होतेहुए सरलतम है।

साधक िाम जपहहं ांलय लाएँ। होहहं ांमसद्ध अतिमाहदक पाएँ ।।

लौफकक मसद्धियों के चाहनेर्ाले सिाक लौ लर्ाकर नाम का जप करते हैं और अर्र्माहदक मसद्धियों को पाकर मसद्ि हो जाते हैं, परन्द्तु यह सिाकों को ही मुबारक हो, भक्त इस ओर ध्यान भी नहीं देते क्योंफक - ये सब राम भजक्त के बािक हैं।

अकट मसद्चध िि तिद्चध को, साधू मारि लिा ।।

मसद्धियाँआठ हैं -

1. अझणमा मसद्चध - अत्यन्द्त छोटा हो जाना। मसक समान रूप कर्प घरी

2. महहमा मसद्चध- आकार् तक बढ़ जाना, बडा हो जाना।

जस-जस सुरसा बदनु बढार्, तासु दूनू कर्प रूप हदखार् ।।

3. लतघमा - अत्यतां सूक्ष्म हो जाना।

4. गररमा मसद्चध - बहुत र्जनीय हो जाना।

5. प्रास्प्मिसद्चध - इजच्छत र्स्तु प्राप्त कर लेना।

6. प्रकाम्य - कामनाओां की पूनत शकर लेना।

7. ि‍शीकरण - जजसे चाहे, र्् में कर लेना।

8. ईशा - ईर्र्ता अर्ात् श ्सब पर र्ासन करना।

इन आठ मसद्धियों की ही तरह नर् ननधियाँभी हैं, परन्द्तु क्या करोरे्। इन्द्हें सब जानकर आत्म कल्यार् के मलए ये सब बिाक हैं। इसीमलए हम इन पर कभी रोर्नी नही ांडालते।

आये थे ेहरर भजि को । ओटि लगे कपास ॥

हाँ,ॅ भर्र्ान आत्मा को प्राप्त कर लो, फफर तो ऋद्धियाँ और मसद्धियाँ तुम्हारे पीछ-पीछे फफरेंर्ी।

एक बार कोई मसद्मिहात्मा स्र्ामी राम के पास पहुँचे,े व्यर्हाररक मर्ष्टाचार के बाद स्र्ामी जी ने उन्द्हें बडे ेप्रेम से अपनेपास त्रबठाया और कुर्ल समाचार पूछने ेलरे्। महात्मा मसद्रिे, सनक में आकर र्े कहने लरे् स्र्ामी जी ! मनैं ेएक मसद्धि प्राप्त की है, तब स्र्ामी राम ने पूछा भैय्या! र्ह कौन-सी मसद्धि है, जजसे तुमने प्राप्त फकया है? महात्मा कहने लरे् स्र्ामी जी। जैसे मनुष्य जमीन पर चलता है उसी प्रकार में पानी के ऊपर चल सकता हूँ, मेरा कोई अर्ां भीर्ांने नहीांपाता, बढ़ी हुई नदी पार करने के मलए यह बडा लाभप्रद है, तब स्र्ामी राम ने कहा- भाई ! यह मसद्धिआपको फकतने हदनों में प्राप्त हुई? महात्मा कहने ेलरे्, महाराज! पूरे बारह र्र्ष शके कहठन तपस्या के बाद म ैंइसे प्राप्त कर पाया हूँ। इस पर स्र्ामी जी कहने लरे्-भाई! लोर् नार्र्क को चार पैसे देकर नार् द्र्ारा त्रबना प्रयास नदी पार कर लेते हैं उसके मलए बारह र्र्ष शतक आपको कहठन तपस्या करनी पडी, आपनेबडा कष्ट सहन फकया और महत्र्हीन चीज हामसल की इसी लर्न से इतनेकाल तक यहद भर्र्त भजन हुआ होता तो जीर्न कृतार्् शहो जाता।

एक बार इनके पास एक और अन्द्य महात्मा आए और र्े कहने ेलरे्, स्र्ामी जी! लोट-पोट कर देता है। तब स्र्ामी राम कहने ेसरे् भाई! र्ेदान्द्त में र्ह ताकत है फक ससांार तीन काल में है ही नही,ां इसे र्ह प्रत्यि जोर् में र्ह ताकत हदखा देता है तब लोटपोट फकसको कराना।

जपहहं ंिामु जि आरि भारी। ममटहहं ंकुसंकट होहहं ंसुखारी ।।॥

सकांट से घबराये हुए आत्त शभक्त जन नाम जप करके कहठन से कहठन आपर्त्तयों नेछुटकारा पा जाते हैं।

र्जेन्द्र का ग्राह से छूटकारा पाना और कौरर् सभा में रौपदी की लज्जा की रिा होना, ऐसे अनेक प्रमार् हैं।

राम भगि जग चारर प्रकारा। सुकृिी चाररउ अिघ उदारा ।।

ससांार में चार प्रकार के भक्त हैं

1. अथाथिी - िन आहद की चाह से भजने ेर्ाले।

2. आत्त– दुःखों से छुटकारा पानेके मलए भजनेर्ाले।

3. स्जज्ञासु-भर्र्ान को जाननेकी इच्छा से भजनेर्ाले।

4. ज्ञािी - भर्र्ान को तत्त्र् से जानकर, स्र्ाभार्र्क ही प्रेम से भजने र्ाले। ये चारों ही पुण्यात्मा पाप रहहत और उदार हैं।

चहू चिुर कहुँ िाम अधारा । ग्यािी प्रभुहह त्रबसेवष वपआरा ।।

चारों ही चतुर भक्तों को नाम का ही आिार है, इसमें ज्ञानी भक्त भर्र्ान को र्र्शेष रूप से प्रिय हैं।

चहुँ जुग चहुँ श्रुति िाम प्रभाऊ । कमल त्रबसेवष िहहं ंआि उपाऊ ।।

यों तो चारों युर्ों में, चारों र्ेदों में नाम का प्रभार् है, परन्दतु कमलयुर् में र्र्शेष रूप से इस युर् में तो नाम को छोडकर दूसूरा कोई उपाय नही ंहै, परन्दतु श्रद्िा और र्र्श्र्ास के त्रबना व्यजक्त रामखुदैय्या में पड जाता है, तो र्र्फलता का कारर् होता है।

फकसी नर्र के एक मुहल्ले में एक पडांडत जी और एक मुल्लाजी पास-पास रहा करते र्े। एक हदन इन दोनों में िाममकश र्र्र्ाद नछड र्या। पडांडत जी अपनेराम की महहमा बताकर मुल्लाजी से कहते फक हमारा राम ही सब कुछ है, उनकी श्रेष्ठता के सामने तुम्हारे खुदा की क्या धर्नती। मुल्लाजी इसका र्र्रोि करते और कहते ेफक हमारे खुदा के द्र्ारा ही ससांार सचांमलत हो रहा है, हमारे खुदा के अजस्तत्र् पर ही तुम्हारा राम हटका हुआ है, नहीं तो तुम्हारा राम फकस खेत की मूली है।

इसी प्रकार र्र्र्ाद बढ़ता र्या, पडांडतजी अपनेराम की अपेिा खुदा को श्रेष्ठ मानना स्र्ीकार नहींकरते र्े ेऔर मुल्लाजी अपने खुदा की तुलना में राम की तुच्छता में यह तय हुआ फक राम और अधिक र्जक्तर्ाली और श्रेष्ठ है, इसकी परीिा की जाय।

पडांडत जी ने कहा- देखो, सामने यह पीपल का बडा रॄ है, इसकी सबसे ऊँची चोटी पर चढ़कर अपने-अपनेइष्ट का नाम लेकर नीचेजमीन पर कूदा जाय, जजसका इष्ट अधिक र्जक्तर्ाली होर्ा ई अपनेउपासक को बचा लेर्ा। मुल्लाजी ने र्त शमाम ली, परन्द्तु पहहले पडांडत जी ही झाड पर ऊपर चढकर नीचेकूदें यह बात सामने रखी र्ीं। पडांडत जी को अपने राम पर पूर् शर्श्र्ास र्ा, उसने मन में ननश्चय फकया फक जजस प्रभु ुने ग्राह से र्ज की, दुशुर्ासन के अत्याचार से रौपदी की, दुयोिन की दुष्टुता से पाण्डर्ों की, हहरण्यकश्यप की िूरता से प्रहलाद की और रािसों की नीचता से देर्ताओांकी हमेर्ा रिा की, क्या र्े मेरी रिा करेंर्े? अर्श्य करेंर्े, इसमें जरा भी सदोंह नही,ां ऐसा मन में ठान बडी श्रद्िा से भर्र्ान का ध्यान कर अपनी िोती कस ली और पीपल के झाड की ऊँची चोटी पर चढ़ र्ये, मुल्लाजी मुँह बाँये ऊपर देखते रहे। पडांडत जी ऊपर चढ़कर "जै भर्र्ान राम की' कहकर िडाम से नीचेकूद पडे।े अपनेराम पर पूर् शश्रद्िा और र्श्र्ास होने ेके कारर् नीचेकूदने पर पडांडत जी को ऐसा अनुभर् हुआ मानो र्े रुई के ढेर पर कूदे हों। कही ांफकसी अर्ां पर बल तक नही ांपडा, मुल्लाजी यह देखकर दांर् रह र्ये।

अब मुल्लाजी के कूदने की पारी आयी, र्े बडी धचताां में पडे ेहुए झाड पर ऊपर चढनेलर्े, ऊपर चढ़कर मुल्लाजी ने र्र्चार फकया फक मनैं ेअपनेखुदा की कभी जीर्न में परीिा नही ांली, मालूम नही ांमुझे ेबचा सकनेकी र्जक्त उनमें है या नहीां, परन्द्तु इनके राम की महहमा तो मनैं ेअपनी आँखों से अभी ही देख मलया हो सकता है इनके राम ही अधिक बलर्ान हों, परन्द्तु क्या हमारे खुदा भी इतनेकमजोर होंर्े। इसी तरह दुर्र्िा में पडे ेहुए मुल्लाजी ऊपर डर्ाल पर बैठे हुए धचताां में डूब र्ये और सोचनेलर्े फक अब क्या करना चाहहए।

जब मुल्लाजी को इसी सोच र्र्चार में डर्ाल पर बैठे बडी देर हो र्ीं तब नीचेसे पडांडत जी ने ललकारा हाँडर्ाल पर कब तक बैठे रहोर्े ? नीचेकूदो। मुल्लाजी को अब नीचेकूदना तो र्ा ही उनने ेमन में सोचा फक राम और खुदा दोनों का नाम लेका कूदा जाय जो अधिक र्जक्तर्ाली होंर्े र्ीं मुझे ेबचा लेंर्े, ऐसा ननश्चय कर उनके राम और खुदा इन दोनों नाम को ममला एक नया नाम रामखुदैय्या बनाया और जैरामखुदैय्या की कहकर नीचेकूद पडे।े इनका दोनों में से एक पर भी पूर् शर्श्र्ास ही र्ा। अतः, पररर्ाम यह हुआ फक नीचे कूदते ही इनकी हड्डी-पसली चूर-चूर नेमयी और मुल्लाजी हीढेंर हो र्ये। भाई! खुदा कहो चाहे राम कहो, दोनों एक ही र्रमात्मा के मभन्द्न-मभन्द्न नाम हैं, तत्र् एक ही है, आर्श्यकता है इनमें पूर्नशनष्ठा, सच्ची श्रद्िा और अटल र्श्र्ास के होने ेकी. फफर तो र्ई सर्र्श, समान और व्यापक बाहे जहाँजजस िर् प्रर्ट फकये जा सकतेहैं, भर्र्ान कहाँ कहते हैं -

हरर ब्यापक सिि समािा । प्ेरेम ि ें प्रगट होहहं ंम ैंजािा ।।

कर्-कर्, जराश-जराश, भर्र्ान है, खुदा है, उससे एक नतल भर भी जर्ह जानी नहीांहै, खुदा या परमात्मा फकसी एक जर्ह ही हो ऐसी बात नही ांहै।

गर, खुदा काबे में हिेा है ि़ो बुिखािेमें किौ ?
हर है गंगाजल में ि़ो, जम-जम के पैमािे में किौ ?
ले चले मज़िूं को जंगल, उसिे हँसकर यूँ कहा ,
लैला गर बस्िी में हिेी, है ि़ो बीरािे में किौ ?
दार पर मंसूर चढ़ा पर ि़ समझा यह कोई
था अिलहक कह रहा, मंसूर दिीिी में किौ ?
फकससे बिों कर रहा है मुझको ऐ जाहहद बिा
छुपके बैठा है ि़ेरी, ि़सबीह के दािे में किौ

अब आ जाओ प्रसरं पर -

दोहा- सकल कामिा हीि जे राम भगति रस लीि ।
िाम सुप्रेम वपयूष ह्रद। तिन्हहुँ फकये मि मीि ||22||

जो सब प्रकार के कामनाओं से रहहत हैं और ननत्य राम भजक्त का पीयूर्ष पीते रहते हैं ऐसे भक्त जन भी नाम के सुन्दर प्रेम रूपी अमृत के सरोर्र में अपने मन को मछली बना रखे हैं, अर्ाशत् र्े भी नाम रूपी सुिा का ननरन्दतर आस्र्ादन करते रहते हैं, ि़र् भर भी उससे अलर् होना नहीं चाहते।

अगुि सगुि दुइ ब्रह्म सरूपा । अकथ अगाध अिाहद अिूपा ।।
मोरें मि ब़ िामु दुहू िें। फकए जेहहं जुग तिज बस तिजबूिें ॥

ननर्ुशर् और सर्ुर् ये ब्रह्म के दो स्र्रूप हैं, ये दोनों ही अकर्नीय, अर्ाह, अनाहद और अनुपम हैं। मानसकार करते हैं फक मेरी सम्मनत में नाम इन दोनों से बडा है, जजसने अपने बल से दोनों को र्श में कर रखा है।

प्रौहढ़ सुजि जति जािहहं जिकी। कहउँ प्रीति प्रीति रुचच मि की।
एकु दारुगि देझखअ एकू । पािक सम जुग ब्रह्म त्रबबेकू ।।
उभय अगम जुग सुगम िाम िें। कहेउँ िामु ब़ ब्रह्म राम िें ।
ब्यापकु एकु ब्रह्म अत्रबिासी। सि चेिि घि आिंद रासी ।।

मानसकार कहते हैं फक सज्जनर्र् इस बात को मुझ दास की हठढाई या केर्ल काव्योजक्त न समझें। मैं अपने मन के वर्श्र्ास, प्रेम और रूचच की बात कहता हूँ फक ननर्ुशर् और सर्ुर् दोनों प्रकार के ब्रह्म का ज्ञान अजग्न के समान है, ननर्ुशर् उस र्ुप्त अजग्न के समान है, जो काठ के अन्दर है, परन्दतु हदखती नहीं और सर्ुर् उस प्रर्ट अजग्न के समान है, जो प्रत्यि हदखती है परन्दतु तत्त्र्तः एक ही हैं, फफर भी दोनों ही जानने में बडे कहठन हैं, परन्दतु नाम से दोनों सुर्म हो जाते हैं, इसी से मनैं नाम को ननर्ुशर् ब्रह्म से और सर्ुर् राम से बडा कहा है। ब्रह्म व्यापक है, एक है, अवर्नाशी है, सत्ता, चैतन्द्य और आनन्दद की घन रामर् है।

अस प्रभु हृदय ेंअछि अत्रबकारी। सकल जिी जग दिी दुखारी।
ामि तिरूपि ाम िजि ें। सोउ प्रगटि स्जमम मोल रिि ें ॥

ऐसे र्ि्कार रहहत प्रभु के हृदय में रहतेहुए भी जर्त् ्के सब जीर्, दीन और दु:खी हैं।

या जग दुझुखया कोउ िहीं, सबकी गठरी लाल ।
गाठूँ खोल जिों िहीं, ं िों भइ कंगाल ।।

नाम के यर्ार्,श महहमा, रहस्य और प्रभार् को न जाननेसे ही ऐसी दर्ा हुई है और उसके ज्ञान हो जाने पर र्ही ब्रह्म ऐसे प्रर्ट हो जाता है जैसे पास में रखे रत्ना पहहचान लेने पर उसका मूल्य।

दोहा - तिरगिु े एहह भातूँ ब्र ाम प्रभाउ अपार ।
कहउूँ ामु ब्र राम ें तिज त्रबचार अिुसार ।।23।।

ननर्ुर्श ब्रह्म से नाम का प्रभार् पडा है, परन्द्तु सर्ुर् राम से भी म ैंनाम को ब समझता हूँ, क्योंफक -

राम भगि हहि िर ििु धारी । सहह संकट फकए साधु सुखारी ।
ामु सप्रेम जपि अियासा । भगि होहहं ंमुद मंगल बासा ।।
राम एक ापस तिय ारी । ाम कोहट खल कुमति सुधारी ॥
ररवष हहि राम सुकेिुसुा की। सहहि सैि सुि कीस्न्द्ह त्रबबाकी ।।
सहहि दोष दुखु दास दुरासा । दलइ ामुस्जमम रत्रब तिमस ासा ॥
भंजेउ राम आपुभि चापू । भि भय भंजि ाम प्रिापू ।।
दंडक बिु प्रभु कीन्द्ह सुहािा । जि मि अममि ाम फकए पािा ॥
तिमसचर तिकर दले रघुिंदि । ामु सकल कमल कलुष तिकंदि ॥
दोहा- सबरी गीध सुसेिकति सुगति दीस्न्द्ह रघुिाथ ।
ामि उधारे अममि खल बेद त्रबहदि गुि गाथ ||24||

भर्ान राम ने भक्तों के हहत के मलए मनुष्य र्रीर ारर् करके, स्र्यां कष्ट सहकर भक्तों को सुखी फकया, परन्द्तुनाम ने तो अपनेप्रभार् से अनेकों नाम प्रेमी भक्तों का उद्ार कर हदया। राम ने तो एक तपस्र्ी की स्त्री अहल्या का ही उद्ार फकया, परन्द्तु नाम ने करोडों दुष्टों की त्रबर्डी हुई बुद्धि को सुार हदया।

राम ने तो एक सुकेतुयि की कन्द्या ताडका की सेना और सुबाहु की समाजप्त की, परन्द्तु नाम ने अपने अनेक प्रेमी भक्तों के दोर्ष, दु:ख और दुरार्ाओंका नार् फकया।

राम ने दण्डक र्न को सुहार्ना बनाया, परन्द्तु नाम ने असख्ांय भक्तों के मनों को पर्ी्र् कर हदया।

राम ने रिसों के सारे पापों की जड को उखाड फेंका। कहाँतक कहें - राम ने तो र्बरी, जटायु आहद उत्तम सेर्कों को ही मुजक्त दी, परन्द्तु नाम ने अर्न्ग्त दुष्ुटों का सहांार फकया, जजसकी कर्ा र्ेदों में अ ांफकत है।

राम सुकंठ त्रबभीषि दोऊ । राखे सरि जाि सबु ्कोऊ ।
ाम गरीब अिेक ि ाजे । लोक बेद बर त्रबररद त्रबराजे ॥
राम भालुकवप कटकु बटोरा । सिेुहिु श्रम कीन्द्ह ि थोरा ।
ामु लेि भिमसंधुं सुखाहीं । करहु त्रबचार सुजि मि माहीं।।

राम ने तो सुग्रीर् और र्भीषर् दो को ही र्र् दी, परन्द्तु नाम ने अनेक र्ीबो पर कृपा की, जजसका र्ेद सािी है।

राम ने भालू और बन्द्दरों की सेना बटोरी और बहुत पररश्रम से समुर में पुल बाँनिेके बाद समुर को पार फकया, परन्द्तु यहाँ? नाम लेते ही ससांार सार्र सूब जाता है, परन्द्तु र्चार करो तब, अन्द्यर्ा नही।ां

राम सकुल रि ाििुमारा। सीय सहहि तिज पुर पगु धारा।
राजा रामु अिध रजधािी । गाि गिु सुर मुतिबर बािी ॥
सेिक सुममरि ामु सप्रीिी । त्रबिु श्रम प्रबल मोह दलु जीिी।
किरि सिेहैं मगि सुख अपिे । ाम प्रसाद सोच िहहं सपिे॥

राम ने कुटुम्ब सहहत रार्र् को युद्ध में मारा तब सीता सहहत अपने अयोध्याम प्रर्ेर् फकया, फफर राजा राम हुए और अयोध्या उनकी राजिानी हुई, देर्ता और मुनन सुन्द्दर र्ार्ी से उनका र्ुर् र्ाते हैं, परन्द्तुनाम प्रेमी भक्त प्रेमपूर्कश नाम के स्मरर् मार से त्रबना पररश्रम मोह की प्रबल सेना को जीतकर प्रेम में मग्न हुए अपनेही सुख में र्चरते रहतेहैं। नाम के प्रभार् से उन्द्हें सपनेमें भी कोई धचतांा नहीं सताती।

दोहा - ब्रह्म राम िें ामु ब्र बर दायक बर दाति ।
रामचररि सि कोहट महें, मलय महेस स्जयूँ जाति ||25||

भाई! इस प्रकार ननर्ुर्श ब्रह्म और सर्ुर् राम इन दोनों से नाम बडा है, यह र्रदान देने र्ालों को भी र् देनेर्ाला है। भर्र्ान र्ांकर ने इसका रहस्य समझकर ही, सौ करोड राम चररि में से इस राम नाम को ही सार रूप में चुनकर अपनेहृदय में ग्रहर् फकया है।

ाम प्रसाद संभु अत्रबिासी । साजु अमंगल मंगल रासी ।
सुक सिकाहद मसद्ध मुति जोगी। ाम प्रसाद ब्रह्मसुख भोगी ।

ारिद जिोउ ाम प्रािपू। जग वप्रय हरर हरर हर वप्रय आपू।
ामिु जपि प्रभु कीन्द्ह प्रसादू।ू भगि मसरोमति भे प्रहलादू ू॥

नाम के ही प्रसाद से मर्र्जी अर्र्नार्ी हैं और अमर्ांल रे्र् र्ाले होने ेपर भी मर्ांल की रामर् हैं। र्ुकुदेर्, सनकाहद, मसद्धमुनन, योर्ीर्, नाम के ही प्रसाद ब्रह्मानन्द्द को भोर्तेहैं। नारद जी ने नाम के प्रताप को जाना, इसमलए रे् हरर को औ हर को दोनों को प्यारे हैं। नाम के प्रभार् से ही प्रह्लाद भक्त मर्रोमर् हुए।

धिुु ेसगलाति जपेउ हरर िाऊँ। पायउ अचल अिूपम ठाऊँ।
सुममरर पिििसुि पािा िामू। अपिबस करर राखे रामू ।।

ध्रुर् ने ग्लानन से र्ैमाता के र्चनों से दुुःखी होकर सकाम भार् से नाम जप फकया और उसके प्रताप से अचल, अनुपम स्र्ान ध्रुर् लोक प्राप्त फकया। हनुमान जी ने पर्र्िनाम का स्मरर् करके श्रीराम को ही अपनेर् में कर रखा है।

अपिु अजाममलु गजु गतिकाऊ। भए मुकिु हरर िाम प्रभाऊ ।
कहा ूँकहाँलचग िाम बड़ाई। रामु िु सकहहं ंिाम गिु गाई ।।

नीच अजाममल, र्ज, र्र्का (रे्श्या) भी नाम के ही प्रभार् से, तर र्ये, मुक्त हो र्ये। अरे! म ैंनाम की बडाई कहाँ तक करूँ, स्र्यां राम भी नाम के र्ुर्ों को नही ांर्ा सकते।

दोहा- िामु राम को कलपिर, कमल कल्यािा तििासु ।
जो सुममरर भयो भागँ िि, िुलसी िुलसीदासु ||26||

कमलयुर् में राम का नाम कल्पतरु के समान कल्यार्प्रद है, जजसका स्मरर् करने से ही भाँर् के समान (ननष्कृष्ट), तुलसीदास, तुलसी के समान पर्र्ि हो र्या।
भैया! राम नाम की महहमा अनन्द्त है, कहाँतक कहा जाये -

भाय ेंकुभायेंअिख आलसहूँ। िाम जपि मंगल हदमस दसहूँ ।।

अच्छे भार् से, बुरे भार् से, बैरभार् से, आलस्य भार् से, फकसी भी भार् से हो, नाम जपनेसे व्यजक्त का उद्धार हो जाता है और उसे दसों हदर्ाओांसे आनन्द्द ही आनन्द्द की अनुभूनत होती है। भार् से भजा र्भीषर् ने, कुभार् से भजा रार् ने, अनख से भजा बाली ने, आलस्य से भजा कुम्भकरर् ने, इन सबका उद्धार हो र्या, ऐसे ही काम से भजा र्ोर्पयों ने, िोि से भजा मर्र्ुपाल, दन्द्तर्क् ने, भय से भजा कांस ने, एकता से भजा उद्धर् ने, स्नेह से भजा र्सुदेर्-देर्की ने, र्ात्सल्य से भजा नन्द्द-यर्ोदा ने और सौहारशता से भजा अजुनश ने, सब कृतार् शहो र्ये।

भाई! यही नाम की र्न्द महहमा है, जो अर्न्नशीय और अननर्चशनीय है।

2. राम-र्ीता

यह प्रसर्ां अरण्य काण्ड का है, र्ोरखपुरी-रामायर् दोहा नां. 13र्ांसे आर्े -

एक बार प्रभु सुख आसीिा । लतछमि बचि कहे छलहीिा ।
सुर िर मुति सचराचर साई। म ैंपूछऊँ तिज प्रभु की िाई ।।
मोहह समुझाइ कहहु सोइ दिा । सब िस्ज करौं चरि रज सेिा ।
कहहु ग्यािा त्रबराग अर माया। कहहु सो भगति करहु जेहहं ंदाया ।।
दोहा- ईस्रि जीि भेद प्रभु सकल कहौ समुझाइ ।
जीें होइ चरि रति सोक मोह भ्रम जाइ ||14||

पचांटी में एक बार भर्र्ान राम बडे ेसुख से र्ातां भार् से बैठे हुए र्े,े तब लक्ष्मर् ने उस सुखद, सुन्दर अर्सर का लाभ उठाते हुए बडे ेर्र्नम्र भार् से उनसे पाँच प्रश्न फकये।

उनके प्रश्न र्े– हे प्रभु! ज्ञान क्या है? र्ैर्ाग्य क्या है? माया क्या है? भजक्त फकसे कहते हैं, जजसके कारर् आप भक्तों पर दया करते हैं और हे नार्! ईश्र्र और जीर् में क्या भेद है? ये सब समझाकर कहहये, जजससे आपके चरर्ों में मेरी प्रीनत हो और र्ोक, मोह और भ्रम का ननर्ारर् हो।

इस पर भर्र्ान राम कहने ेलर्े-हे भाई ! म ैंर्ोडे ेमें समझाकर कहता हूँ, उसे तुम मन, बुद्धि और धचत्त लर्ाकर सुनो।

थोरेहह महूँ सब कहऊँ बुझाई। सुिहु िाि मति मि चचि लाई ।
म ैंअर मोर िोर िैं माया। जेहहंबंस कीन्हें जीि तिकाया ॥

मन, बुद्धि और धचत्त लर्ाकर सुनने ेका भार् मनन, धचन्द्तन और ननहदध्यासन है। म ैंऔर मेरा, तू ूऔर तेरा, यही माया है। म ैंर्ीर और मेरा र्ीर, तू र्ीर और तेरा र्ीर, बस! यही माया है, जजसके र्् में यद्यर्प यह जीर् ननकाया है अर्ातश त्रबना र्ीर का है तो भी यह उसके र्् में हो जाता है।

गो गोचर जहूँ लचग मि जाई। सो सब माया जािेहु भाई ॥

र्ो मानेइजन्द्रय, र्ोचर मानेइजन्द्रयों का र्र्षय, जहाँ ँतक इजन्द्रयों का र्र्षय है, र्हाँतक माया जानो। जहाँ तक मन जाता है, धचत्त धचन्द्तन करता है और बुद्धि ननश्चय करती है र्हाँतक इन सबको, जो इजन्द्रयों के र्र्षय हैं उन्द्हें माया जानो।

"म"ै समरत कल्पनाओां से रून्द्य है। इस " आत्मा ईश्र्र में माया नहीां घटनेर्ाली बात को भी घहटत कर देती है, ऐसी यह प्रबल माया है।

बडे-बडे ेयोर्ी, सन्द्यांासी, र्ंद्र्ान, जो ससाांर और माया की र्न्ेचना कर उनकी प्राजज्जयाँ उडा देते हैं, उन्द्हें भी यह माया, िन, कीनत,श र्ैभर् आहद में फैसा देती है।, िदों के अर् शकरने ेर्ाले, र्ास्त्रोंिकी र्न्ेचना करके उनके तत्र् को प्रकार् देने हैं। चारले, सन्द्यांामसयों, पडांडतों और र्ंद्र्ानों को भी, यह बडे ेचक्कर में डाल देती है। अरे! कहाँ तक कहें -

मसि चिुरिा जाहह डेराहीं। अपर जिी केहह लेखे माहीं।
मसि त्रबरंचच कहुँ मोहइ । को है बपुरा आि ।।

अरी माया! तू ूबडी मोहमयी और र्ंधचि है, जो बात नही ांघटने र्ाली है उसे भी तू ूघटा देती है। भर्र्ान, राम, सन्द्त, रुरु, महात्मा जन की असीम कृपा हो, तभी उससे पार जाया जा सकता है।

भर्र्ान आत्मा 'म'ै में पचां महाभूतों की कल्पना जो माया कर लेती है, यद्यर्प ये तीन काल में नही ांहै तो भी उसमें कल्पना कर लेती है, फफर भेद डालकर जीर्ों को भटका रही है। र्ाह री माया! तू बडी प्रबला है।

यह माया पहहले, कल्पना करती है, पचांमहाभूतों की, फफर जीर् की कल्पना करती है। फफर, स्रूल, सूक्ष्म, कारर् तीनों र्रीर फफर स्त्री, पुरुर्ष की, फफर र्,श आश्रम आहद की कल्पना कर लेती है, फफर ब्रह्मा, र्ंष्र्ु, महेर् की कल्पना करती है, फफर उनमें भेद डालती है और इसी भेदभार् में सांसार र्पसता रहता है। ये सब माया के काय श हैं। माया की महहमा है। इसका खेल 'म'ै आत्मा आिार पर ही होता है, भर्र्ान कृष्र् कहते हैं फक जो मुझ भर्र्ान आत्मा को ही प्राप्त कर लेते हैं, र्े इस माया से तर जाते हैं। अब र्ंचार जर्त् ्में आओ। ब्रह्म और माया, यहद ये दोनों अलर् होते, मभन्द्न-मभन्द्न होते तो फफर ब्रह्म दर्नश से माया से तरना कैसे होता? इससे ननश्चय होता है, प्रमार् ममलता है फक माया जो है र्ह भर्र्ान आत्मा से मभन्द्न नहीां है, जजस तरह रज्जू और सप शमभन्द्न-मभन्द्न नही ांहै, एक ही है। अतः, रज्जू के ज्ञान से सप शकी ननर्रृत्त हो जाती है, उसी प्रकार भर्र्ान और भर्र्ान की माया ये दोनों मभन्द्न-मभन्द्न नहीांहै एक ही है। इसमलए, ही भर्र्ान के ज्ञान से माया की ननर्रृत्त हो जाती है।

भर्र्ान और माया का र्ाच्य, र्ाचक सबांाि है। रज्जू और सप,श लकडी और डण्डा, इनका र्ाच्य, र्ाचक का सम्बन्द्ि है, जैसे आभूर्षर् र्ाच्य है, स्र्र् शर्ाचक है। र्स्त्र र्ाचक है, िार्ा र्ाच्य है। घट र्ाच्य है, ममट्टी र्ाचक है। इसी तरह स्रूल, सूक्ष्म, कारर्, जर्त् ्प्रपचां, र्ाच्य है और 'म'ै आत्मा इसका र्ाचक हूँ। रज्जू और सप श यहद मभन्द्न-मभन्द्न होतेतो रज्जू के ज्ञान से सप शकी ननर्रृत्त नही ांहोती, रज्जू के जाननेपर सप शका अत्यन्द्ता भार् हो जाना ही मसद्ि करता है फक र्े ेदोनों एक ही हैं। रज्जू ही अन्द्िकारर् सप शहदखता है, उिर रज्जू का ज्ञान हुआ, इिर सप शका अभार् हुआ। अज्ञान अांिकार के कारर् मुझ आत्मा रज्जूमें ससाांर प्रपचां, सप शभासता है, अन्द्िकार का नार्, रज्जू का ज्ञान और सप शका अभार्, तीनों एक ही सार् होता है आर्े-पीछे नहीां। रज्जू के अज्ञान काल में

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 243 भी, सप शनहीं र्ा, ज्ञान काल में भी सप शनहीं, फकसी काल में सप शनहीं यह तो रस्सी ही है। इसी तरह माया, प्रपचां या
ससाांर तीनों काल में नहीं है, ई तो 'म' ै ही हूँ।

मि माया प्रकृति जगि, चार िाम इक रूप ।
बि लग यह साचूँो लगे, िहह जिाा तिज रूप ।।

जो माना जाय, उसका नाम है, माया। अब माया को उलट दो, हो र्या 'यामा'। 'या' मानेजो, 'मा' माने े नही, ां अर्ाशत्् जो नही ांहो उसका नाम है माया।

रज्जू में सप शहै क्या? सीप में चादीं है क्या? ठूांठ में र्प्रेत् है क्या? मृरूजल में जल है क्या? उत्तर है-नही। ां इसी प्रकार मुझ चैतन्य भर्र्ान आत्मा में जर्त् ्प्रपचां नहींहै।

भर्र्ान का नाम है 'माया पनत'। माया का पनत। पनत का अर् शहै स्र्ामी, रिक, आिार। डण्डे ेका आिार, रिक पनत लकडी है। डण्डे ेमें से लकडी ननकाल लो, तो डण्डा रहेर्ा फकसमें? डण्डा फकसको कहोर्े? डण्डे ेका अजस्तत्र् ही खतम। जैसे, लकडी को ही माना र्या डण्डा, ऐसे ही 'म' ै आत्मा को ही माना र्या माया, जब तक म ै अपनेआपको कुछ मान रहा हूँ, तब तक माया मेरा पनत है और ज्यों ही त्यार् हदया 'म' ै को 'म' ै ही जाना तो, 'म' ै हो र्या माया का पनत अर्ात्् श ्'मायापनत'।

प्रश्न है- मानना फकसका िम शहै?

उत्तर है-जीर् का। जीर् अपनेआपको कुछ मानता है, मानना िम शजीर् का है। प्रश्न है-फकसको मानता है? अपनेआप 'म' ै को। अपनेआप 'म' ै को जीर् मानतेही ई परमात्मा 'म' ै से अलर् हो र्या, अब माया उसका पनत हो र्या। जब सर् शमान्यताओां का अभार् हो जाता है तब 'म' ै र्ुद्ि आत्मा, भर्र्ान रह जाता हूँ, तब 'म' ै माया का पनत हो र्या।
मान्यता जर्त् ्में ज्ञान नहीं और ज्ञान जर्त् ्में मान्यता नही। ां माननेसे जीर् और जानने ेसे हीं भर्र्ान है। जीर् माना जाता है, भर्र्ान जाना जाता है। मानता जीर् है और जानता 'म' ै आत्मा भर्र्ान है। यद्यर्प 'म' ै आत्मा मान्यताओां से रहहत हूँ तो भी मान्यता िारर् कर भेद रूप हदखता हूँ। आत्मा में माया ने तीन भेद डाल हदया, ब्रह्मा, र्ष्र्ुऔर महेर्, फफर सृजृष्ट की उत्पजत्त, पालन और सांहारा माया को िन्य है जो र्ांर और राम में भी भेद डाल देती है। अरे यार! माया का काम ही है फक एक में दो कर देना। भेद डाल देना।यह (माया) जीर्, ईश्र्र, र्पता-पुि, पनत- पत्नी, राजा-प्रजा, सेर्क-स्र्ामी, र्ुरु-मर्ष्य, भक्त-भर्र्ान आहद कहाँभेद नही ांडाल देती, सेर्क, स्र्ामी, र्ुरु-मर्ष्य, भक्त-भर्र्ान में भी इसने युद्् किरा हदया है। राम और हनुमान का, अजुनश और कृष्र् का युद्् हुआ है। र्ुरु-मर्ष्य का युद्् हुआ है, सेर्क-स्र्ामी का युद्् हुआ है। र्ास्् और इनतहास इसके सािी हैं।

िहह कर भेद सिद्धु िम्ह सोऊ। विद्या अपर अविद्या दोऊ ।।

माये के दो भेद हैं- 1. र्ेद्या माया, 2. अर्ेद्या माया।

जो सर्कशाल में र्ेद्यमान रहे र्ह र्ेद्या और तीनों काल में जो नही ांहो, र्ह अर्ेद्या माया है। 'म' ैं आत्मा यह र्ेद्या माया है और 'म' ैं र्ीर या मेरा र्ीर, यह अर्ेद्या माया है।

एक दुकुट अतिसय दुखुरूपा । जा बस जिी परा भिकूपा ।
एक रचइ जग गिु बस जाके । प्रभु ुपे्रेररि िहीं तिज बल िाके ।

अर्ेद्या माया दुुःख रूप और दुष्ुट है, जजसके र् में होकर जीर् क्लेर् पातेरहता है। िर-अिर, परा-अपरा, र्ेद्या-अर्ेद्या, अधिभूत अधिदैर् और कबीर के र्दों में जड-चेतन ये सब एक ही भार् के र्द हैं।

जो जर्त् ्की रचना करे र्ह र्ेद्या माया और जजसमें फँसकर जर्त् ्का पालन करे, र्ह अर्ेद्या माया है।

भर्ान आत्मा राम है, लक्ष्मर् जीर् है, पचां भूतात्मक र्ीर पचांर्टी है, देहामभमान रार्र् है, र्ानांत सीता है।

ग्यिा मिा जहूँ एकउ िाहीं। देख ब्रह्म समिा सब माहीं।
कहहअ िाि सो परम त्रबरागी। िृि सि मसद्चध िीति गिु त्यागी ।।

जहाँ ँएक का भी मान न हो (मान अर्ाात् ्मान्द्यता) र्ह है ज्ञान।

म ैंर्ुदि् हूँ, बुद्ि हूँ, ननरांजन हूँ, ननर्र्कशार हूँ, चेतन हूँ, अच्युत हूँ, व्यापक हूँ, अद्वैत हूँ, एक हूँ, ऐसा कहना भी मान्द्यता ही है, जहाँ इन एक का भी मान न हो, र्ह ज्ञान है। 'म' ैं और हूँ के बीच में जो भी र्द हैं, अद्वैत, अच्युत, व्यापक आहद ये सब मुझसे अलर् कुछ हैं, जजसे 'म' ैं पर आरोर्पत करके कहा जा रहा है फक 'म' ैं र्ह हूँ, तब 'म' ैं और र्ह र्द जो 'म' ैं के बाद आया है, इस तरह द्वैत की झलक, यहाँ तक भासता है, अतः केर्ल र्ुदि् चैतन्द्य निभूत 'म' ैं के अनतररक्त, अन्द्य कुछ भी मान्द्यता जहाँ न हो र्ह ज्ञान है, जो केर्ल सत्ता मिा है।
यह एक अपिा रहहत है।

'अजस्तत्र् तत्र् के बिो में, अजस्तत्र् (पदार्)श का अभार् है।" लकडी के बिो में डण्डे ेका अभार् है, डण्डा यहद यह कहे फक म ैंलकडी हूँ तो अभी र्ह ज्ञान को मानकर कह रहा है, यहद र्ह लकडी को जानकर कहना चाहेर्ा फक म ैंलकडी हूँ, तब जब र्ह केर्ल लकडी है, तब फकसको र्ह 'म' ैं कहने के मलए अलर् करेर्ा? अरे! उसे लकडी की अमभन्द्नता में यह कहतेभी तो नही ांबन सकता फक म ैंलकडी हूँ। अतः, डण्डा जब लकडी को जान लेर्ा तब र्ह डण्डा और लकडी दोनों से परे हो जायेर्ा।

इसी तरह 'म' ैं ब्रह्म हूँ यह कहना भी मानकर कहना होर्ा, जान लेने पर तो 'म' ैं और ब्रह्म की सत्ता एक ही है, तब कहते कैसे बनेर्ा फक 'म' ैं ब्रह्म हूँ, क्योंफक भर्र्ान भी अपने को भर्र्ान नही ंकहता।

अत्यन्द्त र्ैराग्य ही ननर्र्कशल्प समाधि के मसद् किरने के मलए परम सािन है, पर र्ैराग्य, अपर र्ैराग्य, र्मल र्ैराग्य, इनकी व्याख्या राम-दर्नश के दूसूरे भार् में लक्ष्मर्-र्ीता के अन्द्तर्तश फकया जा चुका है।

मन के अजस्तत्र् का ही त्यार् यह र्ैराग्य है और मन को रोकनेके मलए कुछ भी नहींकरना यह अभ्यास है।

'मन है' तब, मन, मन है, या मन 'है' है?

उत्तर है- मन 'है' है, तब 'है' अजस्तत्र् ही तो है, जो मन है, बस! अब मन का अजस्तत्र् ही र्या, मन न रहा, इसी का नाम र्ैराग्य है।

एक र्रीर में जस्त जो मान्द्यता है, र् मन है और सर् शर्रीरों में जो मान्द्यता है, र् माया है। एक र्रीर में जस्त जो 'म' ैं है, र् आत्मा है और सर् शर्रीरों में जस्त जो 'म' ैं आत्मा है, र् परमात्मा है। समस्त सािनों का आिार मान्द्यता है, बोि नही।ं

ज्ञान की सात भूममकाएँ हैं, ये भूममकाएँ धचत्त की होती हैं, आत्मा की नहीं। रु्भेच्छा, र्र्चारना, तन्द्मान्द्सा, तीन भूममका तक धचत्त में अज्ञान रहता है। सत्र्ापत्ती चौर्ी भूममका में धचत्त को ज्ञान होता है। पाँचर्ीं भूममका में धचत्त जीर्न मुक्त कहलाता है, छठर्ींभूममका में धचत्त बेहोर् होने लर्ता है और सातर्ीं भूममका 'तुयर्शा' में धचत्त त्रबल्कुल बेहोर् हो जाता है, इस भूममका का योर्ी स्र्यां फिया करनेमें असमर् शहो जाता है। र् दूसूरों के कराने से फिया करता है।

कहहअ ाि सो परम त्रबरागी। ाि ृ सम मसद्चध ाि ी गिु त्यागी ।।

रु्र् तीन हैं- सत्,् रज, तम।

1. सत् ्(सतोरु्र्) की मसद्धि, ज्ञान 'म ैंब्रह्म हूँ', यह ज्ञानी कहलाता है।

2. रज (रजोरु्र्) की मसद्धि-उपासना, 'म ैंजीर् हूँ' यह उपासक कहलाता है।

3. तम (तमोरु्र्) की मसद्धि, 'कम'श म ैंदेह हूँ, यह कमकशाण्डी कहलाता है।

भर्र्ान राम कहते ेहैं फक हे तात! उसी को परम र्ैराग्यर्ान कहना चाहहए, जो सारी मसद्धियों को और तीनों रु्र्ों को नतनके के समान त्यार् चुका हो।

दोहा- माया ईस ि आपु कहुँ जिा कहहअ सो जिी ।
बन्द्ध मोच्छ प्रद सबपिर माया प्ेरेरक सिी ।।5।।

आपु कहँ, माया ईर् न जान, सो जीर् कहहय। यह हुआ इस दोहे का अन्द्र्य, इसका अर् शहै जो अपनेको माया का ईर् अर्ात्श ्माया पनत नहींजानता र्ह जीर् है और र्ही अपने 'म ॅ ैं को जान मलया, तब र्ह 'म ॅ ैं आत्मा ही है, फफर तो र्ह माया का ईर् हो र्या अर्ात्श ्कल्यार् स्रूप भर्र्ान आत्मा 'म ॅ ैं।

जीर् और ईश्र्र का जो भेद है, यह भेद माना हुआ भेद काल्पननक है, र्ास्तर्र्क नहीं है।

मुधा भेद जद्यवप कृि माया। त्रबिुहरर जाइ ि कोहट उपाया ।।

(उ.का. दो. 78 के ऊपर)

श्री मानसकार कहते ेहैं फक यद्यर्प यह भेद मिुा ममथ्या है, माया का फकया हुआ है असत्य है तर्ार्प र्ह

त्रबना भर्र्ान की कृपा के करोडों उपाय करने पर भी नहींजाता।
'म ॅैंजीर् हूँ' 'जीर्' ऐसा कहता है फक 'म ॅ ैं ऐसा कहता हूँ? उत्तर है- 'म ॅ ैं ऐसा कहता हूँ।

जीर् के सार् 'है' फिया आती है और 'म ॅ ैं के सार् 'हूँ' फिया आती है, यहद हूँ फिया जीर् की है तब तो 'म ॅ ैं जीर् हूँ और यहद 'हूँ' फिया "म" ैं की है तो फफर 'म ॅ ैं जीर् नही ंहूँ, ऐसा जो नहीं जानता र्ही जीर् है और ऐसा जो जानता है, र्ही 'मर्' अर्ात्श ्'म ॅ ैं आत्मा हूँ।

माया का अर् शहै मान्द्यता। 'म ॅ ैं पर ही अनन्द्त मान्द्यताएँ की र्यीं, तब इन अनन्द्त मान्द्यताओं का आिार (ईर्) म ॅैंही तो हुआ, यहद 'म ॅ ैं आत्मा न होऊँ, तोये मान्द्यताएँ फकस पर की जायेर्ी? 'म ॅ ैं जीर् हूँ, यह 'म ॅ ैं ही मानता हूँ, अतः मान्द्यता 'म ॅ ैं हूँ नही,ं मान्द्यता से परे 'म ॅ ैं माया ईर् हूँ, माया का आिार हूँ।

जीर् का जीर्त्र् मुझ से है या जीर् से है।

उत्तर है-मुझ आत्मा से है, तब त्रबना 'म ॅ ैं आत्मा के जीर् जजन्द्दा नही ंरह सकता, प्रमार् लो -

दोहा- प्रिा प्रिा के जिी के स्जि सुख के सुख राम ।
तुम्हि िस्ज िाि सोहहि गृह्द स्जन्द्हहहं,ं तिन्द्हहहं ंत्रबचध िाम ।।290।।

धचिकूट के जनक दरबार में, र्ुरु र्र्ष्ठ ने ऐसा कहा र्ा। जीर् और ईश्र्र में भेद- 'ईश्र्र' भेदरूप है या अभेद रूप? प्रश्न होता है फक भेद दो में होता है या एक में?

उत्तर है-दो में। तब यहद ईश्र्र दो होकर रहेर्ा तो र्ह सीममत होर्ा, असीममत न होर्ा, पूर् शन होर्ा, व्यापक न होर्ा, ननत्य न होर्ा, सर्देशर्ीय न होर्ा, अर्नार्ी न होर्ा, क्योंफक जो दो होकर रहता है र्ह पररनछन्द्न होता है, अननत्य होता है, नार्ान होता है। अतः, र्ह ईश्र्र नहीां। यहद अभेद रूप है तो उसका फकसी से भेद नही।ां अरे, जीर् से क्या एक तृर् से भी भेद नहीां, इस तरह सारा चराचर भर्ान आत्मा 'म'ैं ही है। ऐसा जो नही ांजानता, र्ह है जीर्।

परबस जीि स्िबस भगिन्द्ता। जीि अनेक एक श्रीकन्द्ता॥

जब तक र्ह परर्र् है तभी तक जीर् है और जहाँ ँस्र्न्द्र् हुआ फक फफर र्ह भर्ान ही है। देखो-इस पेण्डाल में यहाँ पर इस लम्बी रस्सी के बाँधनेपर इसी एक जर्ह के दो नाम हो र्ये इस पार और उस पार। इस पार पुरुर्ष समाज बैठा है, उस पार स्त्री समाज। अब इस रस्सी को खोल दो, ननकाल दो, फफर न इस पार रहा, न उस पार। अरे! जर्ह तो एक ही है, र्स्तुतः इसमें न इस पार है, न उस पारा इस पार और उस पार तो रस्सीकृत भेद हुआ, न फक र्ास्तर्र्क। इसी तरह मुझ आत्मा रस्सी के आ जाने से, इसी एक के दो इस मन रूपी आड को ननकाल दो, अलर् कर दो, फफर न जीर् रहा, न ईश्र्र देर्स

म ैंसत्ता रूप भूमम ही अर्र्ेर्ष रह र्या। ऐसा जो नहीां जानता, र्ह है जीर्। 'म'ैं अपनेको जीर् मानता हूँ, इस मान्द्यता का नाम है माया, मानने र्ाला है माया ईर् और माननेपर र्ह हो जाता है जीर्।

माया, ईर् और जीर्, यहद 'म'ैं आत्मा न होऊँ, तो इन तीनों का आिार कौन होर्ा? इनका र्र्कल्प फकस पर जायेर्ा? इस प्रकार जो नहीांजानता र्ह है जीर्।

जजस पर जो रहे र्ही उसका प्रेरक, र्ही उसका र्ासक, र्ही उसका आिार, और र्ही उसका कारर् होता है। भर्ान आत्मा 'म'ैं पर ही तो सारा चराचर आिाररत है, तब 'म'ैं आत्मा ही सर् शका र्ासक, आिार, कारर् और प्रेरक हूँ, ऐसा जो नहीां जानता, र्ह है जीर्।

ईश्र्र के जाननेपर जीर् नहीां, क्योंफक -

सोइ जानइ जेहह देहु जनाई। जानत तुम्हहह तुम्हइ होइ जाई ।।

ईश्र्र को जानते ही जीर् न रहा र्ही हो र्या और ईश्र्र को मानने र्में ईश्र्र नही,ां यहद ईश्र्र को मानोर्े तो मान्द्यता र्र्कल्प है, सत्ताहीन है, ईश्र्र को मानने र्ाला और जाननेर्ाला दोनों एक ही है, परन्द्तु र्ह न जीर् है, न ईश्र्र है। प्रश्न होता है-फक जब मानता है तब जीर् होता है, तब मानने के पहहले र्ह क्या है?

मानने र्ाला न जीर् है, न ईश्र्र है र्ह अपना आप, भर्ान आत्मा ही है, ऐसा जो नहीांजानता उसको जीर् कहते हैं।

महांदर में स्र्ापर्त करने ेके मलए, हजारों रुपये खच शकरके भर्र्ान की मूनत शलायी जाती है, अब यहद उस मूनत शका कोई अर्ां टूट जाता है, मान लो एक उांर्ली ही टूट र्यी, तो महांदर में उस मूनत शकी स्र्ापना नही ांकी जाती, हजारों रुपयों में खरीदी र्यी र्ह मूनत शफकसी पर्र्ि निदी में र्र्सजजतश कर दी जाती है और तुरन्द्त दूसूरी मूनत श खरीदकर लायी जाती है और फफर उसकी प्रार् प्रनतष्ठा कर उसे महांदर में स्र्ापर्त की जाती है।

भैय्या! इसका रहस्य समझो-हम जजस ब्रह्म के उपासक हैं र्ह पूर् शहै, अखण्ड है, अतः खजण्डत मूनत शकी पूजा नहीां की जाती। एक तृर्ू को भी यहद भर्र्ान से मभन्द्न माना, भर्र्ान से अलर् फकया फक भर्र्ान खजण्डत हो र्या, अखण्ड न रहा, इसमलए सर् शभर्र्ान है, उससे फकसी का भेद नहीां।

है, जीर् अल्पज्ञ है, ईश्वर सर्वज्ञ शर्जक्तमान है, जीर् अनेक हैं, ईश्वर एक है। इस तरह जीर् और ईश्वर को, बुद्धिरूपी तराजू के अलर्-अलर् पलडे ेमें रखकर कौन तौल रहा है, तौलने र्ाला कौन है? यहद र्ह जीर् है, तब तो र्ह पलडे ेमें रहेर्ा, तब तौलेर्ा कौन? बस, यह जो तौल रहा है, र्ही 'म'ै आत्मा है, जो जीर् और ईश्वर दोनों का ज्ञाता, दोनों से परे है।

जीर्ादी जीर् को ईश्वर का अर्ां कहते हैं-पत्र्र का अांर् पत्र्र, ममट्टी का अांर् ममट्टी, लोहे का अांर् लोहा और सोने का अांर् सोना है, अांर् का अर् शहै खण्ड, टुकडा।

पत्र्र का अांर् ममट्टी नहीांहोता, लोहे का अांर् पत्र्र नहीांहोता और सोने का अर्ां लोहा नही ांहो सकता, इसी तरह ईश्वर का अांर् ईश्वर ही होर्ा, जीर् नही ांहो सकता।

प्रश्न होता है, तब मानसकार ने ईश्वर अांर् जीर् क्यों मलखा ? इसका उत्तर आर्े इसी पुस्तक में ममलेर्ा।

यहद भर्र्ान को हम परमर्पता कहें, हम सब उनकी सताांन हैं, तब जजस तरह ब्राह्मर् का पुि ब्राह्मर्, क्षत्रिय का पुि क्षत्रिय, र्ैश्य का पुि र्ैश्य और र्ूरू का पुि र्ूर होता है, क्योंफक जो जानत र्पता की, र्ही जानत पुि की होती है। इसी तरह जब हम ईश्वर की सन्द्तान हैं, पुि हैं, तब हम ईश्वर ही हैं, जीर् कैसे? जीर् जानत हमारी नहीां हो सकती। र्पता, पुि की एक ही जानत होर्ी।

जीर् साकार ईश्वरका अर्ां है या ननराकार ईश्वर का? देखो यह फूल साकार है, इसमें से इसका अर्ां ननकालते जाओ, इसका खण्ड करते चले जाओ, तब अताां में खण्ड होते-होते, अर्ां ननकालते-ननकालते इस फूल का अताां हो जायेर्ा। इसी तरह यहद जीर् को साकार ईश्वर का अर्ां कहो तो उस साकार ईश्वर का भी अताां हो जायेर्ा, र्ह ईश्वर ही समाप्त हो जायेर्ा, इससे मसद्धि हुआ फक जीर्, साकार ईश्वर का अांर् नही ांहै। अब यहद जीर् को ननराकार ईश्वर का अांर् कहो तो देखो इस फूल में सुर्न्द्धि निराकार है, उसका अांर् हो सकेर्ा ? उसका खण्ड कैसे करोर्े, ऐसे ही यह आकार् ननराकार है, तब आकार् का खण्ड अर्र्ा अर्ां नही ांफकया जा सकता, इस तरह जीर् ननराकार ईश्वर का भी अर्ां मसद्धि नहीां होता।

जीर् छोटा-बडा नही ांहोता, यहद ई छोटा-बडा होर्ा तब चीटीं में जो जीर् है, ई छोटा और हार्ी में जो जीर् है, ई बडा होर्ा, इस जस्र्नत में हार्ी का जीर् अपना कमफशल भोर्ने के मलए जब चीटीं के र्रीर में प्रर्ेर् करेर्ा, तब चीटीं के छोटे र्रीर में हार्ी का बडा जीर् जजतने अर्ां तक समा सकेर्ा, उतना समाएर्ा और र्ेर्ष जीर् चीटीं के र्रीर के बाहर र्खचडता फफरेर्ा, इस तरह इस जीर् की बडी दुर्नशत होर्ी, ऐसे ही चीटीं में का जीर् जब अपना कमफशल भोर्ने हार्ी के र्रीर में जायेर्ा तब चीटीं का ई छोटा जीर् हार्ी के उस बडे र्रीर में र्ोडी जर्ह में ही समा जायेर्ा, तब हार्ी के र्रीर का र्ेर्ष भार् जीर् से र्ून्य होर्ा। इस ननश्चय से यह मसद्ध होता है फक जीर् छोटा-बडा नही ांहोता।

प्रश्न होता है फक ईश्र्र इदांर्म्य है या अहांर्म्य है। यहद ई इदांर्म्य है तो दो हो र्ए फफर ई पूर् शन रहा और यहद अहांर्म्य है तो मुझ से मभन्द्न नहीं'म'ैं ही हूँ। जजस तरह आकार् घट (घडा) और मठ (मकान), घट और मठ के बाहर एक ही है, परन्द्तु घट में रहने से उसका नाम घटाकार्, मठ में होने से उसी का नाम मठाकार् और घट और मठ दोनों के बाहर, उसी आकार् का नाम र्ृहदाकार् हो जाता है। यद्यर्प, घटाकार्, मठाकार् और र्ृहदाकार् ये तीनों आकार् नही ांहैं, अरे यार! आकार् तो एक ही है, जो घट, मठ और इनके बाहर है, परन्द्तु घट में होने से उसी आकार् का घट उपाधि के कारर् घटाकार् और मठ में होने से उसी आकार् का मठ उपाधि के कारर् मठाकार् नाम पड र्या और इन दोनों के बाहर ई ननरुपाधि रु्द्ध, पूर् शआकार् ही है, जो ननर्र्कशार है, सर् श उपाधियों से रहहत है। इसी तरह माया उपाधि से, मुझ चैतन्द्य घनभूत, आत्मा का नाम हुआ ईश्र्र, अर्र्द्या उपाधि से उसी का नाम जीर् और दोनों उपाधियों से रहहत, जो रु्द्ध चेतन है, ई है ब्रह्म।

अपनेआप 'म'ैं आत्मा को न जानना अर्र्द्या है इस अर्र्द्या उपाधि के कारर् जीर्। अपनेआप 'म'ैं आत्मा को कुछ मानना यह है माया इस उपाधि से ईश्र्र। इन दोनों उपाधि से रहहत जो है ई है ब्रह्म।

प्रश्न होता है-अज्ञान 'म'ैं हूँ या मुझमें अज्ञान है?

यह उत्तर है- अज्ञान म ैंहूँ, न अज्ञान मुझमें है, इस ज्ञान के अज्ञान को ही अर्र्द्या कहते हैं, इस उपाधि के कारर् ही जीर्। 'म'ैं माया हूँ या मुझमें माना र्या है?

उत्तर है- मुझ पर मान्द्यता है। अतः 'म'ैं मान्द्यता से परे हो र्या, इस उपाधि से रहहत, म ैंआत्मा ही ब्रह्म हूँ।

धम ते ेत्रबरति जोग ते ग्यािा । ग्यि मोच्छप्रद बेद बखािा ।।
जिों बेचग रिूँ म ैंभाई । सो सम भगति भगि सुखदाई ॥

मि शके आचरर् से र्ैराग्य और योर् से ज्ञान होता है तर्ा ज्ञान मो का देनेर्ाला है ऐसा र्ेदों में र्र्नश फकया है और भाई! जजससे में र्ीघ्र ही प्रसन्द्न होता हूँ यह मेरी भजक्त जो भक्तों को सुख देनेर्ाली है।

सो सिुं, अिलंब ि अिा । िहह आधिी ग्यिा त्रबग्यिा ।

ई भजक्त स्तिां है, जजसके अिीन ज्ञान और र्ज्ञान है। अहां ब्रह्मररम 'म' ैं ब्रह्म हूँ, यह ज्ञान है। 'अहमेर्ेदां सर्' ं 'म' ैं सर् शहूँ, यह र्ज्ञान है और 'म' ैं हूँ, यह भजक्त है। 'म' ैं ब्रह्म हूँ यह ज्ञान और 'म' ैं सर् शहूँ, यह र्ज्ञान इन दोनों में से 'म' ैं को ननकाल लो तो र्े व्यर् शहो र्ें, दोनों न रहे। इसमलए ज्ञान और र्ज्ञान दोनों की मसद्धि 'म' ैं के त्रबना नहीांहै। अतः, ज्ञान और र्ज्ञान दोनों 'म' ैं हूँ, इस भजक्त के अिीन हुए। यह भजक्त परम स्तिां है।

भगति िा अिुपम सुखमूला । ममलइ जो सन्द् होईं अिुकूला ॥

ऐसी यह भजक्त अनुपम है, जजसकी उपमा र्श्र् में नही,ां फफर ई सर् शसुखों की जड है, ज्ञान-र्ज्ञान तो सािन जन्द्य हैं, परन्द्तु 'म' ैं हूँ यह भजक्त जो है, उसके मलए कोई सािन नहीांहै, यह तो केर्ल कृपा जन्द्य है, यह ुरु कृपा से ही प्राप्त होती है। जब सन्द्त ममल जायँ और र्े अनुकूल हो जायँ, तभी उन सतों की कृपा से ही ई भजक्त ममलती है। जजन सन्द्तों की कृपा से ऐसी भजक्त प्राप्त होती है र्े सन्द्त, जब भर्ान की कृपा होती है, तभी ममलते हैं। मतलब यह फक भर्ान की कृपा से सन्द्त ममलते हैं और सन्द्त की कृपा से भर्ान ममलते हैं। इन सन्द्तों में और भर्ान में भेद का अभार् है अर्ात्श ्र्े दोनों एक ही हैं। अतः, भर्ान की प्राजप्त के मलए सािन मत करो, सन्द्तों की प्राजप्त का ही सािन करो, जजतने सािन हैं र्े हमारे हृदय को भर्त स्र्रूप सतों की प्राजप्त का पाि बनातेहैं।

भगति फक साधि कहउँ बखािी । सुगम पंथ मोहह पािहं ंप्रािी ।
प्रथमहहं ंत्रबप्र चरि अति प्रीिी। तिज-तिज कम ितिरि श्रुति रीिी ॥
एहह कर िल पुति त्रबषय त्रबरागा। िब मम धम िउपज अिुरागा ।
श्रिाहदक िभस्क् दृढ़ाहीं। ममलीला रति अति मि माहीं ॥
सन्द् चरि पंकज अति प्ेरेमा । मि क्रम बचि भजि दृढ़ िेमा ।
गुर वपिु मािु ुबन्द्धु ुपति दिा । सब मोहह कहें जािे दृढ़ सेिा ॥
मम गुि गािा पुलक सरीरा । गदगद चगरा ियि बह िीरा ।
काम आहद मद दंभ ि जाके । िा तिरंरि बस म ैंिाकें ॥
दोहा- बचि कम िमि मोरर गति भजिु करहहं ंतिाःकाम ।
तिन्द्ह के हृदय कमल महुँ करउ सदा विश्राम ।।16।।

भजक्त जो है, ई अननर्चशनीय है, मन र्ाी से परे है ई बखानी नहीां जा काकती। भजक्त के सािन का बखान है, भजक्त का बखान नहीांहै, मानसकार साफ तो कह रहे हैं फक भजक्त के सािन कहींबखानी, न फक "भजक्त बखानी"।

भजक्त दो प्रकार की होती है - 1. अपरा भजक्त, 2. पराभजक्त ।

1. अपरा भस्क्ि- सरुर् भर्ान की भजक्त, इसमें भक्त और भर्ान का भेद रहता है, इसका आिार है 'भार्ना'।

भर्ान राम, भर्ान कृष्र्, भर्ान र्ांकर, भर्ान रुरु (भर्ान सब में लर्ा रहेर्ा) की मूनत शकी
भार्ना की जाती है और उसे हृदय महांदर में स्र्ानपत कर फफर उस मूनत शकी आरािना की जाती है, इस भार्ना का फल है पे्रम और पे्रम का फूल है भक्त भर्ान की एकता। इस एकता का फल है धचत्त की परम र्ाांनत। यह अपरा भजक्त है।

2. परा भस्क्ि- यह ननर्ुशर् उपासना है, यह अभेद उपासना है। इसका आिार है र्ीचारा र्ीचार का फल है ज्ञान।
ज्ञान का फल है-जीर्ात्मा, परमात्मा की एकता। इस एकता का फल धचत्त की परम र्ाांनत। फकजष्कन्िा काण्ड का एक दोहा है -

दोहा- चले हरवष ि स्ज िगर ि ृप ि ापस बतिक मभखारर ।
स्जमम हररभगति पाइ श्रम िजहहं ं आश्रमी चारर ||16|1

(फक.का.दो.-16)

र्षाशऋतुके बीत जानेपर राजा, तपस्र्ी, व्यापारी और मभखारी, जो र्षाशके कारर् नर्र में रुके रहतेहैं।
र्रद ऋतु पाकर उस नर्र को त्यार्कर र्े ि मर: र्जय, तप, व्यापार और मभिा के मलए अन्यत्र चले जाते हैं,
जैसे 'हरर भजक्त' को पाकर मनुष्य चारों र् शऔर आश्रम का त्यार् कर देते हैं।

र् शिम-शम ैंब्राह्मर्, ि त्रिय, र्ैश्य, र्ूरू हूँ।

आश्रम ि म श- म ैंब्रह्मचारी, र्ृहस्र्ी, र्ानप्रस्र्ी, सन्न्यासी हैं। ये ही र् शऔर आश्रम के अमभमान हैं। 'हरर भजक्त' प्राप्त हो जानेपर इनके अमभमान का त्यार् हो जाता है, ये अमभमान त्यार् हदये जाते हैं।

र्ाश्रशमामभमान, देहामभमान पर अर्लजम्बत है और देहामभमान, देहाध्यास पर आिाररत है तर्ा
देहाध्यास, स्र्-स्र्रूप भर्ान आत्मा 'म ैं' के अज्ञान पर आिाररत है। इसका स्र्रूप समझो, जो चीज जैसी हो उसको र्ैसी न जानकर, उसको कुछ का कुछ मान लेना यही अध्यास है, जैसे- रज्जू के अज्ञान से, रज्जू में ही सप श का अध्यास है, इसी प्रकार स्र्-स्र्रूप भर्ान आत्मा के अज्ञान से उसमें ही देह का अध्यास होता है।

देह के अध्यास के बाद फफर म ैंदेह हूँ यह देह का अमभमान आया, फफर स्त्री हूँ, पुरुष हूँ, बालक, युर्ा, र्ृद्ध हूँ। ब्राह्मर्, ि त्रिय, र्ैश्य, र्ूरू हूँ। ब्रह्मचारी, र्ृहस्र्ी, र्ानप्रस्र्ी, सन्न्यासी हूँ आहद। र् शऔर आश्रम का अमभमान आया। जब भर्ान आत्मा 'म ैं' का बोि हुआ तब भर्ान आत्मा 'म ैं' को ही जो माना र्ा उसका अभार् हो र्या, उसका अपनेआप त्यार् हो र्या।

स्जमम हरर भगति पाइ श्रम िजहहं ंआश्रमी चारर ।।

हरर भजक्त कहो, हरर पद कहो अर्ा भजक्त कहो सबका एक ही भार् है। जजतनी मान्द्यताएँ र्ीांदेहाहदक का, उन सबका त्यार् हो र्या।

पहहले अध्यास का त्यार् होता है, फफर अमभमान का त्यार् होता है, इसके बाद र्ाश्रशमामभमान का त्यार् होता है, यही र्् शऔर आश्रम का त्यार् है।

सिेक, सेब्य भिा त्रबिु, भि ि िररअ उरगारर ।।

इसका स्पष्ट अन्द्र्य है, हे उरर्ारर!

सिेक सेब्य भिा त्रबिुभि ि िररय ।।

अर्ात्श ्सेर्ा करते-करते जब तक सेर्क में सेव्य भार् न आ जाय, तब तक है उरर्ारर! र्ह भर् से नहीांतर सकता, इसका अर् शहै, सेर्क सेव्य की एकता, दोनो का एक हो जाना ।।

श्याम-श्याम रटि-रटि, राधा श्याम भई ।
बि राधा पूछि सझखयि सों राधा कहा ्ँगई ?

अरे! र्यी कहाँ? स्र्यांश्याम हो र्यी, फफर रिा कहाँ ँममलेर्ी। उसका अजस्तत्र् ही खतम। नदी, समुर में

ममलतेही समुर हो र्यी, फफर ढूँढ़ने पर समुर में नही ममलनेर्ाली नहीां है। यह है परा भजक्त।

एक भजक्त और है, जो न परा है, न अपरा है। न भेद है, न अभेद है। र्ह 'म'ें पद है। यह न सर्ुर् है, न ननर्ुर्श है, जो कार्भुर्ुण्डी को ममली र्ी।

दोहा- अत्रबरल भगति त्रबसुद्ध ति श्रुति पुरि जो गाि ।
जेहह खोजि जोगीस मुति प्रभु प्रसाद कोउ पाि ।।

(उ.काां. 84-क)

र्ह भजक्त कैसी है?

परम प्रकास रूप हदि रािी । िहहं ंकछु चहहअ हदआ घृ बािी ।।

भजक्त की उपमा, धचन्द्तामर्् से दी र्यी है। भजक्त धचन्द्तामर्् को तुम जजस दृजष्ट से देखना चाहो उसी रूप में र्ह हदखती है।

कम शकाण्डी को 'म'ै देह हूँ। 'म'ै आत्मा, देह रूप में हदखता है।

उपासक को 'म'ै जीर् हूँ। 'म'ै आत्मा, जीर् रूप में हदखता हूँ।

ज्ञानी को 'म'ै ब्रह्म हूँ। 'म'ै आत्मा, ब्रह्म रूप में हदखता हूँ।

नाजस्तक को 'म'ै आत्मा, 'नहींहै' रूप में हदखता हूँ और आजस्तक को 'म'ै आत्मा 'है 'इस रूप में हदखता

हूँ। इस तरह जो जजस भार् में देखता है, उसे उसी रूप में हदखता हूँ।

त्रबना बिो के न सरुर् रूप में ननष्ठा हो सकती है और न ननर्रुर्श रूप में ही। भैय्या! इन रूपों में तर्ा चररि और लीला में रत तो ज्ञान के बाद ही होता है, अज्ञानी क्या जानेर्ा फक क्या सरुर् और क्या ननर्रुर्श है।

देखकर जाना जाता है और सुनकर माना जाता है। अपने स्रूप 'म'ै आत्मा को जब देख लेता है, तभी उसमें प्रीनत होती है।

जिों त्रबिु ि होइ पर्िीिी । त्रबिु परिीति होई िहहं ंप्रीिी ।
प्रीति त्रबिा िहहं ंभगति हदढ़ाई। स्जमम खगपति जल कै चचकिाई ।।

(उ.कां.)

सरुन को भर्ान कांर के समान भजना चाहहए, लीला और चररि पर ध्यान नही ंदेना चाहहए, आिार

पर ही जस्त रहना चाहहए।

माता पार्तशी और र्रुड आहद लीला और चररि के चक्कर में पड र्ये, इसमलए ही उन्द्हें बडी र्पत्तियों का सामना करना पडा। परम र्रैाग्यर्ान को चाहहए फक र्ह लीला और चररि के चक्कर में न पडे,े रे् भर्ान कांर की दृजष्ट को अपनाय।ें

भगति जोग सुति अति सुख पािा । लतछमि प्रभुचरिस्न्द्ह मसरु िािा ॥

भर्ान राम के श्री मुख द्र्ारा इस भजक्त योर् को सुनकर लक्ष्मर् जी बडे ेसुखी हुए और उन्द्होंने प्रभु ु श्रीरामचन्द्रजी के चरर्ों में मसर नर्ाया।

बस! यही ांपर राम र्ीता का उपसहांर है।

जराश- जराशभर्ान है, कर्-कर् भर्ान है, परन्द्तु इसका आनन्द्द तो तभी आयेर्ा, जब तुम अमली

जामा पहहनोर्,े इसके त्रबना यह आनन्द्द दरूू ही है। अपनेको इस ढाँचे में ढालो।

3. र्भीर्षर् रर्ार्नत

आज का प्रसर्ां है सुन्द्दर काण्ड के अन्द्तर्तश र्भीर्षर् -
रर्ार्नत, र्ोरखपुरी रामायर् दोहा नां. 37र्ाँ-

दोहा- सचचि बैद गुर ि ीति जौं वप्रय बोलहहं ंभय आस ।
राज धम ि ि ीति कर होइ बेगहीं िास ।।
(सु.काां.दो.-37)

मििी, बैद्य और र्ुरु ये तीन यहद अप्रसन्द्नता के भय से या लाभ की आर्ा से हहत की बात न कहकर प्र्रय बोलते हैं, ठकुर सुहाती कहने लर्ते ेहैं तो िमर्ः राज्य, र्रीर और िम शइन तीन का र्ीघ्र ही नार् हो जाता है। मििी यहद इस भय से फक राजा को मेरी नेक सलाह अर्प्रय लर्ेर्ी, जजससे र्े अप्रसन्द्न होकर मुझे ेमििी पद से अलर् कर देंर्े, ठकुर सुहाती बोलता है और राजा को र्लत मार् शसे नही ांरोकता तो उस राजा का और उस राज्य का र्नार् अर्श्य ही र्ीघ्र हो जायेर्ा। ऐसे ही र्ैद्य रोर्ी की अप्रन्द्नता के भय से, रोर्ी के कुपर् मार्ांने पर (एक सौ चार डडग्री बुखार चढ़ा है और रोर्ी खानेको दही मार्ां रहा है) उसे दे देता है तो उस रोर्ी के र्रीर का र्नार् ही समझो, र्ह जीर्र्त नहीांरह सकता। ऐसे ही यहद मर्ष्य की अप्रन्द्नता के भय से र्ुरु उसे र्लत रास्तेसे नहीांरोकता, कुमार् शपर जानेदेता है तो र्ुरु और मर्ष्य दोनों के िमों का नार् हो जाता है।

सोइ रािा कहूँ बिी सहाई । असतुति करहहं ंसुिाइ सुिाई ।
अिसर जाति विभीषिु आिा । भ्राा चरि सीसु िेहह िािा ॥

रार्् के मलए भी र्ही सयाीर्् उपजस्त है, मांिि उसे सुना-सुनाकर र्लत मार्् शपर जाते देखकर भी, उसके मुँह पर उसकी प्रसांिा फकये जा रहे हैं। ठीक समय, अर्सर जानकर र्ि्भीर्षर्् आये और उन्द्होंने बडे ेभाई (रार्)् के चरर्ों में मसर नर्ाया।

पुति मसर िाइ बैहठ तिज आसि । बोला बचि पाइ अिुसासि ।
जौ कृपाल पूँतछहु मोहह बािा । मति अिुरूप कहउँ हहि िािा ।।

फफर र्े अपने आसन पर बैठ र्ये और आज्ञा पाकर कहने लर्े फक हे कृपालु ! जब आपनेमुझसे राय पूछी है तो हे तात! म ैंअपनी बुद्धि के अनुसार आपके हहत की बात कहता हूँ।

जो आपि चाहै कल्यािा। सुजसु ुसुमति सुभ गति सुख िािा।
सो पर िारर मललार गोसाई। िजउ चउथथ के चन्द्द की िाई ।।

जो कोई भी यहद अपना कल्यार्, सुन्द्दर यर्, सुबुद्धि, र्ुभ र्नत और नाना प्रकार के सुख चाहता हो, तो हे स्र्ामी! र्ह पराई स्त्री के ललाट को चौर्् की चन्द्रमा की तरह त्यार्् दे। जैसे लोर्् चौर्् के चन्द्रमा को नहीं देखते, उसी प्रकार पर स्त्री के मुख को न देखें।

षट् ऋिु, ु बारह मास है, िामें मशमशर बसन्द्ि ।
तिमें िह हदि कौि है, सिी िजि है कन्द्ि॥

र्ह चतुर्ी माघ महीने का है, जजस हदन माता सती भर्र्ान र्ांकर के मुख को नहींदेखती, क्योंफक भर्र्ान र्ांकर के मस्तक में चन्द्रमा लर्ा र्ा जजसका लम्बा इनतहास है।

चौदह िुिि एक पति होई । भूि रोह तिकटइ िहहं ंसोई ।
गुि सागर िागर िर जोऊ । अलप लोभ भल कहइ ि कोऊ ॥

चौदह भुर्नों का एक ही मामलक हो, र्ह भी जीर्ों से बैर करके ठहर नहींसकता, नष्ट हो जाता है। जो मनुष्य र्ुर्ों का समुर और बडा ही चतुर क्यों न हो, यहद उसमें र्ोडा भी लोभ हदखता है तो उसे कोई भला नहीं कह सकता।

काम क्रोध मद लोभ सब, िाथ िरक के पन्द्थ ।
सब पररहरर रघुबीरहहं,ं भजहु भजहहं ंजेहह सन्द्ि||38||

जजसे नरक न जाना हो र्ह काम, िोि, मद और लोभ, इन र्ि्कारों से सदा बचता रहे, र्ह इन तीनों का सर्र्ा त्यार्् कर दे, जबफक आज दुननया में त्रिदोर्ष हो र्या है, सजन्द्नपात हो र्या है। काम र्ि्कार इतना बढ र्या

है फक क्या कहा जाये लोर्ो को अपना पराया नही ांसूझ रहा है। लोभ ऐसा बढ र्या है फक बाजार में चीजों में ममलार्ट का साम्राज्य है, खोजनेसे र्ुद्ि जहर भी ममलना मुजश्कल है, िेो ऐसा बढ र्या है फक एक-दूसूरे को पा जाय ेंतो खा जायें, अब र्ि्श्र् युद््ि की तैयारी है। अब की बार यहद र्ि्श्र् युद्् िहुआ तो र्ह अधिक हदन नहीं चलेर्ा, दो-चार हदनों में ही सब समाप्त हो जानेर्ाला है। भाई! सरकार में तुम्हारी श्रद्िा भले न हो, पर उसके देर् में रहकर उसके बनाये हुए र्िानि का तुम उल्लघांन कदार्प नहीं कर सकते। यहद करोर्े तो दण्ड के भार्ी होर्े, सरकार तुम्हें छोडने र्ाली नहींहै, यह तुम्हें अर्श्य सजा देर्ी। उसी प्रकार ईश्र्र के प्रनत तुम्हारी श्रद्िा भले ही न हो, तुम उसे न मानो, परन्द्तु उसके र्िानि को तुम्हें मानना पडेर्ा अन्द्यर्ा प्रकृनत तो तुम्हें दण्ड देर्ी ही, छोडेर्ी नही।ां चीजों में ममलार्ट करना, चोरी करना, झूठ बोलना, िोखा देना, परायी बहू-बेहटयों को बुरी ननर्ाह से देखना, हहसांा करना, दूसूरों का अहहत चाहना आहद क्या ये सब काम ईश्र्रीय र्िानि के प्रनतकूल नही ांहै, तब तुम उस मामलक के देर् में ननरपरािी कैसे मसद्ि होर्े, फफर तुम्हें स्र्प्न में भी, सुख और र्ानांत कहाँममलने र्ाली है। इसमलए होर् में आ जाओ अन्द्यर्ा भोर् तो रहे ही हो। र्ोस्र्ामीजी कहतेहैं फक-

िाि राम िहहं ंिर भूपाला। भुिनेस्र्र कालहु कर काला।
ब्रह्म अनामय अज भर्िंिा। ब्यापक अजजि अनाहद अनंिा।।

हे तात! राम केर्ल मनुष्यों के ही राजा नहींहैं, र्े समस्त लोकों के स्र्ामी और काल के भी काल हैं, र्े सम्पूर्,श ऐश्र्य,श यर्, श्री, िम,श र्ैराग्य एर् ांज्ञान के भण्डार भर्र्ान हैं, र्े सर् शर्र्कारों से रहहत, अजन्द्मा, व्यापक, अनाहद और अजेय ब्रह्म हैं।

गो द्विज िेनु दे हहिकारी। कृपा मसन्द्धु मानुष िनुधारी।
जन रंजन भंजन खल ब्राा। िेद धम रच्छक सुनु भ्राा।।

उन कृपा के समुर भर्र्ान ने, पृथ्र्ी, ब्राह्मर्, र्ौ और देर्ताओं के हहत करने ेके मलए ही मनुष्य र्रीर िारर् फकया है। हे भाई! र्े सेर्कों को आनन्द्द देने र्ाले, दुष्टों के समूह को नार् करने र्ाले और र्ेद तर्ा िम शके रक्षक हैं।

देखो - भर्र्ान के तीन रूप हैं -

1. आधिभौनतक, 2. आधिदैर्र्क और 3. आध्याजत्मक।

यह सारा चराचर जो मन र्ार्ी का र्र्षय है और दृजष्ट र्ोचर हो रहा है, र्ह भर्र्ान का आधिभौनतक रूप है, इसमें अज्ञानी को ससांार का भ्रम हो रहा है, र्ह इसे सांसार मानता है, यद्यर्प सन्द्त महात्मा जन, र्ेद, र्ास्त्र, श्रुनतयाँ, ँस्मृनतयाँ, धचल्ला-धचल्लाकर कह रही है फक ये सारा चराचर भर्र्ान ही है, र्ासुदेर् है, नारायर् है-

सीय राममय सब जग जानी

ज़ मिचे, जग जिी जि सकल राम मय जाति ।।
सि िखल्मिमदं ब्रह्म ििीहािास्स्फिकं चि ।।

परन्द्तु इसकी अनुभूनत क्यों नही ांहोती? इसे मोह कहतेहैं। भर्ान राम, भर्ान कृष्र्, ये लीला र्ग्रह रींर भर्ान का अधिदैर्क रूप है, इसमें अज्ञानी जनों को नर का भ्रम होता है, यह महा मोह है। यह भ्रम माता सती को, र्रुड को और भुरु्ण्डी आहद को हुआ र्ा।

सती को भ्रम हुआ -

जौं नृपृ तनय त ब्रह्म फकमम नारर त्रबरह मनत भोरर ।
देर्ख चररत महहमा सुनत भ्रमनत बुद्धि अनत मोरर ।।

र्रुड को भ्रम हुआ -

भि बंधि ि छूटहहं ंि र जवप जाकर
मिि । खब ि तिसाचर बाधेँउ िा गपास
सोइ राम ।।

भुसुण्डी को भ्रम हुआ -

प्राकृि मसस़ु इि लीला देझख भयउ मोहह मोह ।
िकि चररि करि प्रभु ुचचदािन्द सन्दोह ।।

सर् शमें जो 'म'ैं नाम से प्रमसद्िहै और जो ननत्य सब में प्रस्फुहटत हो रहा है, र्ह भर्ान का आध्याजत्मक रूप है इसमें अज्ञानी जनों को जीर् का भ्रम हो रहा है, र्ह समझता है फक 'म'ैं ससाांरी जीर् हूँ, यह सम्मोह है।

जैसे सप शका अत्यन्द्ता भार् रज्जू देर् में देखनेमें है, सप शदेर् में जो सप शहदख रहा है र्ह 'है' अजस्तत्र् ही है और प्रपचां देर् से देखने पर प्रपचां भासता है, जो अजस्तत्र् ही है।

यद्यर्प ससाांर तीन काल में है ही नही,ां परन्द्तु जब तक भर्ान आत्मा 'म'ैं का बोि न हो जायेर्ा, तब तक इसका अनुभर् कैसे होर्ा? और त्रबना अनुभर् के र्श्र्ास कैसे हो सकता है? आत्मा के ज्ञान से सर् शका ज्ञान, आत्मा के दर्नश से सर् शका दर्नश और आत्मा के अनुभर् से सर् शका अनुभर् होता है। इसमलए ही र्ेद र्ास्ि, सन्द्त महात्माजन कहतेहैं फक आत्म दर्नश करो, आत्मा को जानो, आत्मानुभर् करो।

जो र्ास्तर्र्क तत्र् है, र्ह जाना जाता है और जहाँ ँतक मन, र्ार्ी का र्र्षय है र्ह माना जाता है। आत्मा उसको कहते ेहैं जो सर् शका आिार है, कारर् है, अधिष्ठान है और सर् शका अजस्तत्र् है, त्रबना ज्ञान के मोह और भ्रम का नार् नहीांहोता, इसमलए अपने 'म'ैं को जानो, आत्म ज्ञान प्राप्त करो, इसके त्रबना सब व्यर् शहै।

चिुराई चूल्हे परै, घूरे परै अचार । ि्ुलसी िआिम ज्ञि त्रबिु, चारों िि ण िचमार ॥

र्ंभीर्षर् कहते हैं, हे भैय्या रार्! र्ही ब्रह्म भर्ग्न ही ये राम हैं, यह भर्ग्न का लीला र्ग्रह र्रीर है। उन्द्हें मनुष्य और राजा मत मानो, रे् अजन्द्मा, ननर्र्कशार, अजेय और अनाहद हैं इसमलए हे भाई!

ििहह बयर िि स्ज ििइअ माथा । ििप्रारति भंजि रघिुाथा ।
देहु िि थ प्रभु कहुँ बैदेही । भजहु राम त्रबिु हिे सिेही ।।

बैर त्यार् कर उन्द्हें मस्तक नर्ाइये, रे् श्री रघुनार् जी र्रर्ात के दुःख नार् करने रे्ाले हैं, हे नार्! उन प्रभु को, जानकी जी दे दीजजये और त्रबना कारर् ही स्नेह करनेर्ाले श्रीराम को भजजये ।

सरि गएँ प्रभु ििहु िि त्यागा। त्रबस् रोह कृि अघजेहह लागा ।
जासु िि म िि य िि प िि सिा। सोइ प्रभु प्रगट समुझुस्जय र्रिा ।।

जजसे सम्पूर् शजर्त् से रोह करने का भी पाप लर्ा हो, र्र् जानेपर प्रभु उसका भी त्यार् नही ंकरते, जजसका नाम तीनों तापों का नार् करने र्ाला है, रे् ही प्रभु (भर्ग्न) मनुष्य रूप में प्रर्ट हुए हैं। हे रार्! हृदय में यह समझ लीजजये।

दोहा- बार-बार पद लागऊँविय करउँ दससीस ।
पररहरर मिा मोह मद भजहु कोसलाधीस ।।39-क।।

हे दर्ीर्! म ैंबार-बार आपके चरर्ों लर्ता हूँ और र्र्नती करता हूँ फक मान, मोह और मद को त्यार्कर आप कौर्ल पनत श्री रामजी का भजन कीजजये -

दोहा- मुति पुलस्स्् तिज मसकयसि कहह पठई यह बाि ।
िुरि सो म ैंप्रभुसि कही पाइ सुअिसर िि ।।39 ख।।

मुनन पुलस्त्यजी ने अपनेमर्ष्य के हार् बात कहला भेजी है। सो, हे तात! सुन्द्दर अर्सर पाकर मनैं े तुरन्द्त ही यह बात आपसे कह दी।

र्ंभीर्षर् के इस कर्न का माल्यर्न्द्त जो फक रार्न का बुद्धिमान मिंत्री र्ा उसनेभी समर्नश फकया और कहा फक हे तात! आपके छोटे भाई र्ंभीर्षर् नीनतर्ान है, रे् जो कुछ कह रहे हैं, उन्द्हें हृदय में िारर् कीजजये, इसी में आपका परम हहत है।

र्भीर्षर् और माल्यर्न्द्त के इन बातों को सुनकर रार्् बडा ािोधित हुआ और कहने लरा् फक ये दोनों मूख,श रिु ्ुकी महहमा बखान कर रहे हैं अरे! यहाँ ाँकोई है? इन्द्हें बाहर ननकालो यहाँ ाँसे, तब माल्यर्न्द्त तो घर चला र्या और र्भीर्षर् हार् जोडकर फफर कहने ालरे् -

सुमति कुमति सबकें उर रहहीं। ािथ पुरि तिगम अस कहहीं।
जहा ाँसुमति ाहूँ संपति िाि । जहाँकुमति ाहूँ त्रबपति तिदाि ॥

हे नार्! पुरार् और र्ेद ऐसा कहते हैं फक अच्छी बुद्धि और खोटी बुद्धि सबके हृदय में रहती है, जहाँ सुबुद्धि है, हाँ नाना प्रकार की सुख सम्पदाएँ रहती हैं और जहाँ कुबुद्धि है, हाँ पररर्ाम में र्पर्त्त का साम्राज्य रहता है।

िि उर कुमति बसी त्रबपरीिा। हहि अिहहि मािहु ररपु प्रीिा ।।
कालराति तिमसचर कुल केरी । ािहह सीिा पर प्रीति घिेरी ॥

हे भाई ! आपके हृदय में उल्टी बुद्धि आ बसी है, इसमलए ही आप हहत को अहहत और ममि को रिु ्ुमान रहे हैं। जो रिास कुल के मलए काल रात्रि के समान है, उन सीताजी पर आपकी बडी प्रीनत है।

दोहा - िाि चरि गहह मागउँ राखहु मोर दुलार ।
सीिा देहु राम कहुँ, अहहि ाि होइ ािुम्हार ।।40।।

हे तात ! म ाैंचरर् पकडकर आपसे यही भीख माँर्ता हूँ फक आप मुझ छोटे भाई का दुलार रख, मुझ बालक के आग्रह को स्नेहपूर्कश स्ीकार कीजजये और श्री रामजी को सीता जी दे दीजजये, जजससे आपका अहहत न हो।

बुध पुरि श्रुति संमि बािी । कही त्रबभीषि िीति बखािी ।
सुिि दसािि उठा ररसाई । खल ािोहह तिकट मृत्यु अब आई ।
स्जअमस सदा सठ मोर स्जआिा । ररपुकर पच्छ मूढ़ ािोहह भािा ।
कहमस ाि खल अस को जग माहीं। भुज बल जाहह स्जिा म ाैंिाही ।
मम पुर बमस ािपमसन्द्ह पर प्रीिी। सठ ममलु जाइ तिन्द्हहह कहु िीिी।
अस कहह कीन्द्हेमस चरि प्रहारा । अिुज गहे पद बारहहं ांबारा ॥

र्भीर्षर् ने रार्् से पडांडतों, पुरार्ों और र्ेदों द्वारा सम्मत र्ार्ी से नीनत बखान कर कही, पर उसे सुनते ाेही रार्् ािोधित हो उठा और बोला- रे दुष्ुट! अब मृत्यु तेरे ननकट आ र्यी है। अरे मूख!श तू मेरे जजयाए जीता है और रिु ्ुका पि लेता है। मेरे नर्र में रहकर उन तपजस्यों पर प्ेरेम करता है, अतः अरे मूख!श जाकर उन्द्ही ांको यह नीनत बता, ऐसा कहकर रार्् ने उन्द्हें लात मारा, परन्द्तु छोटे भाई र्भीर्षर् ने लात से मारनेपर भी बार-बार उनके चरर् ही पकडे।ा

उमा संकिइ इहइ बड़ाई । मंद करि जो करइ भलाई ॥

सन्द्त की यही बडाई है फक रे् बुराई करने पर भी बुराई करने र्ालों पर भलाई ही करते हैं।

भलो भलाइहह पै लहइ, लहइ तिचाइहह ीचु ।
सुधा सराहहअ अमरिूँ गरल सराहहअ मीचु ।।

भैय्या! बैरार्ी, सन्द्यासी, उदासी होना सरल है, मर्र सन्द्त होना बडा कहठन है।

सै सपे ि माझणक्यं, मौक्तं गिजे-गजे ।
साधिः िहह सिं, चन्दि ि बि-बि॥

प्रत्येक सप शमें मर्र् नही ंहोती, हर एक हार्ी में र्ज मुक्ता नही ंहोता, सन्द्त महात्मा जन सर्श्ि नही ं ममलतेऔर हर जर्ांल में चांदन के र्ृ नही ंहोते, ये तो कहीं-कही ंही सुलभ हो सकतेहैं।

संन्दिह के महहमा रघुराई। बहु त्रबचध ेद पुरािन्दह गाई ।।

यहद सन्द्त ममल र्ये तो जान लो, भर्र्ान ममल र्ये। जैसे हजारों ठोकर खाकर एक आभूर्षर् बनता है, उसी प्रकार हजारों लाखों मुसीबत सहकर एकसन्द्त होता है। 'सबहह ंमानप्रद, आपु अमानी।' सन्द्त स्र्यंअमानी होता है, परन्द्तुसबको रे् ेमान हदया करते हैं। तारीफ तो यही है फक सन्द्तों द्र्ारा ममला सम्मान सबको हजम नहीं होता, हजम नहींहोने पर यह उन्द्माद का कारर् बन जाता है।

सन्द्त, मन से, र्चन से और कम शसे ननत्य बह्मामृत् में डूबे रहते हैं। रे् हदन-रात जर्त के जीर्ों के कल्यार् की ही कामना करते रहतेहैं। सतां दूसूरों में एक अर्ु के बराबर भी र्ुर् देखतेहैं तो उसे रे् पहाड के समान समझतेहैं, रे् जजनका आदर करते हैं उसे रे् भूल जाते हैं, परन्द्तु दूसूरे यहद र्ोडा भी उपकार करते हैं, रे् जीर्न भर याद करते हैं।

साघु चररि सुभ चररि कपासू। तिरस त्रबसद गुिमय लजासू ।
जो सहह दुखु परतछर दुरािा । बंदिीय जेहहंजंग जस पािा ।।

जैसे कपास अनेक दु्ःखों को सहन करके भी पराये नछर को ढाँकता है, इसी तरह सन्द्त अनेक मुसीबतों को सहकर भी दूसूरे का कल्यार् करते हैं, इसीमलए श्री मानसकार कहते हैं फक -

त्रबचध हरर हर कत्रब कोत्रबद बािी। कहि साधु महहमा सकुचािी।
सो मो सि कहह जाि ि कैस ें। साक बतिक मति गुि गि जैस ें।।

भर्ान को जानना बडा आसान है, क्योंफक भर्ान अपना 'म' ै है, अपना आप है, 'स्' रूप है, परन्द्तु ु भर्ान को जानने्ाले जो सन्द्त हैं, जो भर्ान को जानते हैं, उनको पहचानना बडी मुजश्कल है। उनके अत्यतां ननकट रहकर भी, रे् जानेनहीीं जा सकते और यहदजान मलया तो फफर रे् जीर्न भर के मलए उनके हो र्ये।

सोइ जिाइ जेहह देहु जिाई। जिा िुम्हहह िुम्हइ होइ जाई ।।

जजन्द्हें कीनत,श कांचन की र्ासना रहती है, रे् ही रे्भूर्षा िारर् करते हैं और जजनकी कोई कामना ही नहीं, उन्द्हें भेर्ष से क्या प्रयोजन।

ऊषर बरषइ तॄि िहहं ांजामा। स्जमम हररजि हहय उपज ि कामा ॥

तो फफर ई क्या रे्भूर्षा बनायेर्ा इसमलये सतोीं का कोई भेर्ष नहीींहोता। तब प्रश्न होता है फक स्ामीजी ! इस जरूनत में हम उन्द्हें फकस तरह पहहचाने? उत्तर है- भैय्या। इसकी जजम्मेदारी तुम अपनेमसर पर मत लो तुम केर्ल अपने अांदर योग्यता पैदा करो हृदय में मछली के समान तडप पैदा करो अपनेआपको अधिकारी बनाओ, फफर तो तुम्हें रे् खुद खोजते हुए, तुम्हारा नाम, र्ाँर् का पता पूछते हुए तुम्हारे पास पहुँच आयरें् उन्द्हें खोजने तुम्हें कहीं जाना नही ांपडेर्ा।

देखो, इतने ेमहान आत्मा, मसद्ि पुरुर्ष जर्त् के कल्यार्ार्् शपृथ्ूी मडांल पर त्रबचरतेरहते हैं -

इनकी ये सरकारी ड्यूटी है- है -

कुमारो िारद ऋभुरङ्चगरा दिेलो ऽमसिः
अपान्द्तरिमो व्यासो माकिण्डेयोऽथ गौिमाः ।
मिसकठो भगिाि् रामाः कवपलो बादरायझणाः ।
दुिासा याज्ञिल्क्यश्च जािूकण्यस्ििथाऽऽरझणाः ।।
रोमशश्च्यिो दत्त आसुरराः सपिञ्जमलाः ।
ऋवषदेमशरा बोध्यो मुतिाः पञ्चमशरास्ििा ।
हहरण्यिाभाः कौसल्याः श्रुिदेि ऋिध्िजाः ।
एिेपरे च मसद्धेशाश्चरस्न्द्ि ज्ञािहेिाः ।।

(श्रीमद् भार्ित, र्षष्ठांस्कन्द्ि, अध्याय 15 धचिकेतुउपा., पृ. 290)

कुमार, नारद, ऋभु, अधांर्रा, देर्ल, अमसत, अपान्द्तरम, व्यास, माकशण्डेये, र्ौतम, र्मर्ष्ठ, राम, कर्पल, बादरायर्, दुर्ासशा, याज्ञल्क्र्य, जातुकण्य,श अरुर्, रोमर्, च्यर्न, दत्तिाय, आसुरर, पतचजमल, रे्दमर्रा, बोद्यि, पचांमर्रा, हहरण्यनाभ, कौसल्य, श्रुतदेर् और ऋतुध्र्ज।

सम्राट परीक्षित के समय तक ये प्रत्यि हदखाई देते रे्, परन्द्तुअब जैसे-जैसे लोर्ों की दृजष्ट में दोर्ष आता यर्ा रै्से-रै्से ये लोर् लोप होते र्ये, मर्र र्ेचरतेहैं आज भी। जजनको देख लेते हैं फक ये अधिकारी हैं, उनको ये दर्नश देते हैं और उनका कल्यार् करके चले जाते हैं। इसमलए तडप पैदा करो तब सांत ममलेर्ा नहीं तो लाटरी का पैसा ज्यादा हदन नहीां हटकता।

भर्र्ान के चार प्रकार के अर्तार हैं -

1. ननत्य अर्तार,

2. नैममत्तक अर्तार,

3. प्रादुभार्श अर्तार

4. आतुर अर्तारा

भर्र्ान राम और कृष्र् का अर्तार रार्र् और कांस के र्र् करने के ननममत्त हुआ र्ा। दुष्टों का सांहार और भक्तों को सुख पहुँचाने ेयह भर्र्ान का नैममत्तक अर्तार है। भक्त प्रहलाद की रिा के ननममत्त खम्भ फाडकर नरमसहां अर्तार हुआ यह भर्र्ान का प्रादुभार्श अर्तार है। र्जेन्द्र की रिा के मलए जो अर्तार हुआ र्ह भर्र्ान का आतुर अर्तार है और ननत्य अर्तारों में भर्र्ान सन्द्त आते हैं, जजनके द्र्ारा जर्त् ्का अहननर्श कल्यार् होतेरहता है। जब र्र्भीर्षर् को रार्र् ने लात मारकर ननकाल हदया, तब र्ह यह कहते हुए हँसे चला फक भाई! तुम र्पता के तुल्य हो, मुझेयहद आपनेमारा भी तो कोई हानन नहीां, परन्द्तु हे नार्! म ैंफफर भी कहता हूँ फक आपका भला, श्रीराम के भजनेमें ही है। ऐसा कहकर र्र्भीर्षर् अपनेमत्रांयों को सार् ले आकार् मार्र् शमें र्ये और सबको सुनाकर र्े कहने लर्े - -

रामु सत्य संकल्प प्रभु सभा काल बस ोरर ।
म ैंरघुबीर सरि अब जाऊँ देहु जति खोरर ।।41।।

भर्र्ान आत्मा राम सत्य सकांल्प हैं, उसे जानना चाहहए। भर्र्ान राम ने, अभी-अभी ऋर्र्षयों के आश्रम में प्रनतज्ञा की र्ी फक-

तिमसचर हीि करउँ महह। भुज उठाय पि कीन्द्ह ।

जजस स्र्ान पर यह प्रनतज्ञा हुई है, र्ह स्र्ान नार्पुर जजले में आज भी "रामटेक'" (राम की प्रनतज्ञा) के नाम से प्रमसद्ि है।

र्ईभीर्षर् रार्र् से कहते ेहैं फक राम सत्य सकां ल्प है, उनका सकां ल्प व्यर् शनही ांजाता, असत्य नही ांहोता, इसमलए हे रार्!् तेरी सभा काल के र्् में है, अतः अब म ैंश्री रर्ुबीर के र्रर् में जाता हूँ, मुझेदोर्ष न देना।

अस कहह चला त्रबभीषिु जब हीं। आयूहीि भये िब सबहीं।
साधु ुअिग्या िुरि भिािी। कर कल्यिा अझखल कै हािी।
रिा जबहहं ंत्रबभीषि त्यागा। भयउ त्रबभि त्रबिु िबहहं ंअभागा ।
चलेउ हरवष रघिुायक पाहीं । करि मिोरथ बहुि मि माहीं।।

ऐसा कहकर र्ईभीर्षर् ज्यों ही चले, त्यों ही सब रिास आयुहीन हो र्ये, उनकी मृतूयुननजश्चत हो र्यी।
भर्र्ान कर्ीर कहते ेहैं, हे भर्ानी! सिु ुका अपमान तुरन्द्त ही सम्पूर् शकल्यार् की हानन कर देता है। रार्र् ने जजस िर्् र्ईभीर्षर् को त्यार्ा, उसी िर्् र्ह अभार्ा रै्भर् से हीन हो र्या। र्ईभीर्षर् मन ही मन हर्र्षतश होतेहुए, मन में अनेकों मनोरर् करते हुए श्री रघुनार्् जी के पास चले।

देझखहउूँ जाइ चरि जल जािा। अरि मृदलुु सिेक सुखदािा ।
जेपद परमस िरी ररवष िारी। दण्डक कािि पािाकारी ।
जेपद जिकसिुाूँउर लाए । कपट कुरंग संग घर धाए ।
हर उर सर सरोज पद जेई । अहोभाग्य म ैंदेझखहउूँ िेई ।
दोहा- स्जन्द्ह पायन्द्ह के पादकुस्न्द्ह भरिु रहे मि लाइ ।
ते पद आजु त्रबलोफकहउूँ । इन्द्ह ियिस्न्द्ह अब जाइ 1142।।

रे्सोचते जाते रे् ेफक म ैंजाकर भर्र्ान के कोमल और लाल र्र् शके सुन्द्दर कमल चरर्ों के दर्नश करूूँर्ा, जो सेर्कों को सुख देनेर्ाले हैं।

जजन चरर्ों का स्पर् शपाकर ऋर्र्ष पत्नी अहल्या तर र्यी और जो दण्डक र्न को पर्र्् करने ेर्ाले हैं।
जजन चरर्ों को जानकी जी ने हृदय में िारर् कर रखा है और जो चरर् कमल सािात् ्मर्र्जी के हृदय रूपी सरोर्र में त्रबराजते हैं, मेरा अहो भाग्य है फक उन्द्हीं को आज में देखूूँर्ा। जजन चरर्ों की पादकुाओांमें भरत जी ने अपना मन लर्ा रखा है, अहा! आज म ैंउन्द्हीं चरर्ों को अभी जाकर देखूूँर्ा।

एहह त्रबचध करि सप्रेम त्रबचारा। आयउ सपहद मसन्द्धु एहहं ंपारा।
कवपन्द्ह त्रबभीषिु आित देखा। जािा कोउ ररपु दिू त्रबसेषा ।
ताहह राझख कपीस पहहं ंआए । समाचार िब ताहह सिुाए ।
कह सुग्रीि सिुहु रघुराई । आिा ममलि दसािि भाई ।।

इस प्रकार पे्रेम सहहत र्चार करते हुए रे् ेर्ीघ्र ही समुर के इस पार जहाँ ँश्री रामचन्द्र जी की सेना री्, आ र्ये। र्ानरों ने र्भीर्षर् को आते देखा तो उन्द्होंने जाना फक यह र्िुका कोई खास दूत है, उन्द्हें पहरे पर ठहराकर रे् सुग्रीर् के पास आये और उनको सब समाचार कह सुनाया।

हर्स्ति साठ सहस्र् बल, सदा धम ्िकी सींि।
सदा श्र्ािी धि्जि सोहि, यह राजा सुग्रि ॥

सुग्रीर् में साठ हजार हाथयों का बल र्ा। सुग्रीर् ने भर्र्ान राम के पास जाकर कहा- हे रघुनार् जी ! रार् का भाई र्भीर्षर्, आपसे ममलने आया है और मनैं उसे र्हीं पर रोक हदया है, उसके मलए आपकी क्या आज्ञा है?

कह प्रभु सखा बूझझऐ काहा । कहइ कपीस सुिहु ्िर ्िाहा ।
जाति ्ि जाइ तिसाचर माया । काम रूप केहह कारि आया ।।

तब भर्र्ान राम कहतेहैं फक हे ममि! तुम क्या समझते हो, तुम्हारी क्या राय है? तब बानर राय सुग्रीर् ने कहा फक हे नार्! रािसों की माया जानी नहीांजाती यह इच्छानुसार रूप बदलनेर्ाला छली, न जाने फकस कारर् आया है।

भेद हमार लिे सठ आिा । राझखअ बाचूँध मोहह अस भािा ।।

जान पडता है फक यह दुष्ट हमारा भेद लेने आया है, इसमलए मुझेतो यही अच्छा लर्ता है फक इसे बाँि रखा जाये।

सखा ्िीति ्िुम्ह ्िीफक त्रबचारर । मम पि सरिािि भयहारी ।।

तब भर्र्ान राम ने कहा- भैय्या! तुम हमारे सखा हो, राजा होने ेके नाते, तुमने ेभली नीनत र्चारी है, करना तो यही उधचत है, तुम्हारी यह सलाह हमारे हहत के मलए उपयोर्ी ही है, हम इसका खण्डन नही ांकरते, परन्द्तु भाई! मेरा प्रर् क्या है यह भी तुमसे नछपा नहीांहै, र्रर् में आये हुए की रिा करना कत्तव्शय है। अपनेजीर्न में, जो एक बार भी कह देता है फक प्रभो! म ैंतेरा हूँ तो म ैंउसे सारे ससांार से अभय कर देता हूँ, ऐसी मेरी प्रनतज्ञा है। र्रर्ार्त की रिा करना मेरा कत्तव्शय है।

दोहा- सरिािि कहुँ जेजहहं,ं तिज अिहहि अिुमाति ।
ते ्िर पािर पापमय, तिन्द्हहहं ंत्रबलोकि हाति ।। 43।।

जो कोई अपने अहहत का अनुमान करके र्रर् में आये हुए का त्यार् कर देते हैं, रे् पामर, ्िुर, पापमय हैं, उन्द्हें देखने में भी पाप लर्ता है।

कोहट त्रबप्रबध लागहहं ंजाहू। आएँ सरि िजरूँ िहहं ंिाहू।
सिमुख होइ जिी मोहह जबहीं। जन्द्म कोहट अघ िासहहं ंिबहीं ॥

जजसे करोडों ब्राह्मर्ों की हत्या लर्ी हो, र्र् में आने ेपर म ैंउसे भी नहींत्यार्ता। जीर् ज्यों ही मेरे सन्द्मुख होता है, त्यों ही उसके करोडों जन्द्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं।

भर्र्ान से जीर् का र्ैमुख होना पाप है, क्योंफक जीर् से पाप तभी होता है जब र्ह भर्र्ान से र्ैमुख हो जाता है। र्ैमुख होने ेपर जीर् और जहाँ ँसन्द्मुख हुआ फक र्ह फफर जीर् न रहा, फफर तो र्ह मर्व (भर्र्ान) ही है। जब जीर् न रहा, तब पाप भी न रहे।

डण्डा, अपने को डण्डा मानता है यही उसका लकडी से र्ैमुख होना है और यहद डण्डा अपने को लकडी जानता है तो यही उसका लकडी से सन्द्मुख होना है, इसी तरह जब अपने आपको जीर् मानता है, तब यही भर्र्ान से र्ैमुख होना है और जब अपनेआपको भर्र्ान आत्मा जानता है, तब यही भर्र्ान के सन्द्मुख होना है। भर्र्ान से र्ैमुख होने पर जीर् आर्ार्मन में फँसता है और सन्द्मुख होनेपर जीर् का आर्ार्मन ममटता है, इस पर श्रे्ताश्र्रोपननर्षद् की एक श्रुनत आती है, जजसमें जीर् के आर्ार्मन के कारर् और उससे छूटने ेका उपाय बताया र्या है।

सिाजीर्ि सि िसंस्थे बृहन्द्र्े अस्स्मन्द्हंसो भ्राम्यिे ब्रह्मचक्रे ।
पृथगात्मािं ंप्रेरेरिारं च मत्र्ा, जुकटस्र्सिस्र्ेिामृतत्र्मेति ॥

(श्र्ेता.उ.अ-1 म–ां6)

अर्ात्श ्सर् शके प्रेरक भर्र्ान को अपनेआपसे मभन्द्न मानकर अनाहद काल से हांस जीर्, ब्रह्मचि यानन ससांार में भ्रमता रहता है और जब भर्र्ान एर् ांअपनेआ 'म'ै को र्ीर से मभन्द्न करके एकता का अनुभर् करता है तब र्ह तत्काल ही, समस्त बन्द्निों से मुक्त होकर अमृतत्र् पद (कैर्ल्य पद) को प्राप्त हो जाता है। भर्र्ान से अपनेआप को मभन्द्न मानना, यही भर्र्ान से अलर् होना है और जीर् का यही आर्ार्मन का कारर् है और जब मभन्द्न मानना छोड देता है अर्ात्श ्भर्र्ान से अपने आपको अमभन्द्न जानता है तब र्ह भर्र्ान से जुड जाता है, उसका आर्ार्मन ममट जाता है। श्रुनत कहती है -

प्रकृतिविकृतिमभन्द्िः शुद्धबोधस्र्भािः सदसहददमशेषं भासयस्न्द्िविशेषेः ।
विलसति परमात्मा जाग्रदाहदष्र्िस्था स्र्हिमहमममति साक्षात् ्साक्षक्षरूपेण बुद्धेः ॥

(र्ि.चू.-137)

अर्ात्श ्भर्र्ान फकसी का न काय शहै, न कारर् है, र्ह र्दु बिो स्र्रूप है अर्ात् श ्परात्पर मायातीत है। अपनेआपको कुछ मान लेना, यह अर्ुदद्ु बि है और अपनेआपको जैसा है, र्ैसा ही जान लेना (त्रबना मान्द्यता

 के) यह रुदि्् बिो है, जो जारूतृ, स्न्न, सुर्षुजप्त तीनों अर्स्ाओां में र्र्लास करता है अर्ात्श ्इनको जानता है,

र्ही अपने आपको 'म'ै हूँ 'म'ै हूँ रात-हदन कहतेरहता है, यह आत्म बिोक र्दद है, भार्ाचक है, ब्रह्म र्ाचक है, देह र्ाचक र्दद नहीां है।

जजज्ञासुओां! ऐसा ननश्चय करो, इसका अनुभर् करो -

'म'ै उत्तम पुरुर्ष है, पुरुर्षोत्तम है, यही राम है, भर्ान है, जजसकी अनुभूनत रोज करायी जाती है, परन्द्तु यह समझ में तभी आता है, इसकी अनुभूनत तभी होती है जब हृदय सन्द्मुख होता है, हम बडी सरलता से समझा रहे हैं, ध्यान से समझो - देखो भैय्या! जो भार् हमेर्ा न रहे उसे प्रपचां कहते हैं और जो भार् सर्कशालीन है, बस! र्ही भर्ान है।

'म'ै देह हूँ, 'म'ै स्त्री हूँ, 'म'ै पुरुर्ष हूँ, 'म'ै जीर् हूँ ऐसा कहा जाता है, तब देह भार्, स्त्री भार्, पुरुर्ष भार्, जीर् भार् आहद 'म'ै के बाद जो भार् है, रे् सब भार् जारूतृ अर्स्ा में ही रहता है, मान लो स्न्न अर्स्ा में ही रहता है, परन्द्तु क्या र्ाढ़ी नीदां, सुर्षुप्ती अर्स्ा में भी यह भार् रहता है? उत्तर होर्ा नही,ां हसँर् शभार्ों का सर्शा अभार् रहता है। बस, यही भार् जजसका अभार् रहता है, र्ही प्रपचां है। परन्द्तु, 'म'ै आत्मा, चेतन तत्त्र् तो रहता हूँ, उसका अभार् तीनों काल और तीनों अर्स्ाओां में कभी भी नहीां होता, इसमलए यही सचाई है फक 'म'ै ही सर्कशालीन हैं, इसमलए इसे जानो, पकडो, इसका अनुभर् करो।

भर्ान राम कहते ेहैं फक -

मम दरसि िल परम अिूपा। जिी पाि तिज सहज सरूपा ।।

मेरे दर्नश का यही प्रत्यि फल है फक जीर् अपनेसहज स्र्रूप (स्र्ाभार्क भार्) को प्राप्त कर लेता है, इससे पता चलता है फक जीर् का सहज स्र्रूप जीर् नही ांहै, जीर् तो काल्पननक है, माना हुआ है, जीर् का सहज स्र्रूप तो भर्ान आत्मा है, राम है, सजच्चदानन्द्द है।

महर्र्ष शभरद्र्ाज कहतेहैं फक -

करम बचि मि छाड़ छलु जब लचग जिु ि िुम्हार ।
बि लचग सुख सपिेहुँ िहीं, फकएँ कोहट उपचार ।।

(अ.का. दोहा 107)

मन, र्चन और कम शके छल को जब तक कोई नही ांत्यार्ता, तब तक र्ह तुम्हारा जन अर्ात्श ्तुम्हारा भक्त नहीांहो सकता और इस जरुनत में उसे स्न्न में भी सुख, र्ाांनत नही ांममल सकती, चाहे र्ह करोडों उपाय क्यों न करे। अब भर्ान राम के प्रनत मन, र्चन और कम शका छल क्या है-र्र्षय समझो-

देखो ब्राह्मर् र्पता से पिु होर्ा ई ब्राह्मर् ही होर्ा, ित्रिय, र्ैश्य अर्ा र्ूरू नहीं होर्ा, परन्दतु यहद कोई ब्राह्मर् पिु अपनेको मन से अन्दय जानत का मानता है तो यह हुआ उसके मन का छल। र्ारी से ब्राह्मर् न बताकर यहद ई पूछने ेपर अपनेको अन्दय जानत का बताता है तो यह हुआ उसके र्ारी का छल और यहद ई कम श भी ब्राह्मर् का न करके अन्दय जानत का कम शकरता है तो यह हुआ उसके कम शका छल, तो फफर ऐसे पिु पर क्या ब्राह्मर् र्पता प्रसन्दन होर्ा? कदार्प नही,ां इसी तरह भर्ान राम जब परम र्पता हैं और हम उनकी सांतान हैं, पिु हैं, तब राम चराचर के अजस्तत्र् का जो पिु होर्ा, ई र्पता की जानत का ही होर्ा, अन्दय जानत का नहीं। देखो! राम की जानत समझो -

राम सस्च्चदािन्द हदिसा ।।

राम, सत्,् धचत्,् आनन्द स्रूप, अखण्ड, अजन्दमा, अकत्ताश है, व्यापक है, तब उसका पिु भी उसी जानत का होर्ा। जो जानत र्पता की, र्ही जानत पिु की होती है, क्योंफक ई र्पता की ही जानत का तो है, आत्मा, सत्,् धचत्,् आनन्द, स्रूप, अखण्ड, अजन्दमा, अकत्ताश और व्यापक है, परन्दतु ई अपनेआपको आत्मा न जानकर, आत्मा न बताकर, मन से ई अपनेको साढे तीन हार् का र्रीर मानता है, जन्दम-मरर् र्ाला मानता है, सुखी-दुखी, कत्ताश-भोक्ता मानता है तो यह हुआ उस पिु का मन का छल और र्ारी से भी यही औरों को बताता है फक म ैं देह हैं, स्िी हूँ, पुरुष हूँ, जीर् हूँ आहद। तो यह हुआ उस पिु का र्ारी का छल और भर्ान राम अकताश, ब्रह्म हैं, परन्दतु उसका पिु होते हुए स्यां अकत्ताश होते हुए अपनेको कत्ताश, भोक्ता मानता है, सुखी-दुःखी मानता है तर्ा कत्तापशनेऔर भोक्तापने के अहांकार को लेकर कम शकरता है तो यह उसके कम शका छल हुआ, तब भला परमर्पता राम ऐसे कुल कलकी पिु पर क्या कभी प्रसन्दन होने ेर्ाला है? कदार्प नही।ां

जीर् र्ेश्या का पिु है, इसका कोई खास र्पता नही ांर्ांा र्ें र्ांादास, यमुना र्ें यमुनादास। यही सब भर्ान राम के प्रनत मन, र्चन और कम शसे छल करना है।

फकसी को पूछने ेपर फक तुम कौन हो, तब अपनेआप को र्रीर बताना, स्िी, पुरुष बताना (यद्यर्प ई आत्मा है) यह अपना र्लत हुमलया बताना है, यह दफा 468 का जुम शहै, इसके मलए सजा है "जन्दम और मरर्"। अपनेआपको आत्मा न बताकर म ैंससांारी जीर् हूँ बताना, यह र्लत हुमलया बताना है, इसकी सजा है, चौरासी लाख योननयों में 'आर्ार्मन'। अतः, 'म'ैं के ऊपर जजतनी मान्दयताएँ हैं, र्े ही सब करोडों जन्दम के पाप हैं, जो भर्ान राम के सन्दमुख होते ही नष्ट हो जाते हैं। मन, र्चन, कम शसे जब छल रहहत हो र्या, तब फफर क्या रहा? "ननमलश मन" अर्ाशत ्भर्ान ही, भर्ान रह र्या। भर्ान कहते हैं -

तिमलि मि जि सो मोहह पिाा। मोहह कपट छल तछर ि भिाा ।।

नदी जब तक छल रहहत नहीं हो जाती, तब तक ई समुर को प्राप्त नहीं होती। नदी का अपनेनाम रूप का त्यार् कर देना ही, समुर के प्रनत उसका छल रहहत होना है। इसी तरह नाम रूप का जब तक त्यार् नही ांहो

जाता, सर्-शमान्द्यताओींका अभार् नहीीं हो जाता, तब तक राम से ममलना नही ींहो सकता। बस, यही राम के सन्द्मुख होना है। जो जैसा है उसे रै्सा ही न जानकर कुछ का कुछ मानना, अरे! यही तो पाप है, इससे बडा कोई पाप नही।ीं रु्भारु्भ कमों के कत्तापशनेऔर भोक्तापने का जो अहींकार है यही जीर् का पाप है और उसी पाप के कारर् न जानेकब से यह जीर् चौरासी लाख योननयों में भटकता फफर रहा है।

अब कम शक्या है? समझो -

जो फकया जाये उसे कम शकहते ेहैं। पहहले कत्ताश, फफर कम,श इसके बाद फिया होती है। अब प्रश्न होता है फक 'म'ै कम शहै या कत्ताश? उत्तर है 'म'ै कताश है और 'हूँ' फिया है। म ैंकताश और हूँ फिया के बीच में जो कुछ भी है, रे् सभी कम शहैं।

म ैदेह हूँ, म ैपुरुर्ष हूँ, म ैंस्त्री हूँ, म ैजीर् हूँ, इनमें म ैंऔर हूँ के बीच में देह, पुरुर्ष स्त्री और जीर् ये सब हैं। ये सब कम शहैं, देहभार्, पुरुर्ष भार्, स्त्री भार्, जीर् भार् इन सब भार्ों का अभार् कर दो अब रे्रे्ष रह र्या, केर्ल 'म'ै हूँ। र्स! यही भर्र्ान है, इस भार् में कमों का अत्यन्द्ताभार् हो र्या, सर् शपापों का अभार् हो र्या, 'म'ै हूँ, यही राम है, भर्र्ान देर् है, आत्म देर् है, यहाँ ँजीर् देर् का र्ानि नही ींरह जाता, यहाँ ँकम,श िम,श र्धि, ननर्षेि कुछ नहीीं है, केर्ल अपना आप है।

पापिंि कर सहज सुभाऊ । भजिु मोर ििहह भाि ि काऊ ।
जौं पै दुकुट हृदय सोइ होई । मोरें सिमुख आि फक सोई ॥
तिमलि मि जि सो मोहह पािा। मोहह कपट छल तछर ि भािा ।
भेद लिे पठिा दससीसा । िबहुँ ि कछु भय हाति कपीसा ॥
जग महुँ सखा तिसाचर जेि। लतछमिु हिइ तिमिष महुँ िेि ।
जौं सभीि आिा सरिाई । रझखहउँ िाहह प्राि की िाई ॥

भर्र्ान राम कहते हैं पापी का सहज रुभार् है फक र्ह मेरे सन्द्मुख आ ही नहीींसकता अर्ात्श ्आत्मा के सन्द्मुख आ ही नही ींसकता, अर्र जीर् र्स्तुतः जीर् है तो र्ह कभी भर्र्ान हो ही नहीींसकता। हे सखा सुग्रीर्! यहद र्र्भीर्षर् भेद लेनेही आया हो तो कोई बात नही ींन इसके मलए कोई भय है न हानन, क्योंफक मेरा छोटा भाई लक्ष्मर् ससींार के सब रिासों को पल मि में नार् कर सकनेमें समर् शहै। इसमलए, उसे आने दो, धचतींा मत करो और यहद भयभीत होकर मेरे र्रर् में आया है तो म ैंउसे प्रार्ों की तरह रखूँर्ाँ।

दोहा - उभय भाँतिँ िेहह आिहु हूँमस कह कृपा तिकेि ।
जय कृपाल कहह कवप चले अंगद हिू समेि ||44||

भर्र्ान राम की इस आज्ञा को सुनकर हनुमान समेत, अर्ींद और सुग्रीर् सभी बडे ेप्रसन्द्न हुए और कृपालु ुभर्र्ान राम की जय हो, कहते ेहुए चले।।

सादर ििहह आगे करर बिार । चले जहाँूरघुपति करिाकर ।
दूरूरहह िे देखे द्वौ भ्रािा । िियािंद दाि के दािा ।।
बहुरर राम छत्रब धाम त्रबलोकी। रहेउ ठटुफक एकटल पल रोकी ।
भुज प्रलंब कंजारूि लोचि । स्यामल गाि प्रिि भय मोचि ।।
मसंघ कंध आयि उर सोहा । आिि अममि मदि मि मोहा ।
ियि िीर पुलफकि अति गािा। मि घरर धीर कही मृदु ुबािा ।।

र्भीषर् को आदर सहहत आरे् करके बानर फफर हाँ चले, जहाँ ँकरुर्ा की खान श्री रघुनार् जी रे्। निों को आनन्द का दान देने र्ाले, अत्यन्द्त सुखद दोनों भाइयों को र्भीषर् ने दूरू ही से देखा। र्ोभा के िाम भर्ान राम को देखकर, पलक मारना रोककर, हठठक कर, स्तदि होकर एकटक देखतेही रह र्ये। भर्ान की र्ाल भुजाएँ हैं, लाल कमल के समान नि हैं और र्र्ार्त के भय का नार् करने ेर्ाला साँर्ला र्रीर है। मसहां जैसे कांि है, र्ाल र्िस्ल (चौडी छाती) अत्यन्द्त र्ोभा दे रहा है। असख्ांय कामदेर्ों के मन को मोहहत करने ेर्ाला, मुख है। भर्ान के स्र्रूप को देखकर र्भीषर् के निों में प्ेरेमाश्रुओांका जल भर र्या और र्रीर अत्यन्द्त पुलफकत हो र्या, फफर मन में िीरज िरकर उन्द्होंनेबडी दीनतापूर्कश कोमल र्चन कहे -

िाथ दसिि कर म ैभ्रािा । तिमसचर बंस जिम सुररािा ।
सहज पापवप्रय िामस देहा । जथा उलूकहहं ंिम पर िेहा ।।

भाई! जब बडों के पास जाओ, तब उनके त्रबना पूछे अपना पररचय देना पडता है, यह मर्ाशचार है। र्भीषर् कहते हैं फक हे नार्! म ैंही दर्ानन का भाई हैं, जजसने माता बैदेही का हरर् फकया है। हे देर्ताओं के रिक, मेरा जन्द्म रािस कुल में हुआ है, मेरा तामसी र्रीर है, स्र्भार् से ही मुझेपाप प्रर्य है, जैसे उल्लू को अांिकार पर सहज स्नेह होता है।

दोहा - श्रिि सुजसु सुति आयउूँ, प्रभु ुभंजि भि भीर ।
त्राहहत्राहह आरति हरि, सरि सुखद रघुबीर ||45||

म ैंकानों से आपका सुयर् सुनकर, मुमि की भाँनत, आपकी र्रर् में आया हूँ। आप जन्द्म-मरर् के भय का नार् करने र्ाले हैं। हे दुख्खयों के दु:ख को दूरू करने ेर्ाले और र्र्ार्त को सुख देनेर्ाले, श्री रघुबीर! मेरी रिा कीजजये! हे र्रर्! सुखद रघुबीर, हे आरत हरर्! ये तमाम सम्बोिन राम के मलए है, र्भीषर् कहते हैं फक हे भर् भीर भांजन! आपका सुन्द्दर यर् कान से सुनकर म ैंर्रर् में आया हूँ। हे नार्! मेरी रिा कीजजये! मेरी रिा कीजजये !

अस कहह करि दंडिि देखा। ुरि उठे प्रभुहरष त्रबसेषा ।।
दीि बचि सुति प्रभु मि भािा। भुज त्रबसाल गहह हृदयें लगािा ।।

अिुज सहहि मममल हढ़ग बैठारी। बोले बचि भगि भयहारी ।।
कहु लंकेस सहहि पररिारा। कुसल कुठाहर बास ििुम्हारा ।।

प्रभुने ऐसा कहकर दण्डर्त् ्करते देखा तो रे् अत्यन्द्त हर्षतश होकर तुरांत उठे, उन्द्हें र्भीर्षर् के दीन र्चन बडे ेप्रिय लरे्, भर्ान राम ने उन्द्हें अपनी र्ील भुजाओांसे पकडकर हृदय से लरा् मलया और कहने लरे् फक हे लकोंर्! अभी सेतु बिाां नही, ां लकाां पर चढाई हुई नहीं, रार् मरा नही ांऔर र्भीर्षर् को भर्ान में लकोंर् की उपाधि से र्भूर्षत कर हदया अरा्त् श ्उसे लकाां का राज्य ममल र्ा, र्रा्त का यह तत्काल प्रत्यि फल है।

भर्ान राम र्भीर्षर् से कहते ेहैं फक हे लांकेर् ! पररर्ार सहहत अपनी कुर्ल कहो, तुम्हारा रहना बुरी जर्ह पर है।

खल मंडली बसहु हदिुरािी । सखा धरम तिबहइ केहह भाँिी।
म ैंजािऊँ ििुम्हारर सब रीिी। अति ििय तिपुि ि भिा िअीिी ॥
बर भल बास ििरक कर ििाा । दुकुट संग जति देइ विधािा ।
अब पद देझख कुसल रघुराया। जौं ििुम्ह कीस्न्द्ह जाति जि दाया ॥

भर्ान राम कहते हैं, हे सखे ! हदन-रात तुम दुषु्टों की मण्डली में बसते हो, तुम्हारा िम शफकस तरह ननभता है, म ैंतुम्हारा सब आचार-व्यर्हार जानता हूँ। तुम अत्यन्द्त नीनत ननपुर् हो, तुम्हें अनीनत अच्छी नहीं लर्ती।

हे तात! नरक में रहना भले ही पड जाये, पर र्िाता दुषु्ट का सरां कभी न दे। र्भीर्षर् ने कहा- हे रघुनार् जी ! अब आपके चरर्ों का दर्नश कर कुर्ल से हूँ, जो आपने अपना सेर्क जानकर मुझ पर दया की।

दोहा - िब लचग कुसल ि जीि कहुँ, सपिेहुँ मि विश्राम।
जब लचग भजि ि राम कहुँ, सोक धाम िस्ज काम ||46||

तब तक जीर् की कुर्ल नहीं और न स्र्प्न में भी उसके मन को र्ाांनत है, जब तक फक र् र्ोक के घर कामनाओां, र्ासनाओांका त्यार् न कर दे और भर्ान राम को न भजे। लोभ, मोह, मत्सर, मद और मान आहद अनेक दुषु्ट तभी तक हृदय में बसते हैं, जब तक फक हृदय में भर्ान राम का ननर्ास न हो जाये। ममता पूर् श अिेंरी रात है, जो रार्-द्रेर्ष रूपी उल्लुओांको सुख देनेर्ाली है, र् ममता रूपी रात्रि, तभी तक जीर् के मन में बसती है, जब तक हे नार्! आपका प्रताप रूपी सूय शउदय नही ांहोता।

अब म ैंकुसल ममटे भय भारे । देझख राम पद कमल ििुम्हारे ।
िुम्हि कृपाल जापर अिुकूला । िाहह ि ब्याप त्रित्रबध भि सूला ।।

म ैंतिमसचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरिुकीन्द्ह िहहं ंकाऊ।
जासु रूप मुति ध्यिा ि आिा। िहहं ंप्रभु ुहरवष हृदय मोहह लिाा ।।
दोहा - अहोभाग्य मम अममि अति राम कृपा सुख पुंज।
देखेउूँ ियि त्रबरंचच मसि सेब्य जुगल पद कंज ||47||

र्ईभीर्षर् ने कहा- हे नार्! आपके श्रीचरर्ों के दर्नश कर अब म ैंकुर्ल हूँ, मेरे भारी भय ममट र्ये। हे कृपालु ु! आप जजस पर अनुकूल होतेहैं, उन्द्हें तीनों प्रकार के भर्-रूलू नहींव्यापते। म ैंअत्यन्द्त नीच रुभार् का रिास हूँ, मनैं ेकभी र्ुभु आचरर् नही ंफकया, जजनका रूप मुननयों के भी ध्यान में नही ंआता, उन प्रभु ने मुझे ेहृदय से लर्ा मलया। हे कृपा और सुख के पुजां ! मेरा बडा सौभाग्य है, जो मनैंब्रह्मा और मर्जी के द्र्ारा सेर्ंत युर्ल कमलों को अपनेनेर्ों से देखा।

सुिहु सखा तिज कहउूँ सुभाऊ। जाि भुसुंडड संभु चगररजाऊ।
जौं िर होइ चराचर रोही। आर्ैसभय सरि िफक मोहीं।॥
स्जि मद मोह कपट छल िािा। करउूँ सद्य िहह साधु समािा।
जििी जिक बन्द्धु सुि दारा। िि घु भिि सुहृद पररिारा ।।
सब कै ममिा िाग बटोरी। मम पद मिहहं ंबाधूँ बरर डोरी।
समदरसी इच्छा कछु िाहीं। हरष सोक भय िहहं ंमि माहीं॥
अस सज्जि मम उर बस कैसे। लोभी हृदय बसइ धिु जैसे।
िुम सारररखे सन्द्ि विप्रय मोरे। धरउूँ देह िहहं ंआि तिहोरे ।।
दोहा-सगिु उपासक परहहि तिरि िीति दृढ़ िेम।
िे िर प्राि समिा मम स्जन्द्ह कें द्विज पद प्रेम ।।48।।

भर्र्ान राम ने कहा- हे सखा ! सुनो म ैंतुम्हें अपना रुभार् कहता हूँ, जजसे कार् भुर्ुण्डी, मर्जी और पार्तशी जी जानती हैं। कोई मनुष्य चराचर का रोही भी क्यों न हो, यहद र्ह भी भयभीत होकर मेरी र्रर् में आता है और मद, मोह तर्ा नाना प्रकार के छल-कपट को त्यार् देता है तो म ैंउसे अनतर्ीघ्र सािु के समान कर धचता हूँ। माता, र्पता, भाई, पुि, स्र्ी, र्रीर, िन, घर, ममि और पररर्ार इन सबकी नमता को बटोरकर डोरी बटकर जो मेरे चरर्ों में बाँि लेता है अर्ातश ्सबका केन्द्र मुझे ेही बना लेता है तर्ा जो समदर्ी है जजसे कुछ इच्छा नहींहै और जजसके मन में हर्ष,श र्ोक और भय नही ंहै, ऐसा सज्जन, मेरे हृदय में कैसे बसता है, जैसे-लोभी के हृदय में िन बसा करता है और हे भाई! तुम सरीखे सन्द्त ही मुझे ेर्प्रय है और म ैंफकसी के मलए देह िारर् नही ंकरता, मेरे देह िारर् करनेका यही कारर् है।

जो सरुर् भर्ान के उपासक हैं, दूसूरों की भलाई में लरे् रहते हैं, नीनत और ननयमों में दृढ हैं और जजन्द्हें ब्राह्मरों के चररों में पे्रम है, रे् ेमनुष्य मेरे प्रारों के समान हैं।

सिु लंकेस सकल गिु ोरे । ोि ुम्ह अतिसय वप्रय मोरे ।
राम बचि सुति बािर जूथा। सकल कहहहं ंजय कृपा बरथा ।।

हे लकेंार् ! सुनो तुम्हारे अदांर उपयुक्शत सब रुर् हैं, इससे तुम मुझेअत्यांत ही प्रय हो। भर्ाम राम के र्चन सुनकर सब र्ानरों के समूह कहने ेलरे्, कृपा के समूह श्रीराम की जय हो ।

सिुि त्रबभीषिु प्रभु ुकै बािी। िहहं ंअघाि श्रिामृि जािी ।
पद अंबुज गहह बारहहं ंबारा। हृदय समाि ि पे्रमु ुअपारा ॥
सुिहु दे सचराचर स्ामी । प्रिपाल उर अंिरजामी ।
उर कछु प्रथम बासिा रही। प्रभु पद प्रीति सररि सो बही ।।
अब कृपाल तिज भगति पािी। देहु सदा मसि मि भािी ।
एमस्िु कहह प्रभु रिधीरा । मागा िुरि मसन्द्धु कर िीरा ॥
जदवप सखा िि इच्छा िाहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं॥
अस कहह राम तिलक िेहह सारा। सुमि िृसृ्कट िभ भई अपारा ।।

र्ीभीषर्, भर्ान की इन अमृतृमयी र्ारी को सुनते ेअघाते नहीां, रे् बार-बार भर्ान के चररों को पकडतेहैं, अपार पे्रम हृदय में नही ंसमा रहा है। रे् कहतेहैं- हे चराचर के स्ामी! हे र्र्ात रिक!! हे अन्द्तयामशी प्रभु! मेरे हृदय में पहले कुछ र्ासना री् ई प्रभु के चररों की प्रीनत रूपी नदी में बह र्यी। अब तो हे कृपालु! मर्जी के मन में सदैर् प्रय लर्नेर्ाली, अपनी पर्ि भजक्त ही मुझे ेकृपा कर दीजजये। भर्ान श्रीराम ने 'एर्मस्तु' ऐसा ही हो, कहकर तुरन्द्त ही समुर जल मार्ाां और कहा -

हे सखा! यद्यर्प तुम्हारी इच्छा नही ंहै, परन्द्तु जर्त् ्में मेरा दर्नश अमोघ है, ई ननष्फल नहीांजाता, ऐसा कहकर भर्ान राम ने उनको राजनतलक कर हदया, जजसे देख आकार् से पुष्पों की अपार र्जृष्ट हुई।

दोहा - राि क्रोध अिल तिज स्ासि समीर प्रचंड ।
जरि त्रबभीषिु राखेउ दीन्द्हेउ राजुअखंड ||49||

रार् का ोि प्रचण्ड अजग्न री्, जजसमें र्भीषर् जल रहा र्ा, उस जलतेहुए र्भीषर् की भर्ान राम ने रिा की और उसे अखण्ड राज्य हदया।

दोहा - जो संपति मसि राििहह दीस्न्द्ह हदएँ दस माथ।
सोइ संपदा त्रबभीषिहह सकुचच दीस्न्द्ह रघुिाथ ।।49 ख।।

भर्र्ान मर् की तपस्या कर रार् ने अपनेदर्ों मसरों की बमल चढ़ाकर जजस बडी से बडी सम्पर्त्त को प्राप्त फकया र्ा। भर्र्ान राम ने उसी सम्पर्त्त को बडे ेसकां ोच के सार् र्ेभीषर् को हदया। भार् यह फक भर्र्ान सोच रहे हैं फक अरे! कुछ नही ांहदया जा रहा है, इससे भी अधिक देना र्ा। बस, यही ांपर र्ेभीषर् र्रर्ानत का उपसहाांर है।

भर्र्ान कहते ेहैं -

जो महापुरुष ननरपेे है, र्ातां है, सर्मशान्द्यताओां से रहहत है, ननबैर है, समदर्ी है तर्ा सर् शके र्प्रय है, ऐसे महापुरुष के पीछे-पीछे म ैंघूमता रहता हूँ ताफक उनके चरर्ों की िूल उड-उडकर मुझ पर लर्ती रहे और म ैंकृतार् श होता रहूँ।

4. र्ेद स्तुनत

अभी का प्रसर्ां है उत्तरकाण्ड के अतांर्तश र्ेदों द्र्ारा स्तुनत, र्ोरखपुरी रामायर् दोहा नां. 12र्ाँ-

मभन्द्न मभन्द्न अस्तुनत करर गए सुर तनज तनज धाम ।
बंदी बेष बेद ि ब आए जहूँ श्रीराम ।।12 ख।।
प्रभु सबगृयि कीन्द्ह अति आदर कृपातिधिा ।
लखेउ ि काहूूँ मरम कछु लगे करि गुिगा ।।12 ग।।

भर्र्ान राम का जब राज्यामभषेक हो चुका तब सब देर्ता हाँ आये और अलर्- अलर् स्तुनत करके र् सब अपने-अपनेलोक को चले र्ये। इसके बाद, भाटों का रूप िारर् करके चारों र्ेद हाँ आये, जहाँश्रीरामजी र्े। कृपाननिान सर्ज्ञश प्रभु राम ने उन्द्हें पहचानकर उनका बडा आदर फकया, परन्द्तु इसका भेद फकसी ने कुछ भी नहीां जाना। र्ेद र्ुर् र्ान करने लर्े -

छन्द्द -

जय सगिु तिगिु रूप-रूप अिूप भूप मसरोमिे।
दसकंधराहद प्रचंड तिमसचर प्रबल खल भुजबल हिे ।।
अििार िर संसार भार विभंस्ज दारि दुखु दहे ।
जय प्रिपाल दयाल प्रभु संजुक् सस्क् िमामहे ।।1।।
ि विषम माया बस सुरासुर िाग िर अग जग हरे ।
भि पंथ भ्रमि अममि हदिस तिमस काल कम गुिति भरे ।।
जेिाथ करर करिा त्रबलोके त्रत्रबचध दुखु िे तिबिहे ।
भि खेद छेदि दच्छ हम कहुँ रच्छ राम िमामहे ।।2।।
जेग्याि माि त्रबमत्त िि भि हरति भस्क् िि आदरी ।
िे पाइ सुर दुलुभि पदादवप परि हम देखि हरी ।।
त्रबस्िास करर सब आस पररहरर दास िि जेहोइ रहे ।
जवप िाम िि त्रबिु श्रम िरहहं भि िाथ सो समरामहे ।।3।।
जेचरि मसि अज पूज्य रज सुभ परमस मुतिपतििी िरर ।
खि तिगिा मुति बंहदिा िैलौक पाििि सुरसरी ।।
ध्जि कुमलस अंकुस कंज जुि बि फिरि कंटक फकि लहे।
पद कंज द्िदि मुकुंद राम रमेस तित्य भजामहे ।।4।।
अव्यक्मूलमिाहद िर त्िचि चारर तिगमागम भिे ।
षट कन्ध्द्ध साखा पंच बीस अिेक पि सुमि घिे॥
लि जुगल त्रबचध कटु मधुर बेमल अकेमल जेहह आचश्रि रहे ।
पल्लिि ूलि िल ति संसार त्रबटप िमामहे ।।5।।
जेब्रह्म अजमद्ितमिुभिगम्य मि पर ध्यािहीं ।
िे कहहुँ जािहुँ िाथ हम िि सगिु जस िति गािहीं।।
करिाितिि प्रभु सदगिुाकर दिे यह बर मागहीं ।
मि बचि कम ित्रबकार िस्ज िि चरि हम अिुरागहीं।।6।।

रे्दों ने भर्ान राम की इस प्रकार स्तुनत की और रे् अन्द्तिाशन हो र्ये और ब्रह्म लोक को चले र्ये।

दोहा- सब के देखि बेदन्द्ह त्रबिी कीस्न्द्ह उदार ।
अंतिधाि भए पुति गए ब्रह्म आगार ॥13-क।।

भाई! रे्दों द्र्ारा यह जो स्तुनत की र्यी उसमें से अब, पाचांर्े श्लोक की चारों पजांक्तयों की व्याख्या होर्ी "अव्यक्त मूल मनाहद तरु त्र्च चारर ननर्मार्म भने से लेकर ससांार त्रबटप नमामहे" तक की। पहले इस छन्द का र्दार् शसुनो-रे्द र्ास्र्ी ने कहा है फक ससांार र्ृ का मूलािार अव्यक्त है अर्ात् श जजस तरह पृथ्र्ी पर र्ृ

 जमता है (यहद पृथ्र्ी न हो तो र्ृ रहेर्ा कहाँ? तब र्ृ का आिार पृथ्र्ी हुई) इसी तरह यह जो सांसार र्ृ है,

उसका मूल (आिार) 'अव्यक्त' है। फफर अनाहद है। र्ृ में छाले हैं ऐसा 'ननर्मार्म भने' र्ेद र्ास्त्र ने कहा है।

इस ससांार र्ृ के छः स्कन्द् हैं (पेड में जहाँसे डामलयाँ फूटती हैं, उसे स्कन्द् कहते हैं)। पच्चीस र्ाखाएँ (डामलयाँ) हैं, ये डामलयाँसब हदर्ाओं में फैली हैं। इनमें अनेक पत्ते और बहुत से फूल हैं, इस र्ृ में दो फल हैं कटु और मिुर अर्ात्श ्एक फल कडुर्ा है और दूसूरा मीठा। एक बेमल है अर्ाशत् ्लता है, जो इस ससांार रूपी र्ृ की ही आधश्रत है। अन्द्य र्ृ तो अपनी-अपनी ऋतुओंमें ही फलते-फूलते हैं,

परन्द्तु यह 'सांसार र्ृ' 'पल्लर्र्त फूलत नर्ल ननत' ननत्य हरा-भरा, लहलहाते रहता है तर्ा इसमें ननत्य फूल और फल लर्ते ेरहतेहैं। ऐसे इस ससांार र्ृ को हम नमस्कार करते हैं, यह हुआ इस छन्द्द का र्दार्,श अब इसका भार्ार् शसुनो - इस ससांार र्ृ का मूल अर्ात्श ्आिार जो है र्ह अव्यक्त है, अनाहद है। अण्डज, र्पण्डज, उद्मभज और स्र्ेदज ये चार खानन इस र्ृ की त्र्चा अर्ात्श ्छाल हैं। र्दद, स्पर्,श रूप रस और र्न्द् ये पाँच र्र्षय और छठर्ांमन यही छह इस सांसार र्ृ के स्कन्द् हैं और हर एक र्र्षय के (एक-एक र्र्षय के, पाँच-पाँच) तन्द्मािाएँ (ऐसे पच्चीस तत्र् से ही) इस र्ृ की र्ाखाएँ अर्ात्श ्डामलयाँहैं। अनन्द्त र्ासनाएँ ही इससे अनेक पत्ते हैं। र्ुभार्ुभ कम शही इसके अनेक फूल हैं। सुख और दुःख ये दोनों ही, इसके कटु और मिुर अर्ात्श ्कडुर्ा और मीठा ये दो फल हैं। र्ासना रूपी एक ही बेमल है, जो इस र्ृ से मलपटी हुई इसकी आधश्रत है, जो हमेर्ा फूलती-फलती रहती है। यह हुआ उसका भार्ार् शअब इनकी हर एक की अलर्-अलर् व्याख्या सुनो।

देखो-जो र्ृ जजतना ही बडा र्र्ाल होता है, उसका बीज उतना ही छोटा और सूक्ष्म होता है। पीपल के ही र्ृ को देखो, उसका र्ृ फकतना र्र्ाल होता है, परन्द्तु उसका बीज उतना ही सूक्ष्म होता है, इसके एक फल में अनन्द्त बीज होते हैं, इसके बीज को देखकर कोई यह कल्पना नहींकर सकता फक इतने सूक्ष्म बीज के भीतर ऐसा र्र्ाल र्ृ समाया हुआ है, फफर एक ही र्ृ नही ांअनन्द्त र्ृ, यह उस सूक्ष्म बीज का चमत्कार है। अरे! र्ह बीज ही तो है इसके स्कन्द्, र्ाखा (डामलयाँ) टहननयाँ, पत्ते, फूल और फल आहद होकर स्र्यांइनमें समाया हुआ है।

र्ीता में भर्र्ान कृष्र् कहते हैं फक -

बीजंमांसिर्ीभूताां ंविद्चध पाथ िर्ीसिाम् ्।
बुद्चधबुद्चधमिामस्स्म िेजस्तेजस्स्र्ीमिहम् ्।।

(अ. 7र्ाां, श्लोक 10र्ीां)

हे अजुनश! तू सम्पूर् शभूतों का सनातन कारर् मुझको ही जान, म ैंबुद्धिमानों की बुद्धि और तेजजस्र्यों का तेज हूँ।

देखो, यहद र्ेदों ने इस पर सांसार का र्र्कल्प नहीं फकया होता, तब तो यह सािात् ्भर्र्ान ही है, परन्द्तु यहाँ ंर्ेदों ने ससांार को र्ृ की उपमा देकर भर्र्ान का हदग्दर्नश कराया है। इस ससांार र्ृ का मूल अर्ात् श ्जड

आिार 'अव्यक्त' है। जो फकसी के द्रारा व्यक्त न फकया जा सके, इसमलए अव्यक्त अर्ा जो स्र्यांव्यक्त न कर सके फक 'म' ैं कैसा हूँ, इसमलए अव्यक्ता व्यक्त मानेप्रर्ट और अव्यक्त मानेअप्रर्ट अर्ात्श ्जजसे र्ार्ी न कह सके, दृजष्ट जजसको देख न सके, धचत्त जजसका धचन्द्तन न कर सके, मन जजसे मनन न कर सके, इसमलए अव्यक्त। तो र्ह कौन है जो फकसी के द्रारा भी व्यक्त नहीां हो सकता? उत्तर है यह 'म' ैं आत्मा ही हूँ।

र्ार्ी को म ैंकहता हूँ र्ार्ी मुझे ेक्यों कहेर्ी, मन को बुद्धि को, धचत्त को, इजन्द्रयाँआहद को म ैंजानता हूँ, इन सबका सािी में हूँ ये सब मुझे ेक्या जान सकेंर्े, इसमलए 'म' ैं आत्मा ही अव्यक्त हूँ, श्रुनत कहती है फक -

येिद सि िविजािाति िं कि विजािीयद्विज्ञाारमरे कि विजािीयाहदति ।।

(र्ृहृ.2 / 4 / 14)

श ्'म' ैं

जजससे यह सब जाना जाता है, उसको फकससे जाने? अरे ! जानने ेर्ाले को जजससे जाने? अर्ात् जजसको जानता हूँ र्ह, मुझको क्या जान सकेर्ा, इसमलए सांसार रूर्ी का मूलािार 'म' ैं आत्मा अव्यक्त हूँ।

'म' ैं स्र्यांअपनेको व्यक्त नहीांकर सकता, अपनेआपको 'म' ैं कहूँ फक 'म' ैं ऐसा हूँ, तो अव्यक्त नही ांऔर यहद 'म' ैं कहूँ फक जैसा हूँ तो व्यक्त नही,ां 'म' ैं का अनुभर् तो तुम कर रहे हो, अब अपना अनुभर् बताओ फक 'म' ैं जजसका फक तुम अनुभर् कर रहे हो, कैसा है? तुम बता नहीांसकते फक 'म' ैं ऐसा हूँ, केर्ल अनुभर् फकया जा रहा है, र्ह 'म' ैं का अनुभर् बताया नही ांजा सकता, यहद तुम कहते हो फक 'म' ैं ऐसा हूँ, तो र्ैसा तुम हो नही,ां आकार-प्रकार र्ाला हूँ, सत् ्हूँ, असत् ्हूँ, व्यापक हूँ, अखण्ड हूँ, ननराकार, साकार हूँ तो अव्यक्त नहीां, क्योंफक इसे र्ार्ी व्यक्त कर रही है और 'म' ैं आत्मा र्ार्ी का र्र्षय हूँ नही,ां इसमलए अव्यक्त और यहद कहतेहो 'जैसा हूँ' तो जैसा कहने ेसे र्ह 'म' ैं आत्मा व्यक्त न हुआ, इसमलए 'म' ैं आत्मा 'अव्यक्त'। र्ेश्र् में फकसी की ताकत नही ांफक 'म' ैं कैसा हूँ, यह बता सके, कह सके, चाहे र्ह ब्रह्मा, र्ेष्र्ुऔर महेर् ही क्यों न हो, सबको चुनौती है।

राम अिक्स िबुद्चध मि बािी। मि हमार अस सुिहह सयािी ।।

जजसके मलए तकश नहीां फकया जा सकता, जो मन से, बुद्धि से, र्ार्ी से, अतक्स शहै। माता पार्तशी से भर्ान कांर कह रहे हैं फक 'मत हमार अस सुनहह सयानी' यह ऐरे-र्ैरे का मत नहीांहै। यहद म ैंअपनेआपको व्यक्त करूँर्ा तो फकसके द्रारा व्यक्त करूँर्ा। र्ार्ी के द्रारा ही तो व्यक्त करूँर्ा, तो क्या र्ार्ी अव्यक्त को व्यक्त करेर्ी? अरे! र्ार्ी ही खत्म हो जायेर्ी, अव्यक्त हो जायेर्ी। इसी तरह मन, बुद्धि, धचत्त, आँख, कान, नाक आहद इजन्द्रयाँ, जो भी उसे जानने चलेर्ा र्ह र्ही होकर उसे जान सकेर्ा, जो जैसा है उसे र्ही होकर जाना जाता है। अरे यार! चोर को पकडने के मलए उसे चोर होकर ही पकडना पडता है। सजातीय, सजातीय का मेल होता है। इसमलए अब 'म' ैं आत्मा अव्यक्त हूँ तो मुझ अव्यक्त को जानने के मलए, अव्यक्त ही होकर जानना पडेर्ा।

इस अव्यक्त मुझ आत्मा, आत्म तत्र्, आिार भूमम पर ससाांर है, जो फक अव्यक्त कहा र्या। प्रश्न होता है फक जब ससाांर भी अव्यक्त है, तब ससाांर नाम क्यों पडा?

देखो र्ेर्षय समझो- 'देह है' ये देह र्ंकल्प ही ससांार है, यह देह र्ंकल्प 'है' अजस्तत्र् पर हुआ, त्रबना देह कहे यह जो भास रहा है, उस 'है' अजस्तत्र् को ही देह कह रहे हो तो यह 'है' अजस्तत्र्, भास ही आिार अर्ात्श ्मूल हुआ। यहद यह भास 'है' अजस्तत्र् न होर्ा, तो देह कहोर्े फकसको? इसी तरह सारे चराचर का र्ंकल्प अजस्तत्र् 'है' पर ही है। देह है, आकार् है, र्ायु है, अजग्न है, जल है, पृथ्र्ी है, ब्रह्मा है, र्ष्णु ्है, महेर् है, इत्याहद इस तरह

जहाँ ँतक मन र्ार्ी का र्ेर्षय है र्ह सभी ससांार है अर्ात् श ्कुछ भी र्ंकल्प करना, बस यही र्ार्रोपर् है, ये सर् श र्ंकल्प 'है' अजस्तत्र्, भर्र्ान आत्मा 'म'ैं पर ही है।

फफर कहते हैं 'अव्यक्त मूल मनाहद' जरा समझना और समझ मलया तो मर र्या। अरे! समझती कौन है? बुद्धि। तो बुद्धि जहाँ ँखो जाती है यही तो मरना है, समझने ेके बाद क्या बुद्धि बची रहेर्ी? नही।ां बस, यही मरना है।

अरे भाई! जजसका आिार मूल और बीज ही जब अव्यक्त है तो फफर उसका र्ृ भी अव्यक्त ही होर्ा, र्ह कैसे व्यक्त हो सकता है? तुम व्यक्त फकसे कह रहे हो? अव्यक्त का क्या मलर् है? अरे! जजसका कोई मलर् नही ांर्ही अव्यक्त का मलर् है, जजसका बीज ही 'म'ैं आत्मा अव्यक्त अर्ात्श ्अमलर् हूँ तो फफर ससांार र्ृ का ही क्या मलर् होर्ा? इसमलए यह भी अमलर् ही है। जो पदार् श'ऐसा' हो, उसका मलर् हो और जो 'जैसा' हो तो फफर र्ह मलर् र्ून्य है, अमलर् है। तो फफर जैसा 'म'ैं अमलर् र्ैसा ससांार अमलर् जैसे 'म'ैं अधचन्त्य, अव्यर्हाय,श अग्राह्य, अदृष्ट हूँ, प्रत्ययसार हूँ, उसी तरह ससांार भी, अधचन्त्य, अव्यर्हाय,श अग्राह्य, अदृष्ट, प्रत्ययसार है।

प्रश्न होता है तब फफर हदख क्या रहा है? हदखने र्ाला हदख रहा है या उसे जो देख रहा है, र्ह हदख रहा है। र्ेर्षय सूक्ष्म है समझो, उत्तर है-उसे जो देख रहा है, र्ह हदख रहा है। तो, देखने र्ाला दृष्ट है या अदृष्ट है? उत्तर होर्ा-अदृष्ट है। और क्या र्ास्तर् में हदख रहा है? जैसे 'देह'। यह देह क्या हदखता है? अरे, देह तो र्ंकल्प है, जो है ही नही,ां अजस्तत्र् हीन, तब र्ह क्या हदखेर्ा? तब क्या हदख रहा है।

भाई! हदख कुछ नहीांरहा, केर्ल र्ंकल्पािार की अनुभूनत हो रही है, जजस पर देह का र्ंकल्प है, उसकी केर्ल प्रतीनत हो रही है, यह हदखना देखने र्ाले की अपेिा से है अन्यर्ा हदखना कहाँ?ँ

है सो ननजर न आिही, नहींसो प्रगट हदखाय।
यह कौतुक नबही लखै,ै जब सद्गुरु ममल जाय।।

यह तो र्ुरु कृपा से समझा जा सकता है।

जो हदखिा है, र्ह हदखिा है, 'म'ैं हदखिा हूँ, सब हदखिा है।
यह रहस्य जो जान मलया, फिर हदखिा कहा ँजो हदखिा है।

जो हदख रहा है ई 'म'ै ही हूँ, तब 'म'ै देखने र्ाला जब अदृष्ट हूँ, तब उस अदृष्ट की दृजष्ट में यह हदखने र्ाला ही, कैसे दृष्ट होर्ा? ई भी अदृष्ट ही है, इसमलए यह ससांार भी अदृष्ट होतेहुए अधचन्द्त्य है, अलिर् है, अव्यर्हाय शहै, अग्राह्य है। इसमलए ही र्ेदों ने "ससांार र्ंटप नमामहे" कहा है। अरे! सांसार नमस्कार करने ेयोग्य कब होर्ा? जब ससांार भर्ान मसद् होर्ा, इसके पहहले यहद ससांार नमस्कार करने योग्य होता तो फफर महात्मा लोर् ठोकर मारकर इसका त्यार् कैसे करते। इसमलए जब मुझ आत्मा के सारे लिर् ससांार में घटेर्ा, तभी यह भर्ान आत्मा मसद् होर्ा और तभी यह नमस्कार करनेयोग्य होर्ा। ससांार को सांसार मानकर, ससांार से र्ैराग्य है और ससांार को भर्ान जानकर ससांार का बिो है। ससांार मानने ेसे दृष्ट, धचन्द्त्य, ग्राह्य, व्यर्हाय श लिर् र्ाला आहद होता है। परन्द्तु, ससांार को भर्ान जानकर नहीां, भर्ान जाननेपर ससांार अलिर्, अधचन्द्त्य, अदृष्ट, अव्यहाय शआहद रूप हदखाई देता है, अनुभर् होता है। रज्जू को सप शमानने ेसे क्या सप शके डसने से = र्ष चढेर्ा? नही।ां तो फफर इसी तरह 'म'ै अव्यक्त आत्मा को ससांार मानने से क्या ससांार हदखेर्ा नहीां तो फफर अदृष्ट ही तो है। मर्र काल्पननक जर्त दृष्ट, धचन्द्त्य, व्यर्हाय,श लिर् है और र्ास्तर्र्क जर्त्, ् अदृष्टां, अधचन्द्त्यां, अव्यर्हाय,श अलिर्ां है तो फफर जो इतना महान र्ृ है, ई र्ृ नही,ां बीज ही है, जो सूक्ष्मानत सूक्ष्म है, अदृष्ट है, इसी तरह यह जो हदख रहा है, ई ससांार नहीां है, 'म'ै भर्ान अव्यक्त आत्मा ही हूँ। इस बिो में अब ससांार नमस्कार करने योग्य हुआ। जब ससांार का लिर् 'म'ै आत्मा से मभन्द्न हो, तब तो और कोई दूसूरा भार् ससांार के मलए ढूँढो और जब जो लिर् 'म'ै आत्मा का है र्ही लिर् ससांार का है, तब फफर ससांार का ग्रहर् और त्यार् कहाँ? जब म ैससांार मानता हूँ तभी सांसार के त्यार् और ग्रहर् का र्ंकल्प होता है और र्ीराहदक प्रपचां को जो देखता है उसे देखता हूँ तो ससांार ही नहीां ममलता तो फफर उसका त्यार् और ग्रहर् ही कहाँ?ँ

यहद ससांार है तो 'है' ही है और नही ांहै तो भी 'है' ही है। यहद र्ना बीज के र्ृ मसद् हो जाय तब तो र्ृ है और यहद त्रबना बीज के 'म'ै र्ृ मसद् नहीां होता तो फफर बीज ही है-जजसका नाम र्ृ है। इसी तरह त्रबना 'म'ै के यहद ससांार मसद् हो जाय तब तो ससांार, ससांार है और यहद मसद् नहीांहोता तो फफर 'म'ै ही हूँ, जजसका नाम ससांार है। इस पर कबीर पर्ी लोर् कहाँ करते हैं फक साहेब! पहहले बीज हुआ फक र्ृ हुआ? इसी तरह पहहले र्ीर हुआ फक कम शहुआ?

उत्तर है- तो साहेब (यहद कोई कबीर पर्ी यहाँबैठे हों तो सुने) पहहले न र्ीर हुआ, न कम।श पहहले अज्ञान हुआ, जब अज्ञान हुआ तब अपनेआपको माना र्ीर, अब जब र्ीर माना अर्ात्श ्र्ीर हुआ तब फफर उससे हुए कम,श जब कम शफकया तब फफर र्ीर हुआ, इस प्रकार कम शऔर र्ीर की श्रृखांला चल पडी। इसमलए सबसे पहहले अज्ञान हुआ। इसी तरह न पहहले बीज हुआ न र्ृ, पहहले अज्ञान हुआ। पहहले र्ंकल्प हुआ बीज और र्ृ का। र्ंकल्प ननकाल दो तो न बीज और न र्ृ।

इसी तरह 'म'ै आत्मा को ही ससांार मानकर देखने हदखने का र्ंकल्प करता हूँ, परन्द्तु जब अनुभर् करने चलता हूँ तो सांसार ही नहीां ममलता और जब ससांार ही नहीांममलता तब देखने-हदखनेका र्ंकल्प ही कहाँ?ँ अरे! यहाँ ँतक नहीांहै फक न में बोल रहा हूँ और न तुम सुन रहे हो, परन्द्तुअव्यक्त देर् से देखो तब, ई मसफश इतना ही

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 279 कहते ेबनता है फक जो है, ई 'म'ै हूँ का भार् ही है। इसके आरे् और कुछ कहते,े सुनते ेनहीांबनता इस भार् के मलए

और कोई इर्ारा नही ांहै, क्योंफक उससे मभन्द्न हो तब तो कोई इर्ारा हो? ये हुआ 'अव्यक्त मूल' की व्याख्या।

अब चलो अनाहद का समझो - देखो, रे्दों ने इसे अनाहद कहा है, ये जो 'अनाहद र्दद है ई बडा माममकश है, रूढ है, अनाहद कहते ेही यह अपनेआप अजन्द्मा मर्द हो जाता है, जजसका आहद अर्ात्श ्रुरुआत ही न हो उसे अनाहद कहते हैं, जजसका जन्द्म समय, जन्द्म कुण्डली न हो, यहद ई पैदा हुआ होता तो इसकी जन्द्म कुण्डली अर्श्य होती फक इस ससाांर को इतने लाख, इतने ेकरोड र्ष शहुए, परन्द्तु ऐसा नहीां है। इसमलए ही यह अनाहद है। मानस में अयोध्या काांड के अांतर्तश माता कौर्ल्या ने भी धचिकूट दरबार में माता सुनयना से इस ससाांर प्रपचां को अनाहद कहा है-रे् कहती हैं फक-

देत्रब मोह बस सोचचअ बादी। त्रबचध प्रपंचु अस अचल अिादी ।।

इसमलए, ससाांर न तो स्र्यां पैदा हुआ और न फकसी ने इसे पैदा फकया। ससाांर में कोई भी हो आ जारे् े मैदान में और इस देह को ही मसद् किरके हदखारे् फक यह पैदा हुआ है, अरे! देह क्या ससाांर की फकसी भी र्स्तु को ले लो उसकी उत्पत्त्त मसद् निहीांहोती।

स्ििो िा परिो िावप ि फकंचचद्सििु जाियेि ।
सदसत्सदसद्वावप ि फकं चचद्सििु जाियेि ॥

(र्ौ.पा. काररका 4/22)

अर्ात्श ्न सत् ्की उत्पत्त्त होती है न असत् ्ही उत्पन्द्न होता है और न सत्– असत् ्दोनों की ही उत्पत्त्त होती है। यहद सत् ्पदार् शकी उत्पत्त्त मानोरे् तो उत्पन्द्न हुआ, पदार् शनार्र्ान होता है, फफर इसे सत् ्कैसे कहेंरे्? क्योंफक, सत् ्र्स्तु त्रिकाला बाध्य होती है और यहद असत् ्की उत्पत्त्त मानोरे् तो असत् ्बन्द्ध्यापुिर्त् ्होता है

अर्ात्श ्जो है ही नही ांई पैदा क्या होर्ा। तात्पय शयह फक फकसी प्रकार से भी फकसी भी देर्, काल, र्स्तु का उत्पन्द्न होना फकसी भी प्रमार् से मसद् निही ांहोता।

1. प्रत्यि प्रमार्, 2. अनुमान प्रमार्, 3. श्रुनतर्ास् िप्रमार् एर् ां4. स्र्ानुभूनत प्रमार्। इन चारों प्रमार्ों से जो मसद् िहो, र्ही न्द्याय है और र्ही सार्भशौम मसद्ान्द्त है। दूसूरी चीज यह है फक सत्,् असत् ्दोनों का यहद जन्द्म माना जाये तो माया देर् में है। माया का अधिष्ठान आत्म देर् में नही ांहै, क्योंफक माया का अर् शहोता है, अज्ञान, याने सत् ्का जन्द्म नही,ां सत् ्के अज्ञान देर् में सत् ्का जन्द्म है। असत् ्देर् में असत् ्का जन्द्म नही,ां असत् ्के अज्ञान देर् में असत् ्का जन्द्म है। इसी तरह सत्,् असत् ्देर् में सत्,् असत् ्का जन्द्म नहीां, बजल्क सत्,् असत् ्के अज्ञान देर् में सत्,् असत् ्का जन्द्म माना जा सकता है। जैसे- रज्जू का सप शरज्जू देर् में न सत् ्है, न असत् ्है और न सत्– असत् ्दोनों है। रज्जू के अज्ञान देर् में सप शसत् ्भी है, असत् ्भी है और सत्,् असत् ्दोनों भी है।

भैय्या! यह अध्यात्म है, कोई बाजारू चीज नही ांहै, जो सबकी समझ में आ जाय। इस एक छन्द में ही सारी रामायर् भरी हुई है। इस पर महीनों बोला जा सकता है।

तो फफर यह क्या है जो प्रत्यि हदख रहा है? अरे! 'म ैं ही हूँ, ससांार-फांसार, देह-फेह कुछ नहीं है। चलो बच्चा आरे् -

पढ़ा-मलखिा बद्दि का काम, भजले बच्चा सीिा-राम ।।

अब आरे् 'तरु त्र्च चारर' की व्याख्या सुनो-अण्डज, र्पण्डज, उद्गभज और स्रे्दज ये चार खानन इस ससांार रर्ृ की त्र्चा हैं अर्ात् श ्छाल हैं।

अण्डज- अण्डा से पैदा होने र्ाली सृजृष्ट। **वपण्डज-** रज-र्ीय शसे पैदा होने ेर्ाली सृजृष्ट। **उडद्गभज -** िरती से पैदा होनेर्ाली सृजृष्ट, पेड-पौिे। **स्र्ेदज-** पसीने से पैदा होने र्ाली सृजृष्ट खटमल, र्पस्सू आहद, यही चार खानन है।

षट्कन्द्ध शाखा - पचां ज्ञानेजन्द्रयाँ और छठर्ाँमन ये ही छह स्कन्द् हैं, जहाँ से रर्ृ में र्ाखाएँ ननकलती हैं, र्दद, स्पर्,श रूप, रस और र्न्द् इन पाँचों र्र्षयों के हर एक र्र्षय के पाँच-पाँच तन्द्माााएँ, ऐसे पच्चीस तत्र्, प्रार्ाहद ये ही इस ससांार रर्ृ की र्ाखाएँ अर्ात्श ्डामलयाँ हैं, जो सब हदर्ाओां में फैली हुई हैं। अनन्द्त र्ासनाएँ ही इसके अनेक पत्ते हैं। जजतने ेर्ुभार्ुभकम शहैं, रे् ही फूल हैं। जजन पुण्य-पाप कमों की कोई र्नती नही,ां ये फूल घने हैं अर्ात्श ्बहुत हैं। इन फूलों से मसफश दो प्रकार के ही फल फलतेहैं, पुण्य कम शका फल सुख और पाप कम शका फल दु:ख, ये ही दो फल हैं। सुख-दु:ख अनेक नहीं होता र्ह एक ही है, मर्र जजस फूल से ये ननकलते हैं र्ह एक नही ांहै, र्ह अनेक है। क्योंफक, अनेकों पुण्य और अनेकों पाप हैं, परन्द्तु फल दो प्रकार के ही हैं सुख और दु:ख। इन दोनों फलों का स्र्ाद अलर्-अलर् है, एक मीठा है र्ह सुख है, दूसरा कडुर्ा है र्ह फल दु:ख है, क्योंफक फल दो ही है 'फल युर्ल' कहा है।

इस ससांार रूपी रर्ृ पर एक ही 'बेमल' अर्ात्श ्लता है जो इस रर्ृ के आधश्रत है इससे मलपटी हुई है 'बेमल अकेमल जेहह आधश्रत रहे' र्ह है 'र्ासना'।

विद्या, ििीिा, ििििा, ये ि चगै कुल जिा ।
जो समीप इकै बसै, िाही पै लपटिा ॥

र्द्या यह नहीं देखती फक यह फकस जानत र् शका है। म ैंइसके पास जाऊँ या न जाऊँ, र्ह तो जजसको अपनेपास पाती है अरात् श ्जो इसके समीप होता है उसी से र्ह मलपट जाती है। इसी तरह र्नता (स्र्ी), र्ह जजसे समीप में पाती है चाहे र्ह फकसी भी कुल जानत का क्यों न हो उससे र्ह मलपट जाती है। (यह कर्न सार्भशौम नहीं है)।

नाधर्न डसती है तो एक ही बार जहर चढ़ता है, परन्द्तु इस नाधर्न के तो स्मरर् मि से ही जहर चढ़ता है, इसमलए र्ेर्कीजनों को इनसे र्ेर्ेष सार्ान रहना चाहहए 'म'ैं हूँ, इस भार्ना के मसर्ा यहद कोई अन्द्य भार्ना न हो तो र्ायद ही यह जहर न चढ़े, नहीं तो बडी मुजश्कल है और इस जमानेमें तो और भी कहठन है, यही हालत बनलता का है, र्ह अपने समीप में जो भी र्ृ पाती है, बस उसी से मलपट जाती है।

भैय्या! इस सांसार र्ृ के ऊपर एक ऐसी बेमल मलपटी हुई है, जजसका नाम बासना है। इसका अर् शहै फक जजसको तुम पाने की इच्छा करते हो, उसका यहाँ ँबास अर्ाशत् ्र्न्द्ध तिक नहीं है, र्स्तु का होना तो दूरू है।

इस ससांार र्ृ का कभी पतझड नहीं होता यह तीसों हदन, बारहों महीने, ननत्य हरा-भरा रहता है। इसमलए "पल्लर्त, फूलत नर्ल ननत" कहा र्या है।

यही तो ससांार र्ृ की र्ोभा है।

आज र्रीबी है तो कल अमीरी है, आज बन्द्धि है तो कल मिो है। आज जन्द्म है तो कल मरर् है। आज योर् है तो कल र्ियोर् है। आज दुःख है तो कल सुख है। आज बीमार है तो कल आराम है। हर हदन एक-सा नहीं होता, आज कोई दाने-दाने को तरस रहा है तो कोई मौज से र्ुलछरें उडा रहा है। भाई! इसी का नाम ससांार है। कोई कभी यह न समझे ेफक आज हम िनर्ान हैं तो हम सदा िनर्ान ही रहेंर्े। आज हम पुिर्ान हैं तो सदा पुिर्ान ही रहेंर्े। यहाँ बनना-त्रबर्डना, जीना-मरना, हँसना- रोना, ननत्य बना रहता है, यहाँ इसकी कभी कमी नहीं है।

दुतिया ूँके जो मजेहैं, हरचगज ये कम ि होंगे ।
चरचेयही रहेंगे, अफ़सोस हम ि होंगे ।।
मरिा है स्जसको मरिा, जीिा है स्जसको जीिा।
गिाी हमेशा गिाा, मायूस हम ि होंगे ।।
गुलशि जहा ूँमें कांटे, गुल झखलिे रंग त्रबरंगे ।
हर शय में मस्ि होकर, बेहोश हम ि होंगे ।।
'मुक्िा' की मुक्ि ािणी, बेखौफ़ होकर कहिी है ।
जैसा है िैसा कहिा, टस मस कभी ि होंगे ।।

जजस तरह बीज का नाम ही र्ृ, र्ृ बीज में, बीज ही र्ृ, बीज करके ही र्ृ और बीज से ही र्ृ। इसी तरह 'म'ैं का ही नाम ससांार 'म'ैं करके ही सांसार और 'म'ैं ही ससांारा जजस तरह मूल, र्ाखा, पत्ते, फूल, फल इन

सबको ममलाकर रिू मसद् िहोता है, इसी प्रकार सुख-दु:ख, मरना-जीना, बनना-त्रबर्डना इत्याहद इन सबके नाम रूप को ममलाकर ही ससांार नाम पडा, परन्द्तुतारीफ तो यही है फक कौन ऐसा नाम रूप है जजसमें 'म'ै आत्मा न होऊँ, तब फफर जब 'म'ै अव्यक्त हूँ तब फफर मुझ पर कजल्पत ससांार भी तो, अव्यक्त ही है। इस छन्द्द की यही व्याख्या है, जो र्ेदों द्र्ारा स्तुनत रूप में की र्यी है।

यहद, इसका हृदय में स्र्ापना हो जाय तो व्यजक्त हमेर्ा के मलए र्ोक और मोहसे रहहत हो जाय।

जजस तरह रस्सी के जल जानेके बाद भी उसका आकार-प्रकार ज्यों का त्यों बना रहता है, दीख पडता है, परन्द्तु उससे कोई चीज बााँिी नही ांजा सकती, उससे बिांन का काम नहीांहो सकता, इसी तरह ज्ञान हो जानेपर ज्ञानाजग्न से सांसार प्रपचां जब जल जाता है तो र्ह हदखता तो र्ैसे ही है, उसका आकार-प्रकार तो ज्यों का त्यों बना रहता है, परन्द्तु र्ह बन्द्िन का कारर् नहीांहो सकता।

5. राम राज्य की व्याख्या

प्रसरां है, उत्तर काण्ड के अन्द्तर्तश "राम राज्य र्ंनश" र्ोरखपुरी रामायर्, दोहा न.ां 20र्ाँके ऊपर की दो चौपाइयों से प्रारांभ होता है।

राम राज बैठे ैलोका । हरवषि भए गए सब सोका ।
बयर कर काहू सि कोई । राम प्रिाप विषमिा खोई ।।

श्रीरामचन्द्र जी के राज मसहांासन पर बैठते ही तीनों लोक हर्षतश हो र्ये, उनके सारे र्ोक जाते रहे, कोई फकसी से बैर नहींकरता, भर्ान राम के प्रताप से सबकी र्र्षमता अर्ाशत् ्आतांररक भेदभार् ममट र्ये।

दोहा- बरिाश्रम तिज-तिज धरम तिरि बेद पथ लोग ।
चलहहं ंसदा पािहहं ंसुखहह िहहं ंभय सोक ि रोग ।।

(उ.काां. दो. 20)

सब लोर् अपने-अपनेर् शऔर आश्रम के अनुकूल िम शमें तत्पर हुए सदा र्ेद मार् शपर चलते हैं और सुख पातेहैं। उन्द्हें फकसी बात का भय है, न र्ोक है और न कोई रोर् ही सताता है। देखो, राजा और प्रजा में र्पता-पुि का सबांिि होता है, जैसा र्पता होर्ा, पुि भी र्ैसा ही होर्ा। इसी तरह जैसा राजा होर्ा, प्रजा भी र्ैसी ही होर्ी। राजा यहद िमात्शमा है तो प्रजा भी उसी के अनुरूप होती है। जब भर्ान राम मसहांासन पर बैठे तो तीनों लोक र्ोक और भय से रहहत हो र्ये, क्योंफक राम भय और र्ोक से रहहत हैं। इसमलए उनकी प्रजा को फकसी भी प्रकार का न भय है, न र्ोक है और न फकसी को कोई रोर् ही सताता है।

दैहहक दैविक भौतिक िापा । राम राज िहहं ंकाहुहह ब्यापा ।
सब िर करहहं ंपरस्पर प्रीिी। चलहहं ंस्िधम ितिरि श्रुति िीि ।।

राम राज में दैहहक, दैर्क और भौनतक ताप फकसी को नहींव्यापते, सब मनुष्य परस्पर पे्रम करते हैं र्ेदों में तर्ा बतायी हुई नीनत और मयादशा में तत्पर रहकर अपने-अपनिेम शका पालन करते हैं।

देखो-र्ौतम बुद्िके हृदय में जब मन, र्चन और कम शसे अहहसांा की प्रनतष्ठा हो र्यी तब जजस र्न में र्े तपस्या कर रहे र्े हाँ से छह मील के इदश-धर्दश हहसांक पर्ुओांके हृदय में भी अहहसांा की प्रनतष्ठा हो र्यी, हाँ का र्ायुमडांल ही ऐसा हो र्या फक हहसांक पर्ु भी अपना स्र्भार् भूल र्ये, सब एक घाट में पानी पीतेऔर एक सार् पे्रम से रहते र्े।

आज से सात हदन पहले यहाँ ँका र्ायुमडांल जैसा र्ा, आज यहाँ ँर्ैसा नही ांरहा, जजस स्र्ल पर ननत्य सात हदनों तक ब्रह्म र्द्या का ननरूपर् हो रहा है हाँका परमार्ु ही र्ैसा बन जाता है।

भर्ान राम के देर् में राम राज्य में अर्ाशत् ्जजसके हृदय में राम की स्ापना हो र्यी हाँपर तापों का क्या काम? ताप तो जीर् देर् में रहता है, राम देर् अर्ात्श ्आत्मदेर् में नही।ां

हृदय देर् है, भार् मसहाांसन है, इस मसहाांसन पर चाहे जीर् को त्रबठा लो, चाहे राम को। इस मसहाांसन पर जब जीर् बैठता है, तब इसका नाम जीर्देर् हो जाता है और हाँपर जीर् देर् के र्ानि, कानून और िम शलार्ू हो जाते हैं और जब जीर् हाँसे हट जाता है और उसमें राम बैठता है तब हाँ राम के र्ानि, कानून और िम शसार्-सार् आ जाते हैं।

'म'ै जीर् हूँ, इस भार् में सारे द्रन्द्र् हैं, सुख-दुुःख, हर्ष-शर्ोक, योर्-र्योर्, रोर्-ननरोर् आहद र् जीर् राज्य है। राम राज्य में अत्यांताभार् है, क्योंफक राम एक है दो नही ांतब हाँ द्र्ांर् कहाँ?

चाररउ चरि धम िजग माहीं। पूरर रहा सपिेहुँ अघ िाहीं ।
राम भगति रि िर अर िारी। सकल परम गति के अचधकारी ।।

मि शके चार चरर् होतेहैं-सत्य, तप, दया और दान। राम राज्य में इनके चारों चरर् पररपूर् शर्े। स्र्प्न में भी पाप की कल्पना फकसी को भी नही ांर्ी, सभी नर- नारी राम भजक्त और परमर्नत के अधिकारी र्े, े सब राम भजक्त में रत र्े।

अल्पमृत्यु िहहं ंकिितिउ पीरा । सब सुंदर सब त्रबरज सरीरा ।
हिहं ंदररर कोउ दुखी ि दीिा। िहहं ंकोउ अबुधि लच्छि हीिा ॥
सब तिदिभ धर्मारि पुिी । िर अर िारर चिुर सब गुिी ।
सब गुिग्य पंडडि सब ग्यािी। सब कृिग्य िहहं ंकपट सयािी ॥

राम राज्य में फकसी की अल्प मृत्यु नहीांहोती और न फकसी को कोई पीडा होती। सभी के र्रीर सुन्दर और ननरोर् रहते, न कोई दररर र्ा, न दुुःखी, न कोई मूख शर्ा और न लिर्हीन, सभी िम शपरायर्, दम्भ रहहत र्े। सभी ज्ञानी और कृतज्ञ र्े। र् ेदूसूरे के फकये हुए उपकार को माननेर्ाले र्े। कपट, चतुराई, िूततशा फकसी में नहीां र्ी।

दोहा - राम राज िभगेस सुि, सचराचर जग माहह।
काल कम िसुभाि गुि, कृि दुुःख काहुहह िाहहं ं|21||

काल जन्द्य दु ुःख, कम शजन्द्य दुुःख, स्र्भार् जन्द्य दुुःख और र्ुर् जन्द्य दु ुःख, फकसी को भी राम राज्य में नही ांर्ा।

बाल्यार्स्र्ा का दुुःख बालक को नहीां, युर्ार्स्र्ा का दुुःख युर्कों को नही ांऔर र्ृद्धार्स्र्ा का दुुःख र्ृद्धों को नहीां, ये अर्स्र्ा जन्द्य दुुःख हैं। सदी, र्मी, बरसात का दुुःख ये सब काल जन्द्य दुुःख हैं। चोरी, जुआ, र्राब, व्यमभचार आहद जजस कम शके करने र्से दुुःख ममले र्ह सब कम शजन्द्य दुुःख हैं। "इन्द्हें फकतना भी समझाओ ये मानेंर्े नही,ां क्योंफक ऐसा इनका स्र्भार् ही है", र्ह स्र्भार्जन्द्य दु ुःख है। तमोर्ुर्, रजोर्ुर्, सतोर्ुर्, जन्द्य जो दुुःख हैं र्े सब र्ुर् जन्द्य दुुःख हैं।

भूमम सप्त सागर मेखला । एक भूप रघुपति कोसला ।

भुअि अिेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुिा कछु बहुि ि िासू।।

सो महहमा समुझि प्रभु ुके री। यह बररि िीहीा घिेरी ।

सोउ महहमा खगेस स्जन्द्ह जािी। फिरर एहह चररि तिन्द्हहूँ रति मािी ।।

सोउ जािेकर िल यह लीला। कहहहं ंमहा मुतिबर दमसीला ।

राम राज कर सुख संपदा । बरति ि सकइ िीस सारदा ।।

सब उदार सब पर उपकारी । त्रबप्र चरि सेिक िर िारी ।

एकिारर ब्रि रि सब झारी । िे ेमि बच क्रम पति हहिकारी ॥

भर्र्ान राम सारे र्र्श्र् की आत्मा हैं, जजनके एक-एक रोम में अनेकों ब्रह्माण्ड हैं उनके मलए सात द्र्ीपों की यह प्रभुता कोई अधिक नहीांहै, बजल्क प्रभु की महहमा को समझ लेनेपर तो यह कहनेमें फक र्े सात समुद्रों से नघरी हुई सप्तद्र्ीप पृथ्र्ी के एकछि सम्राट हैं, उनकी हीनता ही है। जजननेयह महहमा जान भी ली है, उन्द्हें भी यह लीला बडी र्प्रय है। इजन्द्रयों का दमन करने र्ाले महामुननयों का ऐसा मत है। भाई! राम राज्य की सुख सम्पर्त्त का र्र्नश र्ेर्षजी और सरस्र्ती जी भी नहीां कर सकते। राम राज्य में सभी नर-नारी उदार हैं, सभी परोपकारी हैं और सभी ब्राह्मर्ों के चरर्ों के सेर्क हैं। सभी पुरुर्ष एक पत्नीव्रती हैं। इसी प्रकार जस्त्रयाँ भी मन, र्चन और कम शसे पनत सेर्ी और पनत हहतकारी हैं।

दंड जतिन्द्ह कर भेद जहें िििक िृतूय समाज ।

जीिहु मिहह सुतिअ अस रामचन्द्र के राज ।।22।।

श्री रामचन्द्रजी के राज्य में दण्ड केर्ल सन्द्यामसयों के हार् में है और भेद नाचने र्ालों के नृतूय समाज में है और 'जीतो' र्दद केर्ल मन के जीतने के मलए ही सुनायी पडता है अर्ात्श ्राजनीनत में र्र्ुओांको जीतने तर्ा चोर, डाकुओां आहद को दमन करने के मलए साम, दाम, दण्ड और भेद ये चार उपाय फकये जाते हैं। राम राज्य में कोई र्र्ुहै ही नही ांइसमलए 'जीतो' र्दद केर्ल अपने मन को जीतो के मलए ही कहा जाता है। हाँकोई अपरार्ि फकसी से भी नही ांहोता, इसमलए दण्ड देने की फकसी को कोई आर्श्यकता नहीांहोती। अत, दण्ड र्दद केर्ल सन्द्यामसयों के हार् में रहने र्ाले दण्ड के मलए ही प्रयोर् में आता है। तात्पय शयह फक हाँयहद दण्ड है तो दण्डी स्र्ाममयों के हार्ों में है, हाँ प्रजा में नहीां है। भेद यहद है तो र्ाने-बजाने र्ालों के सुर ताल में ही है अर्ात् श ्सुरताल के मलए 'भेद' र्दद का प्रयोर् होता है और कहीां नही।ां

ूलिहहं ि्रहहं ्सदा िर किा। रहहहं ्एक संग गज पंचिा ।
खग मृगृ सहज बयर त्रबसराई। सबस्न्द्ह परस्पर प्रीति बढ़ाई ।।

रिृ, नों में सदा फूलते और फलतेहैं। हारी् और मसहां बैर भूलकर नों में एक सार् रहते हैं। परु ुऔर पिी सभी स्र्ाभार्क बैर भुलाकर आपस में सब एक सार् प्ेरेम से रहते हैं। यह सब राजा राम की महहमा का प्रताप है।

कूजहहं ्खग मृगृ िाा बृन्दृा। अभय चरहहं ्बि करहहं ्अंदा ।
सील सुरमभ पिि बह मंदा। गुंजि अमल लै चमल मकरंदा ।।

पिी मीठी बोली बोलते हैं, भाँनत-भाँनत के परुओुं के समूह बन में ननभयश र्ृचरतेहैं और आनन्द्द करते हैं। र्ीतल, मदां और सुर्धांति पर्न चलते रहता है, भौरें पुष्पों का रस लेकर चलते हुए र्ुजांार करते हैं।

लिा त्रबटप मागे मधु चिहीं। मि भिाो धिेुपय सिहीं।
समस संपन्द्ि सदा रह धरिी । िेाँ भइ कृि जुग कै करिी ॥

बेलें और रिृ माँर्ने से ही मकरन्द्द टपका देते हैं। र्ौएँ मनचाहा दिू देती है। िरती सदा खेती से भरी रहती है। इसी तरह िेता युर् में सतयुर् की जरूनत आ र्यी।

प्रगटींचगररन्द्ह त्रबत्रबचध मनि खािी। जगदिामा भूप जग जािी।
सररिा सकल बहहहं ्बर बारी। सील अमल स्िाद सुखकारी ॥

समस्त जर्त् ्के आत्मा भर्र्ान राम को जर्त् ्का राजा जानकर पर्तशों ने अनेक प्रकार की मर्र्यों की खानेप्रर्ट कर दीं, सब नहदयाँ श्ेरेष्ठ, र्ीतल, ननमलश और सुखप्रद स्र्ाहदष्ट जल बहाने ेलर्ी।ां

सागर तनिज मरजादाँ रहहीं। डारहहं ्रत्ि िटस्न्द्ह िर लहहीं।
सर मसज संकुल सकल िागा। अति प्रसन्द्ि दस हदसा त्रबभागा ।।

समुर अपनी मयादशा में रहते हैं, र्े लहरों के द्र्ारा फकनारों पर रत्न डाल देते हैं जजन्द्हें मनुष्य पा जाते हैं। सब तालाब कमलों से पररपूर् शहैं, दसों हदर्ाओां के र्र्भार् अर्ात्श ्सभी प्रदेर् अत्यन्द्त प्रसन्द्न हैं।

दोहा - त्रबधुमहह पूर मयूखस्न्द्ह, रत्रब िप, जििेहह काज ।
मागं बाररद देहहं ्जल, रामचन्द्र कें राज ||23||

श्री रामचन्द्र जी के राज्य में, चन्द्रमा अपनी अमृतृमयी फकरर्ों से, पृथ्र्ी को पूर् शकर देता है। सूय शउतना ही तपता है जजतने की आर्श्यकता होती है और मेघ (बादल) माँर्ने से जब जहाँ ँजजतना चाहहए उतना ही, जल देते हैं।

भाई! यह राम राज्य की महहमा का र्ंनश है, जजस राम देर् में, आत्म देर् में, लोर्ों को िैलौक्य की र्ंभूनतयाँभी अपनी ओर आकर्ंषतश नहींकर सकती।ां यह आत्म देर् बडा ही मनोरम, र्ीतल, सुन्द्दर, अलौफकक और सन्द्ताप रहहत है। यहद इस देर् का अनुभर् है तो जीर् देर् को तत्काल त्यार् कर (क्योंफक हाँइसके प्रनतकूल बातें हैं) इस राम देर्, आत्म देर् के स्ायी ननर्ासी बन जाओ फफर तो तुम सदा सर्दशा सारे द्रन्द्द्र्ों से मुक्त हो। यहाँ ँपरम र्ानांत और ननभयशता का साम्राज्य है।

6. ज्ञान-भजक्त ननरुपर्

आज का प्रसर्ां है, उत्तर काण्ड के अतांर्तश दोहा नां.116

(ज्ञान का दीपक तर्ा भजक्त की महत्ता)

दोहा - यह रहस्य रघुिाथ कर बेचग ि जािइ कोई।
जो जािइ रघुपति कृपा ूँसपिेहुँ मोह ि होइ ॥

(उ.कां.दो. 116-क)

श्री रघुनार् जी का यह रहस्य (रुप्त मम)श जल्दी कोई भी नहींजान पाता। श्री रघुनार्जी की कृपा से जो

इसे जान जाता है, उसे स्प्न में भी मोह नहीं होता।

दोहा - औरउ ग्यािा भगति कर भेद सुिहु सुप्रबीि ।
जो सुति होइ राम पद प्रीति सदा अत्रबछिी ।। 116 ख।।

महात्मा कार्भुरुणुडी जी, रुड से कहतेहैं फक हे सुचतुर रुडजी! ज्ञान और भजक्त का और भी भेद सुननये, जजसके सुनने से श्री राम के चरर्ों में एक रस प्ेरेम होता है।

सुिहु िाि यह अकथ कहािी। समुझि बिइ ि जाइ बखािी ।
ईश्वर अंस जीि अत्रबिासी । चेिि अमल सहज सुख रासी ॥

मानसकार ने "अकर् कहानी" कहा है। कहानी, मनर्ढन्द्त और काल्पननक होती है, र्ास्तर्ंक नही।ं
फफर इसे अकर् कहा, क्योंफक यह कहानी समझतेतो बनती है, परन्द्तु कहतेनहीं बनती इसमलए ही इसे अकर् कहा, यह समझने की चीज है, कहने सुनने की नहीं।

र्र्षय समझो - जीर् अर्र्नाशी है अर्ात्श सत् है, क्योंफक सत्य ही अर्र्नाशी और अजन्द्मा होता है। जीर् को 'अर्र्नाशी' कहा र्ा, इसे अर्र्नाशी कहते ही यह अजन्द्मा मसद्ध हो र्ा। फफर इसे 'चेतन' कहा र्ा, चेतन अर्ात्श धचत फफर 'अमल' कहा, अमल का अर् शहै र्र्कारों से रहहत अर्ाशत् ननर्र्कशार और सहज सुख रामर् जजसका अर् शहुआ, स्भार्तः सुख का भण्डार है, सुख स्रूप है, हाँ दुःख का नामोननर्ान नहीं है।

जीर् के अर्र्नाशी ने से सत्, चेतन से धचत् और सहज सुख रामर् से आनन्द्दस्रूप हुआ अर्ात्श जीर् सत् है, धचत् है, आनन्द्दस्रूप है। इससे मसद्ध हुआ फक जीर् स्भार्त, सत्, धचत्, आनन्द्द अर्ात्श 'सजच्चदानन्द्द' है।

तब प्रश्न होता है फक र्ोसाई जी ने इसे ईश्र अंश क्यों मलखा? अरे! यही तो अकर् कहानी है, जो समझते तो बनती है, पर कहते नहीं बनती 'समुझत बनैन जाइ बखानी'।

जो पदार् शसत्य होता है, र्ह एक होता है। ननरर्यर् होता है, अखण्ड होता है, व्यापक होता है, जीर् में ये सब बातें हैं, तब जीर् उसका अशं कैसे हो सकता है? अरे! यही तो अकर् कहानी है, जो समझतेतो बनती है, परन्द्तु कहते नहीं बनती और यही रघुनार्जी का रहस्य है। अब समझने के मलए र्ैचार र्ाहटका में आओ- प्रश्न होता है

फक जीर् सरुर् ईश्र्र का अ◌ांर् है या ननर्रुर्श ईश्र्र का अ◌ांर् है? जीर् को यहद सरुर् ईश्र्र का अ◌ांर् मानो तो उसका अर्ां करते-करते एक हदन र् ईश्र्र ही खतम हो जायेर्ा, क्योंफक जीर्ादी, जीर् को अनेक मानते हैं, 'जीर् अनेक ईश्र्र एक अंशी कन्द्ता'। अतः, जीर् सरुर् ईश्र्र का अर्ां मसद् निहीांहोता, अब यहद जीर् को ननर्रुर्श कहा जाये तो ननर्रुर्श ईश्र्र अर्ात्श ◌्ननराकार ईश्र्र का अ◌ांर् नहीांहो सकता। आकार् ननराकार है, फूल में रिां ननराकार है, इसमें अर्ां-अर्ाी का भार् नही ◌ांहो सकता। इस तरह जीर्, ननराकार ईश्र्र का भी अ◌ांर् मसद् निहीां होता, तब र्ोसाई जी ने अर्ां क्यों मलखा ? अरे! यही तो रघुनार् जी का रहस्य है और अकर् कहानी है, जो समझते बनती है, पर कहतेनहीां बनती। जीर् छोटा बडा भी मसद् निहीांहोता, जो समझाया जा चुका है।

तिगुि रूप सुलभ अति सगुि ◌ि जािे कोय ।

सुगम अगम िािा चररि सुति मुति मि भ्रम होय ।।

ननर्रुर्श रूप सबको ननत्य सुलभ है, यह सबको जल्दी समझ में आ जाता है, क्योंफक ननर्रुर्श रूप व्यापक आत्मा, सर् शमें व्याप्त है, ओत-प्रोत है, र्ही व्यापक आत्मा स्र्यांजो जाननेर्ाला है और र् स्र्यांही जो ननत्य 'म ◌ैं हूँ', 'म ◌ैंहूँ' बोल रहा है तो इसका अनुभर् तो सब ननत्य कर सकतेहैं और कर रहे हैं, इसमलए ननर्रुर्श रूप सबको सदा सुलभ है, परन्द्तु सरुर् को समझ लेना बडा कहठन है, क्योंफक सरुर् रूप में नाना चररि होतेहैं और चररि को ही देखकर और सुनकर बडों-बडों को भी भ्रम हो जाना सभांर् है, जैसा फक सती को हुआ, र्रुड को हुआ, भुर्ुण्डी आहद को हुआ और र्े कर्ाा में पड र्ये, जजसका पररर्ाम क्या हुआ? यह सब जानते हैं। इसीमलए सरुर् रूप सबको सदा सुलभ नहीांहै।

मानसकार ने जीर् को ईश्र्रका अर्ां कहा- इसका तात्पय शसमझो -जीर् ईश्र्र का अ◌ांर् है, र् अर्र्नार्ी है, उसका कभी नार् नहीांहोता, र् चेतन है अर्ात् श ◌्चैतन्द्य है, "सत्यां ज्ञान मनन्द्तांब्रह्म" जानना पना उसका स्र्भार् है, र् अमल अर्ात्श ◌्मल रहहत है, उसमें फकसी प्रकार का भी मल यानेर्र्कार नहीांहै, र् सहज सुखरार्ी है अर्ात्श ◌्स्र्भार् से सुख का पुचज है, सुख समूह है। जीर् के ये सब र्र्र्ेषर् हैं।

ईश्र्र के जजतनेलिर् और र्रुर् है, र्े सारे के सारे लिर् जीर् के हैं, जीर् को ईश्र्र का अ◌ांर् मलखने का आर्य समझो। देखो, यह एक घडा है, 'आकार्' अर्ात्श ◌्खाली जर्ह या पोल इसके भीतर है। र् एक मठ या महांदर है उसके अदांर भी र्ही आकार् है, इस घडे ◌ेऔर उस महांदर या मठ के बाहर भी र्ही आकार् है, घडे ◌ेमें, मट में और इनके बाहर तीनों जर्ह में तीन अलर्-अलर् आकार् नहीां है। अरे! आकार् तो एक ही है जो तीनों जर्ह है, घट में, मठ में और बाहर। घडे ◌ेके भीतर का आकार्, घडे ◌ेमें होने के कारर् घट उपाधि से घटाकार् कहलाता है, र्ही आकार् मठ में रहने ◌ेके कारर् मठ उपाधि से मठाकार् कहलाया और घट और मठ दोनों के बाहर होने ◌ेसे बृहदाकार् अर्ात्श ◌्महदाकार् कहलाया। आकार् तो एक ही है, परन्द्तु मभन्द्न-मभन्द्न उपाधियों के कारर् उसके अलर्-अलर् तीन नाम हो र्ये-घटाकार्, मठाकार् और महदाकार्। यहद ये उपाधियाँ हटा दी जायँ, घडा फोड हदया जाय, मठ तोड हदया जाय तो तीनों आकार् एक ही हो जायँ। अरे यार! इसके पहहले भी तो र् एक ही आकार् है, जो अखण्ड रूप से तीनों में ओतप्रोत है। ओत-प्रोत का अर् शघट में आकार्, मठ में आकार्, बाहर

आकार्, भीतर आकार्, ऊपर आकार् नीचे आकार्, आजू-बाजू आकार्, सब तरफ आकार्। आकार् में ही घट और मठ तर्ा घट और मठ में ही आकार्, चाहे उपाधि हटाओ या न हटाओ। आकार्, अखण्ड, अनन्द्त, अपार अर्र्कारी, ओत-प्रोत (लबालब) पूर् शहै, इसमें तो कोई र्क नही।ां ठीक, इसी तरह र्ह परब्रह्म परमात्मा, अखण्ड, अनन्द्त, अर्र्कारी, अपार, अरि्ा, लबालब पूर्,श सर्,श आकार्र्त् ्ओत-प्रोत है। हाँ,ॅ जैसे उपाधियों के कारर् उसी एक आकार् के मभन्द्न-मभन्द्न नाम घटाकार्, मठाकार् और महदाकार् हो र्ये, उसी तरह मभन्द्न-मभन्द्न उपाधियों के कारर् उसी एक पूर् शअखण्ड ननर्र्कशार र्ुद् ि्ब्रह्म के तीन नाम हो र्ये। माया उपाधि से मुझ चैतन्द्य घनभूत आत्मा का नाम हुआ ईश्र्रा अर्र्द्या उपाधि से उसी का नाम जीर् और दोनों उपाधियों से रहहत जो र्ुद् ि्चेतन है र्ह है ब्रह्म।

अपनेआप 'म'ॅ आत्मा को न जानना अर्र्द्या है, इस अर्र्द्या उपाधि के कारर् जब अपनेआप 'म'ॅ आत्मा को कुछ माना यह है माया इस उपाधि से ईश्र्र, इन दोनों उपाधियों से रहहत जो है, र्ह है ब्रह्म।

आकार् का खण्ड नही ांहो सकता और न खण्ड फकया जा सकता। र्ह तो अखण्ड, अनन्द्त और एक है। उसी प्रकार ब्रह्म का खण्ड नहीांहो सकता, उसका अ्ांर् नहीांहो सकता। र्ह तो अखण्ड, अपार, अनन्द्त सर्र्श ओत-प्रोत है।

जगदीश ही आपसे जर्ी भयो, यह भी सच है िह भी सच है।
प्रतित्रबम्ब कहो या त्रबम्ब कहो, यह भी सच है, िह भी सच है ।।
है एक िहीं यह लम्ब बयाँू, िेरी अक्ल का ही है कसूर ममयाँू ।
खुशीद कहो या धूप कहो, यह भी सच है िह भी सच है ।।
गफ़लि से रख का िकाब उठा, िह दम में है कसरिजल्बिुमा ।
बुद-बुदे कहो या िीर कहो, यह भी सच है िह भी सच है ।।
है दो में एक हो दो से एक, तिभयि कर लो अन्द्यि-व्यतिरेक ।
अद्र्ौत कहो या द्र्ौत कहो, यह भी सच है िह भी सच है ।।

जैसे आकार् व्यापक है, अखण्ड है, उसमें अर्ां-अर्ी भार् नही ांहै, परन्द्तु र्ही आकार् घटाहद उपाधि से आकार् का अ्ांर् कहलाता है। उसे हम आकार् का अर्ां मानते हैं, परन्द्तु र्ह र्ास्तर्र्क अर्ां नहीां है। इसी तरह यह आत्मा आकार्र्त् ्है और घटाहदक पदार् शक्या है? सघाांत। मन र्ारी्र का जहाँतक र्र्षय है र्ह सभी सघाांत है।

आकार् व्यापक है, परन्द्तु मसर में रहने ्से मसराकार्, कण्ठ में रहने ्से कण्ठाकार् और उदर में रहने से उदराकार् उसी आकार् का नाम, इन उपाधियों के कारर् पड जाता है। इसी तरह सघाांत उपाधि के कारर् ही सर् श का सर् श'म'ॅ आत्मा का ही नाम जीर् पड जाता है, मर्र है नही।ां अ्ांर् र्ही जो अर्ांर्ी है, घटाहद पदार्ों में जो आकार्, र्ही अर्ांर्ी। इसी तरह मुझ आत्मा का अ्ांर्, जीर्, आत्मा ही है, मुझ आत्मा से जीर् अलर् नही ांहै।

'ििाम रूप दुदु ईस उपाधी ॥'

जैसे घडा के फूट जानेसे घटाकार्, महाकार् हो जाता है। इसी तरह सघाांत के नार् होने से सघाांत में जो जीर् है, ई कहीांआता-जाता नही,ां ई सिाात् ्परमात्मा हो जाता है। अरे यार! परमात्मा हो क्या जाना है, परमात्मा है ही। जीर् आता-जाता है, ई सब कहानी है, सैकडों लाखों र्ष शकहते-सुनते हो र्ये, तब भी इस जीर् कहानी का अतां नही ांहै, इस पर अनेक दर्नश बन र्ये।

तिज भ्रम िहहं ंसमुझहहं ंअग्यािी। प्रभु ुपर मोह घरहहं ंज़ प्रािी।
जथा गगि घि पटल तिहारी। झाँपेउ भािु कहहहं ंकुत्रबचारी ।।
चिचि जो लोचि अंगुमल लाएँ। प्रगट जुगल समस िेहह के भाएँ।
उमा राम विषइक अस मोहा। िभ िम घूम घूरर स्जमम सोहा ।।

(बा.काां. दो. 116 के नीचे)

र्ैसे लोर् आकार् में अिांरा, ििुआँऔर िूल आहद मानतेहैं, यद्यर्प ये सब उस ननर्र्कशार र्ुदिु आकार् में है नहीां, उसी प्रकार अज्ञानी जन जीर् का आना-जाना, अांर्-अांर्ी भार् मानते हैं।
तो भाई !

सो मायाबस भयउ गोसाई । बँध्यो कीर मरकट की िाई ।
ज़ चिेहह ग्रस्न्थ परर गई। जदवप मृषा छूटि कहठिई ॥

ऐसा यह जीर् माया के र् होकर तोता और बदांर के समान अपने आप त्रबना बिां बाँिा हुआ है। इस तरह जीर् चेतन और माया जड में ग्रधांर् पड र्यी, जो यद्यर्प मृर्षा है अर्ाात्श ्र्ाँठ पडी नही ांहै, पर बिां र्या है। इससे छूटना बडा कहठन है।

इस पर एक दृष्टाांत सुनो-जजस जर्ांल में बहुत से तोते ेरहते हैं तोता पकडने ेर्ाला बहेमलया हाँजाता है और उस झाड पर जजसमें फक तोते ेरहतेहैं, एक डाली से दूसूरी डाली पर एक पतली लम्बी रस्सी अरनी जैसे बाँि देता है, फफर उसमें छोटी- छोटी, पतली-पतली बहुत-सी पोंर्रयाँर्ूँर् देता है। (पोंर्रयाँ, पखां ें में लर्ी पोंरी जैसे होती है, जजससे पखां ा घूमता है।) इसके बाद उन पोंर्रयों में तोतों के खानेके कुछ पदार् शधचपका देता है। यह सब करके ई बहेमलया पास ही ओट में कहीांजा बैठता है और ई फँसने पर पकडने के मलए तोतों की प्रतीिा करता रहता है। तोते,े भोजन की लालच में आकर उन पोंर्रयों में बैठते हैं, उनके र्जन से पोंर्रयाँ घूम जाती हैं और उस पर बैठे हुए तोते ेपोंरी को पकडे ेहुए उल्टे लटक जाते हैं। तोते ेसमझते हैं फक अरे! पोंरी ने हमें पकड मलया। अब हम इससे फकसी तरह नहीांछूट सकते। र्े पोंरी को पकडे ेहुए उल्टे लटके रहते हैं।

इतने ेमें एक दयालु सज्जन उसी तरफ से ननकल पडे,े उन्द्हें तोतों की दर्ा देखकर उन पर बडी दया आयी। रे् उनके पास र्ये और उनसे पूछने ेलरे् फक भाई, यह क्या बात है? तुम सब इस तरह क्यों उल्टे लटके पडे े हो।

तब तोतों ने उत्तर हदया, क्या करें महाराज। हम सब दाना चुर्ने ेयहाँ ँआये रे् फक इन पोंर्रयों ने हम सबको पकड मलया, रे् छोडती ही नहीं और हम सब यहाँ ँसे छुटकारा ही नहींपा सक रहे हैं। तब उस दयालु महात्मा ने उन्द्हें उससे छूटने ेके मलए उपदेर् हदया और कहा-ऐ तोते! तुम सब चैतन्द्य हो, पोंर्ी जड है ई तुम्हें कैसे पकड सकती है। तुम स्र्यांपोंर्ी को पकडे ेहो। अतः, तुम सब पोंर्ी को छोड दो और इसी िर् उड जाओ। तुम्हें कोई नही ांरोक सकता, तुम सबके सब मुक्त हो ऐसा उपदेर् देकर महात्मा चले र्ये।

रे्सब तोते ेपोंर्ी को पकडे ेहुए उल्टा लटके, इस उपदेर् का बार-बार पाठ करने ेलरे्, रटनेलरे्, रे् सब कहते ेजाते रे् फक ऐ तोते!े तुम सब चैतन्द्य हो, पौंर्ी जड है, ई तुम्हें कैसे पकड सकती है, तुम स्र्यां पोंर्ी को पकडे ेहो। अतः, तुम सब पोंर्ी को छोड दो और इसी िर् उड जाओ, तुम्हें कोई नहींरोक सकता, तुम सबके सब मुक्त हो। रे् सब तोते ेऐसा कहतेतो जाते रे्,े परन्द्तु पोंर्ी कोई नहीं छोडता र्ा।

महात्मा ने उन्द्हें यह उपदेर्, पाठ करने के मलए बार-बार रटने के मलए नहींहदया र्ा बजल्क उसके अनुसार काय शकरने ेके मलए हदया र्ा। यहद रे् तोते ेउस उपदेर् का भार् समझकर उसके अनुसार काय शकरते तो तुरन्द्त सब उड सकतेरे्,े परन्द्तु अज्ञानी तोतों को इतना ज्ञान कहाँ ँ? उल्टा लटके-लटके सभी तोते ेइस उपदेर् का पाठ कर ही रहे रे् ेफक इतने ेमें बहेमलया आया और जैसे झाड से फल तोड-तोड कर कोई अपनेर्ैले में डालता जाता है, इस तरह बडे ेआराम से सब तोतों को पोंर्ी से उठा-उठाकर अपने र्पजांडे ेमें डालता र्या और अ ांत में अपने घर की राह ली।

इन तोतों के ही समान, बदांरों की भी दर्ा होती है। बदांर पकडने र्ाले लोर् छोटी-छोटी सुराही, जजसका मुँह सँकरा होता है जमीन में पास-पास र्ाड देते हैं और उनमें बदांरों के खानेके पदार् शचनेआहद रख देते हैं। बांदर आता है और अपनेचचांल स्र्भार् के अनुसार बडी चपलता से उसे देख लेता है, फफर ई इस सुराही मे चने ननकालने के मलए अपना हार् डालता है और चनेसे मुट्ठी को भर लेता है, चनेसे भरी हुई मुट्ठी बाहर ननकालने के मलए बांदर बार-बार उसे अपनी ओर खीचांता है परन्द्तु चने से भरी हुई मुट्ठी सुराही का मुँह छोटा होने ेके कारर् बाहर ननकल नही ांसकती, ई सुराही के भीतर अटक जाती है। ई मुट्टी से चने छोड दे तो मुट्टी सहज ही बाहर ननकल जाय, परन्द्तु ई मुट्ठी से चनेछोडता भी नहीं और अपनी मुट्ठी बाहर ननकाल भी नहीं सकता। ई समझता है फक बस सुराही ने मुझे ेपकड मलया है अब इससे छूटना मुजश्कल है। देखो बदांर चेतन है और सुराही जड। भला जड सुराही चेतन बदांर को क्या पकड सकती है, बदांर स्र्यांउसे पकडा हुआ है। ई हींसुराही में हार् डाले बैठा रह जाता है फक बदांर पकडने ेर्ाला आता है और आसानी से उसे पकडकर बाँ लेता है।

भाई! यह है दृष्टान्द्त, इसका राष्टातां यह है फक मनुष्य कहता है फक हम क्या करें भाई "माया के चक्कर में पडे ेहैं" इससे छूटना कहठन है, उनके ऐसा कहने का तात्पय शयह फक माया के चक्कर में रे् खुद ही अपने आप पडे हैं, माया ने इन्द्हें चक्कर में नहींडाला। प्रश्न होता है फक फकसने कहा फक तुम माया के चक्कर में पडो। उत्तर होर्ा- फकसी ने नहीं, रे् स्र्यांपडे ेहैं। रे्दर्ास्ि्सिन्द्त, महात्मा जन इन्द्हें उपदेर् करते हैं फक भाई! माया जड है, तुम चैतन्द्य हो, माया तुम्हें क्या पकड सकती है, माया को तुम पकडे ेहो, माया को तुम छोड दो, फफर तो इसी िर् तुम मुक्त हो।

लोर् उनके द्र्ारा हदये र्ये उपदेर्ों के अनुसार काम नहीं करते। रे् उन उपदेर्ों के भार् को समझकर रै्सा व्यर्हार नही ांकरते, बजल्क प्रातःकाल उठकर ननत्य फिया से ननरृ्त्त हो, स्नान आहद करके, चन्द्दन, नतलक लर्ाकर आसन जमाकर बैठते हैं और बडी श्रद्र्ा से इन उपदेर्ों का ननत्य पाठ करते हैं। बार-बार रटते हैं और इस तरह पाठ करके तोतों की नाई रे् ेबन्द्नि से मुक्त होना चाहते हैं। इससे बन्द्नि से छुटकारा तो ममलता नही,ां मृत्यु रूपी बहेमलया आता है और उन्द्हें आराम से तोतों की नाई उठा ले जाता है। ये जन्द्म जन्द्मातांर भी इसी तरह उपेदेर्ों, रे्द र्ास्र्ों का पाठ करते रहें तो बन्द्नि से मुक्त नही ांहो सकते। यहद उन उपदेर्ों के अर् शऔर भार् को समझकर उनके अनुसार काय शऔर व्यर्हार करें तो रे् उसी िर् मुक्त हैं। इस पर एक दूसूरा दृष्टातां सुनो -

एक बार फकसी नर्र में एक महात्मा का आर्मन हुआ। उनकी दयालुता, मृदुभुार्षता और आकर्षकश प्रर्चन का लोर्ों के हृदय में ऐसा प्रभार् पडा फक रोज बहुत बडी सांख्या में लोर् उनका प्रर्चन सुनने ेआने लर्े तर्ा हााँ ननत्य आनन्द्द की र्षाशहोने लर्ी।

उनका उपदेर् सुनने ेके मलए उस नर्र का बननया भी ननत्य जाया करता र्ा। र्ह प्रर्चन समाप्त होने के बाद जब अपने घर आता, तब अपनेघर के लोर्ों को भी स्र्ामीजी के उपदेर् का हाल बताया करता र्ा। उस बननये के घर में एक तोता पला र्ा, र्ह तोता भी यह हाल बननये से बडे ेध्यान से सुना करता र्ा।

एक हदन ननयत समय पर जब र्ह बननया, स्र्ामीजी के प्रर्चन में जानेके मलए तैयार होकर चलने लर्ा, तब पर्जांरे में बदां तोते ेने बननये से कहा भाई! आप स्र्ामीजी का उपदेर् ननत्य सुनकर आनजन्द्दत होते हैं, आज मेरी ओर से भी महात्मा जी से प्रार्नशा कीजजये और उनसे कहहये फक रे् मुझे ेभी कुछ उपदेर् देनेकी दया करें। बननये ने तोते ेकी बातें सुनी और कहा फक तुम्हारी प्रार्नशा म ैंस्र्ामी जी को सुना दूांर्ा। यह कहते हुए बननया प्रर्चन सुननेचला र्या।

स्र्ामी जी का प्रर्चन समाप्त होने के बाद बननया ने तोते की प्रार्नशा स्र्ामीजी को सुनायी और कहने लर्ा फक महाराज! पर्जांडे ेमें बन्द्द तोते ेने बडी नम्रतापूर्कश आपसे प्रार्नशा की है और कहा है फक मेरे मलए स्र्ामीजी का क्या उपदेर् है? पूछकर आना।

तोते ेका सांदेर् सुनते ेही महात्मा अपने आसन पर बैठे ही बैठे मूजच्छशत होकर धर्र पडे,े उनकी आँखें फफर यीं, हार् पैर छटपटानेलरे् और चेहरे का रांर् उड र्या। महात्मा की ऐसी दर्ा देख लोर् चारों ओर दौड पडे,े कोई भीड हटाने लर्ा, फकसी ने पखांा फकया कोई पानी नछडकने लर्ा और फकसी ने तेल की मामलर् की। इस तरह बडी तत्परता से उनका उपचार फकया र्या, बडी देर बाद बडी कहठनाई से स्ामीजी को होर् में लाया जा सका।

लोर् बननये को डाँटनेलरे् और उससे कहनेलरे् फक तुमने ऐसा क्या अर्ुभ और बुरा सदोंर् स्ामी जी को सुनाया जजसके कारर् स्ामीजी की ऐसी दर्ा हुई। बननया यह सब डॉट-फटकार सुनकर चुपचाप अपनेघर चला र्या। घर पहुँचने ेपर तोते ेने बडी आर्ा भरे निों से बननये की ओर देखा और उससे पूछने ेलर्ा 'भाई! आपनेमेरी प्रार्नशा स्ामीजी को सुनाया?

तोते ेकी बात सुनते ेही बननया बडे िोि में आ र्या और हाँ की घटना का सब र्ृत्ताांत तोते ेको सुनाकर कहने लर्ा फक तूने ेकैसा अर्ुभ सदोंर् भेजा र्ा फक जजसे सुनते ेही स्ामीजी की ऐसी दर्ा हुई और लोर्ों के द्वारा मुझे ेभी खरी-खोटी सुननी पडी।

बननये के द्वारा हाँकी घटना का हाल सुनते ेही तोता र्पजांडे ेके भीतर ही बडे ेजोर से फडफडाया और मूजच्छशत होकर धर्र पडा, ई बेहोर् हो र्या, उसकी आँखें पर्रा यीं और पैर ऊपर टँर् र्ये। यह दुखुद समाचार सुनते ेही पडोस के बहुत से लोर् हाँइकट्ठे हो र्ये।

इस घटना को देखतेही बननया बडे ेआश्चय शमें पड र्या। ई सोचनेलर्ा, भर्र्न्! े् यह क्या रहस्य है फक तोते ेकी भी महात्मा जैसी दर्ा हो र्यी। बननये ने तोते ेको तुरन्द्त ही र्पजांडे ेसे बाहर ननकाला और उसे पानी आहद नछडकनेका प्रबन्द्ि किरनेलर्ा।

तोता र्पजांडे ेसे बाहर होते ही तुरन्द्त उडकर आँर्न के झाड पर दूरू जा बैठा और कहनेलर्ा-ननत्य भर्र्त कर्ा सुननेर्ाले प्ेरेमीजनों! भर् सार्र से पार होने ेतर्ा माया के बन्द्िन से छूटने ेके मलए र्ेदर्ास्त्र, रामायर्, र्ीता तर्ा उपननर्षद् आहद का उपदेर्, स्ामीजी के श्रीमुख से ननत्य सुन रहे हो, परन्द्तु केर्ल सुनना ही सुनना है, उसके अर् शऔर भार् को समझकर र्ैसा ही काय शऔर व्यर्हार करना नहीांहै। उन उपदेर्ों को आचरर् में नहीां उतारना है, तब बन्द्िन से छुटकारा कैसे हो सकता है। देखो, मेरा सदोंर् सुनकर दयालु महात्मा ने मुझे ेकैसा उपदेर् हदया, र्े मूजच्छशत होकर आसन पर धर्र पडे,े बेहोर् हो र्ये और मृतर्त् ्हदखनेलरे्। इसका अर् शर्ा फक बेटा! तूभी इसी तरह आचरर् करना, तुझेमुजक्त ममल जायर्ी।

मनैं ेउनके द्वारा हदये र्ये उपदेर् का अर् शसमझा और उसे अपनेआचरर् में लाया, पररर्ाम तुम्हारी आँखों के सामनेहै। म ैंतुरन्द्त बिांन से मुजक्त पा र्या। अतः, र्ेद र्ास्त्र और सन्द्त-महात्माओां के उपदेर् केर्ल सुनने ेके मलए नही ांहैं र्रन् ्उन्द्हें आचरर् में लानेके मलए हैं तभी उसका फल प्राप्त हो सकता है।

अब आ जाओ प्रसरां पर, अरां हीं जो अ ांर्ारी है, घटाकार् अ ांर् है, अ ांर्ारीं आकार् है। अरां, अ ांर्ारी है। देखो, लकडी का अ ांर् लकडी ही होरा ममट्टी या पत्र नही। ां सोना का अरां सोना ही होरा, ईंट-पत्र नही। ां लोहे का अ ांर् करोरे् तो लोहा ही होरा, ममट्टी या लकडी नही। ां इसी तरह ईश्र्र का अ ांर् ईश्र्र ही है, जीर् नही। ां

'है' यह अजस्तत्र् जो है, र्ह भर्ान आत्मा ही है। 'देह है' अब इस 'है अजस्तत्र् को ही देह मान मलया, देह मान्यता तो जड है, अभार् रूप है, र्कल्प है, और 'है' अजस्तत्र् चेतन है, भर्ान आत्मा है। इन दोनों में अर्ाशत् ् मान्यता देह जड और 'है' अजस्तत्र् चेतन आत्मा इन दोनों में ग्रधांर् है जो बडी सुर्मता से पडती है। (देह मान लेना क्या कोई कहठन है) परन्द्तु बडी कहठनाई से छूटती है, यद्यर्प यह ग्रधांर् ममथ्या है।

जो माना जाय र्ह जड है और जजसको माना जाय र्ह चेतन है। अिार और अिौय, जब दोनों ममल र्ये तो यही जड चेतन की ग्रधांर् है। इसी को 'धचज्जड ग्रांधर्' भी कहतेहैं। जो स्र्रूप को ढाँके र्ह मूल अर्द्या है और जो पदार् शको ढाँके र्ह तूल अर्द्या है। अपनेस्र्रूप का अज्ञान मूल अर्द्या है, ज्ञान से मूल अर्द्या का नार् होता है।

बि ि ेजिी भयउ संसारी । छूट ि ग्रस्न्द्थ ि होइ सुखारी ।
श्रुति पुरि बहु कहेउ उपाई। छूट ि अचधक-अचधक अरझाई ।।
जिी हृदय िम मोह त्रबसेषी । ग्रंचथ छूट फकमम परइ ि देखी ।
अस संजोग ईस जब करई। िबहुँ कदाचचि सो तिरअरई ।।

इस ममथ्या ग्रधांर् के पडने ेसे जीर् ससांारी हो र्या। अब न तो र्ाँठ छूटती है और न र्ह सुखी होता है। यद्यर्प र्ेदों और पुरार्ों ने बहुत से उपाय छूटने के बताये हैं, पर र्ह ग्रधांर् छूटती नही, ां र्रन् ् अधिकाधिक उलझती ही जाती है। जीर् हृदय इस र्ाँठ को देख ही नही ांसकता, तब खोले कैसे? जब कभी ईश्र्र की कृपा से ऐसा सयाोर् आ जाता है, तब कही ांकदाधचत् ्र्ह ग्रधांर् छूट पाती है। आत्म जजज्ञासा ही ईश्र्रकृत सयाोर् है।

अपना आप जब हदखे, तब ग्रांधर् हदखाई दे, मर्र अज्ञान अिांकार के कारर् न तो अपना आप ही दीख पडता है और न ग्रधांर् ही। रामायर् पढते-पढते जजदांर्ी बीत रही है मर्र ग्रधांर् छूटी नहीं बजल्क ननत्य उलझती चली जा रही है। जब ईश्र्रकृत सयाोर् हो अर्ात्श ्आत्म जजज्ञासा जार्े फक 'म'ैं कौन हूँ? इसको जाननेके मलए हृदय में मछली के समान तडप हो। अरे! यही तो ईश्र्रकृत सयाोर् है और क्या ईश्र्र पेड पर बैठा है जो आकर बतायेर्ा, जब म ैंस्र्यांही तोता और बन्द्दर की तरह बिांा हूँ, तब म ैंस्र्यां ही उस बिांन को खोलूर्ांा, दूसूरा कौन खोलेर्ा? जैसे, कोई स्र्यांकमरे के भीतर, भीतर से सँकल लर्ाकर पडा हो और कहता हो अरे भाई! मुझे ेबाहर ननकालो, मेरा बन्द्नि खोलो तो उसे कौन दूसूरा बाहर ननकाल सकता है, जब दूसूरा बाँिा हो, तब र्ह खोले और जब स्र्यां ही बन्द्नि लर्ाया है, तब र्ह स्र्यां ही खोलेर्ा। अब आर्े ज्ञान दीपक का प्रसरां आता है- यहाँ से सिान र्ुरू होता है।

सास्त्त्कि श्रद्धा घेि सुहाई। जौं हरर कृपाँहृदय ें बस आई ।
जप ि प ब्रि जम तियम अपारा। जेश्रुति कह सुभ धम ि अचारा ।।

भर्र्ान की कृपा से यहद साजत्की श्रद्धिा रूपी सुन्दर र्ौ हृदय रूपी घर में आकर बस जाय। असख्ांयों जप, तप, व्रत, यम और ननयमाहद र्ुभ ि म शऔर आचार (आचरर्) जो श्रुनतयों ने कहे हैं -

तेइ ि ृ हररि चरै जब गाई। भिा बच्छ मससु पाइ पेन्द्हाई ।
िोइ तिवृत्त पिा त्रबस्वासा। तिमलि मि अहीर तिज दासा ।।

उन्द्ही ां ि माचशार रूपी हरी घास को जब र् र्ौ चरै और आजस्तक भार् रूपी छोटे बछडे े को पाकर र् पेन्द्हारे्। सासाांररक र्र्षयों से और प्रपचां से मन का हटना यही र्ौ को दुहुते े समय र्पछले पैर बाँिने की रस्सी अर्ात्् र्नोई है, र्श्र्ास दू दुहुने े का पिा है, बरतन है। ननमलश, ननष्पाप मन जो है, जो अपनेर् में है, दुहुने े र्ाला अहीर है।

परम धममिय पय दुहह भाई। अिटै अिल अकाम बिाई ।
तिषि मरि ि ब छमाँ जुिौ । घृति सम तिजुि देइ जमिौ॥
मुहदिा ूँमथैविचार मथिी । दम अधार रजुसत्य सुबािी ।
बि मचथ काहढ़ लेइ िििि ी । त्रबमल त्रबराग सुभग सुिपुिी ।।

इस प्रकार परम ि म शमय दू दुहुकर उसे ननष्काम भार् रूपी अजग्न पर भली- भाँनत औटारे्, फफर ि मा और सतािोष रूपी हर्ा से उसे ठण्डा करे और ि ैय शतर्ा म (मन का ननग्रह) रूपी जामन देकर उसे जमारे्, फफर प्रसन्द्नता रूपी कमोरी में सत्र्र्चार रूपी मर्ानी से दम (इजन्द्रय दमन) के आिार पर (दम रुपी खम्भे आहद के सहारे) सत्य और सुन्दर र्ार्ी रूपी रस्सी लर्ाकर उसे मरे्और मर्कर उसमें से ननमलश, सुन्दर और अत्यन्द्त पर्र्त्र्ैराग्य रूपी मक्खन ननकाल लें।

दोहा - जोग अचगति करर प्रगट ि ब कम ि सुभासुभ लाइ ।
बुद्चध मसरािैग्यिा घिृ ममिा मल जरर जाइ ।।117 क।।

फफर योर् रूपी अजग्न प्रर्ट करके उसमें समस्त र्ुभार्ुभ कम शरूपी ईंिन लर्ा दे और सब कमों को योर् रूपी अजग्न से भस्म कर दे और जब र्ैराग्य रूपी मक्खन का ममता रूपी मल-जल जाय तब बचे े हुए ज्ञान रूपी घी को ननश्चयाजत्मका बुद्धि से ठण्डा करे।

बि त्रबग्यािरूपिी बुद्चध त्रबसद घिृ पाइ ।
चचत्त हदआ भरर धरै दृढ़ समिा हदअहट बिाइ ।।117 ख।।

तब र्ईज्ञान रूर्पर्री बुद्धि उस ज्ञान रूपी ननमलश घी को पाकर उससे धचत्त रूपी दीये को भरकर समता की दीर्ट बनाकर उस पर उसे दृढतापूर्कश जमाकर रखे।

दोहा - ीति अिस्था ीति गिु िहह कपास ि काहढ़ ।
तूलि िुरीय सूँर्ारर पुति बािी करै सुगाहद ।।117 ग।।

जारृ्त, स्प्न और सुर्षुजप्त तीनों अर्स्र्ाएँ और सत, रज और तम तीनों र्रु् रूपी कपास से तुरीय अर्स्र्ा रुई को ननकाल कर और फफर उसे सँर्ार कर उसकी सुन्दर कडी बत्ती बनार्े। इस प्रकार तेज की रामर् र्ईज्ञान मय दीपक को जलार्े, जजसके समीप जाते ही मद आहद सब पतर्ें आहद जल जायँ।

अब दीप जल र्या।

सोहमस्स्म इति िृवृत्त अखण्डा। दीप मसखा सोइ परम प्रचंडा ।
आिम अिुभि सुख सुप्रकासा। िब भि मूल भेद भ्रम िासा ।।

'सोहमजस्म' र्ह ब्रह्म 'म' ैं हूँ, यह जो अखण्ड तैल िारार्त् ्कभी न टूटने र्ाली र्रृ्त्त है, र्ही उस ज्ञान दीपक की लौ है। इस प्रकार जब आत्मानुभर् के सुख का सुन्दर प्रकार् फैलता है, तब ससांार के मूल, भेद रूपी भ्रम का नार् हो जाता है।

प्रबल अत्रबद्या कर पररिारा। मोह आहद िम ममटइ अपारा ।
िब सोइ बुद्चध पाइ उूँस्जआरा। उर गृहूँ बैहठ ग्रस्न्द्थ तिरआरा ।।

अब महान बलर्ती अर्द्यिा के पररर्ार मोह आहद का अपार अिंकार ममट र्या, तब र्ही र्ईज्ञान रूर्पर्री बुद्धि आत्मानुभर् रूप प्रकार् को पाकर हृदय रूपी घर मे बैठकर ग्रधांर् को खोलती है।

अब यहाँपर र्कां होती है फक जब दीपक जल र्या, उजाला हो र्या, आत्मानुभूनत हो र्यी, अर्द्यिा का पररर्ार नष्ट हो र्या तो फफर अब र्ह कौन-सी ग्रधांर् रह र्यी है, बच रही है, जजस ग्रधांर् को बुद्धि हृदयदेर् में ज्ञान के प्रकार् में खोलने बैठती है।

भैय्या! र्ेद र्ास्र्ों के बडे–बडे र्ज्ञाता तर्ा र्र्द्र्ान भी इसका भार् नही लांर्ा पाते। यह बडा जहटल प्रश्न है। इसका अनुभर् तो अनुभर्ी सतां ही करता है और जजस पर सतां कृपा हो चुकी है और अनुभर् जर्त् ्में जजसका अधिकार है र्ही इसका भार् लर्ा पाता है।

छोरि ग्रंचथ पाि जौं सोई। िब यह जीि कृिारथ होई ।
छोरि ग्रंचथ जाति खगराया। विघ्ि अिेक करइ िब माया ।।

यहद ई र्ज्ञान रूर्पर्ी बुद्धि उस ग्ाँठ को खोल ले, तब यह जीर् कृतार् शहो जाय, कार्भुसुण्डी जी कहते हैं फक हे पक्षिराज र्रुड जी। ग्ाँठ खोलते ेहुए जानकर फफर माया अनेकों र्ध्न करती है। भाई! अब यहाँ ँपर माया र्ध्न करनेदौडती है, प्रश्न होता है फक माया का क्या त्रबर्डता है, जो र्ध्न करने दौडती है।

इसका कारर् सुनो - जब तुम अपने आपको कुछ भी मानते हो, देह, स्त्री, पुरुर्ष, जीर् आहद अर्र्ा चाहे ब्रह्म भी मानते हो तब तक माया तुम्हारा प्रेरेरक है, पनत है, स्र्ामी है और जब अपनेआपको जैसा का तैसा, जहाँ ँ का हााँ, जो का सो जाना फक 'म' ैं तो र्ुद्ि तत्र् भर्र्ान आत्मा हूाँ। न म ैंबद्ि र्ा, न मुक्त हुआ। न अज्ञानी र्ा और अब ज्ञानी हुआ। न म ैंजीर् र्ा, अब ब्रह्म हुआ। इसी का नाम बिो है।

जैसे थे िैसे रहे, अब कछु कहा ि जाय ।।

मानसकार के र्दों में इसी को "परम प्रकार्" कहा है। इस जस्र्नत में फफर तुम माया के पनत हो र्ये। माया के तुम प्रेरेरक, स्र्ामी हो र्ये, फफर तो जैसे बाजीर्र बदांर को नचाता है, उसी प्रकार तुम माया को नचा सकते हो।

जब माया देखती है फक अब यह मेरा पनत होने ेजा रहा है, फफर तो मुझेइसके र् में रहना पडेर्ा, ऐसा समझकर ही र्ह र्ध्न करने ेदौडती है। र्ह तुम्हें अपना पनत (माया पनत) नही ांहोने देना चाहती।

ररद्चध मसद्चध प्रेरेरइ बहु भाई । बुद्चधहह लोभ हदखािहहं ंआई ।
कल बल छल करर जाहहं ंसमीपा। अंचल बाि बुझािहहं ंदीपा ।।

माया बहुत सी ऋद्धि-मसद्धियों को भेजती है, जो आकर बुद्धि को लोभ हदखाती है और र्े ऋद्धि-मसद्धियाँ अपनी कला से, बल से और छल करके समीप जाती हैं और आांचल की र्ायु से उस ज्ञान रूपी दीपक को बुझा देती हैं। जब म ैंब्रह्म हूँ, तब दूसूरों के हृदय की बात को क्यों नहीांजान लेता, पानी क्यों नही ांबरसा लेता, पानी बरसना बदां क्यों नहीांकर सकता, नदी में पूर में पानी के ऊपर चलकर उस पार क्यों नही ांचला जाता, मेरे सभी सकांल्प पूरे क्यों नही ांहोतेआहद मन में इस तरह के अनेक र्ध्नों का जाल त्रबछ जाना, र्ही माया की प्रेरेरर्ा में ररद्धि-मसद्धियों द्र्ारा बुद्धि को लोभ हदखाना है।

होइ बुद्चध जौं परम सयािी। तिन्दह ति चितिि अिहहि जािी।
जौं िहह त्रबघ्ि बुद्चध िहींबाधी । िौ बहोरर सुर करहहं ंउपाधी ।।

यहद बुद्धि बहुत ही सयानी हुई तो र्ह उन ऋद्धि-मसद्धियों को हाननकर समझकर उनकी ओर ताकती तक नहीां। इस प्रकार यहद माया के र्ध्नों से बुद्धि को बािा न हुई, तब फफर देर्ताओां का उपरर् र्ुरु होता है।

इन्द्री द्िार झरोखा िािा। िहूँ िहूँ सुर बैठे करर थािा ।

िआि देखहहं ंविषय बयारी । ि ेहहठ देहहं ंकपाट उघारी ।।

इजन्द्रयों के द्वार हृदय रूप घर में अनेकों झरोखे हैं हाँप्रत्येक झरोखे में देर्ता अड्डा जमाकर बैठे हैं। ज्यों ही रे् र्र्षय रूपी हर्ा को आते देखतेहैं, त्यों ही हठपूर्कश फकर्ाड खोल देते हैं।

जब सो प्रभंजि उर गृहुँ जाई। िबहहं ंदीप त्रबग्यिा बुझाई ।
ग्रंचथ ि छूहट ममटा सो प्रकासा। बुद्चध त्रबकल भइ विषय बिासा ।।

ज्यों ही ई तेज हर्ा, हृदय रूपी घर में जाती है, त्यों ही ई र्ज्ञान रूपी दीपक बुझ जाता है। र्ाँठ भी नही ां छूटी और ई आत्मानुभर् रूप प्रकार् भी ममट र्या। र्र्षय रूपी हर्ा से बुद्धि व्याकुल हो र्यी, सारा फकया कराया चौपट हो र्या।

इस्न्द्रन्द्ह सुरन्द्ह ि ग्यिा सोहाई। विषय भोग पर प्रीति सदाई ।
विषय समीर बुद्चध कृि भोरी। िहह त्रबचध दीप को बार बहोरी ।।

इन इजन्द्रयों के देर्ताओं को ज्ञान अच्छा नही ांलर्ता, क्योंफक उनकी र्र्षय भोर्ों में सदा ही प्रीनत है इसमलए ही रे् ज्ञान का र्र्रोि करते हैं और रे् बडे–बडे उपरर् करते हैं। कारर् यह है फक अज्ञानी जीर्-देर्ताओं के परु ुहैं, उनके द्वारा जो पूजा-पाठ, यज्ञ-हर्न आहद फकये जाते हैं रे् सब देर्ताओं को ही ममलते हैं। यही उनका भोर् है। इन अज्ञानी जीर्ों के बल पर ही उनका ननर्ाहश होता है। ऐसे ये देर्ता जब देखतेहैं फक अरे! यह तो ज्ञानोपाजनश में लर् रहा है, इसको यहद स्र्रूप का बोि हो र्या, तब इससे पूजा-पाठ, हर्न आहद सब छूट जायेर्ा, हमको यह नही ांपूजेर्ा, हम अभी तक इसे अपना परु ुबनाये रे्, अब यह हमसे छूटकर भार्ना चाहता है, तब जजस तरह घोडे या र्र् के मामलक का घोडा या र्र्ा जजस पर फक ई बोझा लादकर अपना व्यर्साय चलाकर ननर्ाशह करता है, खूँटे से छूटकर भार् जाये और उनका बोझा लादना बदां हो जाये, तब उस मामलक को जैसे महान दु:ख होता है, उसी तरह ये अज्ञानी जीर् जो देर्ताओं के परु ुहैं और जन्द्म-जन्द्मातांर से उनका बोझा ढो रहे हैं, उन्द्हें जब रे् अपने चर्ुांल से छूटकर भार्तेदेखतेहैं (स्र्रूप का बोि हो जाना ही देर्ताओं के बिांन से छूटना है) तब इन देर्ताओं को बडा दु:ख होता है। इन देर्ताओंकी परुओंकी र्र्ा उनके एजेंट लोर् करते हैं, ये कमीर्न एजेंट रे् हैं जो इन अज्ञानी जीर्ों को उपदेर् देते हैं फक भाई! देओर्े तब पाओर्े, उस जन्द्म में हदये रे् तो इस जन्द्म में पा रहे हो, दान, जप, तप, होम करोर्े तो स्र्र् शजाओर्े और हाँअनेक प्रकार के सुख भोर्ोर्े। इनकी बातों पर र्र्चार करो, देखो इन स्र्र् शजाने र्ालों में से आज हदन तक अपनेपररर्ार के लोर्ों के नाम ऐसा कोई पत्र नही ांआया फक बेटो! तुम लोर् हमारी धचतांा न करना, हमें यहाँ "एयर कांडीर्न" की कोटी ममली है, हम यहाँ सब प्रकार से सुखी हैं, तुम घर का सब सार सम्भाल बडे ध्यान से करते रहो, उनके द्वारा न तो ऐसा पत्र ही आया और न उनमें से कोई आकर ही बताया फक स्र्र् शमें हमें इस तरह की सुख, सुर्र्िा ममली र्ी। बस, मान लो स्र्र् शहै। स्र्र् शऔर नरक की कल्पना अज्ञाननयों के मलए है, ये केर्ल कहानी है और कहानी बच्चे सुना करते हैं। र्ास्तर् में न कही ांस्र्र् शहै और न नरक, स्र्र् शऔर नरक सब यहीांहै।

भाई! इस तरह के उपदेर् देनेर्ाले, उपदेर्क भेदर्ादी र्ुरु घटांाल ही देर्ताओं के कमीर्न एजेंट हैं। इन्द्हें चाहे तेली कह लो, मतलब एक ही है। छत्तीसर्ढ़ में हमारे बहुत से तेली सत्सर्ी हैं, परन्द्तु इन तेमलयों के र्र्षय में नही ांकहा जा रहा है, अरे भाई! ये तेली हैं भी नही।ां तेली तो र्े हैं, जजन्द्हें ज्ञान से र्िर है। तेली बैलों को कोल्हू में जोततेहैं, उन बैलों की आँखों में टोपा बाँ दिेते हैं, जजससे उन्द्हें कुछ हदखाई न दे, र्े बैल हदन-रात कोल्हू में चलते हैं। र्ेबीस-बीस, तीस-तीस मील चल चुकतेहैं, परन्द्तु रहतेहैं अपनी ही जर्ह, र्ीांकि र्ी।ां अर्र बैल कर्ट के मारे कहीां खडा होता है तो तेली उसे तुतारी (बैल हाँकनेका डण्डा जजसके एक छोर पर लोहे की नुकीली कील लर्ी होती है) से हुदरर्य (कोंचता है) तब र्ह बैल फफर मसर हहलाते हुए चलने लर्ता है।

भाई! ससाांर कोल्हू है, अज्ञानी जीर् बैल है, इन्द्हें उपदेर् देने र्ाले जो भेदर्ादी र्ुरु घटांाल हैं, र्े तेली हैं, जीर् बैलों की आँखों में अज्ञान का टोपा बँिा है, पुण्य-पाप कम शरूप, नतल, अलसी, मूर्ांफली आहद नतलहन हैं, जजन्द्हें पेरकर तेल ननकाला जाता है, इनसे सुख-दुःख रूपी तेल, घल-घल, घल-घल ननकल रहा है। कत्ताश, भोक्ता का अहांकार िानी है। अब कर्ट के मारे बैल के खडे ेहोने ेका मतलब यह है फक यहद र्ह अज्ञानी जीर् कभी भूले-भटके फकसी सन्द्त-महात्मा के सत्सर्ां में चला जाता है और उनका उपदेर् सुनने लर्ता है और यह बात उनके भेदर्ादी र्ुरु घटांाल अर्ा उपदेर्क (तेली) जान लेता है, तब र्ह उसे र्ार्ी रूप तुतारी से कोंचता है, हुदरता है। र्ह उसे िमका कर कहता है अरे! तू कहाँचला र्या र्ा, तुझे ेज्ञान में अधिकार नहीं है, ज्ञान तो सन्द्यांयामसयों की चीज है, जब तक घर-द्र्ार छोडकर बाबा न बन जायर्ा, तब तक ज्ञान नहीांहो सकता। तुझसे पूजा-पाठ, करम-रिम सब छूट जायर्ा और तू नाजस्तक हो जायर्ा, फफर तुझे ेनरक में भी जर्ह नही ांममलेर्ी। इसमलए आज र्या तो र्या, खबरदार! अब भर्र्ष्य में र्हाँ कभी न जाना। इनके द्र्ारा ऐसा िमकाना ही हुदरना है, तब र्ह अज्ञानी जीर् बैल मसर हहलातेहुए पुनः उनके बताये मार् शपर चलनेलर्ता है। यही देर्ताओं के र्र्घ्न करने ेका तात्पय शहै।

अब आ जाओ प्रसर्ां पर बुद्धि को र्र्षय रूपी हर्ा ने बार्ली बना हदया, तब फफर उस बुझेहुए ज्ञान दीपक को दुबारा कौन जलार्े।

दोहा - िब फिरर जिी त्रबत्रबध त्रबचध पिाइ संसृतृि क्लेस ।
हरर माया अति दुसुिर, िरर ि जाइ त्रबहगेस || 118-क||

इस प्रकार ज्ञान दीपक के बुझ जाने पर फफर जीर् अनेकों प्रकार से ससांनृत अर्ात श ्जन्द्म-मरर्ाहद के क्लेर् पाता है, भाई ! भर्र्ान की माया अत्यन्द्त दुसुतर है, र्ह सहज ही में तरी नहीं जा सकती। बस ! ज्ञान दीपक का यहीं पर उपसहांार है।

अब प्रश्न होता है फक अहां ब्रह्माजस्म 'म'ैं ब्रह्म हूँ, यह ज्ञान सिान से प्राप्त फकया या अपनेआप? उत्तर होर्ा-सिान से। तब फफर सिान का फल ननत्य नहीं होता, र्ह अननत्य होता है। सिान से दीप जला र्ा। अतः, र्ह बुझेर्ा ही। अब र्ह कौन- सी ग्रधांर् है, जजसे बुद्धि हृदय देर् में ज्ञान के प्रकार् में खोलनेबैठती है? उत्तर सुनो-

आज के पहहले म ैंजीर् ऱ्ा, आज ब्रह्म हुआ। अर्र आज म ैंसिान से ब्रह्म हुआ हूँ तो कल फफर जीर् हो सकता हूँ। म ैंब्रह्म हूँ, इसमें 'म'ैं और 'ब्रह्म' ये दो की झलक जो है, उनमें 'म'ैं कौन और 'ब्रह्म' कौन? बस, यही ग्रांधर् है जजसे बुद्धि ज्ञान के प्रकार् में खोलने बैठती है। प्रश्न होता है, ई खोलने ऱ्ाली बुद्धि कौन-सी है? उत्तर है- फफर र्ही 'सुमनत कुदारी' अऱ्ात्श ्ब्रह्माकार रूपी बुद्धि है, जजससे खोजना है। यद्यर्प मानसकार ने उस ग्रधांर् का उल्लेख नही ांफकया है। जब ज्ञान हुआ तब म ैंब्रह्म हूँ, म ैंमुक्त हूँ, म ैंव्यापक हूँ, म ैंकूटस्र् हूँ, म ैंसिी हूँ आहद भार्ना की र्यी। प्रश्न है फकस पर? उत्तर है 'म'ैं पर। इसीमलए यह भार्नात्मक ज्ञान हुआ। पहहले 'म'ैं पर देह भार् ऱ्ा, फफर 'म'ैं पर जीर् भार् और अब 'म'ैं पर ब्रह्म भार् आया। ये तीनों भार् तीन र्ुर् हैं जो 'म'ैं पर आरोर्पत हैं। अब र्ेचार करना है फक जार्तृ अर्स्ऱ्ा में भले ही ब्रह्म भार् रहे, स्ऱ्प्न अर्स्ऱ्ा में भी मान लो ब्रह्म भार् रहे, परन्द्तु ऱ्ाढी नीदां, सुर्षुजप्त अर्स्ऱ्ा में इस भार् का सर्ऱ्ा अभार् हो जाता है, यहद ब्रह्म भार् सत्य होता तो सुर्षुजप्त अर्स्ऱ्ा में भी उसका अभार् नही ांहोता, क्योंफक सत्य त्रिकाला बाध्य होता है। इससे मसद् होता है फक जैसे देह भार् अननत्य, जीर् भार् अननत्य, उसी प्रकार यह ब्रह्म भार् भी अननत्य ही हुआ।

प्रश्न होता है फक जजस ज्ञान से अज्ञान का नार् होता है, ई ज्ञान सत्य है या असत्य? यहद, उस ज्ञान को सत्य कहो तो एक तो ब्रह्म सत्य और दूसूरा ई ज्ञान सत्य इस तरह दो सत्य हो र्ये तब सत्य तो एक ही है, सत्य दो नही ांहो सकते। इसमें र्ेदान्द्त का द्रैतापत्त्ति दोर्ष आता है। तब यह मसद् हुआ फक ई ज्ञान असत्य है।

अब फफर प्रश्न होता है फक असत्य से सत्य का ज्ञान कैसे होर्ा? जब यह ज्ञान असत्य है, तब उसके द्र्ारा जो ज्ञान हुआ ई भी असत्य ही है। तो इसका प्रमार् स्ऱ्प्न के र्ेरे को स्ऱ्प्न की र्ोली से मारे जानेका है। जैसे, फकसी ने स्ऱ्प्न में जर्ांल में कोई र्ेरे देखा तब उस स्ऱ्प्न के र्ेरे को ई जार्तृ अर्स्ऱ्ा की र्ोली से मारेर्ा अर्ऱ्ा स्ऱ्प्न अर्स्ऱ्ा की र्ोली से मारेर्ा? उत्तर होर्ा- स्ऱ्प्न अर्स्ऱ्ा की र्ोली से मारेर्ा। तब स्ऱ्प्न का र्ेरे असत्य और स्ऱ्प्न की र्ोली असत्य, इस तरह असत्य से असत्य का ननर्ारर् होता है। इसी तरह भार्नात्मक ज्ञान 'अहां ब्रह्मजस्म' म ैंब्रह्म हूँ भी असत्य और जजस ज्ञान से उसे जाना ई ज्ञान भी असत्य। तब जाना फकसको? फकसी को नही।ां क्या पाया? कुछ भी नही।ां जैसा पहहले ऱ्ा, र्ही अब हूँ, र्ैसा ही आर्े रहूँर्ा। न म ैंपहहले अज्ञानी ऱ्ा और अब ज्ञानी हुआ, न म ैंपहहले बद् ऱ्ा और अब मुक्त हुआ, न म ैंपहहले जीर् ऱ्ा और अब ब्रह्म हुआ। यही अर्र्द्या की ग्रधांर् है, जो खोली जाती है। जजस तरह पैर में काँटा ड जानेपर उसे दूसूरे काँटे से ननकाला जाता है और जब पैर का डर्ा हुआ काँटा ननकल जाता है, तब ईननकला हुआ काँटा और जजस काँटे से ई काँटा ननकाला र्या ई काँटा, ये दोनों काँटे सार्-सार् फेंक हदये जाते हैं, उसी प्रकार अनाहद काल से हृदय में अज्ञान रूपी काँटा डर्ा ऱ्ा, देह मानना, स्त्री, पुरुर्ष मानना, जीर् मानना आहद इस अज्ञान रूपी काँटे को 'अहांब्रह्माजस्म' रूपी काँटे से ननकाला जाता है और फफर दोनों काँटे सार्-सार् फेंक हदये जाते हैं।

म ैंब्रह्म हूँ, इसका प्रमाद होता है 'म'ैं हूँ, इसका प्रमाद नहीां होता। 'अहांब्रह्माजस्म' के ननकल जाने पर जो र्ेर्ष रह जाता है, र्ही र्ुद् तत्त्र् 'म'ैं हूँ जहाँ परम र्ाांत है।

यहद 'म'ै न होऊँ तो ब्रह्म की िरर्ा फकस पर करोर्े? जजतनी भी िरर्ाएँ हैं- देह िरर्ा, जीर् िरर्ा, ब्रह्म िरर्ा ये सब िरर्ाएँ 'म'ै पर ही फकया जाता है। सर् शिरर्ाओां के बिा हो जाने के बाद जो र्ेर्ष रह जाये र्ह 'म'ै आत्मा ही ननत्य हूँ, कालातीत हूँ, भर्ान हूँ, जो ननर्रशि सर् शमान्द्य मसद्गान्द्त है। 'म'ै हूँ, र्ह सर् शका अपना आप है, यहीांपर जीर् कृतकृत्य होता है।

'अहांब्रह्माजस्म' ज्ञान दीपक है, इसके मलए तो दीया चाहहये, घी चाहहये, तब यह जलता है, परन्द्तु'म'ै हूँ, इसके मलए भी क्या इन सब सामधग्रयों की आर्श्यकता पडती है? नहीां 'म'ै आत्मा तो परम प्रकार् हूँ, सहज प्रकार् हूँ, स्र्ाभार्क प्रकार् हूँ।

परम प्रकास रूप हदि रिी। िहीं ांकछु चहहअ हदआ घृ बिी ।
राम भगति चचन्द्ममिति सुन्द्दर । बसइ गऱ जाके उर अंरि ।।
गरल सुधासम अरर हहि होई। िहह मति त्रबिु सुख पिा ि कोई ।
राम भगति मति उर बस जाके । दुखु लिलेस ि सपिेहूँ िाके ।।
चिुर मसरोमति िइ जगमाहीं । जे मति लाचग सुजिि कराहीं।
सो मति जदवप प्रगट जग अहई। राम कृपा त्रबिु िहहं ांकोउ लहई ।।
सुगम उपाय पाइिकैरे । िर हि भाग्य देहहं ांभटभेरे ।
पिपा पिपि बेद पुरािा । राम कथा रचचराकर िािा ।।
ममी सज्जि सुमति कुदारी । ग्यिा त्रबराग ियि उरगारी ।
भिा सहहि खोजइ जो प्रािी। पिा भगति मति सब सुखखािी ।।
मोरें मि प्रभु अस त्रबस्र्ासा । राम िे ेअचधक राम कर दासा ।
राम मसंधुं धि सज्जि धीरा । चन्द्दि िर हरर सन्द्ि समीरा ॥
सब कर िल हरर भगति सुहाई। सो त्रबिु सन्द्ि ि काहूँ पाई ।
अस त्रबचारर जो कर सिसंगा। राम भगति िहह सुलभ त्रबहंगा ।।
दोहा- ब्रह्म पयोतिचध मन्द्दर ग्यिा सन्द्ि सुर आहहं ां।
कथा सुधा मचथ काढ़हहं ांभगति मधुरिा जाहहं ां।। 120 क।।
त्रबरति चम िअमस ग्यिा, मद लोभ मोह ररपु मारर ।
जय पाइअ सो हरर भगति, देखु खगेस विचारर ॥ 120 ख।।

भैय्या! भजक्त की ऐसी महहमा है। इसे चाहे भजक्त कह लो 'म'ै पद कह लो, आत्मा कह लो या भर्ान कह लो, सबका एक ही मतलब है। 'म'ै को मर् की उपमा दी र्यी 'म'ै आत्मा सर् शका ज्ञाता हूँ, ज्ञान को जानता हूँ, अज्ञान को जानता हूँ, सूक्ष्म को जानता हूँ, स्थूल को जानता हूँ, 'म'ै क्या नहीां जानता? बस, यही नारायर् पद है, भर्त पद है और यहीां पर पूर् शर्श्राजन्द्त है।

श्री मानसकार ने आत्म पद न कहकर भजक्त पद कहा है, क्योंफक जजस समय रामायर् की रचना हुई उस समय का देर्-काल र्ैसा ही र्ा। 'म'ें पद स्र्तां है इसके आिीन ज्ञान और र्ज्ञान है।

सो सर्तुं अिलंब न आना। तेहह आधीन ग्यान त्रबग्याना ।।

'म'ें ब्रह्म हूँ, ब्रह्म का आिार 'म'ें यह ज्ञान है। 'म'ें सर् शहूँ, सर् शका आिार 'म'ें, यह र्ज्ञान है। इस तरह ज्ञान और र्ज्ञान का 'म'ें ही आिार हुआ। 'म'ें यह भजक्त है।

भस्क्त सर्तुं सकल सुख खानी। त्रबनु सतसंग न पार्हहं प्रानी ।।

आत्म पद स्र्तां है, परन्द्तु त्रबना सतसर्ां के (सतों के सार् के) यह दुलभश है। यह तो सन्द्त र्र् से ही, सन्द्त समार्म से ही प्राप्त होता है। यद्यर्प 'म'ें हूँ, यह अनुभर् सबको है, परन्द्तु यह ज्ञान सबको कहाँ है फक 'यह अनुभर् सबको है।' क्या यह भी अनुभर् है फक यह ज्ञान सबको है? बस, इसी ज्ञान का सन्द्त महात्मा जन अनुभर् करातेहैं। भजक्त सब र्ुर्ों की खानन है, जो र्ुर् देखना चाहो, इसमें देख लो, 'म'ें को देह देख लो, स्त्री देख लो, पुरुर्ष देख लो, जीर् देख लो, ब्रह्म देख लो, पर्ु–पक्षी, कीट, पतर्ां, जो भी देख लो र्ह उसी रूप में हदखता है, क्योंफक म ैंआत्मा सर् शमें, सर् शरूप से, सर् शहोकर, सर् शका सब कुछ होकर उसमें जो हूँ, जो सकलर्ुर् खानी ही तो हुआ। इसीमलए तो इसे धचतांमर्ि की उपमा दी र्यी। धचतांमर्ि को जजस रूप में देखना चाहो, र्ह उसी रूप में हदखाई देता है। यह अनुभर्, अनुभर् होतेहुए भी, त्रबना सन्द्त र्र् के अनुभर् नहीं होता। दीपक के नीचे तो अंिेरा रहता है, परन्द्तु क्या सूय शके नीचे भी अंिेरा रहता है? नहीां। 'म'ें आत्मा सर् शका प्रकार्क हूँ, जार्तृ, स्र्प्न, सुर्षुजप्त, तीनों अर्स्र्ा और भूत, भर्ष्य, र्तमशान तीनों काल, सबको जानता हूँ, परन्द्तु 'म'ें सब कुछ जानता हूँ यह कहाँ जानता हूँ। परन्द्तु 'म'ें सबका अनुभर् करता हूँ, परन्द्तु 'म'ें सबका अनुभर् करता हूँ, यह कहाँ जानता हूँ। बस, इसी के मलए सन्द्त र्र् की जरूरत पडती है।

सन्द्त विशुद्ध ममलहहं परर तेही । चतर्हहं राम कृपा करर जेही ।

जजन सन्द्तों की कृपा से भजक्त धचन्द्तामर्ि प्राप्त होती है, र्े सन्द्त कब ममलते हैं? अरे। जब भर्र्ान की कृपा होती है, तब सन्द्त ममलते हैं और जब सन्द्त की कृपा होती है, तब भर्र्ान ममलतेहैं, एक पहलू के दो नाम चाहे सन्द्त कहो या भर्र्ान। नारद भजक्त सूत्र में मलखते हैं फक ऐसी जो भजक्त है, र्ह कब प्राप्त होती है? तो र्े कहते हैं फक -

महत्कृपयैर् भर्र्त्कृपालेशाद्वा।।38।।

अर्ाशत् महान पुरुषों की कृपा से और भर्र्ान की कृपा से यह भजक्त प्राप्त होती है। फफर कहते हैं फक महात्माओं का सर्ां और उनका ममलना तो बडा दुलभश है -

महत्संगस्तु दुलुभिोऽगम्योऽमोघश्च ||39||

अर्ात्ा ्जजन सन्द्तों की कृपा से यह भजक्त ममलती है, उनका ममलना तो बडा दुलुभश है, र्े ेकब ममलते हैं? तो र्े कहते हैं फक -

लभयिेऽवप ित्कृ पयिे ।।40।।

अर्ात्ा ्जब भर्ान की कृपा होती है, तब ऐसे सन्द्त ममलते हैं। जजन सन्द्त की कृपा से भर्ान ममलतेहैं, उन सन्द्त के प्रनत क्या भार् होना चाहहए? तो कहते ेहैं फक-

स्स्मंस्िज्जिेभेदा िभिा् ्।।41।।

उन सन्द्त में और भर्ान में भेद का अभार् है। रे! दोनों एक ही हैं। उन सतां के प्रनत हृदय में नारायर् भार् होना चाहहए, क्योंफक नर से तो कल्यार् नही ांहोता, कल्यार् तो नारायर् से ही होता है। उनके प्रनत भर्त भार्, नारायर् भार् आये त्रबना स्र्रूप भर्ान की प्राजप्त नही ांहो सकती। इसमलए यहद सािन करना ही है तो सन्द्त ममलने का सािन करो, सन्द्तों को सािो । सन्द्त सािन साध्य है, भर्ान कृपा साध्य है।

भगति िा अिुपम सुखमूला । ममलइ जो सन्द्ि होईं अिुकूला ।।

इसमलए भाई! सन्द्त ममले और अनुकूल हो जाय ेंतभी सर् शसुखों का मूल जो अनुपम भजक्त है, र्ह ममलती है।

प्रश्न होता है सन्द्तों की अनुकूलता क्या है? अरे ! उनके प्रनत नर भार् न होकर नारायर् भार् हो जाय,ें र्े नारायर् के रूप में हदखने लर्ें तो समझ लो फक सन्द्त अनुकूल हो र्ये। यही सन्द्त की अनुकूलता है।

म ैंिो उि सन्द्िों का दास, स्जन्द्होंिेमि मार मलया।
मि मारा, िि िश में कीन्द्हा, भरम भयो सब दूरू ॥
बाहर से कछु दीखे िाहीं, अन्द्दर बरसिूर ।
स्जन्द्होंिे मार मि मलया
आपा माररर जगि से बैठे, िहीं फकसी से काम ।
उिमें िो कछु अंिरि िाहीं, सन्द्ि कहो चाहे राम ।।
स्जन्द्होंिे मि मार मलया ।।2।।
रिमसंहं जी के सद्गुर स्िामी, िह रस हदया वपलाय ।
एक बूंद सागर में ममल गयो, क्या करेगा यमराज ।।
स्जन्द्होंिे मि मार मलया ।।3।।

म ैंिो उि सन्दर्ी का दास, स्जन्दहोंनि मि मार मलया ।।

बस! यहींपर " ज्ञान भजक्त ननरूपर्' प्रसर्ां का उपसहाांर है।

7. भर्र्ान कांर और माता पार्तशी सम्र्ाद

अब अनांतम प्रसर्ां है भर्र्ान कांर और माता पार्तशी सम्र्ाद भर्र्ान कांर के श्रीमुख द्र्ारा, माता पार्तशी जब समरत रामायर् सुन चुकी, ां तब ह ईं र्नम्र भार् से भर्र्ान कांर से कहती हैं -

प्रसर्ां है र्ोरखपुरी रामायर् उत्तरकाण्ड रामायर् दोहा नां. 52 (क)

दोहा- िुम्हरी कृपाँकृपायिि अब कृिकृत्य ि मोह ।
जािेउँ राम प्रिाप प्रभु चचदािन्द सन्दोह ।।52-क।।
िाथ िर्िािि समस सि कथा सुधा रघुबीर ।
श्रि पुटस्न्दह मि पािकरर िहीं ंअघाि मतिधीर 1152-ख।।

माता जी कहती हैं- हे कृपा सार्! आपकी कृपा से अब म ैंभर्र्ान राम का जो र्ास्तर्र्क स्रूप है, उसे समझ र्ी और उनके प्रताप और महहमा को जान र्ी। हे नार्! आपके चन्द्रमा रूपी मुख कमल से, जो कर्ामृत ननकल रहा है उसे म ैंअपने दोनों कानों से पी रही हूँ, परन्द्तु तृजृप्त नहीांहो रही है, अभी उसकी प्यास बनी हुई है, क्योंफक

राम चररि जे सुिि अघाहीं। रस त्रबसेष जािा तिन्दह िाहीं।
जीर्िमुक्ि महामुति जेऊ । हरर गुि सुिहहं ंतिरंिर िेऊ ॥

यहद कोई कहता है फक राम कर्ा सुनकर म ैंअब तृपूत हो र्ी तो समझ लो फक उसनेअभी कर्ा के महत्र् और भर्र्ान ईंश्र्ात्मा की महहमा को नही ांजाना, जो जीर्न मुक्त महामुनन हैं र्े भी ननरन्द्तर भर्र्ान के र्ुर् और महहमा को सुनते ेहुए कभी तृपूत नही ांहोते, क्योंफक "हरर अनन्द्त, हरर कर्ा अनन्द्ता" जब हरर और उनकी कर्ा दोनों अनन्द्त हैं, तब तृजृप्त कैसी?

जेहह महुँ आहद मध्य अिसािा । प्रभु प्रति पाद्य राम भगिािा ।।

स्र्तुतः, राम कर्ा तो र्ही है, जजसके आहद, अन्द्त और मध्य में भर्र्ान श्रीराम र्ं्श्र्ात्मा का जो चराचर के अजस्तत्र् हैं उनकी और उनके चररर की व्याख्या हो, नहींतो र्ह राम कर्ा नहीं, केर्ल फकस्सा कहानी है।

भि सागर चह पार जो पािा । राम कथा ता कहँ दृढ़ नािा ।
विषइन्द्ह कहँ पुनि हरर गुि ग्रामा। श्रिि सुखद अरु मि अमभरामा ।।

जो ससांर सार्र से तरना चाहते हैं, उसके मलए भर्र्ान श्रीराम की कर्ा नौका के समान है। भर्र्ान का र्ुर् समूह तो र्र्षयी लोर्ों के मलए भी कानों को सुख देने र्ाले और मन को आनन्द्द देनेर्ाले हैं।

श्रििंत अस को जग माहीं । जाहह न रघुपति चररत सोहाहीं।

ते जड जीर् ननजात्मक घाती। जजन्द्हहह न रघुपनत कर्ा सोहाती ।। जजसको भर्र्ान की कर्ा अच्छी नहीं लर्ती, उसे आत्मघाती कहते हैं। प्रश्न होता है फक आत्मा तो अजर, अमर, ननत्य है, तब इसका घात कैसे फकया जा सकता है? इसका उत्तर है-देखो, मानसकार कहते हैं फक -

नर तनु भि बाररचध कहुँ बेरो। सन्द्मुख मरुत अनुग्रह मेरो ।
करनधार सद्गुरदृढ़ नािा । दुलुभि साज सुलभ करर पािा ।।
दोहा- जो न तरै भि सागर, नर समाज अस पाइ ।
सो कृत तनंदक मंदमति, आत्माहि गति जाइ ॥

(उ.कां. दो. 44)

देखो, नदी पार करने के मलए इतनी सामग्री की जरूरत होती है केंर्ट, नार्, अनुकूल र्ायु और पतर्ार। सद्गुरु जो है र्ह केंर्ट है। मनुष्य र्रीर यह नार् है। भर्र्ान की कृपा जजसके कारर् मानर् र्रीर ममला यही अनुकूल र्ायु है तर्ा श्रद्धा और र्ं्श्र्ास यही पतर्ार है। इस तरह इन सामधग्रयों को पाकर भी जो भर्सार्र नही ां तरता, र्ह आत्मघाती अर्ाशत् आत्म हत्यारा है।

ते जड़ जीि तिजात्मक घाती। स्जन्द्हहह न रघुपति कथा सोहाती ॥

मानसकार ने जीर् को यहाँपर जड कहा, इससे मालूम होता है फक चेतन जीर् भी होता है, तो भाई! जजसने अपने आपको ससांारी जीर् माना है र्ह जड जीर् है और जजसने अपनेआपको आत्मा अनुभर् फकया है र्ह चेतन जीर् है।

हरर चररत मािस तुम्ह गािा । सुनि मैं िाथ अममति सुख पािा ।
तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई । कागभुसुंडी गरुड़ प्रति गाई ॥

दोहा- त्रबरति ग्यिा त्रबग्यिा दृढ़ राम चरि अति िह ।

बायस िि रघुपति भगति मोहह परम संदेह ||52||

माता जी र्ि्नयपूर्कश पूछती हैं फक हे नार्! आपनेश्रीराम चररत मानस का र्ान फकया, उसे सुनकर म ैं अपार सुखी हुई। आपनेजो कहा फक यह सुन्द्र कर्ा कार्भुसुण्डी जी ने र्रुड जी से कही र्ी, सो कौए का र्रीर पाकर भी कार्भुसुण्डी र्ैराग्य, ज्ञान और र्ज्ञान में दृढ़ हैं और उनका श्रीराम जी के चरर्ों में अत्यन्द्त प्ेरम है, फफर उन्द्हें श्रीराम 'रघुनार्' जी की भजक्त भी प्राप्त है, इस बात का मुझेपरम सदोंह हो रहा है, क्योंफक हे नार्!

रि सहस्ि महें सुिहु पुरारी । कोउ एक होइ धम िब्रिधारी ।
धमसीील कोहटक महें कोई । त्रबषय त्रबमुख त्रबराग रि होई ।।
कोहट त्रबरक्ि मध्य श्रुति कहई। सम्यक ग्यिा सकृि कोउ लहई।
ग्यिांि कोहटक महें कोऊ । ििजीमुक्ि सकृि जग सोऊ ॥
तिन्द्ह सहस्ि महुँ सब सुख खािी । दुलुभि ब्रह्म लिी त्रबज्ञािी ।
धमसीील त्रबरक्ि अर ग्यिी । ििजीमुक्ि ब्रह्मपर प्रािी ।।
सब िे सो दुलुभि सुरराया। राम भगति रि गि मद माया ।
सो हररभगति काग फकमम पाई। त्रबस्िाथि मोहह कहहु बुझाई ॥
राम परायि ग्यिा रि गुिागार मति धीर ।
िाथि कहहु कारि, पायउ काक सरीर ।।54।।

हजारों मनुष्यों में कोई एक िमात्शमा होता है। इन करोडों िमात्शमाओां में कोई एक र्ैराग्यर्ान होता है, जो मि शकरे उसे िमात्शमा कहतेहैं। जजस काय शके करने में लज्जा और भय न हो र्ह कम श'िम'श कहलाता है और जजस कम शके करनेमें हृदय में लज्जा और भय हो र्ही 'अिम'श है। िम शकरनेसे हृदय र्ुद्ि होता है और र्ुद्ि अन्द्तःकरर् में ही र्ैराग्य उत्पन्द्न होता है और र्ैराग्यर्ान को ही भर्ान को जानने की जजज्ञासा पैदा होती है। ऐसे करोडों र्क्तों में से कोई एक भर्ान को सम्यक प्रकार से जानता है। जीर् भी अपनेआप को जानता है, परन्द्तु र्ह 'म'ैं अमुक हूँ ऐसा जानता है, यह जानना केर्ल जानना है, यह सम्यक् प्रकार से जानना नही ांहै। भर्ान श्री कृष्र् र्ीता में कहतेहैं फक -

िाहं प्रकाशाः सिस्यि योगमायासमािृाः ।
मूढ़ोऽयं ि िामभजिाािि लोकोमामजमव्ययम् ।।7/25।।

योर् माया करके 'म'ैं आत्मा ढँका हुआ हूँ, इसमलए सब मुझे ेनहीांजान पाते। दो के जोड को योर् कहते हैं, जड और चेतन दोनों के मेल को योर् कहतेहैं। 'म ैंजीर् हूँ', इसमें 'म'ैं हुआ चेतन और जीर् हुआ जड, इन दोनों के मेल को योर् कहते हैं। म ैंजीर् हूँ, इसमें 'म'ैं हुआ चेतन और 'जीर्' हुआ जड इन दोनों का जोड है, 'म ैंजीर् हूँ' यह

हुआ योर् और मानने का नाम माया है। योर् और माया दोनों ममलकर हो र्या 'योर् माया' इसी में 'म'ै आत्मा ढका हुआ हूँ, इसीमलए सब मुझे े जान नहीं पाते। जानते तो हैं म ैस्त्री हूँ, म ैपुरुर्ष हूँ, म ैजीर् हूँ, म ैअमूक हूँ आहद, परन्द्तु यह सम्यक् प्रकार से जानना नहीींहै 'म'ै का 'म'ै ही हूँ, इस प्रकार का जानना ही सम्यक् प्रकार से जानना है।

प्रश्न होता है फक ढक्कन कैसे उघारा जाये और कौन उघारेर्ा? उत्तर है- अरे! जब दूसूरा कोई ढक्कन लर्ाया हो तो दूसूरा उघारे और जब स्र्यांही ढक्कन लर्ाया है तब स्र्यां ही उघारेर्ा। सन्द्त महात्मा जन तो केर्ल उपदेर् देते हैं, जब अपनेआपको जाना, अनुभर् फकया तो यही तो ढक्कन का उघरना है। श्रुनत कहती है फक करोडों र्रक्तों में कोई एक सम्यक प्रकार से मुझेजानता है, ऐसे करोडों ज्ञाननयों में से कोई एक जीर्न मुक्त होता है अर्ात्श ्जीते जी मुक्त होता है। ऐसे हजारों जीर्न मुक्तों में भी सब सुखों की खानन ब्रह्म में लीन, र्ज्ञानर्ान पुरुर्ष और भी दुलुभश हैं। िमाशत्मा, र्रैाग्यर्ान, ज्ञानी, जीर्नमुक्त और ब्रह्मलीन इन सबमें भी माताजी कहती हैं फक हे नार्! ई प्रार्ी अत्यतां दुलुभश है, जजसके मद और माया नष्ट हो र्ये हों और जो राम भजक्त में रत हों। हे प्रभु! ऐसी दुलुभश हरर भजक्त को कौआ कैसे पा र्या? मुझेइसका रहस्य समझाकर कहहये, यह जानने की मेरी बडी जजज्ञासा है।

सबि सो दुलुभि सुरराया। राम भगति रि गि मद माया ।।

सबसे परे की ई कौन-सी भजक्त है, जजसे पाकर मद और माया, दोनों र्त अर्ात्श ्नष्ट हो जाते हैं। भाई ! उस भजक्त का स्र्रूप सुनो-

मान्द्यता का नाम माया है। मान्द्यतामभमान का नाम मद और अनुभूनत का नाम रत् ्है। तीनों के आिार का नाम भजक्त है।

लकडी को डण्डा मान लेना मान्द्यता (माया) और डण्डा म ैहूँ समझना मद अर्ात्श ्अमभमान और लकडी की अनुभूनत होना अर्ात्श ्अपनेआप डण्डे े का लकडी अनुभर् करना यह हुआ रत और तीनों का आिार जो लकडी है यह हुआ भजक्त।

जो भी र्रकल्प फकया जाता है उसका कोई न कोई आिार होता है। इसी प्रकार यहद आत्मा न हो तो देह, इजन्द्रय, मन, बुद्धि, धचत्त, अहांकार इन सबका र्रकल्प फकस पर होर्ा? सोनेपर आभूर्षर् का, ममट्टी पर घडे े का, सूत पर र्स्त्र का और लकडी पर डण्डे े का र्रकल्प हुआ। इन र्रकल्पों को ढूँढने े चलो तो र्रकल्प ममलतेनही ांकेर्ल आिार ही हार् लर्ता है। इसी प्रकार मुझ भर्र्ान आत्मा पर सारे चराचर का र्रकल्प है। जैसे, लकडी को माना डण्डा, इसी प्रकार मुझ आत्मा को माना ससाांर, मन, बुद्धि, धचत्त, अहांकार आहद। अपने'म'ै को माना देह यह हुआ मान्द्यता अर्ाशत् ्माया और देह मानकर फफर समझा फक में देह हूँ यह हुआ अमभमान और जब अपने'म'ै को जाना फक 'म'ै आत्मा हूँ तो यह हुआ रत और इसमें ननष्ठा हो जाना यही भजक्त है।

माता पार्तशी पूछती है फक हे प्रभु! ऐसे श्रीराम परायर्, ज्ञान ननरत दुर् ाम और ीर बुद्धि भुसुण्डी जी ने कौए का र्रीर फकस कारर् पाया और आपनेइसे फकस प्रकार सुना, यह सब जानने का मुझे ेबडा कौतूहल हो रहा है। कृपाकर मुझे ेयह सब सुनाइये।

गऱ महाग्यािी गिु रासी । हरर सेिक अति तिकट तििासी ।
तेहिं ंकेहह हेिु काग सि जाई। सुिी कथा मुति तिकर त्रबहाई ।।
कहहु तिि त्रबचध भा संबादा। दोउ हररभगि काग उरगादा ।
गौरर चगरा सुति सरल सुहाई। बोले मसि सादर सुख पाई ।।

हे नार्! र्रुड जी तो महान ज्ञानी, सद्गुर्ों की रामर्, भर्र्ान के सेर्क और उनके अत्यतां ननकट रहने र्ाले, उनके र्ाहन ही हैं। उन्द्होंने मुननयों के समूह को छोडकर कौए के पास जाकर रामकर्ा फकस कारर् सुनी और फफर इन दोनों हरर भक्तों का फकस तरह सत्सर्ां हुआ, सो कहहये।

पार्तशी जी की सुन्द्दर और सरल र्ार्ी को सुनकर भर्र्ान र्कंर बडे ेप्रसन्द्न हुए और र्े ेआदर के सार् बोले -

धन्द्य सिी पािि मति ोरी । रघुपति चरि प्रीति िहहं ंथोरी ।
सुिहु परम पुिीि इतिहासा । जो सुति सकल लोक भ्रम ािसा ।।
उपजइ राम चरि त्रबस्िासा । भि तिचध िर िर त्रबिहहं ंप्रयासा ।

हे सती! तुम न्द्य हो, तुम्हारी बुद्धि अत्यतां पर्र् है, श्री रघुनार् जी के चरर्ों में तुम्हारा प्रर्ाढ़ प्ेरम है। अब तुम उस परम पर्र् इनतहास को सुनो, जजसके सुनने ेसे सारे लोक के भ्रम का नार् हो जाता है तर्ा श्रीराम के चरर्ों में र्श्र्ास उत्पन्द्न होता है और मनुष्य त्रबना ही पररश्रम ससांार रूपी समुर से तर जाता है।

दोहा- ऐमसअ प्रस्ि त्रबहंग पति कीस्न्द्ह काग सि जाइ ।
सो अब सादर कहहहउूँ सुिहु उमा मि लाइ ||55||

पक्षिराज र्रुड ने भी कार्भुसुण्डी से जाकर ऐसे ही प्रश्न फकया र्ा। हे उमा ! म ैंर्ह सब कर्ा आदर सहहत कहूूँर्ा, तुम मन लर्ाकर सुनो -
पूर् शजन्द्म में जब तुम सती के रूप में र्ी, तब तुम्हारे र्पता दि ने हमारा अपमान फकया। उस अपमान को तुम न सह सकीां और यज्ञ में जाकर तुम जल मरी, तुम्हारे र्र्योर् के दु ुख से म ैंव्याकुल हो इिर-उिर घूमने ेलर्ा। घूमते-घूमते म ैंभुसुण्डी के आश्रम में र्या, र्हाँननत्य हरर कर्ा होती है और दूरू-दूरू से बडे–बडे ेअनेक पिी उस कर्ा में सजम्ममलत होते हैं। म ैंभी हांस का रूप िारर् कर र्हाँर्ा, क्योंफक पक्षियों में पिी रूप में ही र्ाममल होना

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 310 उधचत र्ा। हाँ म ैंबहुत हदनों तक सत्सर्ां में रहा और उनके द्वारा भर्ान राम के पर्ि चररि

और महहमा को

सुनकर फफर कैलार् लौट आया।

हे धर्रज़ा! अब ह कर्ा सुनो, जजस कारर् से र्रुड जी कार्भुसुण्डी के पास र्ये र्े।

जब रघिुाथ कीस्न्द्ह रि क्रीा़। समुझि चररि होति मोहहं ंब्रीा़।

इन्द्रजिी कर आपु बूँधायो। िब िारद मुति गऱ पठायो ।

बन्न्द्धि काहट गयो उरगादा। उपजा हृदयूँ प्रचण्ड त्रबषादा ।

प्रभु बंधि समुझि बहु भिाँति । करि त्रबचार उरग आरिी ॥

व्यापक ब्रह्म त्रबरज बागीसा । माया मोह पार परमीसा ।

सो अिार सिुेऊँ जग माही। देखेउूँ सो प्रभाि कछु िाहीं॥

दोहा - भि बंधि िे छूटहहं ंिर जवप जाकर िाम ।

खब िितिसाचर बाधूँेउ िाग पास सोइ राम ।।58।।

जब रघुनार् जी ने ररर्ीडा फकया (र्ास्तर्क िीडा नहीं) ह यह फक जब राम-रार्र् का युद्ि हो रहा र्ा, उस लीला को याद करके अभी भी लज्जा आती है। भर्ान राम इन्द्रजीत मेघनार् के हार् से नार्फाँस में आप बिां र्ये। उन्द्हें बााँि नहीर्ा, र्े स्र्यांबिां र्ये, अपनेआप बिांाए, फफर क्या र्ा, कोलाहल मच र्या फक भर्ान को इन्द्रजीत ने बाांि मलया, तब नारद ने र्रुड को बन्द्िन काटनेके मलए भेजा, क्योंफक र्रुड उरर्ारर हैं, सपों के र्रु हैं। सपों के भिक र्रुड जी ने बन्द्िन को िर् मि में काट हदया तब उनके हृदय में बहुत प्रकार से र्र्षाद और र्र्चार उत्पन्द्न हुए। र्े सोचनेलर्े फक जो व्यापक ब्रह्म हैं, सर् शका सर् शहैं, र्र्ज हैं अर्ा्त श ्जजनका र्ीर रज र्ीय शसे पैदा नही ांहुआ और जो माया, मोह से परे ब्रह्म परमेश्र्र हैं, जर्त् ्में उन्द्ही ांका अर्तार हुआ है ऐसा मनैं सुना र्ा, परन्द्तु देखा कुछ और ही। यहद, म ैंअभी नही ांआता तो र्े अभी बन्द्िन में ही पडे ेरहते। जजनका नाम जपकर मनुष्य ससाांर के बन्द्िन से छूट जाते हैं, उन्द्हीां राम को एक तुच्छ रािस ने नार्फाँस में बााँि मलया उनमें कुछ प्रताप न रहा, कैसा आश्चय शहै, क्या ये र्ही राम हैं? बस, र्रुड बाबा चक्कर में पड र्ये और चकनाचूर हो र्ये।

भैय्या! अधिष्ठान में भ्रम हो जाना महान दुःख का कारर् होता है। भर्ान र्कांर कहते ेहैं- हे पार्तशी! र्रुड को उसी प्रकार का भ्रम हुआ, जजस प्रकार तुमको हुआ र्ा।

िािा भाूँति मिहहं ंसमुझिाा । प्रगट ि ग्यिा हृदय भ्रम छिाा ।

खेद झखन्द्ि मि िकि बढ़ाई । भयउ मोहबस िुम्हररहहं ंिाई ।।

ब्याकुल गयउ दिेररवष पाहीं। कहेमस जो संसय तिज मि माहीं।

सुति िारदहह लाचग अति दाया । सिुखग प्रबल राम के माया ।।

र्रुड ने अनेक प्रकार से अपनेमन को समझाया पर उन्द्हें र्ाांत न ममली, तब र्े व्याकुल होकर देर्र्ष श नारद के पास र्ये और अपनी सब व्यर्ा उन्द्हें सुनायी। उसे सुनकर नारदजी को दया आ र्यी। उन्द्होंने कहा- हे र्रुड जी! भर्र्ान राम की माया बडी ही बलर्ती है।

जो ग्यातिन्द्ह कर चचि अपहरई। बररआई त्रबमोह मि करई ।
जेहहं ांबहु बार िचाि मोही । सोइ ब्यापी त्रबहंगपति िोही ।।
महामोह उपजा उर िोरें। ममहटहह ि बेचग कहें खग मोरें ।
चिुरािि पहहं ांजाहु खगेसा । सोइ करेहु जेहह होइ तिदेसा ।।

जो ज्ञाननयों के धचत्त को हरर् कर लेती है और उन्द्हें भ्रम में डाल देती है। हे भाई! इस माया ने मुझको भी अनेक बार नचाया है। आपके हृदय में महा मोह उत्पन्द्न हो र्या है यह मेरे समझाने से तुरन्द्त नही ांममटेर्ा। इसमलए हे भाई! आप ब्रह्माजी के पास जाइये और र्े जैसा कहें र्ैसा ही कीजजये।

दोहा- अस कहह चले देररवष करि राम गुि गाि ।
हरर माया बल बरिि पुति पुति परम सुजाि ।।59।।

ऐसा कह नारद जी तुरन्द्त र्हााँ से चल पडे, े र्े डर र्ये फक देखने की अपेिा सुनने सेे अधिक भ्रम पैदा होता है, यह संिामक रोर् है। अत, इससे र्े बचना चाहते र्े, क्योंफक र्े भोर् चुके र्े।

िब खगपति त्रबरंचच पहहं ांगयऊ। तिज संदेह सुिावि भयऊ ।
सुति त्रबरंचच रामहह मसर िावा। समुझझ प्रिाप प्रेम अति छावा ।।
मि महुाँ करइ त्रबचार त्रबधािा । मायाबस कत्रब कोत्रबद ग्यािा ।
हरर माया कर अममति प्रभािा। त्रबपुल बार जेहह मोहह िचािा ।।

यह पक्षिराज र्रुडजी ब्रह्माजी के पास र्ये और अपनी सारी कर्ा उन्द्हें कह सुनायी, जजसे सुनकर ब्रह्माजी सोचनेलर्े फक अरे! कर्र्, कोर्र्द और ज्ञानी सभी माया के र्र् में हैं। भर्र्ान की माया का प्रभार् अपार है, जजसने मुझ तक को अनेकों बार नचाया है।

अग जगमय जग मम उपराजा । िहह आचरज मोह खगराजा ।
िब बोले त्रबचध चगरा सुहाई। जाि महेस राम प्रभुिाई ॥
बैिेय संकर पहहं ांजाहू । िाि अिि पूछहु जति काहू ।
िहँ होइहह िव संसय हािी । चलेउ त्रबहंग सुिि त्रबचध बािी ।।

ब्रह्मा सोचनेलर्े फक यह सारा जर्त् ्मेरा रचा हुआ है, जब म ैंही मायार्र् नाचनेलर्ता हूँ, तब औरों को मोह होना कोई आश्चय शकी बात नही, ां ऐसा सोच र्े र्रुड जी से प्रेम से बोले फक हे तात! भर्र्ान कांर, श्रीराम की

राम दर्नश-महर्षी मुक्त 312 महहमा को भली- भाँनत जानते हैं तुम उनके पास जाओ, परन्द्तु भाई! एक बात ध्यान में रखना, ई यह फक उनसे

केर्ल अपने काम की ही बात कहना, अन्द्य कुछ नहीं कहना, नहीं तो अकडबम्ब बाबा हैं, कुछ का कुछ हो जाना सभांर् है। ब्रह्माजी के इस र्चन को सुनकर फक हीींतुम्हारी सब र्कांएँ दूरू होंर्ी, रुंडजी भर्र्ान र्कांर के पास चल पडे।े

भर्र्ान र्कांर कहने ेलर्े फक हे पार्तशी! तब बडी आकुलता से, आतुरतार्ं, रुंड मेरे पास आये। उस समय म ैंकुबेर के घर ननमिांर् में जा रहा र्ा और तुम कैलार् में र्ी।

दोहा- परमिुार त्रबहंगपति, आयेउ िब मों पास ।
जिा रहेउूँ कुबेर गृह, रहहहु उमा कैलास !160||

रुंड ने आकर आदरपूर्कश मेरे चरर्ों में मसर नर्ाया और मुझको अपना सदेंह सुनाया। उनकी र्नती और कोमल र्ार्ी को सुनकर मनैं ेपे्रेम सहहत उनसे कहा फक-

ममलेहु गऱ मारग महूँ मोही। किि भातूँ समझिाौं िोही ।
बिहहं ेहोइ सब संसय भंगा। जब बहु काल कररअ सिसंगा ।।॥

हे भाई! अभी म ैंकुबेर के यहाँ जा रहा हूँ और तुम मुझेरास्ते में ममले हो, राह चलते म ैंतुम्हें फकस तरह समझाऊँ, सब र्कांओां का तो तभी नार् होर्ा जब बहुत समय तक सत्सर्ां फकया जाये।

सुतिअ िहाूँहरर कथा सुहाई। िािा भातूँ मुतिन्दह जो गाई ।
जेहह महुूँ आहद मध्य अिसािा । प्रभु प्रतिपाद्य राम भगिािा ।।
तिि हरर कथा हिो जहें भाई। पठिूँ िहाूँ सुिहु िुम्ह जाई ।
जाइहह सुिि सकल संदेहा । राम चरि होइहह अति िेहा ।।

उस सत्सर्ां में सुन्द्दर हरर कर्ा सुनी जाये जजसे मुननयों ने अनेकों प्रकार से र्ाया है। राम कर्ा उसी को कहते हैं, जजसके आहद, अन्द्त और मध्य में राम की ही व्याख्या हो। हे भाई! जहाँ प्रनतहदन हरर कर्ा होती है म ैं तुमको हीीं भेजता हूँ। तुम हाँजाकर उसे सुनो और उसे सुनते ेही तुम्हारा सब सदेंह दूरू हो जायेर्ा और भर्र्ान के चरर्ों में तुम्हारा अत्यन्द्त पे्रेम होर्ा। देखो - यहाँ ॅपर भर्र्ान र्कांर ने रुंड को कोई सिान नही ांबताया फक जाओ, योर्ाभ्यास करो, उल्टा-सिाी टांर्ो, एक पैर से खडे ेरहो आहद। उन्द्होंनेकेर्ल सन्द्त महान पुरुर्षों के सत्सर्ां को ही सिान बताया, जजससे भ्रम और मोह का ननर्ारर् होता है।

दोहा- त्रबिु सिसंग ि हरर कथा िेहह त्रबिु मोह ि भाग।
मोह गएूँ त्रबिु राम पद होइ ि दृढ़ अिुराग ||61||

त्रबना सत्सर्ां के हरर कर्ा सुनने ेको नहीां ममलती और त्रबना हरर कर्ा के सुने ेमोह का नार् नहीांहोता और त्रबना मोह के नार् हुए भर्ान श्रीराम के चरर्ों में दृढ़ प्ेरेम नही ांहोता।

भर्ान कांर कहते हैं फक हे उमा! मनैं ेरुड से, कार्भुरुण्डी के आश्रम और उसकी महहमा का र्ान फकया और उन्द्हें उनके पास ही भेजा, क्योंफक दोनों पिी जानत के ही रे्। अतः एक-दूसूरे के दोनों अनुकूल रे्। हे भर्ानी! प्रभुकी माया बडी ही बलर्ती है, ऐसा कौन ज्ञानी है, जजसे र्ह न मोह ले। मनैं कार् भुरुण्डी के सबांिमें रुड से कहा -

ममलहहं ंिि रघुपति त्रबिु अिुरागा। फकएूँ जोग िप ग्यिा त्रबरागा ।
उत्तर हदमस सुन्दर चगरर िीला। िहूँ रह कागभुसुंडी सुसीला ॥
राम भगति पथ परम प्रबीिा । ग्यािी गिु गृह बहु कालीिा ।
राम कथा सो कहइ तिरन्द्िर । सादर सुिहहं ंत्रबत्रबध त्रबहंगबर ।।
जाइ सुिहु िहैं हरर गिु भूरी । होइहह मोह जतिि दुखु दूरी ।
म ैंजब िहह सब कहा बुझाई। चलेउ हरझण मम पद मसर िाई ।।
िाि ेउमा ि म ैंसमुझािा । रघुपति कृपाूँमरमु म ैंपािा ।
होइहह कीन्द्ह कबहुँ अमभमािा । सो खोिै चह कृपातिधािा ।।
कछु िहह ि पुति म ैंिहहं ंराखा । समुझइ खग खगही के भाषा ।
प्रभु माया बलिंि भिािी। जाहह ि मोह कि अस ग्यािी ॥
दोहा- ग्यािी भगि मसरोमति त्रिभुिपति कर जाि।
िाहह मोह माया िर पािर करहहं ंगुमाि 1162 क।।

जो रुड ज्ञाननयों और भक्तों में मर्ोमर् हैं और जो स्र्यां त्रिभुर्न पनत भर्ान के र्ाहन हैं, उन रुड को भी जब माया ने मोह मलया तब फफर नीच मनुष्य कैसे मूखतशार् अमभमान करते हैं।

दोहा- मसि त्रबरंचच कहुँ मोहइ को है बपुरा आि ।
अस स्जय ेंजाति भजहहं ंमुति माया पति भिाि ।।62 ख।।

यह माया जब मर्जी और ब्रह्मा जी को भी मोह लेती है, तब अन्द्य बेचारों की क्या धर्नती? ऐसा मन में र्ेचार कर मुनन जन भर्ान का ननरन्द्तर भजन करते रहतेहैं। मर्जी कहते ेहैं फक हे धर्रजा ! मेरे इस सुझार् को मानकर रुड, कार्भुरुण्डी के आश्रम में र्े और हाँजाकर उसनेबहुत हदनों तक सत्सर्ां फकया, जजससे उसके र्ोक और मोह का नार् हुआ और फफर उन्द्हें र्ानांत ममली।

दोहा- चगररजा संि समागम सम ि लाभ कछु आि ।
त्रबिु हरर कृपा ि होइ सो गािहहं ंिेद पुराि ।। 125 ख।।

हे धर्ररजा! सन्द्त समार्म के समान र्ई्श्र् में दूसूरा कोई लाभ नही,ां परन्द्तु ई सन्द्त समार्म त्रबना हरर की कृपा के हो नही ांसकता, ऐसा रे्द और पुरान र्ाते हैं।

कहेउूँ परम पिुी इतिहासा। सिु श्रि छूटहहं ंभि पासा।
प्रि कल्पिर करि पुंजा। उपजइ प्रीति राम पद कंजा॥
मि क्रम बचि जनिि अघ जाई। सिुहहं ंजे कथा श्रि मि लाई।
िथािटि साधि समुदाई। जोग त्रबराग ग्यिा तिपुाई।
िाि कम िधम िब्रि दिा। संजम दम जप िप मख िा॥
भिू दया द्विज गुर सेिकाई। त्रबद्या त्रबिय त्रबबेक बड़ाई।
जहूँ लचग साधि बेद बखिाी। सब कर िल हरर भगति भिाी।
सो रघिुाथ भगति श्रुति गाई। राम कृपा काहूूँ एक पाई॥

हे भर्ानी! रे्दों ने जहाँ ँतक सिान बताया है, उन सबका फल, श्री हरर की भजक्त ही है, फकन्द्तुश्रुनतयों में र्ायी हुई ई श्रीराम जी की भजक्त राम की ही कृपा से, कोई एक त्रबरला ही पाता है।

मुति दुलुभि हरर भगति िर पािहहं ंत्रबिहहं ंप्रयास।
जेयह कथा तिरंिर सिुहहं ंमाति त्रबस्िासि ।।62-क।।

जो मनुष्य र्ई्श्र्ासपूर्कश ननरन्द्तर यह कर्ा सुनते ेहैं, रे् त्रबना ही पररश्रम उस मुनन दुलुभश हरर भजक्त को प्राप्त कर लेते हैं।

सोइ सबग्यि गिुी सोई ग्यिाा। सोइ महह मंडडि पंडडि दिाा।
धम िपरायि सोइ कुल िाा। राम चरि जाकर मि रिाा।।
िीति तिपिु सोइ परम सयिाा। श्रुति मसद्धान्द्ि िीक िेहहं ंजिाा।
सोइ कत्रब कोत्रबद सोइ रिधीरा। जो छल छाूँड़ भजइ रघुबीरा।।
धन्द्य देस सो जहूँ सुरसरी। धन्द्य िारर पतिब्रि अिुसरी।
धन्द्य सो भूपु िीति जो करई। घन्द्य सो द्विज तिज धम ि टरई॥
सो धि धन्द्य प्रथम गति जाकी। धन्द्य पुन्द्य रि मति सोइ पाकी।
धन्द्य घरी सोइ जब सिसंगा। धन्द्य जन्द्म द्विज भगति अभंगा।।

है, र्ही र्ुरीजहै,र्हीज्ञानी है,र्हीश्रीरामपृथ्र्ीचरों में अनुरक्त है, र्ही सर्ज्ञश
भूर्षर् है, पजण्डत है, दानी है, िम शपरायर् है और र्ही कुल का रिक है। र्ही नीनत में ननपुर् है, र्ही परम
बुद्धिमान है, उसी ने रे्दों के मसद्ान्द्त को भली-भाँनत जाना है, र्ही कर्र्, र्ही र्द्ान और र्ही ररर्ीर है।

ई देर् िन्द्य है जहाँर्ाा बहती है। ई सर्ाि िन्द्य है जो पनतव्रत िम शका पालन करती है। ई राजा िन्द्य है जो न्द्याय करता है। ई ब्राह्मर् िन्द्य है जो अपनिम शसे कभी नही ांडडर्ता। ई िन िन्द्य है, जजसकी पहली र्नत होती है। िन की तीन र्नतयाँ होती हैं दान, भोर् और नार्।

धि रे मारग िि कहे हैं, दिा भोग औ िास ।
हदया और खाया िहीं ंजिाा, िह धि होय ििास ।।

ई बुद्धि िन्द्य और पररपक्र् है, जो पुण्य में लर्ी हुई है। ई घडी िन्द्य है, जब सत्सर्ां हो और ई जन्द्म न्द्यि है, जजसमें ब्राह्मर् की अखण्ड भजक्त हो।

दोहा- सो कुल धन्द्य उमा सिु, जगि पूज्य सुपुिी ।
श्रीरघुबीर परायि जेहहं ंिर उपज त्रिबिी ||127||

हे उमा! सुनो-ई कुल िन्द्य है, ससांार भर के मलए पूज्य है और परम पर्ि है, जजसमें श्री रघुबीर परायर्, अनन्द्य राम भक्त र्नम्र पुरुर्ष उत्पन्द्न हो। उस र्नम्र पुरुर्ष की माला की कोख र्ुदि हो जाती है, ई देर् पर्ि हो जाता है और उससे पृथ्र्ी पर्ि हो जाती है।

मति अिुरूप कथा म ैंभाषी । जद्यवप प्रथम गुप्ि करर राखी ।
िि मि प्रीति देझख अचधकाई । िब म ैंरघुपति कथा सिुाई ।।
यह ि कहहअ सठही हठ सीलहह। जो मि लाइ ि सिु हरर लीलहह ।
कहहअ ि लोमभहह क्रोचधहह काममहह। जो ि भजइ सचराचर स्िामिमहह ॥
द्विज रोहहहह ि सिुाइअ कबहूँ । सुरपति सररस होय िृप जबहूँ ।
राम कथा के िइ अचधकारी । स्जन्द्ह कें सि संगति अति प्यारी ॥
गुर पद प्रीति िीति रि जेई । द्विज सेिक अचधकारी िई ।
िा कहें यह त्रबसेष सुखदाई । जाहह प्राििप्रय श्री रघुराई ।।

मनैं ेअपनी बुद्धि के अनुसार यह कर्ा कही, यद्यर्प पहले इसे नछपाकर रखा र्ा, जब तुम्हारे मन में पे्रम की अधिकता देखी, तब मनैं ेश्री रघुनार्जी की यह कर्ा तुमको सुनायी।

यह कर्ा उनसे न कहनी चाहहए, जो िूत शहों, हठी स्र्भार् के हों और श्री हरर की लीला को मन लर्ाकर न सुनते ेहों। लोभी, िोिी, और कामी को जो चराचर के स्र्ामी श्री राम जी को नहींभजतेउनसे यह कर्ा नही ांकहना चाहहए।

ब्राह्मर्ों के रोही यहद ई देर्राज इन्द्र के समान ऐश्र्यर्ान राजा भी हों, तब भी यह कर्ा उन्द्हें नही ां सुनाना चाहहए। श्रीराम की कर्ा के अधिकारी तो र्े ही हैं, जजन्द्हें सत्सर्ांनत अत्यन्द्त र्प्रय है। जजनकी र्ुरु के चरर्ों

में प्रीनत है, जो नीनत परायर् हैं और ब्राह्मर्ों के सेर्क हैं, रे् ही इसके अधिकारी हैं और उनको ही यह कर्ा बहुत सुख देनेर्ाली है, जजनको श्री रघुनार्जी प्रार् के समान प्यारे हैं।

दोहा - राम चरि रति जो चह अथिा पद तिबा ।
भिा सहहि सो यह कथा करउ श्रिि पुट पिा || 128||

जो श्रीराम जी के चरर्ों में पे्रम चाहता हो या मिो चाहता हो तो र्ह उस कर्ा रूपी अमृत् को पे्रमपूर्कश अपनेकान रूपी दोनेसे पीयें।

राम कथा चगररजा म ैं बरिी। कमलमल समति मिोमल हरिी।
संसृतिृ रोग सर्जीिी मूरी। राम कथा गािहहं श्रुति सुरी ॥
एहह महैं रुचचर सप्ि सोपािा । रघुपति भगति केर पंथािा ।
अति हरर कृपा जाहह पर होई । पाउँ देइ एहह मारग सोई ।।

भर्र्ान कर्ंर कहते ह ैं फक हे धर्ररजा! मनैं कमलयुर् के पापों का नार् करनेर्ाली और मन के मल को दूर करने र्ाली राम कर्ा का र्र्नश फकया, यह राम कर्ा जन्म-मरर् रूपी रोर् के नार् करनेके मलए सांजीर्नी जडी है। रे्द और र्र्द्वान पुरुर्ष ऐसा कहते ह ैं। इसमें सात सुन्दर सीहढयाँहैं जो श्री रघुनार् जी की भजक्त को प्राप्त करने के मार् शहैं। जजस पर श्री हरर की अत्यन्द्त कृपा होती है र्ही इस मार् शपर पैर रखता है।

मि कामिा मसद्चध ि र पािा। जे यह कथा कपट ि स्ज गािा ।
कहहहं सुिहहं अिुमोदि करहीं। ि े गोपद इि भिितिचध ि रहीं ।।

जो कपट छोडकर यह कर्ा र्ाते हैं, रे् मनुष्य अपनी मन कामना की मसद्धि पा लेते हैं, जो इसे कहते सुनते और अनुमोदन करते हैं, रे् ससांार रूपी समुर को र्ी के खुर से बनेहुए र्डे्ढ के जल की भाँनत पार कर जाते हैं।

सुति सब कथा हृदय अति भाई। चगररजां बोली चगरा सुहाई ।
िाथ कृपाँमम गि संदेहा । राम चरि उपजेउ ि ि ेहा ॥

भर्र्ान राम की यह कर्ा सुनकर माता पार्तशी अत्यतां हर्र्षतश हुई और रे् सुन्दर र्ार्ी में बोली फक हे नार्! आपकी कृपा से मेरा सब सदोंह जाता रहा और भर्र्ान राम के चरर्ों में नर्ीन और दृढ़ पे्रम उत्पन्द्न हुआ।

दोहा- म ैं कृकृत्य भइउँ अब ि ि प्रसाद त्रबसेि।
उपजी राम भगति दृढ़ बीसकल कलेस ||129||

हे ई्श्र्नार्! आपकी कृपा से अब म ैंकृतार् शहो र्यी, मुझमें दृढ राम भजक्त उत्पन्द्न हो र्यी और मेरे सम्पूर् शक्लेर् बीत र्ये।

भाई! भर्ान कांर और माता पार्तशी का यह सर्ांद सभी सर्ांय भ्रम और र्ोक-मोह को नार् कर सम्पूर् शप्रकार के सुख और र्ांनत का देनेर्ाला है। अस्तु, ु अ ांत में -

राम अममि गुि सागर, थाह फक पाइ कोइ ।
सन्द्न्द्ह सि जस कछु सुिेउँ, िुमहहं ंसुिायेउँ सोइ ॥
ॐ शांतिः ! शान्द्तिः! शांतिः !!!